संत भास्कर चूड़ामणि गोपालदास
कृत

राम प्रताप

राम प्रताप

(राम-कथा)

प्रणेता

सन्त भास्कर चूड़ामणि गोपालदास मिश्र

●

सम्पादक

प्रो० इन्द्रजीत पाण्डेय   डॉ० विद्याधर मिश्र

श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय

१ सी, मदनमोहन बर्मन स्ट्रीट, कलकत्ता-७

प्रकाशक
राधाकृष्ण नेवटिया
श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय
१ सी, मदनमोहन बर्मन स्ट्रीट, कलकत्ता-७

●

प्रथम संस्करण १९९० ई०
(२०४७ विक्रमाब्द)
११०० प्रति

●

मूल्य [illegible] रुपये

●

मुद्रक :
एस्केज
८, शोभाराम वैशाख स्ट्रीट,
कलकत्ता-७

प्रकाशकीय

श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय अपनी जनसेवा के ७२ वर्ष पूरे कर १९९० ई० में ७३ वें वर्ष में प्रवेश कर गया। इस उपलक्ष्य में हम आपको एक ऐसा ग्रन्थ भेंट करने जा रहे हैं जो धार्मिक, साहित्यिक, सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तन के क्षेत्रों में मार्गदर्शन तो करेगा ही, साथ ही साथ आत्मा को परमात्मा के साथ जोड़ने में भी सहायक होगा। आज गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरित मानस हर भारतीय के मानस पटल पर छा गया है, पर और भी अनेक भाषाओं में राम चरित्र पर ग्रन्थों का प्रणयन किया जा चुका है एवं स्रष्टाओं ने अपने-अपने दृष्टिकोणों का अपने ग्रन्थों में सरस पुट दिया है। जैन और बौद्ध ग्रंथों में भी राम कथाएं हैं। राम चरित्र पर अप्रकाशित मौलिक ग्रन्थों की संख्या भी कम नहीं है। इस श्रृंखला में श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय छत्तीसगढ़ी कवि सन्त भास्कर चूड़ामणि गोपाल दास कृत 'राम प्रताप' का प्रकाशन कर आपको अर्पित कर रहा है। इसकी प्राप्त पाण्डुलिपि १४० वर्ष पुरानी है। इसमें मुख्यतः ब्रज, अवधी एवं मैथिली भाषाओं का प्रयोग है। संस्कृत छन्दों का भी समावेश है। ग्रन्थ में भगवान राम के अवतार से लेकर लव-कुश काण्ड तक के ६१ अध्याय हैं। भाषा सरल, हृदयग्राही है जिसे साधारण जनता सहजता के साथ अंगीकार कर सकती है।

इस ग्रंथ की यह भी विशेषता है कि अनेक राग-रागिनियों के माध्यम से संगीत की आनन्दानुभूति की जा सकती है। जहां जिस रस एवं अलंकार, छन्द की जरूरत कवि ने समझी है उसका सहज प्रयोग किया है। ग्रन्थ में सभी रसों का समावेश हुआ है। इस में दोहा, सोरठा, घनाक्षर, रुचिरा छन्द, छप्पै, गीतिका, द्रुमिला, सोमा, दोधक छन्द, सवैया, नाराच, भुजंगप्रयात, निसिपालिका छन्द, चौबोला, सवाई छन्द, राग बेरावर, राग बिभास, राग आसावरी, उड़ियाना, बिदोहा, मालिनी, मण्डल छन्द, राग सारंग, कुरंग छन्द, पद्धटिका, मदन छन्द, राग बिहागरा, त्रोटक, प्लवंगम छन्द, चन्द्रमनि, छन्द, मेघ बिस्फूर्जिता, चामर, बसाय, झूलना छन्द, दीपकल छन्द, करषा, चर्चरी, यावर्त, त्रिभंगी छन्द, राग बसन्त, हिण्डोरना, राग मल्हार, मनोहरा, राग बेरावर-सवाई छन्द, संखधारी छन्द, स्रग्धरा छन्द, किरीट छन्द, लीलावती छन्द, सरभ छन्द, दण्डक छन्द, रूपक छन्द, विचित्र पद, मतंगरूपक छन्द, मोदक छन्द, चंचरीक,

बसन्त तिलक छन्द, मौक्तिकदल छन्द, चन्द्रलीला छन्द, गंगोदक छन्द, अनंगशेखर छन्द, सुमंत छन्द, पादाकुलक छन्द, मालवती, मंजुता छन्द, चौपैया, विमलध्वनि छन्द, सुमंदर छन्द, कुम्भक छन्द, तोमर, मोहन छन्द आदि।

ग्रंथ में ब्रजभाषा एवं अवधी की प्रधानता है। स्थान-स्थान पर अलंकार इतने आकर्षक हुए हैं कि पढ़कर मनमुग्ध हो जाता है। भाषा लालित्य पर कवि ने ध्यान दिया हो या नहीं परन्तु वे बरबस आये हैं। जैसे पृष्ठ १७ पर घनाक्षर की एक ही पंक्ति पर्याप्त है—"सोहती हैं सोरहूं सिंगारनि सौं सरसी···" इसीमें अन्तिम पंक्ति है—'भारी भौर भौन भूप भामिनी अमित रूप।' फिर पृष्ठ २३ पर सवैया—'लाल हरे सितपीत···' में अनुप्रास की छटा उतर आयी है। छन्दों को जिस तरह के अक्षर शब्दों में लिखा गया है उन्हें उसी रूप में रखने के लिए सम्पादक की ओर से अधिक से अधिक प्रयास किये गये हैं जैसे 'अैसे' को 'ऐसे' लिखा जा सकता था, 'कंदर' को 'कन्दर' लिखा जा सकता था, रामचंद्र' को 'रामचन्द्र' लिखा जा सकता था पर शब्दों को जैसे का तैसे इसलिए रखा गया है ताकि तत्कालीन शब्द लेखन को समझा जा सके। इससे यह भी समझा जा सकता है कि डेढ़ सौ वर्ष पूर्व हिन्दी लिपि किस स्थिति में थी और क्रमिक रूप में विकसित होते हुए आज किस रूप में है।

अब तक श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय सात स्मारिकाएं और ३ ग्रंथ—'सूरदास', 'वीर सावरकर' एवं 'बड़ाबाजार के कार्यकर्ता' प्रकाशित कर जनता की सेवा में प्रस्तुत कर चुका है, अब चौथा 'राम प्रताप' शीर्षक ग्रन्थ आप सुधीजनों को भेंट कर रहा है। इसके अतिरिक्त यह प्रत्येक वर्ष २१ हजार रुपये का 'विवेकानन्द सेवा पुरस्कार' पिछड़े एवं वनवासी बन्धुओं की सेवा में संलग्न सेवाव्रती को देता है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संस्थापक डॉ० हेडगेवार जी की स्मृति में भी २१ हजार रुपये का 'डॉ० हेडगेवार प्रज्ञा पुरस्कार' हिन्दू संस्कृति की चेतना जगानेवाले प्रज्ञा पुरुष को दिया जाता है।

इस पुस्तकालय की मुख्य प्रवृत्ति साहित्यकारों, विद्वानों एवं मनीषियों को आमंत्रित कर सामयिक साहित्यिक प्रवृत्तियों का प्रचार-प्रसार कराने की है। यह सामाजिक एवं राजनीतिक सुधारकों एवं चिन्तकों को आमंत्रित कर उनके विचारों के आलोक से जनसाधारण को आलोकित कराने का कार्य भी करता है। इस पुस्तकालय के अन्तर्गत एक महिला विभाग भी खोला गया है जो शैक्षणिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में महिलाओं को चेतनाशील बनाने का कार्य कर रहा है।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन में श्री लक्ष्मीनिवास जी बिड़ला, श्री जयदयाल जी डालमिया, श्री सत्यनारायण जी टांटिया एवं रघुमल चैरिटी ट्रस्ट, कलकत्ता के सहयोग के लिए हम उनके आभारी हैं। आशा है यह ग्रंथ विद्वत् समाज द्वारा आदर प्राप्त करेगा।

भवदीय

राधाकृष्ण नेवटिया

भूमिका

श्रीराम-भक्ति के विकासात्मक अध्ययन की वैज्ञानिक विवेचना के लिए भक्ति की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का आकलन परम अनिवार्य हो जाता है। वैदिक-युगीन उपासना-पद्धति पौराणिक युग में सनातनत्व को पाकर मुखरित, उद्भासित हो उठती है। भय और संत्रास को वैदिक उपासना का मूल कारण मान लेना, एक वैज्ञानिक समीचीन विश्लेषण नहीं है। भय और अनिष्ट एक बाह्य प्रतिफलक है, जबकि उसके अन्तरपक्ष में श्रद्धा, कृतज्ञता और समर्पण की मूल चेतना की ही अभिव्यंजना सर्वत्र प्राप्त होती है। वैदिक-देव-स्तुतियों में, प्रार्थनाओं में, बाह्य शिष्टाचारों के अतिरिक्त मननशील भावुकता तथा देवानुराग की भावना संचरित एवं परिलक्षित होती है। ऋग्वेद के पुरुष-सूक्त में उल्लिखित अनेक स्तुतियों में अनुरागात्मिका भावना विशेष रूप में दर्शनीय है। ऋग्वेद में अग्नि की स्तुति परमेश्वर के स्तुत्य ऐश्वर्य की ओर स्पष्ट निर्देश करती है—

> ''त्वमग्न इन्द्रो वृषभः सतामसि त्वं विष्णुरुरुगायो नमस्यः।
> त्वं ब्रह्मा रयिविद् ब्रह्मणस्पते त्वं विधर्तः सचसे पुरंध्या॥ १

अर्थात् हे अग्ने ! परमात्मन् ! तू इन्द्र (समस्त ऐश्वर्यों) अनन्त ऐश्वर्यों से सम्पन्न है, इसीलिए तू सज्जनों के लिए वृषभ अर्थात् उनकी समस्त कामनाओं का पूरक है। तू विष्णु है, विभु व्यापक है, इसीलिए तू उरुगाय है, बहुतों से गाने के द्वारा स्तुति करने योग्य है एवं नमस्कार्य है। हे ब्रह्म अर्थात् वेद के पति ! तू ब्रह्मा है समस्त फलों का ज्ञाता एवं दाता है। हे विधारक सर्वाधार ! तू पुरन्धि अर्थात् पवित्र एकाग्र बुद्धि द्वारा प्रत्यक्ष होता है।

संहिताओं में अनेक स्थलों पर भगवान् की भक्तवत्सलता के भी दर्शन होते हैं—

> 'ॐ' गाव इव ग्रामं यूयुधिरिवाश्वान् वाश्रेव वत्सं सुमना दुहाना।
> पतिरिव जायां अभिनोऽन्वेतु धर्ता दिवः सविता विश्ववारः॥ २

अर्थात् 'जैसे गायें ग्राम के प्रति शीघ्र ही जाती हैं, जैसे शूरवीर योद्धा अपने प्रिय अश्व पर बैठने के लिए जाता है जैसे स्नेहपूरित मनवाली, दूध देने वाली हम्मा

---

१. ऋग्वेद २/१/३, भक्ति अंक-३५

२. ऋग्वेद १०/१४९/४, भक्ति अंक पृष्ठ ३५

रव करती हुई गाय अपने वत्स के प्रति शीघ्रता से जाती है एवं स्वयं जैसे पति अपनी प्रियतमा सुन्दरी पत्नी से मिलने के लिए उत्कंठा से जाता है, वैसे ही समस्त विश्व द्वारा वरण करने योग्य निरतिशय शाश्वत आनन्द सविता भगवान हम शरणागत भक्तों के समीप में आता है।'

संहिताओं में भक्त—भावना और भगवान्-स्वरूप के कैवल्य भाव का वैविध्य में, अनेकत्व में अक्षुण्ण एकता का सुन्दरतम प्रतिपादन भी मिलता है—

एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्त्यग्नि यम मातरिश्वानमाहुः ॥ १

अर्थात् 'ब्राह्मण लोग एक सत्य तत्त्व को अनेक रूपों से कहते हैं। कभी उसे अग्नि, कभी यम और कभी मातरिश्वा कहते हैं।'

संहिताओं में भक्ति-भावना की स्थापना करते हुए पं० बलदेव उपाध्याय कहते हैं 'भक्ति भावना की स्थापना हमें सबसे अधिक मिलती है वरुण के सूक्तों में। वैदिक देवताओं में वरुण का स्थान सर्वतोभावेन मूर्धन्य है। वह 'विश्वतश्चक्षुः' है अर्थात् सब ओर दृष्टि रखनेवाला है। वह धृतव्रत (नियमों का धारण करनेवाला) सक्रतु (शोभन कर्मों का निष्पादक) तथा सम्राट है। वह सर्वज्ञ है। वह अन्तरिक्ष में उड़नेवाले पक्षियों का मार्ग उसी प्रकार जानता है जिस प्रकार वह समुद्र पर चलने वाली नावों का। स्तोता वरुण को दया, करुणा का निकेत मानता है।२

उपनिषद् 'ज्ञानकांड' के प्रधान ग्रन्थ होते हुए भी कर्म और भक्ति समन्वित ग्रंथ है। उपनिषदों में सर्वत्र उपासना का महत्त्व उपास्य का स्वरूप एवं उपासक के लक्षणों का उल्लेख प्राप्त होता है—केनोपनिषद् में उल्लेख है—तद्वनमित्युपासितव्यम् ३ अर्थात् 'भजनीय वस्तु होने के कारण ब्रह्म की उपासना करनी चाहिए' उपास्य के स्वरूप का सुन्दरतम चित्रांकन कठोपनिषद् करता है—

अणो रणीयान्महतो महीयानात्मास्य जन्तोर्निहितो गुहायाम् ।
तमक्रतुः पश्यति वीतशोको धातुप्रसादान्महिमानमात्मनः ॥ ४

अर्थात् आत्मा अणु से भी अणु है, महान से भी महान है। वह प्राणी के हृदय-गुम्फन में अवस्थित है। उसके दर्शन से साधक में सर्वज्ञता आदि का आविर्भाव होता है जिसके फलस्वरूप वह शोक से मुक्त हो जाता है'।

कठोपनिषद में उस परमात्म तत्त्व के प्रति भक्ति-भाव का सुन्दरतम उल्लेख भी किया गया है—

---

१. ऋग्वेद १/१६४/४६, भक्ति अंक पृष्ठ ४२
२. भागवत सम्प्रदाय पृष्ठ ६७-६८
३. केनोपनिषद् ४/६
४. कठोपनिषद् १/२/२०

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुनाश्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनूं स्वाम् ॥१

अर्थात् 'यह आत्मा उत्कृष्ट व्याख्यान के द्वारा प्राप्त नहीं किया जाता, मेधा के द्वारा उत्पन्न नहीं होता; प्रकाण्ड पाण्डित्य के द्वारा भी प्राप्त नहीं होता। यह जिसको वरण करता है उसी को प्राप्त होता है। उसके सामने यह आत्मा अपने स्वरूप को व्यक्त करता है।'

ब्रह्म कृपा प्राप्ति के लिए भक्ति को नितान्त अपेक्षित माना है। उपनिषदों में आत्मा-परमात्मा के सम्बन्ध में सान्निध्य नहीं अपितु सख्य भाव के अभिन्नत्व को सुन्दर प्रभावशाली ढंग से वर्णित किया गया है। मुंडकोपनिषद का प्रसिद्ध श्लोक

'द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति ॥' २

अर्थात् 'एक वृक्ष पर दो पक्षी सखा के समान एकत्र रहते हैं। उनमें से एक पक्षी स्वाद फल खाता है। दूसरा पक्षी आहार नहीं करता केवल देखता रहता है'— उपर्युक्त कथनों का स्पष्ट निदर्शन करता है। उपनिषदों में प्रतीकोपासना के माध्यम से ब्रह्म को अन्तर्यामी, सर्वव्यापी मानकर उपासना के क्षेत्र को व्यापक आयाम प्रदान किया गया। ज्ञान, कर्म और उपासना के समन्वित स्वरूप की स्थापना ही उपनिषदों की भक्ति-भावना का मूलाधार है। इस समन्वित भावना के फलस्वरूप ब्रह्म में लोक कल्याण, सर्व-मंगल-भावना, अहिंसात्मक चेतना और निष्काम उदात्त समर्पण का समावेश सहज ही हो उठता है। आध्यात्मिक ज्ञान भगवत् स्वरूप और तत्त्व निरूपण में पूर्णतः एवं उदात्तता पाकर ही तृप्त न होता, अपितु भगवत-भाव में रागात्मिका भाव को घोल कर विशुद्ध रसात्मकता भी प्राप्त करता है। वह परम प्रेमरूपा और अमृत स्वरूपा दोनों है।

उपनिषदों में पल्लवित भक्ति-भावना का ही पूर्ण प्रस्फुटन पुराणों में होता है। पुराण सनातन धर्म के स्तम्भ हैं, भक्ति भावना के अमूल्य मणि-रत्न हैं। अठारह पुराणों में से अधिकांश पुराण धर्म की मूल चेतना को निर्धारित करते हैं। ब्रह्म वैवर्त विष्णु, पद्म अथवा श्रीमद्भागवतपुराण विष्णु के स्वरूप, उनके भगवत् महत्त्व तथा भक्ति-सिद्धांतों के निरूपण की दृष्टि से महिम है, सर्वश्रेष्ठ पुराण है तथा भक्ति शास्त्र का पावन तीर्थ है। भक्ति ग्रन्थों का वास्तविक अर्थ में उपजीव्य ग्रन्थ है। भागवत् का मूल स्वर है भक्तों पर अनुग्रह के कारण प्रभु का लीला ग्रहण करना और इन लीलाओं में भक्तों को निमज्जित होकर आनन्द-रस-मग्न होने का अवसर प्रदान करना। भगवान के कई अवतारों—पुरुषावतार, कल्पावतार, मन्वन्तरावतार, युगावतार एवं स्वल्पावतार आदि की स्पष्ट व्याख्या भागवत प्रस्तुत करता है। निर्गुण अथवा 'अहैतुकी'

---

१. मुंडकोपनिषद् ३/२/३
२. मुंडकोपनिषद् ३/१/१

भक्ति को ही 'भागवत्' सर्वोत्तम भक्ति ठहराता है, सर्वोपरि काव्य की पराकाष्ठा स्थिर करता है। सर्वोत्तम भक्त के लक्षण भागवत के अनुसार—

सर्वभूतेषु यः पश्येद् भगवद्भावमात्मनः।
भूतानि भगवत्यात्मन्येष भागवतोत्तमः॥

है। प्रेमाभक्ति सर्वोपरि है। भगवान के चरणारविंद में अपने मन भ्रमर को अहर्निश रस-पान में निमग्न करना ही, भागवत का चरम लक्ष्य है।

पुराणों के विष्णु में सहज ही कालक्रम के अनुसार उदात्त भावनाओं का तथा मानवीय आदर्शों का उज्ज्वल, सामंजस्य हो गया। विष्णु के व्यक्तित्व में पार्थिव और अपार्थिव गुणों का सुन्दर चित्रांकन मूर्तित हो उठा। बहु आयामी दिव्य शक्तियों से विभूषित हो उठा विष्णु-चरित्र। विष्णु का अलौकिक आलम्बन चिंतन से परे रागात्मिका अभिव्यक्ति के आवरण से मंडित हो गया। आगे चलकर वैष्णवों ने विष्णु के विष्णुत्व की साकार कल्पना विष्णु के अवतार राम के पार्थिव व्यक्तित्व निरूपित कर दी। अदृश्य और अव्यक्त रहनेवाले विष्णु के समस्त नैसर्गिक गुणों का समावेश राम में सुनियोजित हो गया। भारतीय लोक-हृदय विष्णु की अपेक्षा राम में अधिक तल्लीनता, मोहकता और अपनत्व का तादात्म्य करना प्रारम्भ कर दिया, फलस्वरूप राम परब्रह्म के प्रतीक हो गए। राम का चरित्र राष्ट्रीय चिंतनधारा का प्रेरणाधार हो गया। इस महत् चरित्र की सांस्कृतिक, दार्शनिक तथा राष्ट्रीय चिन्मयी आभा को आप्यायित करने के निमित्त उत्तरोत्तर विकसित सामाजिक, धार्मिक तथा आध्यात्मिक भाव-बोध के इतिहास क्रम का संक्षिप्त विवेचन अनिवार्य है।

आदि कवि महर्षि वाल्मीकि ने सर्वप्रथम प्रबन्ध काव्य के रूप में रामायण की संरचना करके राम के उदात्त चरित्र को लोक-भाव-भूमि पर प्रतिष्ठित किया।[1] परवर्ती कवियों के लिए रामायण उपजीव्य ग्रन्थ बन गया। राम-कथा का रसमय आलम्बन ग्रहण कर महर्षि वाल्मीकि ने करुण-रस-सिक्त, रस-सिद्ध वाणी से अमृत बर्षाया। उन्होंने राम को कर्मयोगी, धर्म संस्थापक के अनुपम और अप्रतिम स्वरूप का बाना पहनाकर परात्पर ब्रह्म के स्थान पर प्रतिष्ठित कर दिया। राम का चरित्र राम-भक्तों की साधना, भावना का राष्ट्र-हित-आदर्श का प्रधान आलम्बन बन गया। राम कालजयी महापुरुष बन गए। रामायण के आदर्श पर संस्कृत में रामायणों की सृष्टि की, अविच्छिन्न धारा प्रवाहित हो गयी। इस अविच्छिन्न धारा में

---

१. विष्णुना सदृशो वीर्ये सोमवत्प्रियदर्शनः।
कालाग्नि सदृशः क्रोधे क्षमया पृथिवी समः॥
धनदेन समस्त्यागे सत्ये धर्म इवापरः।
तमेवं गुण सम्पन्नं रामं सत्यपराक्रमम्॥
—वाल्मीकि रामायण बाल काण्डे प्रथम सर्गः (१८-१९)

बहुत से ग्रन्थ काल-प्रवाह में विलीन हो गए किन्तु जो काल-जयी कृतियां रामायण—प्रबन्धात्मकता की सरिता पर अडिग सेतु का सम्पादन करती हैं, उनमें प्रमुख हैं—योगवासिष्ठ रामायण, अध्यात्म रामायण, अद्‌भुत रामायण, आनन्द रामायण, भुशुण्डि रामायण, तत्व संग्रह रामायण, महारामायण, मंत्र रामायण आदि।

रामकथा के प्रति लोक निष्ठा का इतना सुदृढ़ भाव-साम्राज्य स्थापित हुआ कि संस्कृत के परवर्ती प्राकृत तथा अपभ्रंश के कवियों ने राम-चरित-काव्य-ग्रन्थों की संरचना का अविच्छिन्न क्रम रखा। प्राकृत प्रख्यात कवि 'विमल सूरि' ने 'पउमचरिउ' की रचना की तो पुष्पदन्त ने तिसठठि महापुरिस गुणालङ्कार की संरचना कर राम-कथा के प्रभाव को गति प्रदान की। 'स्वयंभूदेव' का 'पउमचरिय' अपभ्रंश साहित्य का उल्लेखनीय ग्रन्थ है। जैन और बौद्ध आचार्यों ने राम-कथा के प्रति भक्ति-भाव और श्रद्धा भाव से प्रेरित होकर राम-काव्य कृतियों का सृजन नहीं किया था, अपितु राम कथा के प्रति जन-जन का जो उस युग में आकर्षण था, आसक्ति थी, उसी आकर्षण के अन्तराल में राम-कथा के आदर्शों को तोड़ा मरोड़ा। लोकधारा से कट जाने की विवशता ने इन जैन और बौद्ध धर्मावलम्बी कवियों को राम कथा-ग्रन्थों के सृजन से जोड़ा।

मध्यकाल में देसज भाषाओं के विकास के साथ ही परम्परा से परिनिष्ठित राम-कथा के सृजन का लोक-रस में निमग्न ग्रन्थों का सृजन होने लगा। इसके मूल में वैष्णव-भक्ति के आन्दोलन का श्रेय है। वैष्णव भक्ति आन्दोलन के पुरस्कर्ताओं में श्री रामानुजाचार्य, श्री मध्वाचार्य, श्री रंगनाथ मुनि, श्री बल्लभाचार्य एवं श्री रामानन्द प्रमुख हैं। पुराण काल के अनन्तर ही दक्षिण भारत में आलवार सन्तों ने भक्ति की मन्दाकिनी प्रवाहित की थी। इन सन्तों ने मधुर, सरस एवं पवित्र पदों में भक्ति रस की स्रोतस्विनी को प्रवाहित कर जन-मानस को रसप्लावित कर दिया। जहाँ आचार्यों ने भक्ति को शास्त्रीय पद्धति दी वहीं सन्तों ने भक्ति को जीवन्त पावन सलिला प्रदान की। संक्षेप में कहा जा सकता है कि आलवार सन्तों में हृदय-पक्ष की प्रधानता थी तो आचार्यों में बुद्धि-पक्ष की प्रधानता थी। आलवार सन्तों में कुल शेखर आलवार, विष्णु चित्त आलवार, विप्र नारायण, मुनिवाहन, तिरुप्पन, तिरु मंगैयालवार आदि प्रसिद्ध हैं।

उत्तर भारत में भक्ति-धारा के प्रवाहकों में श्री रामानन्द प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं। जन साधारण के मध्य राम-भक्ति के प्रचारक का पूर्ण श्रेय उत्तर भारत में श्री रामानन्द को है। उन्होंने अपने गुरु रामानुजाचार्य के मत का अवलम्बन तो लिया किन्तु उसे एक नवीन जनाधार का स्वर प्रदान किया। उनके उपास्य लोक संग्रहकर्ता, लोक मंगलकर्ता भगवान राम हो गये। वर्ण-भेद, जाति-भेद, देश-भेद आदि संकीर्ण परिधियों से अलग रहकर उन्होंने भक्ति-आन्दोलन को सर्व जन सुलभ बना दिया। उनके राम ईश्वर के प्रतिरूप हैं। लक्ष्मण जीव हैं तथा सीता प्रकृति

स्थानीया है। सतत् भगवत् आराधना ही एक मात्र मुक्ति का मार्ग है। अविच्छिन्न भक्ति-धारा-प्रवाह के मूल स्रोत की चर्चा करते हुए रामानन्द कहते हैं—

> सा तैल धारा समनित्य संस्मृति सन्तानरूपेशि परानुरक्तिः।
> भक्तिविवेकादिक सप्तजन्या तयाम यमाद्यष्ट सुबोधकाङ्क्ष ॥ [१]

संस्कृत आचार्यों की वैधी भक्ति नियमबद्ध थी, संयमनिष्ठ थी अतः सर्वसाधारण के लिए अलभ्य थी। इस दुरूहता का बोध कर रामानन्द ने प्रेमाभक्ति का मनोहर स्वरूप प्रदान कर भक्ति को जनसाधारण के लिए सुलभ बना दिया। भक्ति-भावना का विकास निराकार और साकार उपासना दोनों में अविच्छिन्न रूप से प्रवाहित हो उठा। निर्गुण भक्तों में राम दाशरथि राम न होकर सर्वत्र रमने और अखण्ड ब्रह्म के पर्याय हो गए। कबीर आदि निर्गुण सन्तों ने इसी स्वतंत्र पथ का अवलम्बन लिया। रामानन्द के प्रभाव से राम-काव्य चाहे वह निर्गुण हो या सगुण, माधुर्य भावापन्न हो उठा। वैष्णव-भक्ति के रंग में अनुरंजित हो गया।

राम-भक्ति की सगुण-धारा का परमोज्ज्वल प्रकाश गोस्वामी तुलसीदास के योगदान से विमर्शित हुआ। बाल्मीकि रामायण के उपरांत यद्यपि रामकथा की अक्षुण्ण परम्परा अवशिष्ट रही। परन्तु तुलसी का रामचरितमानस रामायण परम्परा में सभी दृष्टियों से अनुपमेय और अप्रतिम ग्रन्थ ठहरता है। इस कथन के परिपोषण में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का मन्तव्य अनुकरणीय है—'हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में इस भक्ति का परमोज्ज्वल प्रकाश विक्रम की सत्रहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में गोस्वामी तुलसीदास जी की वाणी द्वारा स्फुरित हुआ। उनकी सर्वतोमुखी प्रतिभा ने भाषा काव्य की सारी प्रचलित पद्धतियों के बीच अपना चमत्कार दिखाया। सारांश यह है कि राम-भक्ति का वह परम विशद् साहित्यिक सन्दर्भ इन्हीं भक्त शिरोमणि द्वारा संगठित हुआ जिससे हिन्दी काव्य की प्रौढ़ता के युग का प्रारम्भ हुआ। [२]

तुलसी ने श्रुतिसम्मति हरि भक्ति पथ में विरति विवेक का सामंजस्य स्थापित कर राम-भक्ति को व्यापकता प्रदान की, लोक-धर्म की स्थापना की। उनकी अलौकिक काव्य प्रतिभा, समन्वयवादी चिन्तन-धारा एवं सहज अभिव्यंजना शैली ने समन्वित रूप से मिलकर जिस राम-भक्ति सुरसरि को प्रवाहित किया, वह सहज ही जनमन रंजनकारिणी एवं सर्वफलदायिनी बन गयी। रामचरित मानस रामोपासकों का कंठहार बना।

रामचरित मानस की इस सशक्त रचना की सफलता ने राम-कथा के सृजन-प्रवाह को एक लम्बे अर्से तक अवरुद्ध कर दिया। कथा का प्रकृति प्रवाह स्थिर हो हो गया। तद्युगीन कवि हतप्रभ हो गये जिसका परिणाम यह हुआ कि कृष्ण-काव्य की धारा जहां उस युग में पुष्ट दिखती है, राम-भक्ति-धारा अवरुद्ध-सी परिलक्षित

---

१. वैष्णव मताब्ज भास्कर, ६५वाँ श्लोक

२. हिन्दी साहित्य का इतिहास—लेखक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ १२४

होती है। कतिपय दशकों के पश्चात् एक क्षीण काव्य-धारा दृष्टिगत होती है जिसके फलस्वरूप राम-कथा के कई कवियों का प्रादुर्भाव होता है। इन कवियों में लालदास रामप्रिया शरण, जोग राम, क्षेमकरण मिश्र, सीताराम, लालमणि, रामचरनदास, गिरधर दास, रामगुलाम द्विवेदी, वैदेहीशरण बनादास, आदि का नाम विशेष उल्लेखनीय है। तुलसी के परवर्ती कवियों ने रामचरित मानस के आधार पर अपने ग्रंथों में विविध छन्दों का निरूपण करने लगे। यहाँ तक तो अनुकरणीय था किन्तु कृष्ण काव्य के माधुर्य भाव से अनुप्राणित होकर तथा रसिक साधना के कवियों के मोहान्ध अनुकरण से राम के ऐश्वर्यपरक चरित्र-चित्रण को छोड़कर उनकी शृंगार-लीलाओं को अभिव्यक्त करने में अधिक तल्लीन हो गये। कविता कुण्ठित होने लगी, राष्ट्रीय चेतना विलुप्त होने लगी। वृन्दावन—लीलाओं के स्थान पर चित्रकूट की निकुंज लीलाओं के वर्णन होने लगे। महाकवि केशव जैसे आचार्य कवि ने राम-कथा प्रवाह के वैशिष्ट्य को पहचाना तो अवश्य परन्तु राम के चरित्र की उदात्तता की ओर उनका ध्यान आकृष्ट न होकर अपने पाण्डित्य-प्रदर्शन तथा दरबारी निरूपण पर केन्द्रित रहा, जिसके फलस्वरूप 'रामचन्द्रिका' जनाधार को न तो प्रभावित कर पायी और न मृयमाण जाति को काव्य पीयूष से चिन्मयी आभा दे पायी। केवल चमत्कार और वैदुष्य की इन्द्रधनुषी क्षणिक आभा को राम-कथा-आकाश पर प्रतिभासित कर पाये।

राम-कथा के सृजन में रमे हुए कवियों के बीच में कुछ ऐसे भक्त, निष्ठावान कवि अवश्य ही अज्ञात हैं और उनकी रचनाएँ भी अबतक अप्राप्य हैं जिन्होंने तुलसी की परम्परा में राम-भक्ति की अलख जगायी है। राम ही उनके उपास्य हैं और राम कथा-गायन ही उनका काव्य धर्म है। इस भाव से अनुप्राणित होकर रचे गये उनके ग्रन्थों में भक्ति का उज्ज्वल स्वरूप निदर्शित होता है। भक्त कवि गोपाल इसी परम्परा के पोषक हैं, उद्गाता हैं और उनका 'रामप्रताप रामायण' उनकी काव्य-साधना का श्रेष्ठ परिणाम है। उपर्युक्त कथन की वैज्ञानिकता की परीक्षा रामप्रताप के सर्वाङ्गीण विश्लेषण एवं तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट हो जाती है।

राम प्रताप रामायण में राम-कथा को विविध पर्वों अथवा काण्डों में न बाँट कर कवि ने प्रसंगों के आधार पर अध्यायों के ६१ मणियों को प्रबन्धात्मकता के सूत्र में पिरोया है। ग्रन्थ आद्योपान्त प्रबन्धात्मक सौन्दर्य से मंडित है। कवि ने मंगलाचरण में ही अपने आराध्य देव को पूर्ण प्रकाशमान, तीनों भुवनों में व्याप्त, सबमें रमनेवाले ब्रह्म, मंगल के कर्ता शिव-मन के भूषण, विपत्ति के विनाशक, श्रुतियों के ज्ञेय, सौंदर्य के सर्वस्व, त्रय तापों के हर्ता, अनादि पुरुष अनन्त गतिमान त्रिभुवन त्रिगुण विहारक मानकर परात्पर ब्रह्म की स्थापना करके अपने भक्ति-सिद्धान्त की स्पष्ट घोषणा कर देता है।१

१. रामप्रताप १/१, २, ३ पृष्ठ १

कवि तुलसी से प्रभावित होकर रामायण को सतकोटि मानता है।[१] राम को परम ब्रह्म मानकर तीनों लोकों का सर्जक मानता है और उनके रूप, गुण और शील को अवर्णनीय ठहराता है। वह तुलसीदास की भाँति ही अपने को लघुमति, अकवि और बाल-बोध का कवि मानता है।[२] कवि अपने काव्य-सृजन का बड़ा ही सुन्दर कारण प्रस्तुत करता है। वह योग, यज्ञ, व्रत, दान-पुण्य, जप इनमें से किसी एक को अपने लिए असाध्य मानता है। इसी की प्रतिक्रिया में राम-नाम को अपनी रचना का विषय बनाता है और रुचिर रचना में तल्लीन हो जाता है एवं नारायण के नर-रूप में निःशंक होकर अभ्यंतर में अभिलषित होता है। रामचन्द्र को वह पूर्ण कला का अवतार मानता है और महा मनोहर रूप का आगार मानता है तथा ऐसा वर्णन करते समय अपने आप को जनकवि के रूप में उद्घोषणा करते हुए गौरव का उद्घोष करता है।[३]

कवि अपने आप को वाल्मीकि का ऋणी मानता है। कवि को अर्घ्य देते हुए उन्हें त्रिभुवन के मंगल हेतु मंत्र का उद्गाता स्वीकार करता है। उन्हें परम पुनीत पावन संत की पदवी से विभूषित करता है। ब्रह्म राम के पदारविंदों को सभी देवताओं द्वारा वंद्य शुक, सनक, शारद, निगम आदि को उनके प्रेम का ग्रहीता और स्वयं को जानकी रमण के पद पंकज का भ्रमर स्वीकार करता है।

कवि ने ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही रावण के त्रास और स्वप्न दर्शन का आयोजन कराकर एक नाटकीयता का सृजन किया है। सकल लोकपति रावण के त्रास से त्रस्त हैं। योग, यज्ञ, व्रत, नियम, धर्म दनु के प्रबल ताप से निर्मूल हो गए हैं उसने दसों दिशाओं को दीन कर दिया है। तुलसी की भाँति ही देवता, देवाधिदेव विष्णु की भावमयी स्तुति प्रस्तुत करते हुए कहते हैं—

जय वासुदेव अनंत अद्भुत, सकल त्रिभुवन मंगलं।
त्रय ताप नासन तरन तिहुंपुर, हरन दुस्तर कलिमलं॥
जय आदि विष्नु बिलास नायक, नित्य पुरुष निरंजनं।
निज भक्ति प्रेम प्रकाश पूरन, भक्तजन भय भंजनं॥ १/१२

---

१. रामप्रताप १/४

तुलनीय—रामकथा कै मिति जग नाहीं।
असि प्रतीति तिन्ह के मन माहीं॥
नाना भाँति राम अवतारा।
रामायन सत कोटि अपारा॥

—रामचरितमानस (बालकाण्ड ३२/५-६)

२. रामप्रताप १/४, ५

३. रामप्रताप १/६, ७, ८, १०

जय जय सुरनायक जन सुखदायक प्रनतपाल भगवंता।
गो द्विज हितकारी जय असुरारी, सिन्धुसुता प्रियकंता ।।

—रामचरितमानस/बालकाण्ड

ब्रह्म की सार्वभौमिकता का बड़ा ही सरस चित्र कवि अंकित करते हुए कहता है कि रस में सरसरस, गन्ध में चार गन्ध, रूप में ज्योतिरूप, सिद्धियों में सिद्ध और वेदविद्या में विनोद प्रेम ही पूर्ण प्रताप का परिचायक है। रावण को कवि ने स्वप्न में ही भविष्य के प्रति सजग कर दिया है। वह स्वप्न देखकर चिंतित हो उठता है और आर्त स्वर में हर हर का उच्चार करता है।[१]

श्रीराम-जन्म-प्रसंग में राम-जन्म के पूर्व ही वेदादिक ब्रह्मादिदेव को अनादि-पूर्ण पुरुष के दर्शन की लालसा में मोहित दिखाया गया है। कवि ने बालचरित्र के वर्णन को सुधारस से युक्त तन-मन को पवित्र बनानेवाला मानता है। पूर्ववर्ती कवियों से प्रभाव ग्रहण कर वात्सल्य रस के सहज चित्रण में कवि भावमय हो उठता है। सुन्दर सलोने शिशु-रूप में कवि बाल-कुतूहल का सन्निवेश करता है राम-जन्म का उल्लेख करते हुए, कवि रामजन्म की तिथि का उल्लेख करता है।[२] राम-जन्म के प्रभाव को चर-अचर सब में प्रदर्शित कर कवि ने अपनी भक्ति-भावना को सरसाया है। उसके अनुसार अपंग अंग प्राप्त कर लेते हैं, गूंगे बैन पाते हैं। रंक सम्पदा प्राप्त कर लेते हैं और अंधे नेत्र प्राप्त कर लेते हैं। प्रकृति में भी एक अद्भुत परिवर्तन परिलक्षित होता है। सूखे सरोवर भर जाते हैं, उकठे द्रुम हरे हो जाते हैं, अनफूले फूल उठते हैं और अनफले फल उठते हैं।[३] बाल वर्णन के प्रसंग में कवि तुलसीदास से प्रभावित होकर उन्हीं का अनुकरण कर बैठता है—

नव दूध की द्वै द्वै लसैं दतियां, बतियां अति ही तुतरात कहैं।
लटकैं घुघरारि लटैं मनि ज्यों, बुध मंगल सो मुसमानि लसैं ।।
उर सीपज सुन्दर माल गोपाल, किधौ घन में बग पांति बहैं।
मनि आंगन आनन रामलला, प्रतिबिम्ब नचावत पानि गहैं ।।

—रामप्रताप २/७

तुलसी के प्रभाव के साथ ही साथ सूरदास के बाल-वर्णन को कवि ने सहज ही में आत्मसात कर लिया है। बाल वर्णन में सर्वत्र सादृश्य विधान के दर्शन होते हैं बाल-वर्णन के प्रसंग में कवि ने अनेक मौलिक उद्भावनाओं का चित्रण किया है।[४]

---

१. रामप्रताप १/२५
२. रामप्रताप २/४-१२
३. रामप्रताप २/२०, २१
४. रामप्रताप ३/४१

राजा की मोहग्रस्त मनोदशा का सजीव यथार्थ चित्रण कवि प्रस्तुत कर मनोविज्ञान का सूक्ष्म चित्र खींचता है।[1] राजा का मोह भंग करने के निमित्त विश्वामित्र के द्वारा बहुत ही मर्मपूर्ण शब्दों का प्रहार कराया है[2] एवं अवतारवाद की प्रतिष्ठा करा देते हैं।[3]

कहत बनै न कछू, सुनत बनै न कछू भरि-भरि नैन भूप लालिसं करत हैं।
कौने मृगराजन कौं जकरे मृनाल तन्तु, आपुही कहौतो हमै जानित परत हैं।।
सर बस लीजै मख तपोवन को जं जाइ, हम रघुनाथ बिनु धीर न धरतु हैं।
अचरज एते मान आवु ह्वै सुनौ है कान, दानव सौं मानव के बालक लरत हैं।।

अहिल्या उद्धार के लिए कवि किसी भूमिका की अपेक्षा नहीं करता है। उनके राम शिला देख कर अपने पद पंकज का स्पर्श करा देते हैं। वह मानो सोते से जाग उठती है। सारे कलंकों को मिटाकर प्रभु उसको निष्कलंक कर देते हैं। अहिल्या के मुख से कृतज्ञता का ज्ञापन जिस ढंग से कवि कराता है, वह उल्लेखनीय है। अहिल्या अनन्त, अव्यय पुरुष का जयजयकार करती है और अपने हृदय में ब्रह्म के वेश का सदा निवास चाहती है। राम के भोलेपन का चित्रांकन कवि जिस सहजता से करता है वह कवि की कवित्व शक्ति का ज्वलन्त परिचायक है।[4] केवट प्रसंग का समायोजन कवि यहीं कर देता है। राम-लक्ष्मण सरयू के गम्भीर सलिल में तरल तरंगों को निरखते हैं जो ब्रह्म तीनों लोकों को पार करने वाले हैं वे पार जाने के लिए नाव बुलाते हैं, मनुहार करते हैं लेकिन केवट नाव लेकर नहीं आता। यहाँ कवि तुलसीदास के भाव-चित्रण को ज्यों का त्यों उतार देता है।[5] केवल केवट के प्रसंग में तुलसीदास कवितावली में जहाँ उसे स्वाभिमानी बनाकर 'कटिलौं जलथाह दिखाइ हौंजू' का प्रयोग करते हैं वहाँ गोपाल कवि का केवट विनम्र है। अपने आराध्य का ख्याल रखता है। वह उन्हें अपने कन्धे पर चढ़ने का आग्रह करता है। अपने को अधनति कहता है 'हौंमति अब न थंब करो, ममकंध चढो उहि पार करौं जू।'

वाल्मीकि के आश्रम की श्रीसम्पन्नता का सुन्दर चित्रण गोपाल कवि प्रस्तुत करते हैं जिसका मूलाधार वाल्मीकि रामायण है। तपोवन के ऋषि 'पुरुष पुरान मनि, राम अवतार जानि, अन्तःकरण दिव्य दरसन कौं लहें' मानकर रामकी अगवानी करते हैं इतना ही नहीं वे जं जं राम की रटन लगाते हैं, फल, अक्षत, दधि, मूल और फूल से भगवान राम का अभिषेक करते हैं—

---

१. रामप्रताप ५/११
२. रामप्रताप ५/१९
३. रामप्रताप ५/३८
४. रामप्रताप ६/१०
५. रामप्रताप ६/२३
तुलनीय—रामचरितमानस अयोध्या काण्ड/केवट प्रसंग/कवितावली/अयोध्याकाण्ड/६.७

पूरन ब्रह्महिं ब्रह्म-रिखीसन, आनन्द सौं मिलि मंगल कीनें।
अस्तुति के बहु भाँतिन तें सब मानि सुखें करुणारस भीनें॥
आजु सनाथ किये रघुनाथ, अनाथनि कौ अपने कर लीनें।
धूपनि दीपनि पुष्पनि चर्चित, मंत्रनि कैं सिर अक्षत दीनें॥ ६/४६

कवि ऋषियों से प्रभुराम की शोभा की अभिव्यंजना करता है। उन्हें कोटि काम से सुन्दर पुरन्दर का भी पुरन्दर मानते हैं। उनके सौन्दर्य का पान कर ऋषि आनन्दमग्न हो जाते हैं। ब्रह्म-वेदी के पास महर्षि उल्लसित होकर विविध विधान से ईश्वर अर्चना में तल्लीन हो उठते हैं। ताड़का प्रसंग में कवि ने भगवान राम से मुनि के सम्मुख नारी-वध का प्रश्न उठवाया है।

नारि हते जस कौन सुनो मुनि, जानत हो सब बेद पुराने।
पातक पुंजन लेत बनें सिर, और कहो सु सबै हम माने॥६/५८

बाहु औ सुबाहु बारि बाहु कैसे गरजत, घोर न धरत कोउ, त्रास बहु देति हैं।
तारन-तरन तारो, ताड़िका न जानो नारि, मारि मारि प्रान द्विज बिनन को लेति हैं॥
—६।५९

जनक प्रतिज्ञा का सुन्दर उद्घोष कवि प्रस्तुत करते हुए कहता है—

सेस उतारि धरैं धरनी मकु, कूरमहूँ अघ और धँसैंगो।
पाहन दौरि सुमेर चले मकु, सूरजमंडल राहु बसैंगो॥
टारि सकै यह कौन प्रतिज्ञहि, हारि रहैं मकु लोग हँसैंगो।
जाहि चढ़ावत चाप बनै यह, ताहि सिया जयमाल लसैंगो॥ ७।२३

कवि ने कथा में एक मौलिक मोड़ देते हुए राजा जनक से शिव की पूजा करायी है और शिव के द्वारा ही राजा जनक को स्वयंवर आयोजन का आदेश दिलवाया है।[1] स्वयंवर प्रसंग में कवि ने रावण और बाणासुर संवाद कराकर दोनों के दर्प और अहंकार को उद्घाटित किया है। राजा जनक के यहाँ ऋषि-पत्नी के मुख से भविष्यवाणी करवा कर कवि परिस्थिति की जटिलता को मृदुलता प्रदान करता है—

उन राजकुमार महा सुकुमार, लिये मुनि साथहिं आवहिं गे।
घन सुन्दर स्यामल गौर किसोर, बिलोकत ही मन भावहिं गे॥
मख राखि भुजाबल ते जिन हैं, तिन क्यों न इते मन लावहिं गे।
पन रोपि गोपाल कहै निहचै करि, वे शिव चाप चढ़ावहिं गे॥ ९।५

शिव और गौरी दोनों की पूजा का आयोजन सीता और उनकी सखियों द्वारा कवि आयोजित करता है—पूजि सिवा सिव सीय बिलोकति अंगनि अंग अनंग प्रभाके राम की रूप माधुरी के रसास्वादन के उपरान्त सखियों की मनोदशा का बड़ा ही हृदय ग्राह्य चित्र प्रस्तुत किया गया है—

---

१. रामप्रताप ७।२२, २३

एक नैनन रसी, एक बिहँसनि फँसी, एक भृगुटील तें टक न टारें।
एक कुण्डल तकें, एक भकमक भकें, रीभि रीभनि सबं प्राण वारें।।
एक भुज लखि रहें, जानकी तन तकें लाज गोरा गहें, कहि पुकारें। ९।२६

●

जानकी की मनोदशा का मनोहारी चित्र भी कवि खींचता है—

सलजि सलोनी जिय मूरति बसी है हिय,
जानकी जकी सी है परीज्यों मनि फंद में।

●

ऐते मान लोचन चकोर चितचोर चाहि,
मो में रामचन्द्र कैधों हों ही रामचन्द्र में।। ९।३०

इस प्रसंग में नारद का भी आगमन कवि करवा देता है। उनके माध्यम से भी राम के आगमन की सूचना दिला देता है। भगवान राम की रूपमाधुरी से नारी समाज पूर्णतः विमोहित हो उठता है और प्रतिज्ञा के उल्लंघन के लिए प्रस्तुत हो उठता है—

●

सो सुनो पिनाक तें हमारी टेक हर की सों,
टरिहै न क्यों हू कहीं जनक नृपालकों।
गाम सुम गावो, जय माल पहिरावो,
बेगि बाम्हन बुलाओ, सिय दीन्हीं रामलाल कों।। १०।१०

परशुराम और राम प्रसंग में कवि ने शत्रुघ्न, भरत और लक्ष्मण तीनों से परशुराम संवाद करवा दिया है। परशुराम और राम संवाद शैली और कथा दोनों रूपों में रामचन्द्रिका पर आधारित है। केवल भरत का कथोपकथन मौलिक है। तुलसी के राम जहाँ परशुराम के साथ शील निर्वाह का आचरण करते हैं वहीं जन कवि गोपाल के राम कहीं-कहीं प्रचंड और प्रज्वलित हैं एवं रोषपूर्ण भी हैं। इस प्रसंग में कवि भगवान शिव का आगमन करा देता है और उन दोनों को प्रबुद्ध कराते हुए कहता है—

धाए बे-सम्हार आये पंचानन पलमध्य, दोऊ समुभाए हठ एतो करियतु है।
एकै तुम दोऊ, कोऊ और है न काहे कहि, रारि रचि राम राम वृथा लरियतु है।।
—१३।४६

विवाह-प्रसंग का समापन कवि राम और सीता के अभिन्नत्व के अभिनव के चित्रांकन से करता है जो कवि रसमयता और भक्तिभावना का ज्वलन्त उद्धरण प्रस्तुत करता है—

सीता जू को मन मानसर मै मराल राम, सीता रूप घन बन राम भए मोर हैं।
सीता दुति ललित सफर फूले राम फिरैं, सीता नेह गय राम चितवित चोर हैं।।

सीता स्वाती बूंद, राम चकित गोपाल भनि, सीता गुण गीता, राम पठन को मोर है।
सीता-नैन कुंज में गुंजे भौंर राम जू हैं, सीता मुख चन्द राम लोचन चकोर हैं।
—१४।४६

राम के वन-गमन में कवि नारद को निमित्त बनाता है। इन्द्र का नारद को संकेत कराना और राम को वन-गमन के लिए प्रेरित करना कवि की मौलिक धारणा है—

जिहि भांति राघव जांहि बन, सो भेद करिअ जाइ कैं।
●
रघुनाथ दीन दयाल ह्वैं, जिमि देव संकट टारहीं॥ १९।१४

कैकेयी के महल में भी नारद जाते हैं और कैकेयी से स्पष्ट कहते हैं—

केकई महल पुनि, आपु नारद आये।
बंदि मुनि-चरन, कर टारि बैठक दये॥
नलिन मुख मलिन लखि, बैन हित के कहे।
चाह तुम अवधिपुर, और से हैं लहे॥
सकल यह राजश्री, देत नृप राम कौं।
भरत कैं हेत आये जु तुम धाम कौं॥
राज औ रंक जग, आपनी सुख चहै।
बात साची यहै, बेद बानी कहै॥ १९।२३, २४

नारद ही कैकेयी को स्पष्ट कह देते हैं—

बरस चतुर्द्दस राम, करैं तपहिं मिलि तपिन में।
भरत भोगवैं धाम, यह बर नृप सौं जांचियैं॥ १९।२६

कैकेयी और दशरथ के संवाद पर रामचन्द्रिका का प्रभाव है। कवि की कौशल्या सहज मातृ-भाव की है। उस पर वाल्मीकि का प्रभाव है वह स्पष्ट कहती है।

आनत तिन मंद भागि, विधि गति नियरानी।
यातें बिपरीत कहा, बूड़े बिनु पानी॥
मोहिन कछु अवधि चाइ, करिहौं मनमानी।
नागिनि सी सौत डसी, गरल बाइ बानी॥ २०।१४

वन मार्ग में राम-सीता और लक्ष्मण को जाते देखकर ग्राम बधुओं का कथोपकथन और सीता का प्रत्युत्तर बहुत कुछ गोस्वामी तुलसीदास का आधार लिये हुए है इसके स्पष्ट संकेत के लिए निम्नलिखित पंक्तियां उल्लेखनीय हैं—

घन सुन्दर स्यामल गौर किसोर, कहौ तुमसौं किन सौं हित हैं।
तज तैं न भई करुणा गुरु लोगन, जीवत जे धिग ते नित हैं॥ २२।१७
नव नील कलेवर वल्लभ हैं, अलि गौर किसोर सु देवर हैं।
अवधेश नरेश के नंदन हैं, पितु सासन तें जु तजे घर हैं॥ २२।१८

पंचवटी का बड़ा ही जीवंत और यथार्थ रूपांकन करते हुए कवि कहता है—

जहं काम न, क्रोध न, लोभ न, मोह न द्रोहन की सब ओधि छुटी।
जहं नींद न, भूख न, प्यास न, त्रास न, हासविलासन साथ छुटी॥
जहं भक्ति गोपाल सनातन चारिहुं, चारिहुं मुक्ति समाज जुटी।
रमिये रघुनंदन जू रचिकैं इक पंचवटी तट पर्न कुटी॥२२।४७

सूर्पणखा विरूपण का प्रसंग कवि की सृजनात्मक कल्पना का जहां एक ओर संकेत है वहीं दूसरी ओर उसकी कथा नियोजन की मौलिकता का प्रमाण है। सूर्पणखा सीता की सहानुभूति पाने का झूठा अभिनय करती है। करुणामयी सीता उसे शरण देने के लिए राम से निवेदन करती हुई कहती है—

यौं सुनि सीय भरी करुना करुनामय सौं हँसी बैन उचारी।
आइ भजी बन में हमकौं अब आइ कहाँ यह बेंस नवारी॥
गावत, बीन बजाइ रिझावति, है सुप्रवीन कला अधिकारी।
आरत आइ गही सरनागत, क्यौं तजिये इहि सी वर नारी॥ २३।१८

कवि ने सीता के मुख से सूर्पणखा को लक्ष्मण के पास जाने को कहलाया है—

कही सिया सुनि बाल हैं देवर अति रूप निधि।
लोचन बाहु बिसाल, आइ परे पर उनहिं कैं॥ २३।२९

कवि ने राम के द्वारा सूर्पणखा की नासिका भंग का सुन्दर आयोजन करवाया है—

आवत निकट बहुरि लखि राघव, सर लाघव तिहि नाक हरी।
मानहु बदन रही नहिं नासा, परम आसुरी रूप धरी॥
बिकट दंत बिकराल बदन करि, झपट करति सिय जियहिं डरी।
भभकत करत छिछुयों जितकित, झिरत कुसुम जनु वारिदरी॥ २३।३३

गोस्वामी तुलसीदास के अनुकरण पर गोपालदास भगवान श्री राम से सीता को अग्नि में प्रवेश करा देते हैं और उनके प्रतिबिम्ब प्रकाश को ही रावण हरण के लिए छोड़ देते हैं।

तिहि ते तुम पावक माहिं रहौ।
बिनु सासन आप न बेन कहौ॥
प्रति बिम्बु प्रकास सरूपहि लै।
जिहि तें जग में जुग नाम चलै॥ २३।५०
तुम लच्छन बच्छल छमा धरिहौ।
मिसु कैं रिस कैं थल तैं टरिहौ॥
इहि भांति मतौ करि भेदन हैं।
बनु रावन के कुल छेदन हैं॥ २३।५१

सबरी की भक्ति-भावना में कवि ने सहजता का आश्रय लिया है और उसे एक लोक धरातल की पावनता प्रदान की है—

चरन पखारि, दुहुँनि चरनोदक लै, मुख सिरहिं चढ़ाई भली।
किसलय सयन तुरत रचि तल्लो, फलमूलनि बन लइ चली।।
अति मीठे मुख लगे स्वाद जे, ते दोननि भरि तोरि धरी।
छुधित जानि तिय आतुर तबहीं, रघुवर आगे आनि धरी।। २४।१८

बालि वध के प्रसंग में भगवान राम से उसके वध के कारण को बहुत ही स्पष्ट और विवेकपूर्ण ढंग से युक्तियुक्त ठहराते हुए कहा है—

जानि के अति प्रबल तुमको, हने उर मै बान।
निबल हूँ सुग्रीव, मेरो ग्रह्यो सरन निदान।।
होइ होनी हूँ रहे सब, रचो विधि को जौन।
मानिअे भवितव्य अैसो, दोष कहिअे कौन।। २५।३५

सीता की वियोग-दशा का सजीव चित्रण प्रस्तुत कर कवि ने वियोग की अन्तर्दशाओं के अनेक चित्रों का आकलन किया है।[१] हनुमान-सीता संवाद पर तुलसीदास का प्रभाव है—

राम नाम लखि मुद्रिकै, बूझत अति अकुलात।
प्रभु त्यागी को तूं तजी, कहि अचरज की बात।।
हौं बिछुरी परवस परी, तूं बिछुरी किमि साथ।
कै आई दूती हमैं, मिलवन को रघुनाथ।। २७।३५,३६

हनुमान और विभीषण तथा अंगद की उक्तियों से कवि भेदरहित शुद्ध भक्ति की स्थापना कराता है—

जाति पाँति कुल जाति भाँति कछु ऊँच नीच नहिं जानि परें।
पंडित महा मूढ़ गुन दाता, सुपच कुजातिन होइ करें।।
राम प्रताप प्रसाद ले सकौ, ब्रह्महु पें नहिं जानि परें।
सूकर स्वान जीव कीटादिक, नेंक कृपा भुज चारि धरें।। ३२।३५

राम को प्रताप सब कामको कलपतरु, रामको प्रताप सदा संकर को आप है।
राम को प्रताप तीनों लोक के अभय दानि, रामको प्रताप जग जोति आपै आप है।।
राम को प्रताप महामंगल गोपाल भनि, राम को प्रताप हरें खल दल दाप है।
कहां प्रभुताई को प्रताप करि मान्यो मूढ़, जबलौं न जान्यो रामनाम को प्रताप है।।
३५।१५

कवि ने स्तुतियों के माध्यम से प्रभु राम के परब्रह्म, परम विभु-स्वरूप की सफल स्थापना की है। उनकी स्तुतियाँ रामचरित मानस की स्तुतियों से प्रभाव ग्रहण करती हैं। एक ओर ये स्तुतियाँ जहाँ कवि और उसके पुत्र माखन के पाण्डित्य का निदर्शन करती हैं वहीं सायुज्य भक्ति की, अनपायिनी भक्ति की दृढ़ स्थापना भी करती है।

---

१. रामप्रताप २७।४१,४२,४३

कवि युग बोध से प्रभावित है। वशिष्ट द्वारा सम्पत्ति की महिमा का उल्लेख कराता है और युग-धर्म को उजागर करते हुए कहता है—

संपति तें दंपति विलास को प्रकास होत, संपति तें भारो सनमान उर पावहीं।
संपति तें दान पुन्य प्रीति परमारथ है, संपति तें स्वारथ सुजन मन भावहीं ॥
माखन कहत बड़ाई सब संपति तें, संपति तें सब मन काम जस गावहीं।
संपति विहीन दीन जानि को न आदर तें, याही तें जहाँ न सब संपतिको धावहीं ॥

५।११६

किन्तु भगवान श्री राम के द्वारा धन मोह के त्याग की स्थापना कवि कराते हुए समाज के आदर्श की नींव डालता है—

जे भुव-मंडल में भुवपाल, भए इहिके हितके अभिमानी।
जीति लए बसुधा धन जे, सब एक ते एक भए ब्रतदानी ॥
लच्छि बहे परतच्छ विजच्छनि, छोड़ि न काहुके संग सिधानी।
याहिकें हाथ विकाइ गए, पाहि न काहुके हाथ विकानी ॥ ५।११७

कवि ने गीता का आधार ग्रहण कर ग्रन्थ का समापन किया है उसकी दृढ़ धारणा है।

जुग जुग माह धर्म नास होत जब जब, तब तब भक्त हेत लेत अवतार हैं।
माखन कहत पुन्य पालिकें कलुष घालि, जनपन पालि, हरें भूतलके भार हैं ॥

६।१३४

कवि की दृढ़ धारणा है कि जिस राम की महिमा श्रुति, शेष, महेश, गणेश के द्वारा अकथनीय है उनका वर्णन मनुष्य की मति के परे है किन्तु जब प्रभु की कृपा से भक्ति की तरंग हृदय में उद्वेलित होती है। तभी सिया पति की कृपा से राम-चरित गायन में कवि समर्थ हो पाता है। कवि गोस्वामी तुलसी की भाँति ही अपनी रचना की प्रशंसा और निंदा के निमित्त संत और असन्तों का आधार लेता है। असन्त के लिए उसकी स्पष्ट धारणा है कि—

दुष्ट के मन दुष्टता तकि, देहिं दूषन मूढ़।
भक्ति भावहि को कछु, नहि भेद जानहि गूढ़ ॥

●

सुनत सज्जन हृदय हर्षत, करत विमल प्रसंस।
प्रेम पूरन उर प्रफुल्लित, कमल उर अवतंस ॥

गोपालदास मिश्र और उनका काव्य

भारतीय जीवन दृष्टि मुख्यतः अन्तर्मुखी एवं आत्मपरक है इसीलिए कुछ अपवादों को छोड़कर कवियों एवं साहित्यकारों ने आत्म विज्ञापन से बचने का प्रयत्न किया है। यही कारण है कि प्रायः मनीषियों और महापुरुषों को अपने सम्बन्ध में कुछ भी लिखने में संकोच हुआ है। ऐसी स्थिति में उनकी शालीनता और बहिरंग निरपेक्ष दृष्टि के कारण हम उनके जन्म आदि के प्रामाणिक इतिहास से अपरिचित रह गए हैं। और इतिहास के बिखरे सूत्रों को संजोकर भी उनके जीवन पट को बुनने में असमर्थ ही रहे हैं।

हिन्दी काव्य परम्परा में छत्तीसगढ़ के कवि गोपाल चन्द्र मिश्र का प्रामाणिक जीवन-परिचय उपलब्ध नहीं होता। इनका जन्म संवत १६९० के लगभग माना जाता है। अन्ततः साक्ष्य से प्रमाणित होता है कि इनके पिता का नाम गंगाराम और पुत्र का नाम माखन था।

पूरन पुन्य प्रताप सु गंगा राम के।
तिन नन्दन गोपाल रसिक हरिनाम ॥
तिन सुत माखन कहिय हेतु सुन लीजिए।
अश्वमेध इतिहास कथा करि दीजिए।

—गोपाल कृत जैमिनी अश्वमेध

कवि के वास्तविक नाम पर भी विचार करना आवश्यक है। 'खूब तमाशा' ग्रन्थ में कवि का नाम गोपालदास मिश्र दिया गया है। यह नाम पं० लोचन प्रसाद पाण्डेय द्वारा समर्थित है। पं० रामनरेश त्रिपाठी कृत 'कविता कौमुदी' में कवि का नाम गोपाल चन्द्र मिश्र है। मिश्र बन्धुओं के 'मिश्र बन्धु विनोद' में इनका नाम गोपाल है। काशी नागरी प्रचारिणी की खोज रिपोर्ट (सन् १९४१-१९५७) में इनको 'गोपाल दास चाणक' कहा गया है। यह 'चाणक' क्या है? हिन्दी शब्द सागर में 'चाणक' का यह अर्थ दिया गया है—चाणक—संज्ञा पु० [सं० चाणक्य] १ ईर्ष्या। २ धूर्तता। चाल। दगाबाजी। उ० आगे चाणक ने ठहाके लगाये हैं। पर यह अर्थ सम्भव नहीं प्रतीत होता है। मीर कासिम अली साहब ने अपने पत्र में लिखा है 'गोपाल कवि और माखन कवि' इनके (राजा राजसिंह के) चाणक थे। निश्चय ही यह चाणक प्रसिद्ध चन्द्रगुप्त मौर्य के मन्त्री थे। चाणक्य से सम्बन्धित है जिस प्रकार चाणक्य सुप्रसिद्ध थे उसी प्रकार गोपाल राजा राजसिंह के चाणक्य या मन्त्री थे।

पं० राम नरेश त्रिपाठी ने 'कविता कौमुदी' में इनके (राजसिंह के) दीवान होने की बात कही भी है। 'खूब तमाशा' के तेरहवें शतक के अन्त में जो पुष्पिका दी गई है जिनकी पदावली एक ही है इसमें भी कवि को चाणक कहा गया है—"इति श्री हैहय कुल कारण प्रकाश भास्कर (प्रताप) राजा राजसिंह चूड़ामणि चाणक गोपाल विरचित विभेद शतक समाप्त।" राजा राजसिंह ने गोपाल कवि को 'खूब तमाशा' ग्रन्थ रचने की आज्ञा दी थी—

राजनीति चाणक कवी धार्यो यह मन सोय।

—खूब तमाशा

रामप्रताप में कुल ६१ अध्याय हैं। हर एक अध्याय में एक ही पुष्पिका है। इन पुष्पिकाओं में तो चाणक नहीं है, चूड़ामणि वर्तमान है यथा—"इति श्री रामप्रताप प्रकाश भास्कर चूड़ामणि गोपाल विरचितायां एकसठिमोऽध्यायः ॥६१॥

गोपाल कवि ने राम प्रताप में कई स्थानों पर 'बरनत जन गोपाल' अथवा जन कवि शब्द का प्रयोग किया है। हमें तो ऐसा लगता है कि कवि का वास्तविक नाम गोपाल चन्द्र है। भक्ति-भाव के कारण जन गोपाल या गोपालदास हो गया है। संक्षेप में वह गोपाल ही रह जाता है। 'चाणक' उसका राजकीय पद है जो उसके मन्त्री या दीवान होने का सूचक है। डा० किशोरी लाल गुप्त का कहना है कि "खूब तमाशा" के एक छन्द में 'चूड़ामणि चाणक' आया है—"नृपराजसिंह सुमति को चूड़ामणि चाणक कियो" यह चूड़ामणि चाणक 'कियो' क्रिया का कर्ता है। चूड़ामणि चाणक ने 'खूब तमाशा' ग्रन्थ रचा, अस्तु यह चूड़ामणि गोपाल की उपाधि या पदवी प्रतीत होती है और 'चाणक' उनके पद का सूचक।[१]

छत्तीसगढ़ के महत्त्वपूर्ण महाकवि गोपालदास पर सर्वप्रथम ध्यान हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान स्वर्गीय लोचन प्रसाद पाण्डेय का गया। स्व० पाण्डेयजी ने गोपाल और उनके पुत्र माखन पर सन् १९१४ की 'हितकारिणी' पत्रिका में एक लेख लिखा था जिसमें इनके ग्रन्थों का परिचय दिया गया है। इसी लेख की चर्चा सैय्यद कासिम अली ने अपने पत्र (सन् १९४१ ई०) में की है। उनका यह पत्र काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की खोज रिपोर्ट सन् १९४१—४७ में पृष्ठ ६०, ६१ पर प्रकाशित हुआ। स्वर्गीय लोचन प्रसाद पाण्डेय ने पुनः दो वर्ष के पश्चात् सन् १९१५ ई० में काशी से प्रकाशित 'इन्दु' मासिक पत्रिका में 'छत्तीस गढ़ के प्राचीन हिन्दी कवि' शीर्षक लेख में गोपाल चन्द्र मिश्र का नामोल्लेख किया।

खूब तमाशा

'खूब तमाशा' का पहला प्रकाशन सरस्वती विलास प्रेस, नरसिंहपुर से सन् १९१५ में हुआ। इस प्रकाशित प्रति में शतकों की संख्या का निर्देश नहीं है।

---

१. चूड़ामणि चाणक गोपालदास और उनका कर्तृत्व—डा० किशोरी लाल गुप्त —अप्रकाशित लेख।

विभिन्न शतकों के चुने हुए छन्द ही समाहित किये गए हैं। इसका दूसरा प्रकाशन भी सन् १९१५ में ही हुआ था। रायपुर निवासी लाला धरणी धर ने इस ग्रंथ को सम्पादित कर तथा इसमें ६ पृष्ठ की भूमिका जोड़कर इसे लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस मुम्बई से प्रकाशित कराया। लाला धरणीधरजी ने अपने सम्पादकीय में 'इन्दु' मासिक में प्रकाशित पाण्डेय जी के लेख का उल्लेख करते हुए उससे प्राप्त सहायता के प्रति कृतज्ञता भी ज्ञापित की है। लाला धरणी धर रामगढ़ रियासत में मुख्तार थे। सन् १९०० के आस-पास तत्कालीन रायगढ़ नरेश भूपसिंह देव ने कहीं से प्राप्त कर एक हस्तलेख लाला धरणी धर को प्रतिलिपि करने के लिये दिया था इसमें निम्नांकित ग्रंथ थे—

१. गोपाल दास कृत रामप्रताप का कुछ अंश
२. खूब तमाशा तेरहों शतक
३. बिहारी सतसई
४. कवि प्राणनाथ रचित अंगद संवाद
५. कामकंदला

सम्भवतः 'खूब तमाशा' की हस्तलिखित प्रति लाला जी को यहीं से प्राप्त हुई थी।

लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस मुम्बई से प्रकाशित ग्रन्थ खूब तमाशा में १३ प्रखंड हैं—

१.	नीति शतक	९८ छन्द
२.	मंत्रशतक	९९ छन्द
३.	शिक्षा शतक	१०६ छन्द
४.	राज्य शतक	४२ छन्द
५.	कवि शतक	९४ छन्द
६.	कर्म शतक	६३ छन्द
७.	पुण्य शतक	३१ छन्द
८.	वीर शतक	३९ छन्द
९.	कीर्ति शतक	८६ छन्द
१०.	विनोद शतक	५१ छन्द
११.	योग भक्ति शतक	९३ छन्द
१२.	श्रृंगार शतक	३३ छन्द
१३.	रामायण शतक	१८ छन्द

खूब तमाशा की रचना गोपाल कवि ने रतनपुर के हैहय वंशीय राजा राजसिंह के आदेश से संवत १७४६ वि० में की थी—

आयसु दियो सुकवि गोपालहि, कियो जो बहुत विलासा।

संवत् सत्रह सौ षट चालीस, ऋतु पावस हितकारी।
महाराज श्री राजसिंह नृप, जिन यह जुगत बिचारी॥

राजें राजा राजसिंह, राजसिंह सिरताज।
राजि रतनपुर आदि कें, उद्दित अटल समाज॥

सकल धर्म की थाप धरा पर, राज कियो जिन्हि तोरा।
श्री साहिब के हुकुम पाय, कवि खूब तमाशा जोरा॥

राजपुर के पास कजरा नामक तालाब था। वहाँ अच्छा खासा मेला लगता था। सुन्दरियों का जमघट लगता था। राजसिंह इस मेले का पूर्ण आनन्द लेते थे। इस ताल पर राजा की बैठक बनी हुई है—

कजरा नाम सरस सर सुन्दर, बैठत भूप विराजे।
तहाँ कियो अनुसार सुकवि सब, खूब तमाशा साजे॥

साँची सब बातें कहीं, झूठी एक न होय।
राजनीति चाणक कथो धार्‌यो यह मन सोय॥

नीति शतक के प्रथम २९ छन्द प्रस्तावना स्वरूप है। इन्हीं में कवि ने सभी प्रकार की सूचनाएं दी है। इस ग्रन्थ के सम्बन्ध में लाला धरणीधर ने लिखा है कि—"ग्रन्थ में कवि ने विस्तृत एवं व्यवस्थितरूपेण ग्रन्थ-निर्माण कारण, रचना-काल, राजा राजसिंह के गुण, रतनपुर व वहाँ के ताल सरोवर, देवी, देवताओं का और भारतवर्ष के अन्यान्य प्रान्तों और वहाँ के जाति, धर्म, व्यवहार, वस्तु व लोगों के पुण्यकर्म, स्वभाव और पुण्य क्षेत्रों, नदियों, तीर्थ स्थानादि के महत्व का वर्णन किया है। प्रत्येक शतक के वर्णित विषय का मानो प्रत्यक्ष चित्र सा खींच दिया है। कविता कहीं ओजस्वी, सारगर्भित, मनोहारिणी, भावपूर्ण, सरस, सुबोध प्रभावकारिणी और उपदेशपूर्ण है। विविध छन्दों में विषय वर्णित है, विशेषकर चौबोला छन्द का प्रयोग है।

इस कृति के सम्बन्ध में डा० किशोरी लाल का कहना है कि "यह अनुपम ग्रन्थ अगाध पाण्डित्य का परिचायक है। ग्रंथ के पढ़ने से कवि की प्रतिभा अद्‌भुत कवित्व शक्ति और स्पष्टवादिता का पता चलता है। पढ़ते ही जी छोड़ने को नहीं चाहता, मुक्त कंठ से कवि की बार-बार प्रशंसा करनी पड़ती है।[१]

पण्डित लोचन प्रसाद पाण्डेय के अनुसार गोपाल मिश्र अपने युग के महाकवि थे। आश्चर्य है कि जिस कवि को पाण्डेजी महाकवि स्वीकार करते हैं उसी कवि को मिश्र बन्धुओं ने 'मिश्र बन्धु विनोद' के विवरण में—"साधारण श्रेणी माना है। यही है—भिन्न रुचि लोकाः।

---

१. चूड़ामणि चाणक गोपालदास मिश्र और उनका कर्तृत्व—डॉ० किशोरी लाल गुप्त —अप्रकाशित लेख।

जैमिनी अश्वमेध :

इस ग्रंथ का प्रकाशन खैरागढ़ नरेश ने वेंकटेश्वर मुद्रणालय बम्बई से सं० १८५५ में कराया था। इस ग्रन्थ की रचना कवि ने सं० १७५२ में की थी। ग्रन्थ का प्रतिपाद्य विषय युधिष्ठिर द्वारा आयोजित अश्वमेध यज्ञ है। इसमें कुल ५१ अध्याय हैं।

भक्ति चिंतामणि :

कृष्ण काव्य की परम्परा में इस प्रबन्ध काव्य का वर्ण्य विषय ९० अध्यायों में विभक्त है। राम प्रताप का सम्पादन करते समय डॉ० विद्याधर मिश्र को पाठालोचन के लिए श्री उदय शंकर दुबे ने हमें राम प्रताप की जो दूसरी पाण्डुलिपि भी दी थी। उसी जिल्द में भक्ति चिन्तामणि ग्रन्थ भी था। इस ग्रंथ का प्रकाशन हरिप्रकाश यंत्रालय, काशी से संवत १९४१ में हो चुका है।

सुदामा चरित :

काशी नागरी प्रचारिणी सभा काशी की त्रैवार्षिक रिपोर्ट (सन् १९०६-१९०८) में इस ग्रन्थ के सम्बन्ध में यह विवरण है—

"गोपाल-कोई भक्त सम्भवतः चरखारी नरेश के आश्रित गोपाल (बंदीजन) संवत १८५३ के समय वर्तमान। सुदामा चरित (पद्य)—०६-२५३।"

यह हस्तलेख लाला रूपनारायण पन्ना के पास था। इसका लिपिकाल संवत् १९३१ है और रचनाकाल संवत् १८५२ है। यह कवित्त सवैया में है। विवरण अप्राप्त है। रचना काल को देखते हुए गोपालचन्द्र मिश्र की कृति नहीं कही जा सकती किन्तु कवि की इस कृति में जो रचना संवत का उल्लेख मिलता है उस पर भी विचार करना आवश्यक है।—

आश्विनि बदि गोबिंद तिथि, औ कहिये गुरुवार।
शम्भुबदन सर उरग शशि, संवतार निरधार॥

उक्त दोहा का अर्थ इस प्रकार है—शशि = १ संख्या का वाचक, उरग = ८ संख्या का वाचक, सर = ५ संख्या का वाचक, शम्भुवदन = ५ संख्या का वाचक। अंकानामवामतोगतिः के अनुसार यह कृति संवत १८५५ की ठहरती है जो असम्भव है। मेरी समझ से लिपिकारों की असावधानी के कारण 'तुरग' शब्द की जगह(तुरग = ७-संख्या का वाचक) 'उरग' हो गया है। यदि 'उरग' के स्थान पर 'तुरग' कर दिया जाय तो इस कृति का रचना काल सम्वत १७५५ हो जाता है। इस तरह से सारी विसंगतियों का समाधान हो जाता है। सुदामा चरित में कुल १०४ छन्द हैं। ग्रन्थ का वर्ण्य विषय सुदामा और कृष्ण की मैत्री है। ग्रन्थ अप्रकाशित है।

छन्द विलास :

छन्द विलास गोपाल कवि की रचना है। इसकी प्रामाणिकता के लिए कोई ठोस सामग्री उपलब्ध नहीं होती। प्राप्त तथ्यों के अनुसार 'छन्द विलास' गोपाल

कवि की रचना नहीं अपितु उनके पुत्र माखन कवि की है। खोज रिपोर्ट (१९४१। १९१) का जो विवरण मिलता है उससे कुछ नये तथ्य का आभास मिलता है।

मंगल श्री गुरुदेव गणेश, कृपाल गोपाल, गिरा सरसानी।
बंदन कै पद पंकज पावन, पावन छन्द विलास बखानी ॥१॥
राजसिंह नृपराज मणि, हैहै वंश प्रकास।
सुबस रायपुर में रच्यो सुन्दर छन्द विलास ॥२॥
सदा सुकवि गोपाल को, श्री गोपाल कृपाल।
तिन सासन हित मैं रच्यो, छन्द विलास रसाल ॥३॥
या तें पिंगल ग्रन्थ पढ़ि, कीन्हों छन्द विलास।
पढ़ें गुनें सुमतें बढ़ें, दिन दिन बुद्धि प्रगास ॥४॥

प्रथम उद्धरण 'गोपाल गिरा सरसानी, 'छन्द विलास' बखानी' तथा तृतीय उद्धरण 'सदा सुकवि गोपाल' से स्पष्ट पता चलता है कि यह ग्रन्थ गोपाल ने लिखा है और इसका नाम 'छन्द विलास' है किन्तु निम्न लिखित छन्द से यह पता चलता है यह रचना माखन की है—

नर बानी पिंगल रच्यो, छन्द सेस मति धारि।
जथा सुमति माखन रच्यो, बुध जन लेहु विचारि ॥६॥
पिता सुकवि गोपाल को, यह भयो सासन जबै।
विनय पद बंदन कियो, हिय सुमति बाढ़ी तबै ॥७॥
अति भरि पिंगल सिन्धु में, मति मीन ह्वै कै संचरो।
मथि काढ़ि छन्द विलास माखन, कविन सो बिमलौ करो ॥८॥

ग्रन्थ की पुष्पिका से पता चलता है कि ग्रन्थ का नाम 'श्री नागपिंगल' है किन्तु ग्रन्थ के भीतर ग्रन्थकर्ता ने 'छन्द विलास' नाम का पाँच बार उल्लेख किया है और छन्द की पुष्पिका से पता चलता है कि यह कृति माखन की है—"इति श्री नागपिंगल भासा माखन कृत मात्रा वृत्त सम्पूर्ण समाप्त शुभमस्तु" ॥ इस सम्बन्ध में डा० किशोरी लाल गुप्त का मत है कि "छन्द विलास और श्री नागपिंगल" एक ही ग्रंथ के दो नाम हैं। इनके रचयिता माखन ही हैं। यह माखन गोपाल के पुत्र थे। मैं यह भी स्वीकार करने के लिए विवश हूँ कि गोपाल ने 'छन्द विलास' नाम से कोई ग्रन्थ नहीं लिखा[1]।"

मेरी समझ से इस ग्रन्थ की रचना पिता-पुत्र ने मिलकर की। जिस तरह से राम प्रताप का पूर्वार्द्ध गोपालदास और उत्तरार्द्ध माखन ने लिखा किन्तु ग्रन्थ की सभी पुष्पिकाओं में गोपालदास का ही उल्लेख है, माखन का नहीं, ठीक उसी प्रकार से 'श्री नाग पिंगल' की रचना पिता-पुत्र ने मिलकर की और ग्रन्थ की पुष्पिका में माखन का ही नामोल्लेख किया।

१—चूड़ामणि चारण गोपालदास मिश्र और उनका कर्तृत्व—डॉ० किशोरीलाल गुप्त—अप्रकाशित लेख।

रामप्रताप—

रामप्रताप राम कथा सम्बन्धी अद्‌भुत एवं जटिल ग्रन्थ है। कवि ने राम के सम्पूर्ण जीवन को ६१ अध्यायों में वर्णित किया है। पं० रामनरेश त्रिपाठी की 'कविता कौमुदी' के अनुसार रामप्रताप का आधा भाग गोपालचन्द्र मिश्र ने लिखा और शेष भाग उनकी आज्ञा से माखनचन्द्र ने लिख कर पूरा किया। रामप्रताप से प्राप्त तथ्यों के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि ग्रन्थ का निर्माण पिता-पुत्र ने मिलकर किया—

> **बरनि कवि गोपाल ग्रन्थहि, दियो सुतहि निदेश।**
> **बंदि चरन सरोज माखन; धर्म हित सो सेस॥**

(राम प्रताप ६१।८१)

पहले गोपाल ने रामप्रताप का कुछ अंश लिखा और माखन को यह आदेश दिया कि तुम यह ग्रन्थ पूरा कर डालो। माखन ने अपने पिता की आज्ञा को शिरोधार्य कर उनके चरणों की वन्दना कर रामप्रताप का शेष भाग पूरा किया।

राम प्रताप के सम्बन्ध में डॉ० किशोरीलाल गुप्त का मत उल्लेखनीय है— 'निश्चय ही गोपालदास और उनका रामप्रताप श्रेष्ठ ग्रन्थ है। इसका आदर्श केशव की रामचन्द्रिका है। यह भी विविध छन्दों में विरचित है और छन्द बराबर बदलते गए हैं। राम कथा का यह काव्य रामचन्द्रिका के समान ही यत्र-तत्र दुरूह और गूढ़ हो गया है। इसमें यहाँ-वहाँ कोई न कोई नया अप्रचलित संस्कृत का तत्सम शब्द मिल जाता है। भूदार का अर्थ शूकर होता है और पुनर्भव का अर्थ नख। इसे कौन विश्वास करेगा। पर ये दोनों शब्द इसी अर्थ में प्रयुक्त हैं। ऐसे अनेक अप्रचलित शब्द यहाँ प्रचलित कर दिये गये हैं। यत्र-तत्र केशव के जोड़ पर छन्द रचना भी की गई है।[१]

गोपालदास मिश्र छन्दों के अच्छे पारखी थे। उन्होंने अपने सम्पूर्ण ग्रन्थों में ७९ प्रकार के छन्दों का प्रयोग किया है जिसमें ३७ मात्रिक और ४२ वर्णिक छन्द हैं। रामप्रताप में ७२ तरह के छन्दों का प्रयोग किया गया है। कवि ने किसी नये छन्द का प्रयोग नहीं किया है। सभी छन्द पारम्परिक हैं। हाँ, छन्दों के नामकरण में थोड़ा नामान्तर अवश्य किया है। रामप्रताप में पद-पद पर छन्दों के परिवर्तन से जहाँ एक ओर भाव-धारा की निरन्तरता खटकती है वहाँ दूसरी ओर कूट-शब्दों के सायास प्रयोग से पाण्डित्य प्रदर्शन भी झलकता है।

पाण्डुलिपियों के प्रसंग में—

रामप्रताप की पहली प्रति पौष कृष्ण पंचमी संवत् १८४२ की है। इस ग्रन्थ की प्रतिलिपि बाबू इन्द्रसाहि ने खैरागढ़ (मध्य प्रदेश) में बैठकर की थी—

१—चूड़ामणि चाणक गोपालदास और उनका कर्तृत्व—डॉ० किशोरीलाल गुप्त —अप्रकाशित लेख।

"पक्ष बेद बसु चन्द्रधरि, दहिने गति सो धार।
पौष शुक्ल लिखि पंचमी, पुस्तक लिखि तैयार॥"

"लिखे बाबू रुद्रसाहि पैरागढ़ बैठे रामप्रताप के पुस्तक लिखे समाप्त शुभमस्तु। संवत् १८४२ के साल पौष बदि ५ कह।"

इस ग्रन्थ के दाहिने तरफ हाशिया से पहले कहीं-कहीं यह लिखा है कि—'रामप्रताप की पोथी से प्राप्त।' प्रतिलिपिकर्ता ने यदि यह उल्लेख कर दिया होता कि जिस पोथी से वह प्रतिलिपि कर रहा है वह पोथी गोपालदास के स्वाक्षरों में है अथवा अन्य किसी के, तो बड़ी सुविधा होती।

यह हस्तलिखित ग्रन्थ हमें (डॉ० विद्याधर मिश्र को) श्री उदयशंकर दुबे के सौजन्य से प्राप्त हुआ था। सम्पादन के पूर्व उनकी अनुमति लेकर इस पाण्डुलिपि को हमने 'श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय', कलकत्ता को समर्पित कर दिया। इस प्रति में कुल पत्रकों की संख्या ११० है। ग्रन्थ की पाण्डुलिपि दो लिपिकारों ने मिलकर तैयार की है क्योंकि ग्रन्थ के पूर्वार्द्ध अक्षरों की लिखावट उत्तरार्द्ध अक्षरों की लिखावट से भिन्न है। पूरे ग्रन्थ में पुराने देशी कागज का प्रयोग किया गया है। प्रतिलिपि के अक्षर भी पुरानी शैली में लिखे गए हैं। देवनागरी लिपि के प्रचलित वर्ण का प्रयोग किया गया है पर कुछ अक्षर अवश्य अपने विशिष्ट और विचित्र रूप से प्रयुक्त हुए हैं। यह विचित्रता प्रायः संयुक्ताक्षरों और मात्रा-युक्ताक्षरों में है। पाण्डुलिपि काफी जर्जर हो चुकी है। कहीं-कहीं अक्षर कीटदष्ट हो गए हैं।

पाठालोचन के सन्दर्भ में राम प्रताप की दूसरी प्रति भी हमें (डॉ० विद्याधर मिश्र को) श्री उदयशंकर दुबे से ही मिली। इसकी लिखावट सुन्दर और स्पष्ट है। इसमें कुल २०१ पत्रक हैं। ग्रन्थ में पुष्पिका के पश्चात् "संवत् १९०६ के साल लिखितं बिसावली बाबू कमल क्षेत्र महानदी तटे स्थान बैठे पुस्तक संपूर्णा" लिखा है। तात्पर्य यह है कि इसका रचनाकाल संवत् १९०६ है।

इन्हीं दोनों प्रतियों के आधार पर रामप्रताप का सम्पादन किया गया है। दोनों प्रतियों में पाठान्तर बहुत कम है। पाठ निर्धारण करते समय पाठान्तर शीर्षक के सामने स्वीकृत पाठ को पहले स्थान पर और सम्भावित पाठ को दूसरे (१, २) स्थान पर रखा गया है।

—सम्पादक द्वय

आभार

आज 'राम प्रताप' के प्रकाशन मुहूर्त पर पं० उदयशंकर दुबे के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन हम सब का पुनीत कर्त्तव्य है जिनके साधु प्रयास तथा अनुसंधान-दृष्टि के फलस्वरूप 'राम प्रताप' की दोनों हस्तलिखित प्रतियाँ प्राप्त हो सकीं। इस प्रकाशन-यज्ञानुष्ठान का भार सहर्ष वहन करने का दायित्व जिस कर्त्तव्य-बोध से 'श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय' की कार्यकारिणी के सदस्यों ने उठाने का संकल्प लिया उसी का परिणाम राम-भक्ति साहित्य का यह अभिनव ग्रन्थ है। इस प्रकाशन योजना को मूर्तमान करने के मूल प्रेरक हैं साहित्य और समाज के संरक्षक मान्यवर श्री राधाकृष्ण नेवटिया। भाई श्री जुगल किशोर जेथलिया की प्रेरणा अन्तःसलिला सरस्वती की भांति निरंतर हमें अभिसिंचित करती रही। श्री शिवरतन जासू (अध्यक्ष) एवं श्री महावीर बजाज (मंत्री) ने ग्रन्थ को प्रकाशित कराने में जो परिश्रम किया वह स्तुत्य है।

हिन्दी-राम-कथा-साहित्य के मूर्धन्य विद्वान आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री ने पाण्डुलिपि का अवलोकन कर, इसके प्रकाशन की संस्तुति देकर जो उत्साहवर्द्धन किया वह उनकी साधुता का विशेष परिचायक है। पाण्डुलिपियों के प्रकाशन में अभूतपूर्व योगदान देने वाले अधीत विद्वान डॉ० किशोरी लाल गुप्त ने जिस तन्मयता और तप से कई महीनों तक अत्यधिक व्यस्त होने के उपरान्त भी अक्षरशः पाठालोचन में योगदान दिया, अमूल्य सुझावों से शब्दों और अर्थों के निर्धारण में जो दिशा निर्देश किया उन सबके लिये वे हमारे प्रणम्य हैं, स्तुत्य हैं।

कवि के व्यक्तित्व निर्धारण तथा काव्य में प्रयुक्त छन्दों, शब्दों और अर्थों के निरूपण में अपने शास्त्रीय ज्ञान से हमारा दिशा निर्देश करनेवाले आचार्य डॉ० शिवादत्त द्विवेदी प्रकाशन के इस पावन बेला पर और भी स्तुत्य हो उठते हैं। प्रकाशन-यज्ञ को पूर्णता प्रदान करने में जिन पुस्तकालयों के अधिकारियों ने सौहार्द्रपूर्ण सहयोग दिया है उनमें काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग तथा पूर्वांचल का प्रसिद्ध हिन्दी पुस्तकालय सेठ सूरजमल जालान पुस्तकालय, कलकत्ता विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। जालान पुस्तकालय के भूतपूर्व पुस्तकाध्यक्ष पं० बदरी नाथ जी पाण्डे तथा वर्तमान पुस्तकाध्यक्ष श्री श्रीराम तिवारी की सेवाओं के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना अपना कर्त्तव्य समझते हैं। प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से जिन विद्वानों का, उनकी कृतियों का योगदान हमें मिला है उनके प्रति हम अपना विनम्र आभार प्रकट करते हैं। प्रकाशन को मूर्त रूप देने में भगवान राम का ही अनुग्रह है।

—सम्पादक द्वय

अनुक्रमणिका

अध्याय क्रमांक	विवरण	पृष्ठ
१	मंगलाचरण	१
२	श्री राम जन्म	१२
३	राम-बाल-क्रीड़ा	१९
४	विश्वामित्र-राजा दशरथ संवाद	२७
५	राम-लक्ष्मण-विश्वामित्र-संगमन	३८
६	ताड़का-वध यज्ञ-रक्षा	४९
७	राजा जनक प्रतिज्ञा स्वयंवर-गमन	६५
८	सिया-स्वयंवर	७२
९	विश्वामित्र राजा जनक मिलन	८७
१०	धनुष भंग	९९
११	दशरथ-जनक मिलन	११०
१२	राम विवाह	१२६
१३	परशुराम-श्रीराम संवाद	१३९
१४	राम विवाह विलास	१५०
१५	श्रीराम विलास	१५९
१६	श्रीराम वर्ष-गांठ	१६८
१७	षटऋतु वर्णन	१७७
१८	एकादशी व्रतकथा	१८५
१९	राम-वनागम	१९९
२०	श्रीराम वन-गमन	२०९
२१	भरत-अयोध्या-समागमन	२१७
२२	श्रीराम पंचवटी प्रवेश	२२६
२३	सीता हरण	२३७
२४	श्रीराम पंपा-दर्शन	२५२
२५	बालि-वध सुग्रीव राज्य-वर्णन	२६१
२६	हनुमान-संपाति-संवाद	२७१
२७	हनुमान-सीता-दर्शन	२७९

अध्याय क्रमांक	विवरण	पृष्ठ
२८	हनुमान-सीता संवाद	२८६
२९	हनुमान-युद्ध लंका-दाह	२९६
३०	राम-पयान सागर-दर्शन	३१६
३१	विभीषण-विषाद	३२६
३२	विभीषण-मिलन	३३५
३३	समुद्र-बन्धन श्रीलंका-दर्शन	३४३
३४	राम-मंत्र लंका-सज्जनिका	३५२
३५	अंगद-रावण-संवाद	३६२
३६	लंका-युद्ध	३७३
३७	लंका-युद्ध वर्णन	३८३
३८	राम नाग-फांस-विमोचन	३८९
३९	लक्ष्मण-शक्ति-संमोहन	३९९
४०	हनुमान संजीवनी-गमन कालनेमि-बंधन	४०८
४१	लक्ष्मण शक्ति-कष्ट विमोचन	४१९
४२	मेघनाद-वध वर्णन	४२७
४३	कुम्भकर्ण वध	४३८
४४	मकराच्छ-वध रावण-मंत्र	४४८
४५	रावण-मंत्र यज्ञ-भंग	४५५
४६	रावण-सैन्य संघार	४६५
४७	रावण-वध	४७६
४८	सीता-सपत श्रीराम-मिलन	४८७
४९	राम-अयोध्या-आगमन	५०२
५०	राम-राज्याभिषेक	५१२
५१	राम-कीर्ति-प्रताप	५२२
५२	श्रीराम मृगया-गमन-अंतह्पुर-प्रवेश	५२९
५३	श्रीराम-राज्य-विलास	५३७
५४	श्रीराम-प्रेम-स्तुति	५४३
५५	सीता-वन, कुश-लव-जन्म	५५२
५६	कुश-लव-युद्ध शत्रुघ्न-विमोहन	५६३
५७	कुश-लव-युद्ध लक्ष्मण-संमोहन	५७३
५८	श्रीराम-राज्य-वर्णन	५८०
५९	लवणासुर वध	५८९
६०	लक्ष्मण-परलोकगमन	५९८
६१	श्रीराम वैकुंठ-गमन	६०४

★

राम प्रताप

(१)

(श्री राम-गर्भागम, रावण-माया दर्शन)

मंगलाचरण

घनाक्षर

मंगलकरन, महा त्रिघन हरन रूप, सारद सुमति गनि बेद विधि कहे हैं।
जोग को महेस, तप तेज को दिनेस जानि, सीतल मयूख जोति सुधाधर लहे हैं।।
प्रभुता को इन्द्र, रस रंगनि को कामदेव, भार को असेष सेष नाग वेष गहे हैं।
पूरण प्रकास अंस तीनहुं भुवन भरि, सब ही में बकै आपु राम रमि रहे हैं।।१।।
मंगल असेषन के मंगल करन महा, मंगल चरन रमा उर के रवन हैं।
सिब मन भूषन, सुरेस दाप दूषन, मयूख नख चन्द के पयूख के भवन हैं।।
त्रिभुवन मण्डन ये, बलि दाप खण्डन ये, बिपति बिहण्डन ये, श्रुति के स्रवन हैं।
सुषमा के हृद, त्रय ताप के हरन गद, सीता पति पद, मुनि श्राप के दवन हैं।।२।।

दोहा

पुरुष अनादि अनन्त गति, अपरमपार अपार।
बरनत बेद पुरान सो, त्रिभुवन त्रिगुन बिहार।।३।।

रुचिरा छन्द

रामायन अवतार सिरोमनि, रामायन सत कोटि भये।
तीनहुँ लोक रचत रचना को, रूप सील गुनि गनि न गये।।
यातें बरनि सकत नहि महिमा, लघुमति तें अति चकित भये।
संकत सन्त, सुकवि प्रतिहासहि, बाल-बोध-हित रुचिर मये।।४।।

---

१. सारद : शारदा, मयूख : किरण, दीप्ति। सुधाधर : चन्द्रमा।
२. दाप : दर्प, अहंकार, रोष। पयूख : पीयूष, अमृत। गद : रोग, आसुरी वृत्ति।
४. संकत : शंका करेंगे।

जोग जज्ञ व्रत दान पुन्य तप, जप न येक कछु जाल करे।
तातें राम नाम रसना रस, रुचि रुचि रचि रचि परनि परे॥
नर सरूप नारायन जू के, वरनत नेकु न संक धरे।
सुनि सुनि श्रवन महा तम विस्तर, अभिअन्तर अभिलाष भरे ॥५॥

दोहा

रामचन्द्र पूरन कला, कीरति बिसद विसाल।
महा मनोहर रूप रुचि, बरनत जन गोपाल ॥६॥

छप्पै

बालमीक मुनि राम-चन्द जस-सुधा-सिन्धु किय।
त्रिभुवन मंगल हेत मन्त्र, उपदेश - सार दिय॥
पावन परम पुनीत सन्त, सानन्द होत सुनि।
पूरन ब्रह्म विलास, प्रगट गुन रूप सकल गुनि॥
यह जानि हृदय गोपाल जन, उपजी प्रीति प्रतीति मन।
चरनारविन्द आनन्द जय, कारन सदा जानकि रमन ॥७॥

घनाक्षर

बंदन सकल सुर मंगल पदारविन्द, आनंद के कन्द मकरंदनि भिरतु हैं।
पीवत सनक सुक सारद निगम नित, प्रेमनि सहित चित भावनि भिरतु हैं॥
भनत गोपाल अति मंजुल मनोहर की, लोचन समाइ रूप-जल में तिरतु हैं।
जानकी-रमन पद-पंकज सदा ही पर, मेरो मन भौंर कैसी भांवरी फिरतु है ॥८॥

दोहा

सर्वंसहा सहि जाचना, जाति भई सुर लोक।
कही बिलखि रचना सर्व, विधि सौं करि करि सोक ॥९॥

पाठान्तर-८ सारद : नारद (१, २)

५. परनि परे : आदत पड़ना, प्रथा। संक : शंका।
९. सर्वंसहा : पृथ्वी, जाचना : यातना, कष्ट

छप्पै

वसुधौवाच—

सकल लोक-पति आपु, लोक सोकित समस्त किय।
बिस्व जोनि विख्यात, बिस्व चिन्ता न चित्त दिय॥
जोग जज्ञ व्रत नेम, धर्म निर्मूल सर्ब हुव।
सहि न सकत सन्ताप दाप, दनु ताप प्रबल भुव॥
दस-सीस दसहु दिसि दीन किय, तुम्हहि सकल संकट-हरन।
आरत-समुद्र अवलम्ब दै, दीन-बन्धु रक्खहु सरन॥१०॥

द्रुमिला

बहुभेव समस्त बिरंचि बिचारि, भरे चित सोच अपारन हैं।
अति संकट दुर्घट कर्म सबै, दनु वृंद बड़े बल भारन हैं॥
तब बोलि सबै सुर-राज-समाजहि, सोचि कहें सब कारन हैं।
हरतै भुव-भार अपारन कौं, हरि लेत सदा अवतारन हैं॥११॥

छप्पै

ब्रह्म-लोक सुर-गन समस्त, इन्द्रादि देव तब।
अति अद्भुत कारन बिचारि, रचि दिव्य मंत्र सब॥
भये जाइ पय-सिन्धु तीर, आरत उमाह अति।
अस्तुति करत अपार, सुनो करुनामय श्रीपति॥
तिहुं लोक सोक-संतापमय, सब रावन डर थरहरैं।
देवाधिदेव, दनु दाप तें, प्रभु बिनु को रक्षा करैं॥१२॥

गीतिका

जय वासुदेव अनंत अद्भुत, सकल त्रिभुवन मंगलं।
त्रय ताप नासन तरन तिहुंपुर, हरन दुस्तर कलिमलं॥
जय आदि बिस्नु बिलास नायक, नित्य पुरुष निरंजनं।
निज भक्ति प्रेम प्रकास पूरन, भक्त-जन-भय-भंजनं॥१३॥

---

(११) भार अपारन : भार उतारन (१, २)

---

१०. दनु : दनुज।
११. दुर्घट : जिसका होना कठिन हो,
१२. दुस्तर : जिसे पार करना कठिन हो, विकट।

जय त्रिजग तारन त्रिगुन मूरति, त्रिदस पद रज वंदनं।
जग सकल कारन कर्म किल्विष, विषय-दंद-निकंदनं॥
जय जोग जज्ञ समाधि साधन, सिद्धि मंत्र परायनं।
निजु सर्व पर चरनारविंद, सु जयति जय नारायनं॥१४॥

छप्पै

मधुर सब्द उच्चार भयेउ, पय-सागर ही मैं।
हौं हरिहौं भुव-भार, सार मत धारहु जी मैं॥
चतुर व्यूह अवतार ले सु, जग आनंद भरिहौं।
दसरथ राज कुमार, वंस रवि, पालन करिहौं॥
संका बिधसि लंकाधिपति, सीस दसौ खण्डित करौं।
ब्रह्मादि देव इन्द्रादि हित, सकल रुद्र वर संघरौं॥१५॥

दोहा

सकल सुरन सासन दये, परम अनुग्रह सार।
नर बानर अरु रीछ भुव, लेहु देव अवतार॥१६॥

द्रुमिला

सुनि सीख सर्वं सुर राज समाज, गए निज लोकनि सोक तजे।
जनमें जग मैं बलवान बड़े, नर बानर रीछ समाज सजें॥
रवि-बंस बिसाल 'गोपाल' लसैं, सरसैं छिति मैं छवि कोटि छजें।
अवतार सिरोमनि जानि सुरेस कैं, आनंद दुंदुभि दीह बजें॥१७॥

---

(१७) सरसैं छिति मैं : छिति मैं हुलसैं (१. २)

१४. त्रिदस : देवता, किल्विष : पाप, दण्ड : द्वंद्व।
१५ हरिहौं : हरण करूंगा। सार मत : वेद मत, संक्षेप में। धारहु : धारण करो। जी मैं : जिय में बिधसि : विध्वंस करके। रुद्र वर : शिव का वरदान। संघरौं : संहार करूंगा।
१६. सुर सासन दये : देवताओं को आदेश दिये। अनुग्रह सार : आदेश। रीछ : रूक्ष भुव : संसार।
१७. सीख : शिक्षा, सजें : सुशोभित हुए।
रविबंस : सूर्य वंश। सरसैं छिति मैं : धरती में सौन्दर्य मंडित होना। दुंदुभी दीह बजें : जोरों से दुंदुभी बजने लगी।

दोहा

परिपूरन सुख सम्पदा, दिन दिन होत सु वृद्धि।
रज राजस रस राज श्री, अष्ट सिद्धि नव निद्धि ॥१८॥

॥ घनाक्षर ॥

जल थल भूतल विभूति कौ विलासमय, सब ही मैं सब विधि सोभा सुख सारु है।
रस मैं सरस रस, गन्धन मैं चारु गंध, रूपन मैं जोति रूप, जोतिन मैं चारु है॥
सिद्धिन मैं सिद्धि, वेद विद्या मैं विनोद प्रेम, राजन मैं राज श्रीहि बाढ़न अपारु है।
पूरन प्रताप मारतण्ड वंस मण्डन कौ, रावन कै खण्डन कौ राम अवतारु है॥१९॥

दोहा

समैं एक सोभित सभा, दसरथ राज नरिंद।
रवि कुल कै रवि वंस हैं, पुरजन सब अरविंद ॥२०॥

सोभा

सभा सोहैं राजा, नर मुनि महा, वेद विद्या विनोदैं।
समै सोई बानी, सुर धुनि सुधा, प्रीति जज्ञः प्रमोदैं॥
वसिष्टै यौं बूझै, मख सु रचनै, मंत्र ते हैं विचारे।
सुनौ राजा हेतैं, दसरथ सबै पुन्य प्राची तिहारे ॥२१॥

दोहा

बहु विधि मख रचना रचे, जिहिं विधि वेद विधान।
सकल ब्रह्म रिषि राज रिषि, पारब्रह्म करि ध्यान ॥२२॥
गौतम अत्रि सु अंगिरा, भारद्वाज वसिष्ठ।
मिलि सबही होता किये, शृंगी रिषि मख इष्ठ ॥२३॥

---

१८. अष्ट सिद्धि : अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व, वशित्व। नवनिद्धि : कुबेर की नव निधियाँ पद्म, महापद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, कुन्द, नील और खर्व।

२०. नरिंद : नरेन्द्र।

२१. ते : वशिष्ट के अर्थ में प्रयुक्त। प्राची : पूर्व दिशा।

२३. होता : यज्ञ का आचार्य। शृंगी रिषि : ऋष्य शृङ्ग—जिसे दसरथ की पुत्री शान्ता का पति कहा गया है। शान्ता भर्तारमानीय ऋष्य शृङ्गं तपोधनम् (अध्यात्म रामायण, सर्ग ३।५)।

॥ छप्पै ॥

वेदस्तुति तें जातवेद, निजु आप रूप धरि।
जग्य पिण्ड सुभ थार, दियउ नृपराज हाथ करि॥
कौसिल्यहि दये अर्द्ध, अर्द्ध केकइ कहं देते।
दिये सुमित्रहि दुहुँनि अंस, ऐकक अपनें तें॥
तब तीनिहुं गर्भागम भयेउ, परमानन्द प्रकास तें।
दससीस स्वप्न अद्भुत लखत, चित चकृत किय नास तें ॥२४॥

॥ रुचिरा छन्द ॥

रावन स्वप्न देखि चित सोचत, अति आरत हर हर उचरें।
लंक पंक दनु नास वंस सब, कठिन काल गुनि सोच करें॥
द्वै सरूप धनु बान पानि धरि, सकल लोक प्रतिपालि लिये।
पावक प्रबल प्रताप तेज तें, दनु पतंग सब नास गये॥२५॥

छप्पै

काल अरिष्ट बिचारि, नष्ट लंकाधिप जान्यौ।
अति उदास अति त्रास, सोचि चिन्ता चित ठान्यौ॥
भ्रमन चल्यौ भुव लोक, दिशा प्राची अवरेख्यौ।
कौतुक अद्भुत तहाँ, महा दुस्तरमय लेख्यौ।
इक परम पुरुष सोवत सुखहि, इक सुंदरि तिन ढिग लसति।
तिहि समहि रूप, तिहुं लोक नहि, जाहि मधुर बिहंसति हँसति।२६

दोहा

चकित भयो लखि रूप को, अपरमपार अपार।
कहि न सकत मुख बंन कछु, मनहीं करत विचार॥२७॥

---

२४. जातवेद : अग्नि। उचरें : उच्चारण। सोच करें : चिंता करना।
द्वै : राम और लक्ष्मण के लिए प्रयुक्त।

२६. अरिष्ट : विपत्ति, अमंगल। भ्रमन भ्रमण : अवरेख्यौ : देखा।

द्रुमिला

यह जानत हौं, पद ते भये पंकज, पाइ सुधाधर जोति वरें।
कच मेचक तें तम पुंज लसें, लहि चंचलता चपला विचरें।।
बहु गंध प्रसून सुगन्ध सरीरनि, सोभ सिंगारनि श्री बिहरें।
इहि कौ तिहि लोकनि की तरुनी, तप साधि सरूपहि जाप करें।।२८।।

दोधक छन्द

रावन बूझि उठ्यो, "तुम को हौ ?
सुन्दरताइन ऊपर सोहौ।।
सोवत क्यों सुख सों ? निजु स्वामी।
कानि कहौ कि बड़ो निहकामी।। २९ ।।

सोरठा

रहे निरंतर आइ, कहौ जु अंतहकरन की।
एक न तुम्हें सहाइ, हौं रावन सब हद कर्यो" ।।३०।।

सवैया

यों मुनि सोवत, स्वासहि तें, प्रभु खेंचि लए जठरे पल माहीं।
देखि रह्यौ सिगरी महिमंडल, लोक अखंडल देव सभाहीं।।
भूलि गयो दससीस दसौ दिसि, अंत कहूं कछु पावतु नाहीं।
सैल उजागर सातउ सागर, राम गोपाल कला सरसाहीं।।३१।।

दोहा

अति विहवल व्याकुल भयौ, लंकाधिप तिहि बार।
श्री हरिमाया सिंधु कौ लह्यौ न पारावार।।३२।।

---

२८. कच : केश। मेचक : श्याम, काला।
२९. निहकामी : निष्कामी
३१. जठरे : उदर में। अखंडल : इन्द्र। दसौदिसि : दसों दिशाएं—उत्तर दक्षिण, पूर्व, पश्चिम, अध, ऊर्ध्व नैऋत्य, वायव्य, ईशान और आग्नेय।

द्रुमिला

यह जानत हौं, पद ते भये पंकज, पाइ सुधाधर जोति धरें।
कच मेचक तें तम पुंज लसें, लहि चंचलता चपला विचरें।।
बहु गंध प्रसून सुगन्ध सरीरनि, सोभ सिंगारनि श्री विहरें।
इहि कौं तिहि लोकनि की तरुनी, तप साधि सरूपहि जाप करें।।२८।।

दोधक छन्द

रावन बूझि उठ्यो, "तुम को हौ ?
सुन्दरताइन ऊपर सोहौ।।
सोवत क्यों सुख सों ? निजु स्वामी।
कामि कहो कि बड़ो निहकामी।। २९ ।।

सोरठा

रहे निरंतर आइ, कहो जु अंतहकरन की।
एक न तुम्हें सहाइ, हौं रावन सब हद कर्यौ" ।।३०।।

सवैया

यों सुनि सोवत, स्वासहि तें, प्रभु खेंचि लए जठरे पल माहीं।
देखि रह्यौ सिगरी महिमंडल, लोक अखंडल देव सभाहीं।।
भूलि गयो दससीस दसो दिसि, अंत कहूं कछु पावतु नाहीं।
सैल उजागर सातउ सागर, राम गोपाल कला सरसाहीं।।३१।।

दोहा

अति बिहवल ब्याकुल भयो, लंकाधिप तिहि बार।
श्री हरिमाया सिंधु को लह्यौ न पारावार।।३२।।

---

२८. कच : केश। मेचक : श्याम, काला।

२९. निहकामी : निष्कामी

३१. जठरे : उदर में। अखंडल : इन्द्र। दसोदिसि : दसों दिशाएँ—उत्तर दक्षिण, पूर्व, पश्चिम, अध, ऊर्ध्व नैऋत्य, वायव्य, ईशान और आग्नेय।

भुजगप्रयात

तबै एक आगे पुरी दिव्य देख्यो।
महाराज श्री राज सोभा बिसेख्यौ॥
सभा इन्द्र देवादि कौ सर्व सोहैं।
अजोध्या सु नामै धरासीस मोहैं॥३८॥

छप्पै

पंच कल्प तरु मध्य, दिव्य मनि-मंडप मंडित।
वृंदारक मुनि वृंद-वृंद, ब्रह्मादिक पंडित॥
सिंघासन तिन मध्य, जोति जगमगित मनोहर।
सुन्दर रूप निधान, तहाँ सीता सीतावर॥
स्निग्ध नील घन वपुष महं, विद्यु लता लावन्य वय।
गोपाल करत अस्तुति सकल, परमानंद विलासमय॥३९॥

घनाक्षर

सुन्दर रतन मनि जटित किरीट सिर, कुंडल कपोल गंड-मंडल लसत हैं।
अंग अंग भूषन सों सकल विभूषित हैं, पीत कौसेय सोभा सोभहीं रसत हैं॥
अच्छय निषंग कटि पानि धनु बान द्वै द्वै, मंद मंदहास मधुराधर हँसत हैं।
जानकी-रमन-रूप हृदय गोपाल हेरि, मंगल चरन महा मनहीं बसत हैं॥४०॥

दोहा

भरत अनुज लच्छन हनू, सुग्रिव अंगद जाम।
चामरु बीजनु छत्र लै, छबि निरखत श्रीराम॥४१॥

---

३९. वृंदारक : देवता। वपुष : शरीर।
४०. गण्ड मण्डल : कनपटी, कौसेय : रेशम का वस्त्र।
४१. लच्छन : लक्ष्मण, हनू : हनुमान। जाम : जामवंत। चामरु : चामर चँवर। बीजनु : व्यजन, पंखा।

घनाक्षर

बेद धुनि धारे कहूँ तपोधन धारना तें, कहूं मख रचना के साखा उचरत हैं।
कहूँ रस रंगन उमंगन तें किन्नर हैं, गावत गोपाल मुनि मानस हरत हैं।
कहूँ सुर सुन्दरी पुरंदरी प्रसूननि तें, बरषैं हरषि अभिलाषन भरत हैं।
कहूँ बिधि संकर गुनानुवाद गुनि गुनि, राम के सरूप के निरूपन करत हैं।।४२।।

सोरठा

दूरिहि तें दस सीस, दीन भाव अस्तुति करै।
जानि राम जगदीस, पूरन परमानंदमय।। ४३।।
अस्तुति करत अपार, तदपि सभा तें विमुख ह्वै।
अंतकरन विकार जद्दपि निरखत रूप प्रभु।।४४।।

रुचिरा

सम दम संजम नियम अहिंसा, सत मारग संतोष मतें।
प्रेम भक्ति हरि भजन कीरतन, सुख समाज मैं मगन रतें।।
रज राजस गर्वाभिमान मद, सर्ब भाव प्रभु बिमुख जितें।
रहत दूरि इहि दोष दुखित अति, भ्रमत विषय बस रसहि तितें।।४५।

सोरठा

इहि विधि करत विचार, देखि द्रोह तें दुखित भौ।
लख्यौ विभीषन द्वार, कर जोरे अस्तुति करै।।४६।।

सवैया

देखि महातम-पुंज, उठ्यौ उर क्रोध-कृसान कै तेज बितूल्यौ।
अंतर भाव विरोध विकारनि, संत समाज सतो-गुन सूल्यौ।।
पावतु क्यों पदवी निहकामि के, काम कलेसनि कै कृत भूल्यौ।
राम कृपा कलपद्रुम कै रत, गावत नाम विभीषन फूल्यौ।।४७।।

---

४२. उचरत : उच्चारण करना। पुरंदरी : इन्द्राणी, शची। प्रसूननि : पुष्पों। गुनि गुनि : विचार करके।

४७. कृसान : अग्नि। बितूल्यौ : विस्तृत हो जाना, फैल जाना। रत : अनुरक्त।

दोहा

अंतरजामी जानि तिहि, अंतहकरन कलंक।
स्वांस संग ही उड़ि गयो, लंकापति वह लंक ॥४८॥

छप्पै

चित चकित लंकाधिपत्ति, पिख्खिय चरित्र सब।
अति अकथ्थ गति गूढ़, मूढ़ मति ग्रसित तिमिर तब॥
जदपि विस्नु अवतार, द्रोह भावहि नहिं छंडहुं।
हैं उद्धारन नाथ, साथ तिन जुद्धहिं मंडहुं॥
खंडौं जु मारि सुर, नर सकल, थल जल, जल थल इक्क करि।
संकर प्रताप संकौं न किहुं, हौं रावन किहिं भजहुं डरि ॥४९॥

दोहा

सुर पुर नर पुर नागपुर, उर ब्रह्मादिक जाप।
मंगल-निधि गोपाल भनि, राजत राम प्रताप ॥५०॥

इति श्रीराम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां श्रीराम गर्भागम रावन माया दर्शनोनाम प्रथमोध्याय: ॥ १ ॥

---

४९. पिख्खिय : देखा, छंडहुं : छोड़ूंगा। इक्क : एक। भजहुं : ७, भाग जाऊं, भजन करूं।
५०. नागपुर : नागलोक।

श्री राम-जन्म

२

सोरठा

समै जु एक वशिष्ठ, बालमीक आश्रम गये।
रामचंद्र करि इष्ठ, रामायन बूझन लगे ॥१॥

वसिष्ठोवाच :

निसिपालिका छंद

आपु सरवग्य गुनि, राम रचना कहो।
पुन्य पय प्याइ, तिहुं ताप-दापहि दहो ॥
बस रवि अमल जस, सकल विधि भाषिअे।
श्रवन रसनानि रुचि, अमिय रस चाखिअे ॥२॥

बाल्मीकोवाच :

हों जु सरवग्य, तप तेज विद्या लहे।
राम परब्रह्म, गति जात नाहिन कहे॥
अंस रवि कौं जु, त्रिसरेनु सम क्यों करें।
पंगु मतिमंद किमि, दुसह दुस्तर तरें ॥३॥

छप्पै

पूरन पुरुष अनादि, सकल व्यापक अविनासी।
जिन गति अगम अपार, महा माया सी दासी॥
बेदादिक ब्रह्मादि देव, मोहित मति सोचें।
गावत विमल गुनानुवाद, दरसन कों लोचें॥

---

२. अमल : निष्कलंक। भाषिअे : भाषित करना, कहना। अमिय : अमृत।
३. त्रिसरेनु : त्रसरेणु : वायु में भरे हुए वे सूक्ष्म कण जो प्रायः छेद में से आनेवाली धूप में उड़ते हुए दिखायी देते हैं। पुराणों के अनुसार यह सूर्य की पत्नी है।

अवतार सिरोमनि राम सोइ, तिनसु नाम कोइ चित धरै।
गोपाल कृपा अवलंब तें, सुख ही भव दुस्तर तरै ॥४॥

दोहा

जथा सुमति रघुनाथ की, बरनत बाल चरित्र।
श्रवन-सुधा-रस-पान तें, तन मन होत पवित्र ॥५॥

चौबोला

अंतहपुर दसरथ नृप-राज।
सोहैं रानिन सहित समाज ॥
बूझत भूप हेत हरखाइ।
गर्भागम को सकल सुभाइ ॥६॥

बरनौं देह दसा किन सोइ।
सुर सासन मिथ्या नहि होइ।
सुनि रानी सलजी जिय माहि॥
अचरज गाथ कही नहि जाहि ॥७॥

द्रुमिला

कौसल्योवाच :-

सुनि कौसल राजसुता सलजाइ, कही नृप-राज सुनो हित हैं।
कछु कारन मोहि न जानि परै, सुख लाख सुखोपति मैं नित हैं॥
सिसु चारि सरूप अपारन सें, विहसैं बहु रंगनि सोभित हैं।
कोइ देव अनादि अनंत कला, धरि जोग समाधि हुपी जित हैं॥८॥

---

४. लोचैं : लालायित (दर्शन के अर्थ में), लोचन का नाम धातु में प्रयोग।
६. सुभाइ : स्वभाव।
७. सलजी : सलज्जित होना। गाथ : गाथा, कथा।
८. हुपीजित : अग्नि और सोम को जीतने वाले। कौसल राजसुता : कौसल्या।

घनाक्षर

सुमित्रीवाच :-

एक जौ कहौं तौ मोहि दोइ सें दरस देत, दोइ जो कहौं तौ रूप चारि निरखत हौं।
सुन्दर सलौने लोने कौने घौं सँवारे सोभ, भूलि-भूलि फूलि फूलि ही में परखति हौं॥
झूलि-झूलि कंठनि झलूड़े झकझोरि झोरि, झगरें जित हीं कित लीलें सरखतिहौं।
सौतुख सों कौतुक कुतूहल ललानि हीं कौ, मोही सी मनहि मन ही में हरषति हौं।९।

दोहा

कैकेईउवाच :-

कह्यो केकई अनखि कैं, हरषावत हौ भूप।
अपनौ करौ न आप कौं, बिधि कौ करौ अनूप॥१०॥

छप्पै

राजाउवाच :-

राजा कहैं बिचारि, सकल रानी हित मानौ।
गुर सासन सब सत्य, और मिथ्या सब जानौ॥
महा महा मुनि ईस, महा मख पावन कीन्हें।
अगिन देव संतुष्ट जग्य, फल सु फलहि दीन्हें॥
अद्भुत अपार अवतार कोइ, हम अनुदिन अनुभव करें।
सुत चारि चारु भुज बल प्रबल, पानि कमल धनु सर धरें॥११।

रुचिरा छन्द

बहु अभिलाष करनि निसि बासर, मास आठ दस बीति गये।
मधु नौमी मंगल त्रिभुवन के, रामचन्द्र अवतार भये॥
महल-महल प्रति चहल-पहल अति, सकल नारि नर सुख उमहे।
बहु आनंद विनोद अवधपुर, सुर पुरुहूत सु अभय लहे॥१२॥

---

९. सौतुख : संप्रत्यक्ष, सम्मुख। झलूड़े : घुँघराले केश।
११. अनुदिन : रात-दिन। सु पानि : सुपाणि : सुन्दर हाथ।
१२. उमहे : उमंगित हुए। अवधपुर : अयोध्या। सुर पुरुहूत : देवता और इन्द्र।

दोहा

जिन सिरजे तिथि वार हैं, नखत महूरत जोग।
तिनके मंगल करन कौं, वेदन कहे प्रयोग ॥१३॥
तिथि दसमी अपराह्न की, मरथ लये अवतार।
जेंवर सु लक्ष्मण सत्रुघन, एकादसि सु विचार ॥१४॥

रुचिरा छन्द

आदि देव अव्यय अविनासी, पूरन जोति प्रकासमयं।
जिन आनन चतुरानन सिरजे, सूर चंद लोचन उदयं ॥
श्रवन वायु रस गंध घ्रान रुचि, त्रिगुन पंच भव भय हरनं।
बाल रूप सोइ भूप भवन में, चतुर व्यूह सुभ अवतरनं ॥१५॥

दोहा

जय जय जय तिहुँ पुर भयो, गयो दुसह दुख भार।
ब्रह्मादिक हिय हरष लखि, चतुर व्यूह अवतार ॥१६॥

घनाक्षर

घन से निसान घहरान लागे घर घर, मंगल अवधि होत हरहूँ हैं हरखे।
अमित उमेद चतुरानन निवेदे वेद, वंदनि उचारैं चारु कीरति के करखे ॥
पूरन विलास परिपूरन पयोनिधि सें, पूरन पुरान हैं पुरंदर सें परखे।
भूलि-भूलि भौंन सुख, देवन विसारि दुख, फूलि-फूलि फूलन के वरषा हैं वरखे ॥१७॥

दोहा

जोगिन जोग समाधि तजि, मुनिन तजे जप सार।
अस्तुति लागे करन हैं, जानि राम अवतार ॥१८॥

---

१३. सिरजे : सृजन किया। वार : दिन। महूरत : मुहूर्त। जेंवर : यमल : जुड़वाँ।
१७. घन : लोहे का घन, हथौड़ा। निसान : वाद्य। घहरान : बजना। हरहूं : शंकर जी भी। करखे : करषा छन्द जिसे वन्दीजन गा रहे हैं।

घनाक्षर

हूलि परी अवधि उराव की जितहि कित, जूह नर नारिन की रावरन मात हैं।
कैधौं सुख सात हू के सातऊ उदधि बाढ़े, बाढ़े मन मीन मन-कामना अघात हैं।
देव मुनि बेदन निवेदत उमेदनि सौं, हिलि मिलि विमलि अनेग बिहसात हैं।
लंका उठी हालि, लंक नाएक ससंकि उठ्यो, सोचि उठ्यो शंकर सुरेस हरषात हैं १९

दोहा

पाए अंग अपंग हैं, गुंगन पाये बैन।
रंकन पाये संपदा, अंधन पाये नैन ॥२०॥

घनाक्षर

सूखे सर भरे, द्रुम उकठे ह्वै आये हरे, फरे अनफरे फर, फूले अनफूले हैं।
पाये अंध नैन, मुख बैन पाये मूकन हैं, धाय धाय लूटत बजार जौन लूले हैं॥
भूपति लुटाये दाम, रंकन के भरे धाम, पूरे मन काम, महा आनंदनि भूले हैं।
कंचन सुमेर मान, देत अवधेस दान, लेत न बनत द्वार, बाम्हन बितूले हैं ॥२१॥

सोरठा

पुरष अनादि अनंत अगम अगोचर सबन को।
तिहि बरनं श्रुति सन्त, रवि कुल जनमे राम हैं।।२२॥

सवैया

देवन के घर मंगल होत, अदेवन के घर घैंह मचे हैं।
भूपति के घर होत है सोहर, नारि नचैं, नर वेष सचे हैं॥
द्वारन द्वारन बंदनवारन, आनंद आजु विरंचि रचे हैं।
कोटिन कोटि भंडारन के कहुँ, भाजन भूष न एक बचे हैं ॥२३॥

---

१९. अवधि : अयोध्या में। उराव : उत्साह, उमंग। जूह : यूथ, समूह। रावरन : राजा का अन्तःपुर। मात है : समाता है। सुख सात : सात सुख—खान-पान, परिधान, ज्ञान, गान, शोभा, संयोग।

२०. अपंग : अंगहीन। गुंगन : गूँगे लोग। रंकन : निर्धन लोग।

२१. बितूले हैं : चकित हैं।

२३. घैंह : निन्दा, अपयश। सचे : सजे। भाजन : पात्र। भूष : भूषण, आभूषित करने के उपकरण।

दोहा

सकल ब्रह्म रिषि, राज रिषि, मिले राज दरबार।
चरन बंदि नृप सबन के, पुलकित भये अपार ॥२४॥

छप्पै

बिस्वामित्र वसिष्ठ अत्रि, भृगु व्यास आदि सब।
लैं मंदिर नृप राज, साज साजैं समस्त तब॥
मंडप हरित प्रसून, सकल वेदी विचित्र अति।
मह-मह होत सुगंध, समिध होमत सु बेद मति॥
गावहि विनोद मंगल जुवति, विधि विधान जात न बरनि।
नृप करत दान हरषत सकल, जनु बरषत जलधर धरनि ॥२५॥

रुचिरा छन्द

बेद विधान सकल विधि करिकें, लोक रीति सब नारि रचैं।
गज मोतिन के चौक चारु रचि, हरष भरी बहु साजु सचैं॥
जोरि गाँठ नृप राज-रवनि-जुत, गोद सुअन लै मोद मचैं।
सकल लोक मंगल निधि कौतुक, निरखि अमरपुर-नारि नचैं ॥२६॥

घनाक्षर

सुन्दरी सलोनी लीने कंचन कलस सीस, सोहती हैं सोरहूँ सिंगारनि सौं सरसी।
कर कलधौतनि के थाल श्री गोपाल भनि, गावैं मिलि मंगल हैं कोकिल सी हरसी॥
भारी भीर भौन भूप, भामिनी अमित रूप, नाचती सुहाई चाहि मैनका सी तरसी।
चाहि मुख रामचंद, आनंद के कोटि कंद, मेटि दुख दंद, प्रेम-पारस सी परसी ॥२७॥

---

२५. मह मह : सुगन्ध से भरा। होमत : होम करना। मति : पद्धति। जुवति : युवती।

२६. जोरि : जोड़ना। राज रवनि : राज रमणी। सुअन : पुत्र। लैं : लेकर। अमर पुर नारि : देवियाँ, अप्सरा।

२७. सलोनी : लावण्यमयी। सोरहूँ सिंगार : षोडश शृंगार—अंग में उबटन लगाना, स्नान करना, स्वच्छ वस्त्र धारण करना, बाल सँवारना, काजल लगाना, सिन्दूर से माँग भरना, महावर लगाना, माथे पर बिन्द लगाना, चिबुक पर काला तिल लगाना, मेहँदी लगाना, सुगन्धित द्रव्य इत्यादि लगाना, आभूषण पहनना, पुष्प हार धारण करना, पान खाना और मिस्सी लगाना। मैनका : मेनका, इन्द्र की प्रसिद्ध अप्सरा। कलधौत : स्वर्ण। दुख दंद : दुख-द्वन्द्व। पारस : पारस पत्थर। परसी : स्पर्श की हुई।

दोहा

त्रिभुवन सुख न समात कहुँ, दुखित देखिअं तीन।
कं पातक, दस सीस कं, राम भक्ति जे हीन ॥२८॥

छप्पं

मनि मानिक गज राज, बाजि साजनि सों सरसे।
पट भूषन हाटक अनेग, जलधर सें बरसे॥
गाइ ग्राम संकलि, पाइ विप्रन के पूजे।
नर नारी पहिराइ, रही अभिलाष न दूजे॥
आनंद अमित अवधेस-पुर, परिपूरन सुख लोक पति।
रवि कुल सनाथ रघुनाथ किय, मंगल गाथ विचित्र अति॥२९॥

दोहा

प्रथम नाम कर्मादि करि, प्रासन अन्न विधान।
नर लीला तिनके करें, जिनके गति निर्वान॥२९॥
दिन-दिन प्रति पूरन कला, लीला बाल सु जाप।
बरनत रुचि गोपाल कवि अति हित राम प्रताप॥३०॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां श्री राम जन्म वर्णनोनाम द्वितीयोध्यायः॥२

---

२८. त्रिभुवन : भूः, भुवः, स्वः; पृथ्वी, पाताल, आकाश।
२९. मनि मानिक : मणि माणिक्य। बाजि : घोड़ा। हाटक : स्वर्ण। अनेग : अनेक, बहुत से।
३०. प्रासन : अन्नप्रासन, अन्न का प्रथम बार ग्रहण करना।

राम-बाल-क्रीड़ा

३

दोहा

राम कलपतरु-तर सबै, अवध पुरी नर नारि।
रही न कछु अभिलाष किहुं, नैननि रूप निहारि ।।१।।

छप्पै

अंतहपुर नृपराज, सहित रानिन जुत सोहैं।
अद्भुत बाल सरूप, चारि चित नैन बिमोहैं ।।
नील गौर सुकुमार अंग, अभिराम सलौनैं।
छकी छबीली छबिन बिहंसि, छिन छिन छबि हौनैं ।।
गोपाल बाल लीलानि जुत, जिन लीला ब्रह्म न लहैं।
सोइ रुदन करत पय पान कौं, यह अचरज कासौं कहैं ।।२।।

दोहा

छिन पलका, छिन पालनै, छिन छिन प्यावत छीर।
कौतुक कही न जाइ कछु, अविगति गति रघुबीर ।।३।।

सवैया

सोभित हैं मनि मंदिर मैं, बनि बाल बधू हलरावति फूलैं।
छोड़ि सकोचन, लोल बिलोचन, राजिव-लोचन चाहि वितूलैं ।।
हेरि गोपाल हिये हुलसैं, अति जा गति कौं चतुरानन भूलैं।
राख्यौ है तीनिहुं लोक झुलाइ, सु राम लला पलना पर झूलैं ।।४।।

---

१. तर : तले, नीचे। किहुं : किसी को भी।
२. बिमोहैं : विमुग्ध होना, विशेष रूप से मोहित होना। छकी : दर्शन से तृप्त होना, चकित होना। छिन छिन : क्षण-क्षण। हौनैं : उत्पन्न होने वाली। फूलैं : प्रसन्न होती हैं। राजिव-लोचन : कमल के समान नेत्र वाले राम।
४. चाहि : देखना। वितूलैं : आश्चर्यचकित होना।

दोहा

दसरथ चार्‌यों सुतन की, सोभा निरखत नैन।
भये असोची सोचते, तन मन उपज्यो चैन ॥५॥

सोरठा

बरष द्यौस के राम, खेलैं अजिर सुहावनें।
सब के पूरन काम, अवध उराव न जात कहि ॥६॥

दुमिला

नव दूध की द्वै द्वै लसैं दंतियाँ, बतियाँ अति ही तुतरात कहैं।
लटकैं घुँघरारी लटैं मनि, ज्यौं बुध मंगल सें सुषमानि लहैं॥
उर सीपज सुंदर माल गोपाल, किधौं घन में बग पाँति बहैं।
मनि-आँगन आनन राम लला, प्रतिबिंबु न पावत पानि गहैं ॥७॥

दोहा

प्रति वासर सब सुंदरी, भरी नेह हरषाहिं।
लखि किलकनि, किलकी फिरैं, मधुर मधुर बिहसाहिं ॥८॥

घनाक्षर

रानी अवधेस की सुहाई सोहैं आस पास, निरखि विलास हँसि आनंद भरति हैं।
सुंदर सलोने लोने कुंवर संवारि नारि, ल्यावती हैं खेलनें खिलावनें लरति हैं॥
एकें कर टेकि राम, चलन सिखावै बाम, लटकनि लाल की त्यौं लटकी परति हैं॥
माधुरी हँसनि तैसी हुलसनि हाँस देखि, देखत हूँ देखिबे की हौंसनि भरति हैं॥९॥

पाठान्तर : हरषाहिं : बिहसाहि (१, २)।

६. द्यौस : दिवस। अजिर : आंगन। पूरन काम : अभिलाषा को पूर्ण करने वाले। उराव : उमंग, उत्साह।

७. तुतरात : तुतलाते हुए। सीपज : मोती। बग : बक, बगुला। पानि गहैं : हाथ से पकड़ते है।

८. प्रतिवासर : प्रति दिन। भरी नेह : स्नेह से पूर्ण।

९. बाम : स्त्री। लटकनि : एक आभूषण जो केश में लगाया जाता है तथा माथे पर लटकता रहता है। हौंसनि : हविश (फा० श०) तीव्र अभिलाषा।

सवाई छंद, राग बेरावर

धावत चारिहुँ कुँवर बँकैंयाँ
किलकत, हँसत, गिरत, उठि बैठत, सुंदरता सोहत इक दैयाँ।
सुभग नील सित पीत लाल रुचि, तन कुँगुली सिर ललित कुलहियाँ॥
दै चुटकी कर टेकि नचावैं, रूप-रासि सब राज-दुलहियाँ।
जगमगि रहे कंठ मनि कठुलैं, मोतिन-हार बीच बघनहियाँ॥
मानहुँ रूसि चले उडगन तें, बाल चंद रस खेल उमहियाँ।
रंगमहल के अजिर मनोहर, लूटत रूप-रासि अधिकैयाँ॥
बलि गोपाल बाल छवि राघव, गोद लिये चूमें पग मैयाँ॥१०॥

दोहा

राजबधू झुमटी फिरैं राम-सरूप निहारि।
करि करि जिय अभिलाष बहु, डारहिं तन-मन वारि॥११॥

सवाई छन्द, राग बेरावर

नैक गोद दै राम लला री।
झगरति एक एक सौं हाँसनि, बाल-विलासनि रंग भला री॥
झुमटी राज-बधू संग डोलैं, ज्यौं मनि को बहु नाग बला री।
तौलि बिरंचि ताजि चित राखे तीनि-लोक-छवि एक पला री॥
इक हा हा करि सलजि सलौनी, देहि उतारि अँकोर छला री।
बलि गोपाल माधुरी सोभा, कमल-नैन की अमित कला री॥१२॥

सोरठा

बाल विनोद निहारि, सुख पूरन जननीनि कैं।
भूपति मनहि विचारि, चारिहुँ चारि सरूप अति॥१३॥

---

१०. बँकैंयाँ : घुटने के बल चलना। सित : श्वेत। कुँगुली : शिशु का पोशाक। कुलहियाँ : कुलाह (फा० श०), कुलही। राज दुलहियाँ : राजा की दुलहिनें। बघनहियाँ : बघ नख। रुसि : रूठना।

११. झुमटी : हर्षोन्मत्त होकर झूमना।

१२. नाग बला : नाग बाला, नाग कन्या। अँकोर : घूस। छला : छल्ला, अंगूठी। अमित कला री : अनंत कला, सीमातीत कला।

१३. जननीनि कैं : माताओं को। चारिहुँ : चार। चारि : चारु, सुन्दर।

राग बेरावर

रामलला की हौं बलिहारी।
नाचत ठुमुकि, ठगौरी लावत, जब जब देत मधुर कर तारी।
दसन कुंद अरविंद बदन में, मंद हँसनि मकरंद महा री॥
भूलि-भूलि सुधि जात सकल अलि, अद्‌भुत लेत किलकि किलकारी।
करि-करि जिय अभिलाष कहति हे, भरि-भरि आनंद राजदुलारी।
रघुवर-बाल-केलि प्रति लीला, जन गोपाल ध्यान उर धारी॥१४॥

दोहा

भोर बड़े नृप राज मनि, रंग महल कं द्वार।
गोद लिये कौतुक करं, चारिहुँ चारु कुमार॥१५॥

राग बिभास

दसरथ गोद लिये दोउ लालें।
ठाढ़े रंग महल के द्वारें, ऊपर ओढ़े रङ्ग दुसालें।
दहिने भरथ बाये दिसि आगे, अनुज दुओ सुकुमारें।
सुनि सुनि सुखद तोतरी बतियाँ, निरखत बदन हरषि किलकारें।
बौरावत बावन बलि गाथनि, इहि अंतर रघुनाथ जम्हानें॥
मापत पीठि लखे मुख भीतर, चरन पताल लगे असमानें।
अद्‌भुत चरित चाहि चित सोचत, चकित भूप लं भवन सिधानें॥
बलि गोपाल बाल छवि राघव, बाल केलि नहि जात बखानें॥१६॥

दोहा

सुषमा बाल सरूप की, बरने बरनि न जाइ।
अवधि खोरि खेलत फिरें, सखनि संग रघुराइ॥१७॥

---

१४. ठगौरी : ठग विद्या, मोहने की कला। दसन : दाँत। कुन्द : एक सफेद फूल। अरविंद : कमल। बदन : मुख। मकरंद : पराग।
१५. कौतुक : क्रीड़ा। चारिहुं : चारहुँ : चारों रानियों के राजकुमार।
१६. लालें : दोनों प्यारे बच्चों को। असमानें : आसमान में।
१७. खोरि : गली, वीथी।

सवैया

लाल हरे सित पीत झगा तन, लाल हरे पटुका कटि नीके।
लाल हरे रंग पाग लसैं सिर, लाल हरे मनि त्यों अवलीके।।
लाल हरे धनुहीं कर तीरनि, खेलत संग सखा अरबीके।
सोहत लाल हरे छवि सों, मन मोहत राम लला सबही के।।१८।।

दोहा

चूड़ा-कर्म-विधान करि, कर्ण-बेध-विधि जौन।
लोक-रीति तिनकी करैं, जिन गति जानै क्वौन ।।१९।।
अवधि सयाने सिसु जिते, निसि वासर इक संग।
बनि चुनि कोलाहल करैं, खेलत बहु बहु रंग।।२०।।

सवाई छंद राग बेरावर

चारिहु राज कुंवर सुठि लौने।
लोचन-लाहु लेहु किन आली, अद्भुत रूप दिनहिं दिन हौने।।
बिहँसनि चलनि चितौनि माधुरी, भूषन बसन जबहिं जब जौने।
फूले मनहुँ बसंत काम बन, मन अभिलाष अलिन रुचि तौने।।
इत उत अनुज, सखन बिच राघव, यह सुषमा बरनी कहि कौने।
मनहुँ रतनमय जटित नील-मनि, जगमग जोति रही मिलि सोने।।
जित कित अवधि नारि नर मोहैं, भूलि-भूलि अपने कृत भौने।
बलि गोपाल बाल छवि ऊपर, भूपति हँसत मनहिं मन मौने।।२१।।

दोहा

समै समै प्रति सखन जुत, भूषन बसन अपार।
बन उपवन कृत को कहैं, रघुबर बाल बिहार।।२२।।

---

१८. झगा : झँगुला, झबला। पटुका : कटिबंध। कटि : कमर। नीके : अच्छा लगना। पाग : पगड़ी। अवली : पंक्ति, समूह। अरबी : अरब देश का घोड़ा।
१९. चूड़ा कर्म : चूड़ा कर्म संस्कार, मुंडन संस्कार। कर्णबेध : कर्ण-छेदन। क्वौ न : कोई नहीं।
२०. बनि चुनि : सज धजकर।
२१. लाहु : लाभ। चितौनि : चितवन, दृष्टि। कृत : काम।

चौबोला छंद, राग आसावरी

सुंदर राम सखन जुत सोहैं।
तैसे अनुज महा मन मोहैं॥
करत केलि सरजू जल महियाँ, जिनहिं वेद विधि गावैं।
जित कित बूड़ि उछलि जल कंठनि, बाल केलि रस भूलैं।
मानहुँ कनक कवल मुख गन तें, इंदीवर से फूलैं।
करि मंजन, भूषित पट भूषन, बान धनुहियाँ मेलैं॥
सरजू तीर, तीर तिरछौहैं, तीरंदाजी खेलैं।
आवत सदन मदन जनु जीतें बदन विलोकति बालैं॥
भोजन विविध रसाल अरपतें, भावत जन गोपालैं॥२३॥

दुमिला

कबहूँ धनु कंध, धरैं कर बान, लसैं छबि सौं सिसु केलि किये।
मृदु हास हुलासन सों हुलसैं, भुज स्याम सखानि के कंध दिये॥
लखि यों सरजू-तट बाल-बधू, जल केलि कुलाहल हेरि जिये।
कहुँ नैंक न नैन परैं पलकैं, ललकैं लखि राम-ललाहि हिये।२४॥

मालिनी

अवध नगर नारी राम शोभा निहारैं।
त्रिभुवन सुषमा कौ, छोभ तें वारि डारैं॥
वन उपवन लीला, एक एकै बखानैं।
छिन छिन छवि औरैं, माधुरी हास ठानैं॥२५॥

मंडल छंद, राग सारंग

छकी री रघुवर की छवि चाहि।
काके नैंन सकैं री सजनी, रूप जलधि अवगाहि॥
केसरिया पागे तन भीने झलकि रही दुति आइ।
मानहुँ पीत कांच अध सीसी, जमुना जल झहलाइ॥

---

२३. गहि : पकड़ना। बूड़ि : डुबकी लगाना। इंदीवर : नील कमल। तीरंदाजी : (फा० ब०) तीर से लक्ष्य भेद।

कुसमित पाग लटपटी पच, चिकुरनि तें सरसाइ।
मानहु प्रात तरनि नभ निकसें, नव घन रेख सुभाइ॥
कुंडल ज्योति कपोल बदन लौं, रहे मयूखनि छाइ।
जुगल तरनि अनुराग तामरस, परसत जनु हरषाइ॥
कर धनु बान धरे मनसिज सें, सोभा बरनि न जाइ।
राम रूप गोपाल निरख तें लोचन रहे अघाइ॥२६॥

सवैया

राजत राज कुमार बली अति, सोहत स्याम सरूप खरे हैं।
माल बनी मनि मोतिन की, तन जोति बिराजत लाल हरे हैं॥
खेलत संग सखा सरजू तट, देखि सबै मन मोद भरे हैं।
तीनहु लोकनि की उपमा, हम राम लला पर वारि धरे हैं॥२७॥

सोरठा

सखा सलोने संग, रंग रंग लीला करें।
धनु सर धरे उमंग, करत चोट सर लच्छनें॥२८॥

सवाई छन्द, राग आसावरी

खेलत राम भरथ हरषानें।
धावत बाल वृन्द संग लीन्हें, लघु लघु धनुहीं सायक तानें॥
तकि तकि चोट करत सर लच्छहि, लच्छन सहित अनुज अतुरानें।
द्वै डग उससि तानि गुन श्रुति लौं, छोड़त सर भौंहें तिरछानें॥
पौंची रतन जरित, कर कंकन, उर मनि-माल लसत सरसानें।
कटि-तट पीत फेंट कर सुन्दर, तनक तरकसी बनक लुभानें॥

---

२६. छकी : तृप्त हो गई। चाहि : देखकर। अवगहि : अवगाहन करके, निमज्जन करके। झीने : बारीक, पतला। दुति : प्रकाश, कान्ति। अध सीसी : अद्धं भरी शीशी। कुसुमित : पुष्पित। चिकुरनि : केश। लटपटी पेंचें : उलझी हुई पगड़ी की लपेट। तामरस : कमल।
२८. रंग रंग : विभिन्न प्रकार। लच्छ : लक्ष्य, निशाना।

जिन भुज बल तिहुँ लोक अभय पद, तिन भुज बल ते धनु गरुवान।
सर लाघव राघव की निरखत, जन गोपाल भूप मुसक्याने ॥२९॥

दोहा

प्रति दिन सकल सखानि लै, चलें राम मृगयाहि।
सर लाघव सावज हतें, सुर सुमिरत हैं जाहि ॥३०॥

जित कित अवधि-उराव की, चवनि चली चहुं ओर।
देवन के अह्लादि दिन, दनुजन कौं दुख जोर ॥३१॥

जिन के सुमिरन तें सदा, हरत त्रिविधि संताप।
बरनत कवि गोपाल जन, सुंदर राम प्रताप ॥३२॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां श्री राम बाल क्रीड़ा बर्ननोनाम त्रितीयोध्याय: । ३

---

२९. सायक : बाण। अतुराने : उतावले हो गए। उससि : खिसक कर। तानि : तानकर, खींचकर। गुन : रस्सी, धनुष की प्रत्यंचा। श्रुति : कान तक। पौंची : पहुंची, आभूषण विशेष जो हाथ में पहना जाता है। तनक : छोटा। तरकसी : छोटा तूणीर। बनक : बानक, वेश। गरुवान : भारी बोझिल। लाघव : तीव्रता, तेजी।
३०. मृगयाहि : शिकार खेलने के लिए। सावज : सौजा शिकार।
३१. चवनि : चवनि : हवा, चौबाई। अवधि उराव : उत्साह की सीमा।

विस्वामित्र-राजा दसरथ संवाद

४

दोहा

सकल ब्रह्म रिषि बेद रिषि, मिले राज रिषि आइ।
लगे जग्य आरम्भ कों, परम तपोवन आइ॥१

छप्पै

सकल फूल, तरु सकल सकल, फल फलित छ रितु जहँ।
सकल कंद, औषधिय सकल, परिमल सुगंध तहँ॥
सकल जंतु, सिंघादि सकल, कलरवनि विहंगह।
सकल बेद मंत्रादि, सकल तपसानि उमंगह॥
गोपाल सकल लावन्य थल, पूरन परमानंद पद।
मन काम सकल निहकामना, लोभ न मोह न क्रोध मद॥

उड़ियाना

जब ही रिषि राज सकल, जग्य करन लागे।
बेद मंत्र जात बेद, बेदी अनुरागे॥
होमत बहु बहु सुगंध, गंध बाहु धाये।
सोई मद दनु कराल, न्यौते जनु आये॥
भागे रिषि निरखि असुर, दीरघ बहु बाढ़े।
दंत विकट कंदर मुख, जीभ सकल काढ़े॥
केते तपचारिन गहि, चर्बन करि डारे।
होत विघन विधि समस्त, रिषि समस्त हारे॥

---

३. गंधबाहु : हवा। जातबेद : अग्नि, परमेश्वर।

४. दीरघ : दीर्घ। कंदर मुख : कंदरा की तरह मुँह। केते तपचारिन : कितने तपस्वियों। चर्बन : चबाना।

दोहा

जे रिषि सुमिरें राम मुख, ते उबरें सब कोइ।
करें अग्य विध्वंस दनु, बहुरि मिले रिषि सोइ।।५
मिलें तपोवन मुनि सबें, लागे करन विचार।
वेदागम विधि मत लखें, भये राम अवतार।।६

निसिपालिका छंद

राम परम ब्रह्म, अवतार अब है भये।
वंस-रवि, अवधि पुर, अभय भूतल दये।।
नास दससीस को, होत अब जानिये।
राम रक्षक भये, क्यों न मख ठानिये।।७

दोहा

विनये महरिषि मिलि सबें, सब विधि विस्वामित्र।
आपु राम हठि ल्याइकें, कीजें जस पवित्र।।८

विदोहा

सब कारन हित बूझि कें, अति ही हरष भये।
गधिनद अति साध तें, आपुहि अवधि गये।।९

उड़ियाना

आये सुनि लेन राम, लच्छन, सुखदाई।
सरजू तट सुंदर पुर, सोहत बहुधाई।।
निरखत रिषि राज साज, सोभा बहुताई।
बाग विविध तरु, तमाल किसलें अरुनाई।।१०

---

७. वंस रवि : सूर्य वंश।
८. महरिषी : महर्षि।
९. गाधिनंद : विश्वामित्र। साध : श्रद्धा, अभिलाषा।
१०. बहुधाई : विविध रूप से। किसलें : नवीन कोपलें। अरुनाई : रक्तिमा।

बोलत सुक सारिक पिक, कलरव धुनि बानी।
मानहुं रितुराज करत षटरितु रजधानी॥
सौरभ जुत सुमन सकल, फूलें अति सोहैं।
कैधौं सुमनध्धनु, जुत–सायक मन मोहैं॥११
बिच बिच बापी अपार, कूप सर सुहाये।
देखत रिषिराज परम, आनंद उपजाये॥
कछु गति अति मंद चलत, मंदिर अवलोके।
जगमग बहु जरित रतन, जोतिन मन रोके॥१२
अनगित कलधौत कलस, छाजनि मनि लागे।
कैधौं रवि-कर असेष, तेज तिमिर भागे॥
गावत कहुँ, नाचत कहुँ, बाजत कहुँ बाजे।
गाजें कहुँ गज अनेग, मल्लन कहुँ साजे॥१३
डोलैं बहु गलिन, मैन-रति सी नर-नारी।
मानहुं तिहुं लोक रूप, जोति देह–धारी॥
ऐसी प्रभुता असेष, देखत रिषि भूलें।
रामचरन भजि गोपाल, प्रेम मगन फूले॥१४

सोरठा

निरखि निरखि मुनि ईस, अवधि हुलास विलास अति।
जहाँ राम जगदीस, तहाँ कहाँ लौं बरनिये॥१५

सवैया

सीतल मंद सुगंध समीर, झकोरनि तीनिहु ताप हरैं जू।
तुंग तरंग तरंगनि की, अवलोकत जंतु असेष तरैं जू॥
पावन पुंज निकुंज कुटीन मैं, कोकिल कीरलि केलि करैं जू।
पावत हैं सुर लोक सबै, सरजू जल जीव जितेक मरैं जू॥१६

---

११. सुक सारि : शुक, सारिका। सुमनध्धनु : कामदेव।
१२. बापी : छोटा जलाशय, बावली।
१३. मल्लन : पहलवान लोग।
१४. मैन : मदन, नर। रति : रति नारी। असेष : सम्पूर्ण।
१६. कीरलि : कीर+अलि, शुक और भौंरे। जितेक : जितने।

द्रुमिला

मुनि देखि मनोहर बारिज बारि, महा अघ हारि हलोरन हैं।
परिपूरनता परिरंभ जहाँ नर नारिन कौं प्रति भोरन हैं॥
तन मंजन कुंकुम चन्दन सौं, सरजू सुभ गंध झकोरन हैं।
अरविंद-मुखीन की बृंदनि मैं, अलि बृंद रमैं चहुँ ओरन हैं।१७

कल्पद्रुम से द्रुम कूल लसैं, लपटे रंग विद्रुम बेलिनि सौं।
नव मंजुल बंजुल कुंज लता, प्रति गुंजैं मधूलिह केलिनि सौं।
तिन मैं मनि मंडप की छतुरी, तहँ खेलत राघव खेलनि सौं।
सरसंत बसंत बिनोद सदा, सुर देखत संग सहेलिनि सौं॥१८

सोरठा

सुषमा सकल बिचित्र, निरखे विस्वामित्र मुनि।
तन मन भये पवित्र, चले राम के दरस कौं॥

छप्पै

देखि कुलाहल अवधि अधिक आनंद मुनि भीने।
मनि मंदिर जगमगहिं किरिनि, रबि छबि सें छीने॥
छत्र कलस बहु भाँति भीर, गज राज बिराजें।
बाजें अमित निसान मनो, भादौं घन गाजें॥
गोपाल बिनोद बिलोकि अति, चकित भये सु अपार हैं।
कछु करत सोच सकुचत अधिक, चले राज दरबार हैं॥२०

दोहा

सकल राज-श्री सोभिजें, पूरन परम प्रताप।
जहाँ न ब्यापत काहुवें, त्रिविधि ताप संताप॥२१

---

१७. प्रति भोरन : प्रत्येक प्रातः काल। कुंकुम : रोली जिसे स्त्रियाँ माथे पर लगाती हैं, केशर। हलोरन : हिल्लोल, लहरें।

१८. द्रुमकूल : तट के वृक्ष। विद्रुम : प्रवाल, मूंगा, मुक्ताफल। बंजुल : वंजुल, वेतस। मधूलिह : भ्रमर, छतुरी : छत्र।

२०. किरिनि : किरण। घन गाजें : बादल गरजते हैं। निसान : निशान वाले बाजे जिनमें निशान बना रहता है जैसे ढोल, मृदंग।

२१. काहुवें-किसी को।

नर नागर अनुकूल सब, घर घर स्वकिया नारि।
भोगहु में सब जोगमय, जहाँ न ब्यापत चारि ॥२२

निसिपालिक छंद

चीन्हि रिषि राज बहु लोग आनंद भरें।
धाइ जित कितहि तें, आइ पाँइन परें॥
सुनत नृप-राज सुधि, हरखि आगें चले।
धन्य मम सुफल दिन, पुन्य तरवर फले ॥२३

छप्पै

देखि दूरि त धाइ चरन-बंदन नृप कीन्हे।
बूझि छेमता सकल हरषि, रिषि आसिष दीन्हे॥
पूरन प्रीति विधान, भूप लै सदन सिधाये।
सिंघासन बैठाइ, चरन पावन पय पाये॥
मनि थाल मनोहर आरती, धूप दीप रानिन करी।
मन काम सुफल, यह कहि उठे, जब सबहिन पायन परीं ॥२४

दोहा

परमानंद बिनोद तें मुनि आये दरबार।
देखि सभा सोभित सबै, राजा राजकुमार ॥२५

घनाक्षर

बैठे दीप दीप के महीप हैं दहीप पाप। आप से अमल अति उद्दित उदार हैं।
लायक सकल, सुख दायक विनायक से। जानत समर महा सायक बिचार हैं॥
राजें आसपास राजा, राजा दशरथ जू के। ताके कभी कौन जाके राम से कुमार हैं।
देखियत दिव्य सभा, सतमख के से सब। आनंद के कंद महा शोभा के सिंगार हैं ॥२६

---

२२. अनुकूल : वह नायक जो अपनी विवाहिता पत्नी के प्रति ही रुचि रखता है। स्वकिया : वह बिवाहिता पत्नी जो अपने ही पति से प्रेम करती हो। चारि : बंधन, कारागार
२३. चीन्हि : पहचान कर। कितहि : कहीं से। सुधि : समाचार।
२४. चरन पावन पय : पवित्र चरणोदक। पाये : पान किया, ग्रहण किया। सबहिन : सभी। छेमता : छेम कुशल।
२६. दहीप पाप : पाप को दग्ध करने वाले आप-जन। उद्दित उदार : अत्यन्त उदार, उदीयमान उदार। सतमख : इन्द्र, जो सौ यज्ञ करता था उसे इन्द्र की उपाधि मिलती थी।

चर्चरी

जोरि कर अवधेस विनये, धन्य बासर आजु हैं।
रावरे तप पुन्य फल तें, सुफल भो सब काजु हैं॥
कौन कारन पाँई धारे, सो जु आयसु दीजियै॥
टहल मो कहँ सहल है, सब काज जो कछु कीजियै॥२७

छप्पै

रिषिरुवाच—

धनि भूपति सतवंत संत, सज्जन प्रिय नागर॥
राज तेज, रज तेज, तेज बल आगर सागर॥
सकल धर्म कौ धाम, गाइ विप्रन प्रतिपालक।
त्रिभुवन के सिरताज, सुने हम तुम्हरे बालक॥
आये जू अमित अभिलाष तें, लेहु कुमारन बोलि किन।
सुख पाइ, देँहि आसिष निरखि, सकल प्रताप प्रकास जिन॥२८

दोहा

सुनि बिहँसे नृपराज अति, छिन न रहत कहुं भौन।
बाल-केलि अद्भुत महा कहत बने नहिं तौन॥२९

सवैया

राजावाच—

भोरहिं ते प्रति भौननि भौननि, भाँति अनेगनि तें सरसाये।
आवत नीठि निहोरन तें घर जात न संग सखा बिसराये॥
राम लला अवलोकन कों निसि बासर नैंन रहें ललचाये।
धूसर धूरि, धरे धनुहीं सर खेलत औध के खोरिनि धाये॥३०

दोहा

येहि अंतर नृपराज सों, बिनै कियो प्रतिहार।
भोरहिं बन मृगया गये, सजि लै सकल कुमार॥३१

---

२७. भो-भया। आयसु-आज्ञा। टहल-सेवा। सहल-सरल।
२८. सतवंत सत्यनिष्ट।
३०. खोरिनि-गलियों में।

मंडल छंद, राग गौरी

बन तें आवत राम बने।
राजत संग अनुज, पुनि तैसे त्यों सुकुमार घने ॥
लघु लघु पानि धनुक लघु सायक, लघु लघु बालक संग।
खेलत हँसत करत कौतूहल, रुचिर गात बहु रंग ॥
बरन बरन सिर पाग लटपटी, पेंचनि लसत अनूप।
मनहुँ बसंत बिजय बन राजत, तरु किसलय बहु रूप ॥
सोहत काकपच्छ जुत चार्यो, मृगमद तिलक लिलार।
कुंडल लोल कपोल लसत, जनु रवि कुल करत बिहार ॥३२

चौबोला

कटि निषंग, पट पीत फेंट जुत, मृगया साजु सुहाये।
लोचन लोल बिलोल बिलोचन, मदन कोटि छवि हाये ॥
लीन्हें बिबिधि जन्तु कर बालक, मारग बिहँसत आवैं।
निरखत राम-बनक बन-सावज, मोहित ह्वै संग धावैं ॥३३

मंडल छंद

मृग औ मृगी मृगज सँग डोलें, चाटत श्याम सरीर।
ठेलत करन कृपाल जगतपति, पसु पच्छिन की भीर ॥
नव घन बरन, हरन मन रघुवर, बरनि न सकत गोपाल।
बिनु सासन सह सके तानि को, सब पर परम कृपाल ॥३४

सोरठा

इहि बिधि आवत राम, संध्या समय सुहावने।
अभिलाषनि पुर बाम, काम-बाम-सी मग तकें ॥३५

---

३२. काकपच्छ : बालों के पट्टे जो दोनों ओर कानों और कनपटियों के ऊपर रहते हैं, जुल्फ। पेंचनि : घुमाव, ऐंठन। मृगमद : कस्तूरी। लिलार : ललाट।
३४. मृगज : मृग के बच्चे। बिलोचन : बिशेष दृष्टि।
३५. बाम : बाम-रति।

मदन छंद

आजु आवत हैं सखी, बन तें बने रघुनंद।
देखिये चलि जाइ री छवि, परम आनंद कंद॥
सोभहीं सिसु वृंद में, नव नील नीरद स्याम।
कोटि काम स्वरूप सुंदर, हरन मन अभिराम॥३६

गीतिका

धनु कंध, दिव्य निषंग कटि, पट पीत फेंट अनूप है।
लखि हरषि बरखत सुमन सुर सिर, निरखि राम सरूप है।
नव साजु सों नव सुंदरी, नव अटनि चढ़ि चढ़ि देखहीं।
श्रीरामचंद्र चकोर लोचन, चारु चितनि विशेष हीं॥३७

सब बगर बगर विनोद बहुधा, बाजने बहुधा बजें।
गजराज बाजि जहाँ तहाँ, बहु भाँति आनंद सों गजें॥
जगमगत दीप मसाल महलनि, चद्र जोतिन की प्रभा।
बहु सुभट दीपन दीप के, सब सोभहीं नृप की सभा॥३८

उत राम आवत जानि के सब, देखिवे हित ठानहीं।
कर थाल कंचन दीपमनिगन, आरती सजि आनहीं॥
जिहि खोरि आवत राम हैं, तिहि खोरि सब मंगल करें।
रघुनाथ आनंद कंद सिर, दधि दूब अच्छत लै धरें॥३९

सोरठा

इहि विधि सों रघुवीर आवत सरजू तीर तें।
पसु-पच्छिन की भीर, निरखि रूप संग न तजें॥४०

---

३६. नीरद : बादल।
३८. बगर-बगर : गृह-गृह। बाजि : घोड़ा। सुभट : वीर। दीप दीपन : द्वीप द्वीपान्तर।
३९. ठानहि : निश्चय करके।

घनाक्षर

सुंदर सलोने लोने राज के कुमार संग। अंग अंग राम अति अभिराम हैं।
पीत पट फेंट कसी, फेंटा जरकसी कसी। कसी तरकसी कंधों हूर पर काम हैं।
धरे धनु कंध, कर अनुजनि कंध पर। परम उदार मग जोवें पुर बाम हैं।
साजि-साजिभूषन, बिलोकेंजग-भूषनकों। आयेसुनिआरतीसंबारे धामधामहैं॥४१

सोरठा

जिहि जिहि मारग राम, आवत सखन समाज बनि।
तिहि तिहि मग पुर बाम, पुहुप-बृष्टि पग-पग करें।४२

सवैया

आवत बालक बृंदनि में बनि, स्याम मनोहर बेस सुहावें।
चाहि मृगी मृगराज-किसोरन, नैन चकोरन कौं ललचावें॥
भीर लगी पसु-पच्छिन की बहु, कोहु न काहु सतावन पावें।
देखि सकें जगजीवन कौं बन-जीवन कौं बन आनन भावें॥४३

सोरठा

अभिनव जलधर स्याम, अंग अंग अभिराम अति।
कहा सु कोटिक काम, काम-बाम-सी मग तकें॥४४

घनाक्षर

वारि-वारि आरतिहि बारती हैं तनमन। येकें अति आरति निहारि लरखति हैं।
देखि रघुवीरन कौं, पच्छी पसु भीरन कों। कौन धरे धीरन कौं सोभा सरषति हैं
रूप की घटा सी, चढ़ी कंचनिअटानिबनि। छबिकीछटासी, फूलिफूल बरषतिहैं।
सुंदर गोपाल राम, सोभातनकोटिकाम। देखिदेखिदामधामधामहरषतिहैं॥४५

---

४१. जरकसी : (फा० श० जरकश) जिसपर सोने के तार आदि लगे हों।
तरकसी : (फा० श० तर्कश) तीर रखने का चोंगा। उदार : परम सुन्दर।
४३. चाहि : देखकर। सतावन : संताप देना, हैरान करना।
४४. अभिनव : नया।
४५. वारि वारि आरतिहि : आरती जला जला कर। आरति : आरत, दुखी।
बारती : निछावर होती हैं। लरखति : लड़खड़ाती हैं। सरषति : शोभा देती हैं।

दोहा

सिंघ-पौरि आये जबै, बाजे वीर निसान।
लिये रसाले भूप कौ, आइ मिले अगवान ॥४६
बाज कुही चीता सघे, बहु धनु बान निषंग।
लीन्हें सीस नवाइ कै रघुवर बालक संग ॥४७

घनाक्षर

आये रघुनाथ, देखि लोचन सनाथ भये। चाहि मुनि नाथ माथ चरननि नाये हैं
बैठे ढिग मोद सों, विनोद भरे चार्‌यो सुत। आसिष असेष रिषि देत हरषाये हैं॥
पुरुषपुरानजानि, पूजा मन चित्त ठानि। नीके पहिचानि, कोटि भाँति सुख पाये हैं।
आइसुनितौलौं धाइ कोशिल्याकीअतुराइ। भोजनको रामरंग महल सिधायेहैं ॥४८

सोरठा

लगे दौरि अतुराइ, मात हिये आनंद घने।
चूमति लेत बलाइ, इतो खेल नहिं खेलिये ॥४९
भोजन को रघुनाथ, बैठे अनुजनि सों लसैं।
सखा सलोने साथ, विहंसनि तिनकी को कहै ॥५०

सवैया

भोजन कौ बहु भांति भले विधि, भूपति के ढिग आपुहि आये।
सुंदर बाल समाजनि सों सब, सोहत तात के पास सुहाये॥
पाइ समै रिषिराइ तबै, रघुराइ चितै चरचाहि चलाये।
दानी तुम्हें हम जानी बड़े नृप, देहु हमैं कछु जाचन आये ॥५१

---

४६. सिंह पौरि : सिंह द्वार, प्रसाद का सदर फाटक जिस पर सिंह की मूर्ति बनी हो।
रसाले : रिसाला, सेना की छोटी टुकड़ी।
४७. कुही : बाज की जाति की एक चिड़िया। लीन्हे : स्वागत किया।
४८. पुरुष पुराण : विष्णु

रुचिरा छन्द

चाहि राम छवि, रहे मोहि मुनि, बहु बहु मन अभिलाष भरं।
आगम निगम ढूंढ़ि, मत केवल कहत इनहिं ब्रह्मादि परें॥
जग्य पुरुष, जोगीस जगत पति, पतित-उधारन बिरद धरें।
भजि गोपाल नाम निसि बासर, भव सागर नर सुखहिं तरें।५२

दोहा

निरखि निरखि रिषि राम छवि, मन मन जपत सु जाप।
जग्य पुरुष गोपाल गुनि, त्रिभुवन राम प्रताप।।५३

इति श्री रामप्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां विस्वामित्र रिषि-राजा दसरथ संवाद वर्णनोनाम चतुर्थोध्यायः।५४

---

५२. जग्य पुरुष : विष्णु। जोगीश : योगेश्वर, शिव, श्रीकृष्ण। बिरद : ख्याति कीर्ति।

राम-लक्ष्मण-विश्वामित्र-संगमनं

५

सोरठा

राजोवाच—

जो आयसु मुनि-ईस, सो आगे सब रावरे।
तुम हमरे जगदीस, बहुत कौन बिनती करौं ॥१

चौबोला छंद, राग सारंग

रिषिरुवाच

सुनि मन जानि बात अनुसारी।
दसरथ धराधीस अब कैं तुम, राखहु पज हमारी॥
जब जब करत तपोवन मैं मख, तब तब होत दुखारे।
दानव प्रबल अबल रिषियन कौं कठिन त्रास करि मारे॥
खाये भूँजि भूँजि रिषि कोटिन, सुरा सहित रुचि नीकें।
आरतिवन्त होत अति भीतनि, कठिन त्रास सब ही कैं॥
भागे फिरत अधीर दुखित दुज, तिन करुना उर आनौं।
जप तप नेम धर्म व्रत पूजा, भये भंग सब जानौं॥
रवि-कुल-कलस, कलप-तरु भू पर, भये भूप धर जेते।
तिन कीरति गोपाल जुगनि जुग, सुनौ पुराननि केते ॥२

पाठान्तर—२. सुनि मन : मुनि मन (१, २)
३. रुचि खाये : रिसि खाये (१, २)

---

१. मुनि-ईस मुनीश।
२. धराधीस : पृथ्वी के राजा। पैज : टेक, प्रण। भीतनि : भय।

सवैया

केयक बार तपोवन मैं मख, ब्रह्मरिषीसनि सौं सरसाये।
कालहु तें दनु दीह कराल, घने दुज भूंजि, भलें रुचि खाये।।
याहीं तें आरतिवंत सबै, ह्य कौं तुम पास बिचारि पठाये।
देहु हमैं सुख-मानि महीपति, माँगन राम कुमारहि आये।।३

सोरठा

सुनि चकृत नृपराज, टक टक चाहैं चहुं दिसा।
तन मन उपजी लाज, कही कहा रिषि राज जू।।४

राजा वाच—

घनाक्षर

केती यह बात, जाहि बालक, बताइतु। बोलि न सकत, बोल सुनि अकुलाइ हौं।
देहौं देस कोस, मनि मानिक सुमेर मान। कहिअे चमू तौ चमू सकल पठाइहौं।।
कोमल कमल हू तें देखिअें कमल नैन। नैनन के तारे, नेक कैसे बिसराइहौं।
साजि चतुरंग सैन, करिहौं समर मारि। बिनु मख राखें मुनि, मुखन दिखाइहौं।५

रिषिरुवाच

चाहौं मैं न राज, गजराज बाजि साज कछू। केतिक तिहारे, दीबै जोग अल बेस जू।
जानत जहान जेती प्रभुता करी हैं दूरि। चाहिअे बिभूति, न विभूति कोस देसजू।
काहे को तजत भूप सत से सनातन कौं कुल की बड़ाई देखौ कुल के दिनेस जू।
लीजे जस मानि सुख, कीजे तपोबन मख। दीजे राम लच्छनकुमार कोसलेस जू।६

---

३. सरसाये : रसपूर्ण हुए।

५. केती यह बात : यह कौन-सी बड़ी बात है ? इसके लिये आप बालक भेजने के लिये कह रहे हैं। आपकी बात सुनकर आकुल हो गया हूँ और कुछ कह नहीं पा रहा हूँ। देस : भूखंड। कोस : खजाना। चमू : सेना। चतुरंग : चतुरंगिणी सेना (हाथी, घोड़ा, रथ और पैदल)।

६. जोग : योग्य। अल : समर्थ, शक्तिमान। बेस : बेसी, अधिक। जहान : संसार। विभूति : भगवान विष्णु का वह ऐश्वर्य जो नित्य और स्थायी माना जाता है अर्थात् राम। सनातन : बहुत दिनों से चला आता हुआ क्रम, परंपरा।

कुरंग छंद

राजा वाच—

अति कोमल वय सुंदर विहँसनि मंद।
जीवत जीव विलोकि सुधा मुख चंद ॥७

सवैया

चौंकि परें परजंकहि ते, निसि सोवत लागि हिये चुपचानें।
प्रात उठें हरि, रूठि रहे कहुं, निठि निहोरन, ढीठ न मानें॥
राम लला ललकें लखि लोचन, ज्यों अलिकंज रहे उरझानें।
जंग जुरें दनु सों बन में, धनु बान कहा धरि बालक जानें ॥८

मुनिरुवाच—

बालक जाहि कहो तुम भूपति, पालक सो कहिये सब ही कौ।
पालक देवन के दुख दीरघ, आये हैं देन तुम्हें जय टीकौ॥
लोभ तिन्हैं करि छोभन छोभत, को यह भार भरें अवनी कौ।
मंत बिना जिमि जोग अकारथ, संत बिना सब संपत फीकौ ॥९

सोरठा

सुनि मुनिवर के बैन, देत न मुख उत्तर बनें।
उमहे घन से नैन, निरखि माधुरी राम छवि ॥१०

---

८. चौंक परें : चौंक पड़ते हैं। चुपचानें : चुपचाप। ढीठ : धृष्ट। परजंकहि : पर्यंक, पलंग।

पाठान्तर—९. भार भरें : भार हरें (१, २)
११. मृनाल तंतु : मृनाल जंतु (१, २)

९. छोभनि छोभत : क्षोभ को भी विक्षुब्ध करना। मंत : मंत्र। अकारथ : निष्प्रयोजन। सन्त : शान्ति।

१०. उमहे : उमंग में आना, उमड़ना।

घनाक्षर

राजा वाच

कहत बनै न कछु, सुनत बनै न कछु। भरि भरि नैन भूप लालिसैं करत हैं।
कौने मृगराजन कौं जकरे मृनाल तन्तु, आपु ही कहौ तो हमैं जानि न परत हैं॥
सरबस लीजै मख तमोवन कीज आइ। हम रघुनाथ बिनु धीर न धरतु हैं।
अचरज एते मान आजु ही सुनी है कान। दानव सौं मानव के बालक लरत हैं।११

सोरठा

परी अवधिपुर हूलि, मागत रिषि रघुराइ हैं।
सबहिन सब विधि भूलि, रंग-महल रानिन सुनी ॥१२

घनाक्षर

ठौर ठौर देखिअै ठगे से लोग बानी सुनि। रानी बिततानी कहैं कैसे हौंन पाइहैं।
भूप सौं लरेंगी, बिसु खाइ कै मरेंगी। मुनि स्राप सौं डरेंगी नाहि, सत्यामकु जाइ हैं।
बिनु अपराध दुख दैन कौं अगाध आये। करि हैं कहा ये, कहैं सबै बिततांइ हैं।
दानव प्रबल, बाल कोमल कमल लाल। कालन सौं लै कै रिषि बालक लराइ हैं॥१३

दोहा

चहल पहल सुनि महल की, आइ गये रघुराई।
दुख मृदु मुसकनि मात लखि, लगी कंठ अकुलाइ॥१४

सोरठा

कहै मात अकुलाइ, कहत कहा मुनि भूप सौं।
यह अचरज का आइ, राम लला हम सौं कहौ॥१५

---

११. लालिसैं : लालसा। जकरे मृनाल तंतु : मृनाल तंतु से बाँधना।
१२. हूलि : हलचल।
१३. सत्या मकु जाइहैं : चाहे सत्य भले ही चला जाय। कैसहौं : कैसे, किसी भी प्रकार। बिततानी : विकल होना।
१५. का आइ : क्या है।

सवैया

श्रीराम—

मात सुनौ यह बात रिषीस की राखत कौं मख मांगल मो है।
कैहे तो जैहैं दुखी दुज कारन, होत दिना दस पांच बिछोहैं॥
तेरेइ दूध की बात, कहा, जबलों न सुखी भुव ब्राह्मण गो हैं।
आपनो तोसौं कहा कहौं पौरुष, दाऊ की सौं, कोऊ दानव को है॥१६

मात सौं बात कहैं मुसक्यात, सु जातहि जानि सबै परिहैंगे।
बाम्हन गाइ उबारि सकें नहि, तौ हम राज कहा करिहैंगे॥
है सब तात प्रताप की बात, वै दानव दीन कहा लरिहैंगे।
जो न मुनीस को राखि सके मख, तौ धनु हाथ कहा धरिहैंगे॥१७

दोहा

सुनि सब लेत बलाइ हैं, जननी जिय हरषाइ।
बिहँसत आये तातु जुत, देखि दुखित नृपराइ॥१८

सवैया

रिषिरुवाच—

राजन सौं कछु काज सरैं तौ कहा महि मंडल में नृप थोरे।
है यह रामहि लायक कारज, ताही तें कीजतु तोहि निहोरे॥
आखिर बात रहै जग में जय, हाथी औ घोरे बिलात ज्यों ओरे।
लोभ के छोभ तें बंस लजावत, होत हो भूपति सत्यहि भोरे॥१९

सोरठा

देखहु बंस विचारि, रबि-बंसी जितने भये।
सत्या एक न हारि, दान जुद्ध को आगरे॥२०

---

१६. तेरेइ : तेरे ही। कैहे : कहेंगे। कोहै : कौन है, क्या है।

पाठान्तर—१९. सत्यहि भोरे-सत्यहि मोये (१,२)

१८. बलाइ : निछावर। तात जुत : भाइयों के सहित।

१९. सरैं : पूर्ण होना, काम होना। बिलात ज्यों ओरे : ओले की भांति विलीन हो जाते हैं। निहोरे : अनुग्रह।

२०. आगरे : आगे। सत्या येक न हारि : सत्य से किसी ने भी हार नहीं मानी है।

पद्धटिका

श्री रविनंदन मनु वैवस्वत ।
तिनके नव सुत सबते उन्नत ॥
तिनमें नृप इच्छ्वाकु उजागर ।
नृप ससाद तिनके बल आगर ॥२१

तिनके नृपति ककुत्स सुहाये ।
विष्टरास्व सुत तिनके जाये ॥
तिनके आई नृपति धनुधारी ।
तिनके नृप जुवनास्व सुभारी ॥२२

तिनके श्राव नृपति जग जानें ।
नृप वृहदास्व तासु अधिकाने ॥
तिन कुवलास्व तनय भुज भारे ।
भये चक्कवै, धुंधु प्रहारे ॥ २३

तिनके नृपति द्रढ़ास्व भये हैं ।
तिनके नृप हरजस्व नये हैं ॥
नृपति निकुंभ भये तिनके हैं ॥
संहृतस्व तिनके सुत ते हैं ॥२४

तिन नंदन अकृतस्व सु राजा ।
सुत जुवनास्व महा बल छाजा ॥
भये मानधाता तिन केरे ।
तिनके सुत पुरु कुत्स भये रे ॥२५

तिन त्रस दस्यु तनय उपजाये ।
तिनके सुत संभूत सुहाये ॥
भये सुधन्वा से सुत ताके ।
विष्णु वृद्धि तिन नंद प्रभाके ॥२६

---

२१. वैवस्वत : सूर्य के पुत्र का नाम । इच्छ्वाकु : इक्ष्वाकु, विवस्वान (सूर्य) के पुत्र मनु के बेटे और अयोध्या के प्रथम नरेश । ससाद : विकुक्षि का दूसरा नाम शशाद था । इक्ष्वाकु ने अष्टका श्राद्ध के लिए अपने पुत्र विकुक्षि को योग्य मांस लाने का आदेश दिया । उन्होंने बहुत मृगों का शिकार किया किन्तु अधिक क्लान्त एवं भूखा होने के कारण उनमें से एक शशक को खा लिया । इस अपराध के कारण गुरु ने उनका नाम शशाद रख दिया ।

२२. ककुत्स : ककुत्स्थ-राजा इक्ष्वाकु के पुत्र शशाद के बेटे जिन्होंने युद्ध में बैल बने हुए इन्द्र के ककुद्ध पर खड़े होकर विजय प्राप्त की थी । ऋग्वेद में इन्हें भगीरथ का पुत्र कहा गया है । विष्टरास्व : ककुत्स्थ के पौत्र विश्वगश्व (ककुत्स्थ के पुत्र सुयोधन उनके पुत्र पृथु और पृथु के पुत्र विश्वगश्व) । आइ : आयु : विश्वगश्व का पुत्र) । जुवनास्व : युवनाश्व ।

२३. श्राव : श्रावस्त । वृहदस्व : वृहदश्व । कुवलास्व : कुवलयाश्व—धुन्धमार राजा ऋतुध्वज । चक्कवै : चक्रवर्ती । धुन्धु : एक राक्षस ।

२४. द्रिढास्व : दृढाश्व । हरजस्व : हर्यश्व । निकुम्भ-हर्यश्व के पुत्र संहृतस्व : संहृताश्व ।

२५. अकृतस्व : अकृशाश्व (संहृताश्व के दो पुत्रों का उल्लेख मिलता है अकृशाश्व और रणाश्व) । जुवनास्व : युवनाश्व (रणाश्व के पुत्र युवनाश्व) । मानधाता : युवनाश्व के पुत्र मानधाता और मुकुंद । पुरुकुत्स : मुकुंद का पुत्र ।

तिनके भये नंद अनरन्य।
तिन हरजस्व तनय जग धन्य ॥
तिनके सुमनस सुत ये ठौर।
तिनके भये सुधन्वा और ॥२७

तिनके सत्यव्रत जग-वंद।
तिनके भए भूप हरिचंद ॥
रोहित भूप तनय तिन जानि।
हरित राज तिन नंदन मानि ॥२८

भये चंचुहारी तिनके सु।
विजयराज तिन तनय सुवेसु।
तिनके राजक नंद बखानि।
तिनके वृक जग ऊपर दानि ॥२९

तिन नंदन नृप राज सुबाहु।
तिनके भये सगर नर नाहु ॥
तिनके भये सुत साठ हजार।
किये कपिल मुनि तिन सब छार ॥३०

पुनि तिन तनय पंच जन वीर।
तिनके अंसुमान रन धीर ॥
तिनके नृप षणांग दिलीप।
भये भगीरथ सुत अवनीप ॥३१

तिन तप बल महि आने गंग।
किये कृतारथ सब के अंग ॥
तिन नंदन स्नुतराज सभाग।
तिनके भये नृपति नाभाग ॥३२

तिनके अम्बरीक नृप जान।
परम भक्त परिपुरन ग्यान ॥
तिनके सिंधु दीप सुख कंद।
अयुताजित तिनके नृप चंद ॥३३

तिनके भूप भये रितुपर्न।
तिनके आति पनि सुभ वर्न ॥
तिनके नृपति सुदास अनूप।
तिनके भये मित्र सहभूप ॥३४

---

२७. अनरन्य : अनरण्य हरजस्व : हर्यश्व। सुधन्वा : सुधन्वा के पुत्र त्रिधन्वा के पुत्र का नाम तरुण।

२८. सत्यव्रत : तरुण का पुत्र। हरिचन्द : हरिश्चन्द्र-प्रसिद्ध सत्यवादी राजा जो सत्य रथ के पुत्र थे। रोहित : रोहिताश्व-सत्यवादी हरिश्चन्द्र के पुत्र।

२९. वृक : रोहिताश्व के पुत्र।

३०. बाहु : वृक के पुत्र। सगर : बाहु के पुत्र सगर थे। सगर की पुत्री का नाम प्रभा था। प्रभा के गर्भ से साठ हजार पुत्र उत्पन्न हुए।

३१. पंचजन वीर असन्जस-औब्य मुनि ने संतुष्ट होकर वर दिया था जिससे राजा सगर को असमन्जस नाम का पुत्र हुवा। अंसुमान असमन्जस के पुत्र।

३२. स्नुतराज : भगीरथ के पुत्र का नाम। नाभाग : श्रुत राज के पुत्र।

३३. अम्बरीक : अम्बरीष। सिन्धुदीप : अम्बरीष के पुत्र का नाम। अयुताजित : श्रतायु (सिन्धुदीप का पुत्र)।

३४. रितुपर्न : ऋतुपर्ण (श्रतायु के पुत्र)।

तिनके नृप अनरन्य बखानि । करि असोच महि मेटे तापु ।
तिनके निघ्न नृपति सुख-दानि । तिनके नृप दसरथ भये आपु ॥
सुत दिलीप तिनके नर देव । करि सुभ जग्य रिषिन अवतंस ।
जिन नंदिनि की कीन्हें सेव ॥३५ जज्ञ पुरुष परिपूरन अंस ॥३७

तिनके रघु भूपति सर्वज्ञ । हरन सकल भूतल दुःख भार ।
जीति विश्वजित कीन्हें जग्य लीन्हें रामचन्द्र अवतार ॥
दंडि सुरेस किये दुज दान । तिनहि लोभ करिके नृपराज ।
तिनके अज नृप राज सुजान ॥३६ तजि सत सुकृत करत अकाज ॥३८

सोरठा

रिषि

तुम से राज अनेक महिमंडल ते ल्याइये ।
कारज सरे न येक, राम बिना बेकाम सब ॥३९

घनाक्षर

श्राप मकु दीजै, जस लीजै, मुनि ईस आपु । अवधिपुरी कौ कछु लोभ न करत हैं ।
कहा हय हाथी हेम, सम्पति सकल छेम । काहू सों न प्रेम, काहू त्रास न डरत हैं ।
ए तौ सुकुमार, वै तौ दानव अपार । हम तातें बार पाँय रावरे परत हैं ।
टेक मति कीजै, सैंन लीजै मख राखन को । नैनन तें नेक मेरे राम न टरत हैं ॥४०

सोरठा

वसिष्ठोवाच—

सुनि गुनि समय वसिष्ठ, नृपहि कहैं समुझाय कै ।
इन सम नाहिन इष्ट, रामलला इन सौंपिये ॥४१

---

३५. अनरन्य : अनरण्य । निघ्न : अनरण्य के पुत्र ।
३६. विस्वजित : विश्वजित यज्ञ । अज : रघु के पुत्र ।

पाठान्तर—४० कहा हय : कहा यह (१.२)

३९. कारज सरे न येक : एक भी काम पूर्ण न होगा ।
४०. मकु : चाहे, बल्कि (अ० शा०)
४१. सौंपिये : समर्पित कीजिये ।

सवैया

जानत हैं इनको हम टक, अनेकन बार, परै न बखानी।
कोटिन भाँति कहे न सुनै कछु, हैं तप तेजनि तें अभिमानी।
है इन पुन्य प्रतापन तें जय, दै सुत आपु करी रजधानी।
सृष्टिहुँ की रचना रचिबे कहँ दूसरी, ब्रह्महु पै जिन ठानी ॥४२

सोरठा

गुरु कै कहत महीप, कछु उर मैं धीरज गह्यो।
ये सूरज कुलदीप, डरत देखि सुकुमार हौं ॥४३

घनाक्षर

नैन भरि आये, मुख बैन हूं न आये। देखि कुंवर सुहाये, सब गुनिन समेत हीं।
अति अकुलात, बिलखात, ललचात। चाहि चाहि पछितात, बाल केलि प्रति हेत हीं।
सौंपे परिपाइ, मख कीजिये बनाइ। मुख चूमि रघुराइ सिख देत नेत नेत हीं॥
चित्र कैसे काढ़े, ह्वै विचित्र नेग चकृत ह्वै। विस्वामित्रजू कोरामचन्द्र नृपदेतहीं॥४४

दोहा

ठौर ठौर ठगि सौं रहे, अवध पुरी नरनारि।
भूप गये उठि महल कों, करि मुनि सौं मनुहारि ॥४५

सवैया

रावर राव उछाहु न ओधि, उराउ सबै उर डाहनि डाढ़े।
जौन जहां के तहां ही रहे जकि, लोचन नीर तरगनि बाढ़े॥
दै मुनि,ईसहि रामलला, नृप भेंटि लिये भुज सों भरि गाढ़े।
लागि रही चहुँ ओर टकाटक, राजकुमार सभा दोउ ठाढ़े॥

पाठान्तर-४४ कैसे काटे : कैसे ठाढ़े (१, २)

४२. जिन : जिन्होंने।
४३. सूरज कुल : सूर्यवंशी।
४४. परि पाइ : पाँव पकड़कर।
४६. रावर : अन्तःपुर। उराउ : उत्साह, उद्योग। डाढ़े : जलाये हुए। जकि : हक्का बक्का होकर, चकित होकर। टकाटक : टकटकी।

दोहा

सुनि गुरु मुनि सुमु हूरतं, कहें जाई रघुनाथ।
मातनि सों परनामु कै, चलो हमारे साथ ॥४७

रंग महल गये राम, लगी मात उठि कंठ सब।
राघव करें प्रणाम, मुनि मख आवें राखि हम ॥४८

सवैया

लच्छन राम विचच्छन बानु, निषंगनि सों कटि मूल कसे हैं।
हाथ धरे रघुनाथ दुवौ धनु, भूषन अंग अनूप लसे हैं॥
राजिव लोचन लोल विलोचन, चाहि गोपाल के नैन रसे हैं।
सुंदर रूप बिलोकि पुरंदर, देवन के दुख देखि हसे हैं॥४९

दोहा

कहें सुमित्रा सुअन सों, यह मोसों सिख लेहु।
मति कबहूं बिसराइयो, राम चरन सों नेहु ॥५०

सवैया

रानी कहैं अनखानी सबै, हम संग चलगी, कहा मुनि कैहैं।
राज करें अवधेस सदा, सुभ बालक दे जस भूत ललैहैं॥
बीस बिसे रहने न हमें कहु, राघव राकस देखि डरैहैं।
नातरु देति हैं प्राण रिषीसहि राम लला बन जान न दैहैं॥५१

---

४७. मातनि : माताओं। सुमुहरतै : शुभ मुहूर्त।

४९. विचच्छन : विशेष रूप से चतुर। चाहि : देखकर।

५०. सुअन : पुत्र।

५१. कैहैं : क्या कहेंगे ? ललैहैं : ललचेंगे। जस : जैसे। बीस बिसै : बीसों बिस्वा अर्थात् शतप्रतिशत। राकस : राक्षस। नातरु : नहीं तो।

सोरठा

श्रीराम—

सभा मध्य नृपराज, हारे हमहि रिषीस को।
सत्या तजें अकाज, सो कबहूं नहिं कीजिये ॥५२

घनाक्षर

कीजे कहा, अब तो गये हीं पै बनत बात। ना तौ इतही तें मख रिषि कौ उधारत
केतिक है दूरि अब देखिअे तपोबन को। ना तौ कौन जातो पितु जोन बात हारतें ॥
दसहू दिसा निरोधि मुनि कौ प्रबोधि बोध। सोधि सोधि बाननि सौं दानव न मारतें।
चार्‌यो बीर बाननिसौं लेते छिति छाइ सब। कौन दिसि जाइ दनु जीवन उबारतें॥५३

दोहा

दें आसिष मुख चूमि कं, कहै मातु अकुलाइ।
मुनि को संग न छोड़ियो, येको पल रघुराइ॥५४

चले तपोबन राम हैं, दलन रिषिन के ताप।
बरनत कवि गोपाल रुचि, उहित राम प्रताप ॥५५

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां राजा दसरथ श्री राम लक्ष्मण विश्वामित्र रिषि समदनं नाम पंचमोध्याय: ॥५६

---

५२. सत्या : सत्य।
पाठान्तर-पुष्पिका-समदनं : संगमनं(१-२)

५३. नातौ : नहीं तो। निरोधि : रोकना।
पुष्पिका-समदनं : समदनु, उपहार।

ताड़का-बध यज्ञ-रक्षा

६

छप्पै

बंदि चरन दोउ भ्रात मात, बहु आसिष दीन्हें।
धूप दीप नैवेद, बेद-धुनि बिप्रन कीन्हें॥
मनि मरकतमय थार, दूब दधि रोचन टीके।
चले राम हरषाइ, देखि सुभ मंगल नीके॥
मुनि संग मनोहर बेस लखि, धरत अवधि नहि धीर हैं।
सुर हरषि ब्योम बरषहि सुमन, देखि रूप रघुबीर हैं॥१॥

सोरठा

चले ठगौरी लाइ, ठौर-ठौर तकि सब रहे।
मारग मैं रघुराइ, निरखि-निरखि रिषि हरषहीं॥२॥

सवैया

चंद वियोग चकोर चके जनु, औधि के लोगन यों बिततायें।
भूलि गये सुधि भूख, न भौननि, बालक बाल तकें अकुलाये॥
राम लला मुख पंकज संग लगे मन-भौंरनि-भीर सुहाये।
नाग से नागर लोग रहे जकि, लै मनि सें मुनिराज सिधाये॥३॥

दोहा

निरखि-निरखि छवि माधुरी, हरषि-हरषि मुनि-ईस।
मन-मन होत असीस ये, जन पाल जगदीस॥४॥

पाठान्तर—पालजग : जगपालक (१.२)

---

१. रोचन : हल्दी।
२. ठगौरी : ठगे से, चकित।

घनाक्षर

जात मुनि साथ हैं री, ये ई रघुनाथ हैं री। सोहै धनु हाथ है री, हे री कासों कहिअै

अति सुकुमार हैं री, राज के कुमार हैं री। सुन्दर अपार हैं, पुरंदर से महिअै।।

प्रीति पुर नागरी, विचारें मति आगरी हैं।

प्रेतीगति रानी और राजा को न चहिअै।

जानती हैं ठगु है, ठगोरी डारि लीन्हें जातु।

लीजै छीनि या सों याहि, अैसी बात लहिअै ।।५।।

सोरठा

मारग में रघुनाथ, हरसत अति मुनि संग बनि।

गौतम त्रियहि सनाथ, पहुँचे करन सिलाहि ढिग ।।६।।

सवैया

सुंदर श्याम सिला लखि कै, रघुबीर रहे पद पंकज दीन्हे।

जागि उठी जनु सोवत तें, अति रूपवती पल में करि लीन्हे।।

मेटि कलंक के अङ्क सबै, निकलंक तकैं करुनामय चीन्हे।

गौतम श्राप निवारि अहिल्यहि, पाहन ते प्रभु पावन कीन्हे ।।७।।

अहिल्योवाच—

करखा

जोरि कर जुगल हिय बिमल अस्तुति करें। कौन प्रभु-चरन-महिमाहिं अब हौं भनौं

बेद भेद न लहे, ब्रह्म रुद्र न कहे। सेस सनकादि अरु कौन देवहिं गनौं।।

कोटि रवि चंद्र नख-जोति अतुलित जगे। दर्पबलि दलि हरे लोक सोकनि घनौ।

श्राप मुनि टारि, नरकारि, उध्धारि मोहि। कलप तरुकोटि से आइ प्रगटे मनो ।।८।।

---

५. महिअै : पृथ्वी पर।

६. सिलाहि ढिग : सिला के पास।

७. नरकारि : नर के अरि अर्थात् भगवान्।

छप्पै

बार बार चरनारविंद, बंदन त्रिय कीन्हीं।
गाइ गाइ गुन रूप पुलकि, परदच्छिन दीन्हीं॥
मो उध्धारनि धरनि राम, अवतार सिरोमनि।
कोटि जुगनि विख्यात सुजस गोपाल बिमलि भनि॥
जय जय अनन्त अव्यय पुरुष, बसहु सदा निज बेस हिय।
मुनि श्राप पाप विध्वंस कै, करुनामय उध्धार किय॥९॥

करखा

श्री रामौवाच –

राम मुनि-ईस के चाहि मुख, कहि उठे। माधुरी हँसनि मुख अधर सोभा भरे।
परम कौतुक कहा, है सु अद्भुत महा। कौन यह हेत त्रिय असमगति अनुसरे॥
सुनहु रघुनाथ, यह गाथ सुर राज हित, अजहुँ लौं चंद्र रिपि दोष कालिम भरें।
सकल आनंद के कंद गोपाल प्रभु, चरन अरविंद निजु परसि पावन करें॥१०॥

छप्पै

इंद्र चंद्र अपराध घोर गौतम-थल कीन्हें।
मुनि निसीथ छल जानि, अंजनिहि बूझन लीन्हें॥
अंग सहस भग हेतु, तुचा-मृग इंदुहि मारे।
निरखि दुहुनि करि क्रोध, श्राप सत मखहि विचारे॥
तू जनमि कुमार, कुमारि कहि, असम सिला तू होहि तिय।
इतिहास यह सु रघुनाथ जू, परसि चरन उध्धार किय॥११॥

सोरठा

अस्तुति करि मुनि नारि, मुनि-पद-बंदन करि कही।
लिये तारि नकारि, हुतो न कछु अपराध मो॥१२॥

---

९. परदच्छिन : प्रदक्षिणा।

१०. असम : अश्म, पत्थर। कालिम : कालिमा, कलंक।

११. निसीथ : रात। अंजनिहि : रात में। मृग-तुचा : मृग चर्म, मृगछाला। सतमखहि : इन्द्र। तू जनमि : तू कुमार को जन्म देकर भी कुमारी कही जाय। अहल्या पंचकन्याओं में गिनी जाती है। पंचकन्याएँ—अहल्या, तारा, मन्दोदरी, कुन्ती और द्रोपदी।

त्रोटक

मुनि गौतम चाहि प्रसन्न भए।
रघुनाथ भले गति दान दए॥
महिमा पद पंकज कौन कहै।
सनकादि सिवादि अनादि लहै॥१३॥

अति देखन के लघु वेस धरे।
इन तीनि डगे तिहुँ लोक करे॥
कहियो प्रभु सों अति प्रीति ठए।
मुनि नारि महा हित मानि लए॥१४॥

दोहा

मख देखन दंपति चले, राम लखन मुनि संग।
सरजू सलिल गंभीर अति, निरखत तरल तरंग॥१५॥

सवैया

सुंदर स्याम सरोरुह लोचन, चंचल मीननि की गति हेरैं।
पार करौ तिहुँ लोकहि जे, तिन पोतहि पार तरैं हित टेरैं॥
संकि सुनो सुनिलै गहि रे, कर जोरि कहै न कछू गथ मेरैं।
कै मनुहारि गोपाल कहैं कहुँ केवट नाव न ल्यावतु नेरैं॥१६॥

---

१५. मख : यज्ञ।
१६. सरोरुह : कमल। नेरैं : पास।

सोरठा

समुभावें मुनि-ईस, रामहिं नाव चढ़ाइ तें।
हम दैहैं बगसीस, पार करें किन बेगि अब ॥१७॥

दोहा

केवट

कहन लग्यौ रिषिराइ सौं, केवट मन कौं ताप।
देख्यो सुन्यो न आजु लौं अद्‌भुत चरन-प्रताप ॥१८॥

घनाक्षर

बिधि के बिधान मैं न, बिबुध बखान मैं न। श्रुति उपखान मैं न, कीन्हें उनमान को।
कहुँवै भये न, और ह्वैं हैं ना समान इन। देखत इतेक से, न आन उपमान कौं॥
यातैं अब येकै पोत निपट पुरानौ यह। होइ जो सिला की गति कबहु निदान कौं।
कुल परिवारन को जीवन अधार मेरौ। तातैंकरजोरिकहौंकरुनानिधानकौं॥१९॥

द्रुमिला

श्री रामौवाच—

हँसि राम कहैं सुनि केवट रे, मन सोच कहा उपजावतु है।
यह जानि परी हम कौं, न कछु विपरीति की रीति बतावतु है॥
सुनि ऊतरु ऊतरु देत बनै नहिं नैनन ही ललचावतु है।
अवलोकन सुंदर स्याम सरीरहिं, बातन हीं कहकावतु है॥२०॥

सोरठा

केवटोवाच—

नौका निपट पुरान, तुम हौ पुरुष पुरान से।
देख्यौ चरन-विधान, असम-सिला भइ सुंदरी ॥२१॥

---

१७. बगसीस : बख्शीश
१९. उनमान : अनुमान। उपखान : उपाख्यान, पुरानी कथा, अन्तर्कथा।
२०. ऊतरु : उत्तर।
२१. असम—जो बराबर न हो, असदस।

सवैया

सुंदर स्याम मनोहर मूरति, गौर किसोर कला सब सोहौ।
आजु तें आपु-सें हौं न लख्यौ कहुं, तीनिहुं लोकनि के मन मोहौ॥
भेंट गोपाल भयो बड़-भगनि, नैन निमेषनि होत बिछोहौ।
जद्यपि रामकुमार, बड़े-उर के पद तें नहि जानत को हौ॥२२॥

थाह तरें, उर लौं सरजू जल, देखि डरौ, मन-ताप हरौ जू।
नावहिं जो करि हौ कबहूं हठ, तो परिवार क्यौं पेट भरौं जू॥
पावन पाहन की पदवी लखि, दीन महा मन मांह डरौं जू।
हौं मति अंध, न बंध करौं, मम कंध चढ़ौ, उहि पार करौं जू॥२३॥

सोरठा

बनि आई अब येह, तब हीं नाव चढ़ाइ हौं।
चरन-कवल सों नेह, अपने करन परवारि के॥२४॥

छप्पै

सुनि सुनि श्री राजीव-नैन मनहीं मुसक्याने।
लै पखारि पग, आइ सुनत, अति आनन्द माने॥
भर्‌यौ कठौता नीर, करन नीरज पद धोयो।
पुलकि सहित परिवार, पिअत पद अमिय निचोयो॥
गोपाल राम पारस परसि, देह दिव्य देखत भयेउ।
बहु दीन दयाल दयाहि तें, चढ़ि बेवान सुर पुर गयेउ॥२५॥

---

२२. निमेषनि : पलक मारने भर का समय, क्षण। बड़े उर के पद : वक्ष पर भृगु के पैरों का चिह्न।

२३. थाह तरें : यहाँ सरजू का जल छाती तक ही है, थाह है, आप पार उतर आइये। इसे अथाह समझ कर नाहक डर रहे हैं, मनस्ताप का निवारण कीजिये और राम का नाम लेकर उस पार चले आइये।

२४. पखारि : प्रक्षालन।

२५. बेवान : विमान।

द्रुमिला

जिनकी गति पार न वार कछू, तिन पार भये सरजू जल हैं।
जिन लोचत सेस महेस सदा, तिन लोचत कौसिक के थल हैं।।
जिनके मिलिबे मख कोटि करें, मख राखन जात भुजा बल हैं।
अवलोकि हँसें सब देव-बधू, अति अद्‌भुत बाल कुतूहल हैं।।२६।।

सोरठा

मुनि नारी अरु कीर, तारि चले नरकारि है।
कौतुक ही रघुबीर, पहुँचे तबहीं काम बन।।२७।।

सवैया

मोर चकोर चितैं चहुं ओर, चके मृग डोर डगैं न डगाते।
हेरत केहरि कुंजर पुंज, कहूं नहि काहू के नैन अघाते।।
भूलि गईं सुत-भौननि भीलनि, भीलु हँसैं रस मैं सरसाते।
देखि अचंभित रामलला छवि, जीवन के जिय आनंद माते।।२८।।

सोरठा

रामोवाच—

देखि काम बन राम, जीवन कौ अह्लादि अति।
कह्यौ तपोवन धाम, कितिक दूरि रिषिराज जू।।२९।।

सवैया

रिषिरुवाच—

पूरि रहे सब ठौरनि मैं प्रभु, बूझत हौ गहि बालक वै जू।
आदि न अंत अनंत सदा, तुम जानि परौ न कछू हम पै जू।।
भूतल भार उतारत हौ, जन-कारन कौ अवतारन लै जू।
तीनिहुँ लोक करे पग तीनि, सु तासु तें दूरि तपोवन है जू।।३०।।

---

२६. पार न वार : न इस पार न उस पार। लोचत : अभिलाषा करना।
२७. मुनि नारी : अहिल्या। कीर : केवट मल्लाह।
२८. मृग डोर : हिरनों की कतार। केहरि : सिंह। कुंजर : हाथी। डगैं न : डगमगाते नहीं, डरते नहीं। डगा : डगरा, मार्ग। जीवन के जिय : प्राणों के प्राण।
३०. गहि बालक वै : लड़कपन (का स्वभाव) पकड़कर। वै : वय, उम्र। हम पै : हमसे।

सोरठा

श्री रामोवाच—

कहेँ बिहँसि रघुवीर, हम बालक जानैं कहाँ।
तुम हो जोग सरीर, आगम निगमनि निपुन अति ॥३१॥

मदन छंद

काम बन श्री राम निरखत, चले संग सुभाइ।
पगनि पग अति अमनि तें, तरु तरनि निबसत जाइ॥
दाहिनें मुनि के सु रघुवर, लषन बायें अंग।
नील मनि गिरि, कनक मंदर, मध्य मानहु गंग ॥३२॥

गहन गह गह, सुमन महँ महँ, लता लहु लहु लोल।
बिहग बहु बहु कल करबित, बूझि परत न बोल॥
मंद गंध सुगंध सीतल, गंधबाहु बिहारु।
परसि कुसुम पराग उड़ि उड़ि, परत लोचन चारु ॥३३॥

अंग अभिनव जलद सुंदर, समय बैस किसोर॥
निरखि बनचर चकित मोहत, हंस मोर चकोर॥
जात मग इहि भाँति निरखत, अमित रंग रसाल।
लखें कौसिक के तपोवन, राम जन गोपाल ॥३४॥

सोरठा

इहि विधि श्री रघुराइ, निरखत पहुँचे जाइ तहँ।
लखे तपोवन आइ, परम पुन्यमय रम्य थल ॥३५॥

जिहि थल सकल निसंक, सत्रु मित्र जानि न परत।
एकहिं दीन कलंक, तन कठोर जिहिं मिलत नहिं ॥३६॥

---

३२. रंग सुभाइ : सहज स्वभाव। अमनि : अवनि, पृथ्वी। तरनि : तले, नीचे।
३३. गहन : बन। करबित : मिश्रित, मिला हुआ, खचित। गंधबाहु : वायु।
३४. बैस : वयस। रसाल : रसदार, मधुर।

छप्पय

नाग लता, पुन्नाग, नाग केसरि, बहु येला।
पिंड खजूर अंगूर, मधुर दाखन के बेला॥
लह लह लता लवंग, बकुल, चम्पक नव मल्ली।
जाही, जुही समूह, माधवी, मालति, मल्ली॥
बहु बहु प्रसून सौरभ भ्रमर, भ्रमत मत्त मकरंद मद।
धूसर पराग बन घुंघुरित, मनहु तपोवन जस बिसद॥३७॥

सोरठा

षट रितु के फल फूल, सदा रहैं फूले फले।
तपसी तरु-तरु मूल, कंद मूल बहु-बहु तहाँ॥३८॥

छप्पय

जिहि बन चंदन अगर घ्रान कृष्णागर तखर।
नारिकेरि, नारंग रंग, पुंगी फल फल भर॥
कंटकादि छीरादि कटुक, तिक्तादि रसादिक।
सकल बृच्छ कंदादि औषधी नंदन आदिक॥
अतिरम्य तपोवन सजलमय, कवि गोपाल बरनि न सकत।
रवि किरिन परसिव न-धातु रज सकल थलनि झकमक झकत॥३९॥
जहाँ प्रबल गजराज रमित, मृगराज उमंगह।
चित्ता, चित्तर, चरख, कीस, मृग मल्लुक संगह॥
कंठी रव, करकंठ, करभ, करि करत कल्लोलहिं।
तपसी अंध अपंग बाघ, गहि कंधनि डोलहिं॥
अति अद्भुत गति अवरोधमय, अति निर्भय निर्मल सदय।
तप तेज नियम त्रइ बेदमय, भनि गोपाल आनंदमय॥४०॥

---

३७. नागलता : पान। पुन्नाग :श्वेतकमल, जायफल, पुंगी। येला : इलायची। बेला : बेलि, लता।

३९. कृष्णागर तखर : काली अगरबत्ती। पुंगी फल : सुपारी।

४०. चित्तर : चीतर, हिरन की एक जाति। चरख : जंगली भैंसा। कीस : कीस बानर। करभ : हाथी का बच्चा।

दोहा

जहां जौन महरिषि हुते, सब आये तिहिं बार।
दरसन कौं मख में मिले, जानि राम अवतार॥४१॥

घनाक्षर

तपोधन धाये, तपोवन के सुनत मख। परम पुनीत संत भागवत जे कहे।
पूरे तपसान, चार्‌यो बेद के निषेदवान। जुगनि अनेग जागि जोगपथ जे गहे॥
आवन लगे हैं रिषि सहस अठासी मिलि। दसहूँ दिसान मैं जहां लौं जौन हैं रहे।
पुरुष पुरान मानि, राम अवतार जानि। अंतहकरनदिव्यदरसन कौं लहे॥४२॥

दोहा

सकल ब्रह्मरिषि, देवरिषि, हरषि राजरिषि राइ।
जज्ञ पुरुष अवतार गुनि, मिले जज्ञ में जाइ॥४३॥

छप्पै

भृगु, नारद, जुत ब्यास, अत्रि, कस्यप रिषि आये।
भारद्वाज, वसिष्ट, बालमीकि सु हरषाये॥
अष्टावक्र, अगस्ति मारकंडेय, गर्ग मुनि।
च्यमन, कंबु, मैत्रेय, सुमति, गालव पुलस्ति पुनि॥
सौनक सुमन्त दालभ्य मुनि, धौम्य हिरन्यक आदि करि।
आनंद कंद रघुनंद नैं, मिले सकल रिषि अंक भरि॥४४॥

छप्पै

जैं जैं जैं श्री राम राम, रटि धाये मुनिवर।
फल अच्छत दधि मूल फूल, लीन्हें सब कर कर॥
रघुबंसी दोउ बीर, पानि सिर अंजुलि जोरे।
जद्यपि पुरुष पुरान, भये बालक बय भोरे॥

---

४४. अष्टावक्र : उद्दालक मुनि का कहोड़ नाम का एक शिष्य था। मुनि ने अपनी कन्या सुजाता के साथ उसका विवाह कर दिया था। एक दिन कहोड़ वेद पाठ कर रहे थे। गर्भवती सुजाता के गर्भ से शिशु बोल 'उठा पिताजी वेदों का अशुद्ध पाठ क्यों कर रहे हैं?' कहोड़ ने चिढ़कर शाप दे दिया—तू पेट से ही आठ जगह से टेढ़ा उत्पन्न होगा। अगस्ति : एक ऋषि जिन्होंने समुद्र सोखा था। मारकंडेय : मार्कण्डेय, मृकंड ऋषि के पुत्र। च्यमन : भृगु के पुत्र।

आसिष असेष रिषि सबनि दिय, विधि मानस पूजा करेउ।
राजीव नैन विहसंत लखि, हृदय परम करुणा भरेउ ॥४५॥

सवैया

पूरन ब्रह्महि ब्रह्म-रिषीसन, आनंद सौं मिलि मंगल कीनें।
अस्तुति कै बहु भाँतिन तें, सब मानि सुखै करुनारस भीनें ॥
आजु सनाथ किये रघुनाथ, अनाथनि कौं अपने करि लीनें।
धूपनि दीपनि पुष्पनि चर्चित, मंत्रनि कै सिर अच्छत दीनें ॥४६॥

सोरठा

जित कित मुनि बिहँसात, निरखि माधुरी राम छवि ॥
हँसि हँसि दोऊ भ्रात, कंद मूल भोजन करैं ॥४७॥

घनाक्षर

कोटि काम सुंदर, पुरंदर पुरंदर के। मुनि अरविंदन मैं रवि-कुल-राज हैं।
देखि देखि सोभा तन, आनंद मगन मन। आनन विलोकि कहै पूरे तप काज हैं॥
अमित उमेदनि तें, बेदनि निवेदत हैं। विविध विधान मंत्र मूरति समाज हैं।
ब्रह्म-वेदिका के पास, ब्रह्म रिषि ह्वै हुलास। लागेहै करन सवहोमन के साज॥४८॥

सोरठा

देखि राम हरषंत, विप्रन कौं अहलाद अति।
रचना जहाँ अनंत, रचैं तपोधन मिलि सबै ॥४९॥

मदन छंद, राग बिहागरा

राजत राम आनंद कंद।
देखि पुलकित होत मुनि गन, गयो मिटि दुख दंद॥
करत जज्ञ विधान बहु विधि, जग्य-पालक पाइ।
ठौर ठौर जहाँ तहाँ, अवलोकिअै बहु भाइ॥
वृंद-वृंदनि बेद-धुनि, मुनि करत हैं चहुँ ओर।
देत हुतभुक माँह आहुति, निरखि राम किसोर॥
जपत जाप असेष मंत्रनि, सोधि तंत्र अनंत।
गंध चंदन स्वच्छ अच्छत, अर्चही अगनंत॥

श्रुति रूप लखि गोपाल मख थल, लसत राम कृपाल।
पाइ आहुति उठति ऊरघ, प्रबल बाड़व ज्वाल ॥५०॥

छप्पै

होत जस आरम्भ, सकल विधि समिध साज सजि।
विविध फूल फल मूल, गंध, चंदन जवादि छजि ॥
सार मंत्र उद्धरहिं वेद, विद्या विचित्र अति।
अवलंबन श्री राम पाइ, पूरन निसंक मति ॥
मख सोध गंध-पथ अमर-दनु, भ्रमत अभ्र-मण्डल महँ सु।
अवलोकि घोर उत्पात अति, त्रसित होत मुनि गन तहँ सु ॥५१॥

गीतिका

तहँ पाइ गंध, कराल वेधनि, ताड़िका गर्जित तबै।
घन घोर धुनि घहरात ज्यौं, मुनि ह्वै गए बधिरे सबै ॥
थरहरित सब श्रुति भंग आरत, राम अब रक्षा करौ।
रिषिराज कहत बिलोकि कै, धनु बान प्रभू नीके धरौ ॥५२॥

सुनि कुँवर दसरथ राज के दोऊ, हंसत अति आनँद भरे।
अति देखि आरत सवन कौ, रघुबीर उर करुना धरे ॥
सुनि साधि सायक तिच्छ लक्षन, रामचंद्र उदार हैं।
त्रइलोक भूषन, दुसह दूषन, जदपि सिरजनहार हैं ॥५३॥

सोरठा

मुनिरुवाच—

पहुँचि गई बरजोर, सङ्ग सातऊ सुत लिए।
नभ-मंडल धुनि घोर, काल घटा-सी ताड़िका ॥५४॥

---

५०. हुतभुक : अग्नि। अगनंत : अगणित।
५१. उद्धरहिं : उद्धृत करना। अभ्र मंडल : आकाश मण्डल। महु : में।

पाठान्तर—५५-नभ वज्र : नभ घोर (१.२)

५२. ताड़िका : एक राक्षसी जिसे रामचन्द्र ने मारा था।

छप्पै

जलद केस मेचक लसंत, बहु पंति दंत बक।
सोनित लह लह जीभ, मनहुं दामिनि दिपंति झक ॥५५॥
विकट वक्ष नख तिच्छ, लार बरषंत वारि।
स्वाँस बात आघात, पाँव उड्डहिं दिगंत रख ॥
अति बाढ़ डाढ़ संधिनि अटकि, लटकहिं गज गिरि परहिं घर।
यह काल घटा किधौं ताड़िका, गल गज्जिय नभ जज्ञ पर ॥

घनाक्षर

लीजे रघुनाथ ह्वं सनाथ धनु हाथ आजु। कीजे देव काजु बान साधिअं सुहथकं।
देखौ यह ताड़िका है, आवति अघात किये। करियँ सहाइ, थाके तप (मख) पथ कं।
तरु अरराने, घहराने घोर कंदरनि। मुनि भहराने, भय माने प्रान गथ कं।
लैलै मृगछाला, रिषि भागे दनुबालादेखि। बैठे मखसाला, हँसे लाल दसरथकं ॥५६॥

सोरठा

यहै ताड़िका वाम, करति जज्ञ विध्वंस है।
बेगि हतौ इहि राम, देखि त्रसित मुनि बृंद अति ॥५७॥

सवैया

श्री रामोवाच—

नारि हते जस कौन सुनो मुनि, जानत हो सब बेद पुरानें।
पातक पुंजन लेत बनें सिर, और कहो सु सबै हम मानें ॥
यों करुनामय के सुनि बंके, घने रिषि कें करुना अधिकानें।
देखि तिन्हें रघुनायक जू, दुख दायक कों कर सायक तानें ॥५८॥

घनाक्षर

काल तें कराल, विकराल नैन लाल। धाई बे-सम्हारि सुत सालठ समेति हैं।
गिरि सें उतंग तैसे उरज उतंग अति। कीबे मख-भंग आइ रंग-रन चेति हैं ॥
बाहु औ सुबाहु बारि बाहु कैसे गरजत। धीर न धरत कोउ, त्रास बहु देति हैं।
तारन-तरन तारो,ताड़िकानजानोनारि।मारि मारि प्रान दुज दीननकोलेतिहैं।॥५९॥

---

५५. मेचक : काला। पाँव : ओला, पत्थर।

सवैया

गाजत पावस के घन से दनु, घेरि घने करि रोस बढ़े हैं।
छोड़त ही रघुनायक सायक, सैल से छातिन फोरि कढ़े हैं॥
ताड़िका बाहु सुबाहुनि श्रोन-प्रवाहनि मंदर बूड़ि मढ़े हैं।
लागत बान, चले कढ़ि प्रान, सु देव बेवाननि जात चढ़े हैं॥६०॥

घनाक्षर

मारिच उबारे, तारे, ताड़िका सहित सुत। कौतुक ही राखे मख, भाखे श्रुतिगाथ के।
कंदर भरे हैं लोहू मंदर मतंग वर। पैरे वन जूथ कैधों जीव जल साथ के॥
देव हरषाये, देखि फूल बरषाये। भुज रिषिन पुजाये, हैं निकाई नीके हाथ के।
तिमिर से काटे भानु कुल के निधान महा।दीन्हे गतिदानवनबानरघुनाथके॥६१॥

खंड खंड खंड करि खंडि डारे भुज दंड। दंड दुज दोष को असेष तुरतै करी।
लागे बीर बान रघुबीर के विकल भई। दई उरमाँहि उरजौन बैरता धरी॥
दूजे सर बाहु औ सुबाहु को निबाहु कर्‌यौ। बहत प्रवाह श्रोन प्रान हरी हैं हरी।
येते मान तारे प्रभु ताड़िका सहित सुत। घर ते उतंग सोऊ झुकि धरनी परी।६२॥

सोरठा

अचरज देखि अपार, जै जै जै धुनि मुनि करैं।
धनि रघुनाथ उदार, तुम बिनु यह दुख को हरैं॥६३॥

छप्पै

ब्रह्म महूरति पाइ, ब्रह्म-रिषि आहुत दीन्हे।
पावक बलि संतुष्ट, बेद-मंत्रनि सों कीन्हे॥
सकल धर्म परब्रह्म, कर्म सुत किये समर्पन।
पूरन यज्ञ विधान, राम लीन्हें करि अर्पन॥
जय धुनि समस्त सुर मुनिन करि, दुहुनि जज्ञ उपबीत दिय।
जप जंत मंत्र सायक सकल, राज धर्म उपदेस किय॥६४॥

पाठान्तर—६०-श्रोन प्रवाहनि : श्रोननि बाहुनि (१,२)
दूर हरी है हरी : हरि हैं हरी (१,२)

---

६०. बाहु सुबाहु : ताड़िका के पुत्र।
६१. मतंग : हाथी।
६२. झुकि : लटक कर।

दोहा

विस्वामित्र मुनीस के, करि परिपूरन जज्ञ।
पढ़न लगे बिधानि बनि, जदपि राम सरबज्ञ ॥६५॥

द्रुमिला

परिपूरन के पुरुषोतम जज्ञ, लसें मुनि-मण्डल-मध्य खरे।
बपु नीरद नील नवीन घटा, पट-पीत छटा-छबि छीन करे॥
अति आनंद मोद गोपाल सदा, अवलोकत पातक पुंज झरे।
सब लायक श्री रघुनायक हैं धनु सायक सुंदर पानि धरे॥६६॥

दोहा

निरखि जज्ञ सालाहि मैं, सकल तपो धरि धीर।
तब सबहीं सों जोरि कर, बिनय किये रघुवीर॥६७॥

निसिपालिका

रामोवाच—

आपु सरबज्ञ सब, तपनि बहुधा तपें।
बेद बिधानि ले, सार मंत्रनि जपें॥
साधि चिरु काल थिर, काय तत्वहि गहें।
सुफल दिन आजु सब, दरस मुनि के लहें॥६८॥

सोरठा

परम अनुग्रह सार, सबै सिखापन दीजियै।
हम हैं राजकुमार, खाइ खेलि जानें भलें॥६९॥

मदन छंद

मुनियोवाच—

राम के मुख बन सुनि, कहि सकल रिषि हरषाइ।
सोधि मानस निगम आगम, उठे अस्तुति गाइ॥
येक येकनि सौं कहैं, अति प्रेम पुलकि उमंग।
भये जीवन मुक्त हैं, लखि जलद सुंदर अंग॥७०॥

---

६८. तत्वहि : सार को बहुधा : सब प्रकार से।
६९. सिखापन : शिक्षा। खाइ खेलि : खेलना खाना।

निसिपालिका

कल्प बहुधानि करि काय क्लेसनि दहे।
नैननहीं परम आनंद-पद कों लहे।
दिव्य अवतार नर रूप भू पर भये।
राम मुख दरस तें ताप तीनो गये ॥७१॥

आदि अरु अन्त मधि, आपु येकं रमै॥
निगम की अगम अति, सुगम भावहि गमै॥
जानि गति जात नहि, परम कौतुक भरें।
राम परब्रह्म, ब्रह्मादि देवन परें॥७२॥

रुचिरा छन्द

करि करि अस्तुति सकल ब्रह्म रिषि, सकल भांति संतुष्ट भये।
राम मंत्र जप सार धारि चित, हृदय कमल आनंद मये॥
अपरमपार अगोचर महिमा, को प्रभु की गति पार लहे।
हैं अव कृपा कलप तरु तपियन, बहुत कछू नहि जात कहे॥७३॥

दोहा

भये परम संतुष्ट हैं, सुनि अस्तुति श्री राम।
बिदा किये विहसंत अति, करि करि सबन प्रनाम॥७४॥

तिनहि तौन विधि पूजि करि, जिनहि जौन बिधि जानि।
सबहिन बिस्वामित्र मुनि, बिदा किये सुख मानि॥७५॥

बहुत गये रिषिराज हैं, बहुत रहे रमि आप।
दिन-दिन अति गोपाल भनि, उद्दित राम प्रताप॥७६॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां तड़िका बध यज्ञ रच्छनोनाम षष्ठोध्याय: ॥६॥

राजा जनक-प्रतिज्ञा स्वयंवर-गमन

७

त्रोटक

नारदौवाच—

मुनि नारद अस्तुति कोटि कहैं।
प्रभु की गति पारहि कौन लहैं॥
मख राखि रिषीन असोक करें।
भुवभार निवारनि रूप धरें॥१॥

सोरठा

बिस्वामित्रौवाच—

तिहुँ पुर सकल चरित्र, तिनमैं परम विचित्र हौ।
बूझे बिस्वामित्र, जिहि थल जौन चरित्र सब॥२॥

विदोहा

नारदौवाच—

त्रिभुवन रचना जिन रचें, तिन रचिबै न बचें।
नाचि न जानै नाच इक, नाहक नाचि पचें॥३॥

सवैया

देवन कैं घर धैरु घनी, अरु इंद्रहुँ कैं नहिं ईजत बाचे।
कोटि विपत्ति धनप्पत्ति की, नर-पत्तिन नाच भलै सब नाचे॥
और गोपाल कहा बरनें, सब राम कृपा कुलपद्रुम साचे।
रावन की रजधानिय तें, लखि तीनहुँ लोक फजीहति माचे॥४॥

---

२. थल जौन : जिस स्थल पर।

४. धैरु : बदनामी, निंदा काण्ड। घनी : बहुत। ईजत : इज्जत। बाचे : बचना, सुरक्षित रहना। धन-पत्ति : कुबेर। नरपत्ति : नरपति। साचे : सच्चा। फजीहति : दुर्दशा। माचे : मचना, होना।

सोरठा

लखि आये गढ़ लंक, दानव प्रबल निसंक सब।
एकै प्रभु निकलंक, काहि न लग्यो कलंक है ॥५॥

प्लवंगम छंद

सुनि बिहँसे श्री राम लखन हरषाइ कै।
कौसिक मन मुसक्याइ रहे सुख पाइ कै॥
है जु अचंभित बात असूझ अपार है।
को जाने किहि भाँति कहे करतार है ॥६॥

सोरठा

इहि अंतर मुनि-ईस, देखे जनक पुरोहितै।
हरषे लखि जगदीस, सिया स्वयंवर जानि कै।॥७॥

सवैया

आनंद सौं मुनि संभु स्वयंभु, सरूप चितै हित मानि भले हैं।
बात अगाध सुनौ सुत गाध, ये भ्रात किधौं तप वृच्छ फले हैं॥
न्यौति नरेसन को मिथिलेस, सु चाप चढ़ावत दाप दले हैं।
डारि अडम्बर हारि गये, हम सीय स्वयंवर देखि चले हैं॥८॥

दोहा

रिषिरुवाच—

धनु को पनु नृप क्यों लियो, कियो स्वयंवर चार।
अब पाई क्यों कन्यका, कहो संभु व्यवहार ॥९॥

छप्पै

संभू—

एक समै दससीस, ब्रह्म-रिषि बृंद सतायो।
तिन घट भरि तनु-श्रोन, कंध धरि अंध सिधायो॥

---

८. न्यौति : आमंत्रित करके।
९. पनु : प्रण।

गाड़ि जनक कै बाग, जाइ श्रुति-सुता खिझायो।
तिन कोपानल ज्वाल, जाइ वह कलस समायो॥
तिहि तेज उकठि फुलवादि गौ, मुनि मख रचि नृप हल गह्यो।
आइ जु निकसि सिय कन्यका, पाइ भूप बसु जसु लह्यो॥१०॥

सोरठा

गह गह बजे निसान, घर घर मंगल जनकपुर।
दये दुजन नृप दान, निरखि सिया हरषे सबै॥११॥

रिषीरुवाच—

किहि विधि जनक विदेह, धनुक लहें त्रिपुरारि सौं।
सो'ब कहो करि नेह, किहि कारन नृप पन गहे॥१२॥

॥ छप्पै ॥

संभू रिषि—

एक समै कैलास, जनक राजा तप ठाने।
घृत कराह मैं चुरत, ईस दीन्हें वरदाने॥
एक अंग तप करो, करो इक अंग भोग सब।
धनि तैं भूप विदेह, हरपि लै पूजि चाप अब॥
यह मम पिनाक तानै न कोइ, जो तानै सोइ ईस हैं।
वह भृगु-पति की गति खडि है, अरु रावन दस सीस हैं॥१३॥

सोरठा

करि प्रनाम नृप राज, आये मिथिला धनुक लै।
लै नृप विप्र समाज, पूजैं विहंसि विदेह वर॥१४॥

सवैया

बीति गये बहु काल यहै विधि, ईस वहै वर आइ तुलायो।
एक दिना नित नेम कै भूपति, पूजन विप्रन संग सिधायो॥
पावन चाप तरैं महि चाहि, सु बूझत रानिन, ऊतर आयो।
राजकुमारि तिहारि सौं आजु, निहोरि हमैं धनु साल लिपायो॥१५॥

पाठान्तर—१२ सोब : सोन (१, २)

---

१०. उकठि : सूखकर काठ हो जाना। फुलवादि : फुलवारी। बसु : रत्न।
१२. त्रिपुरारि : शिव।
१५. तरैं : तले, नीचे। चाहि : देखकर।

सोरठा

सुनि चकित नरनाह, अच्छत करके कर रहे।
यह अचरज अवगाह, लिये बोलि नृप जानकी ॥१६॥

सवैया

धाइन धाइ कै, ल्याइ बुलाइ कै, खेल छुड़ाइ कै, खाइ कै गारी।
धूरि सुगंधन सों लपटी लट, फैलि रही जनु नागिनि कारी॥
संग लगी सुकुमारि कुमारिन, छूटि रही छवि कै उजियारी।
राजहि चकृत चाहि सिया, सलजी ढिग राजति राज दुलारी ॥१७॥

सोरठा

राजा—

कहो दुलारि नरेस, जानति हौं यह जानकी।
धनु सुमेर गुन सेस, टारे आनि महेस कै ॥१८॥

घनाक्षर

जब ते दयो है ईस, मेरु तें अचल धनु। धरनी न छोड़्यो नेक, प्रगट प्रवान की।
आपु हीं टर्‌यो, की काहू टारि कै सुधारी महि। ऐसी करतूति है न हरबिनुआनकी॥
होनी यों कहा है, कछू जानि न परत बात। कहत बनै न गति बिधि के बिधानकी।
हँसि कै जनक, देखि बनक,दुलारी बूझी। कोने यह धनुक उठायो जानो जानकी।१९।

सोरठा

जानकी—

बाबा हमैं न खोरि, खलन हौं पाऊँ नहीं।
रानिस मोहि निहोरि, धनुसाला लिपवाइयो ॥२०॥

---

१९. ईस : शिव। मेरु : सुमेरु, एक पुराणोक्त पर्वत जो सब पर्वतों का राजा और सोने का कहा गया है। सुधारि : रख दी। हर : शिव। आन : अन्य।
२०. खोरि : दोष।

घनाक्षर

खेलत तें मोहि गहि ल्याई बरियाई मात। आजु हठि तात धनुसाला हौं लिपाई है।
तब हौं उठाइ या पिनाक धरी कोने लाइ। पावन के भूमि भूप प्रभुता मनाई है।।
जैसी विधि तैसीअ सुधारि राखी सोई ठौर। और कछू है न बोलौ हिय हरषाई है।
सुंदरि सलोनी, लौनेपाटकी उठौनी। सिया अैसी कहि, विहँसतिमंदिरसिधाईहै।।२१।।

सोरठा

राजोवाच—

सुनि नृप सबनि सुनाइ, यहै प्रतिज्ञा करि कही।
जो तानै धनु आइ, तिहि सोहै जयमाल सिय ।।२२।।

सवैया

सेस उतारि धरैं धरनी मकु, कूरम ह्वै अध और धसैंगो।
पाइन दौरि सुमेर चलैं मकु, सूरज मंडल राहु बसैंगो।।
टारि सकै यह कौन प्रतिज्ञहि, हारि रहैं मकु लोग हँसैंगो।
जाहि चढ़ावत चाप बनै वह, ताहि सिया जय-माल लसैंगो।।२३।।

सोरठा

इहि विधि जनक महीप, धनुक प्रतिज्ञा करि कहै।
पठये दीपनि दीप, चले दूत दसहू दिसा।।२४।।

सवैया

सातहुँ नाक रसातल सातहुँ, सातहुँ दीपनि घेरु मच्यो है।
देव चले सुनि दानव मानव, चाहि चराचर रूप सच्यो है।।
देखन राज-सुता-छवि नैननि, लालच तीनहुँ लोक नच्यो है।
धाये हैं काम से वीरधनुर्धर, सीय स्वयंवर भूप रच्यो है।।२५।।

---

२१. बरियाई : बलपूर्वक। हौं : मुझसे।

२३. कूरम : विष्णु का अवतार जो कछुए के रूप में हुआ था, कच्छप या कछुआ नामक जंतु।

२५. सातहुँ नाक : ऊर्ध्व लोक सात हैं—भू, भुव, स्वर्ग, जन, महा, तप तथा ब्रह्मलोक। रसातल सातहुँ : अधो लोक सात हैं—अतल, वितल, सुतल, रसातल, तलातल, महातल और पाताल। सातहुँ दीपनि : जम्बु, कुश, प्लक्ष अथवा गोमेद, शाल्मलि, क्रौंच, शाक और पुष्कर।

दोहा

जनक-राज रानीन मैं, लागे करन विचार।
अद्भुत रूप अपार गति, सुता रची करतार ॥२६॥

सवैया

राजा वाच—

है विपरीति रची रचना विधि, सो विधि नैंकहु जात न जानी।
देव अदेव नृदेव जिते सब, एक ते एक बली अभिमानी ॥
कौन करैं गुन संभु सरासन, सीय स्वयंबर है हम ठानी।
और सबै पुरुषारथ है, पर येक न अंग सहायक रानी ॥२७॥

पद्धटिका

यह कहि भूप, मनहिं बिलखाये।
सकल स्वयंवर, साज सजाये ॥
समाधान सब, ठौरनि ठानें।
जनक राज, कैलास सिधाने ॥२८॥
सिव चरनारविंद, सिर नाये।
अस्तुति विविध, प्रेम उपजाये ॥
सुनि प्रसन्न सिव, वचन उचारे।
नृपति कहो अब, कहाँ सिधारे ॥२९॥

राजा वाच—

जय संकर सरवज्ञ प्रभु, अद्भुत कही न जाइ।
मम कन्या सिसु जानकी, धनुकहि धरी उठाइ ॥३०॥

गीतिका

सिववाच—

सुनि संभु आगम सोचि के, नृप सौं कहे समुझाइ हैं।
वह आदि सकति, अनंत महिमा, अंत जानि न जाइ हैं ॥
अवतार विष्नु प्रकास तें, तम पुंज दनु खयकार हैं।
जुग जुगनि श्री भगवंत जू, हरते सु भूतल भार हैं ॥३१॥

---

२७. गुन : प्रत्यंचा, धनुष की डोरी। करानी : करनेवाला।
३१. खयकार : क्षयकार, विनाशक।

दोहा

जाइ स्वयंबर नृप रचौ, जानौ यहै बिचार।
जो तानै मम चाप कौ, सोई सिरजनहार ॥३२॥

मदन छंद

राजा वाच—

प्राइ सासन जनक बिनये, हौं जु अति मति अज्ञ।
आपु संभु स्वयंभु सर्वसु, सर्बदा सर्वज्ञ॥
जदपि दीन दयाल हो, प्रभु तदपि ठानत नेहु।
सूर बीर समाज कौ, निजु बल सहायक देहु॥
देव दानव जच्छ किन्नर, मनुज आदिक होइ।
सकल चल बल छंद तैं, तहँ करै अधिक न कोइ॥
सुनि प्रसन्न भये सदासिव, पूजिहै नृप आस।
जौन गन कौ करहु सुमिरन, तौन गन तुम पास ॥३३॥

पद्धटिका

राजा जनक जनक-पुर आये।
अनुक चौक अति चारु बनाये॥
राज लोग राजस अधिकाने।
ठौर ठौर रचना बहु ठाने ॥३४॥
बहु बहु रंग, माच चहुं ओरे।
चहुँ दिसि पाँति-पाँति इक जोरें॥
सकल राज-श्री साजनि सोहैं।
देखत जिनकी त्रिभुवन मोहैं ॥३५॥

दोहा

भूप स्वयंबर साजु सब, लगे सजावन आप।
आगम अति आनंद कौ, अद्‌भुत राम प्रताप ॥३६॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल बिरचितायां राजा जनक प्रतिज्ञा स्वयंवरागम वर्णनोनाम सप्तमोध्यायः ॥७॥

---

३३. जच्छ : यक्ष। किन्नर : एक प्रकार के देवता जिनका मुख घोड़े के समान माना जाता है, गाने बजाने का पेशा करने वाली एक जाति।

सिया-स्वयंवर

८

छप्पै

जनक राज इक समय, सभापति सबनि बुलाये।
आइ आइ सब राज लोग, राजहिं सिर नाये॥
बैठे मंत्र-विचारि, एक तें एक बुद्धि बर।
गुनि सु मुहूरति दिव्य, रचे उनि सिया स्वयंवर॥
सब सोधि नखत दिन वार तिथि, चाप चौक आरंभ किय।
पुर सकल सोभमय राज-श्री, सबनि हरष बिस्माद हिय॥१॥

भुजंगप्रयात

रचे चौक नाना विधैं चाप के हैं।
सजे रंग रंगे लसे माँच जे हैं॥
घने भाँति सों पाँति सो पाँति सोहैं।
मनो मै रचे चित्र ते चित्त मोहैं॥२॥
हरे पति राते धजा जे सँवारे।
किधौं चंचला पुंज व्योमै विहारें॥
लसैं स्वर्न चित्रे विचित्रे वितानें।
लखे काम के कोक विद्या विधानें॥३॥

सवैया

लाल हरे बहु पीत सितासित माँच मनौ मय आपु सुवारे।
बीच रचे ससि मंडल सें अति, तापर मंडल मंगल धारे॥
ता पर रंग सुरंगहु सुंदर, नैन सरूप गोपाल विहारे।
तीनहुँ लोकनि की सुषमा, नृप सीय स्वयंवर माँह सवारे॥४॥

पाठान्तर—१. उनि : बनि (१, २)

---

१. चौक : पूजन के समय आटे-चावल आदि की रेखाओं से बनाया जानेवाला क्षेत्र विशेष। बिस्माद : आश्चर्य।
२. माँच : मंच। मैं : मय दानव नामक प्रसिद्ध पुराण-शिल्पी।
४. सुरंगहु : सुन्दर रंग।

घनाक्षर

अमल अमोल मनि चप परिवेष मांह। चन्द्रिका सी त्रिपद बिछौना सोभ पर है।
ऊँचे ऊँचे मंडप मैं तासन बितान ताने। खंभन झकत जरवाफन के कर है॥
सोहत सदीद ता मैं पूजित महेस चाप। जनक महीप कै महेस ही कौ घर है।
पूरित कपूर धूरि धूसर धुरंधर सौं। धरनी धनुक सेषनाग कैसो धर है॥५॥

दोहा

पंच पंति मंचावली, बिसद मध्य परिवेष।
बिछे बिछौना शुभ्र तहँ निरखि न परत निमेष॥६॥

शुभ्र

इहि अंतर नृप दूत सब, ल्याये न्योति नरेस।
आये तीनहुँ लोक के, अपने अपने बेस॥७॥

घनाक्षर

आये देस देस के नरेस हैं सु बेस बेस। साजे अलबेस देखि लोचन अघाये हैं।
सोभित जरायन के सिदन सँवारे साज। राजैं गजराज मानौ मेरु चलि आये हैं॥
जित कित डेरा डेरा, छत्रिन के भट भेरा। बाजे चहुं फेरा, बीर बाजन सुहाये हैं।
चाप के चढ़ाइबे कौं, कीरति बढ़ाइबे कौं। धरनी के भारी धनुधारी, सुनि धाये हैं॥८॥

सोभा छंद

जुरे राजा राजा, धनु बल कितने, केतिकौ साजि आवैं।
लसैं नाना रंगे, रसनि रस मसैं, रूप लीला सुहावैं॥
बजैं बाजैं जूहैं जित कित धन सें, मैथिलैं सोभ गाढ़े।
बढ़े जोधा आवैं, बलनि बह वहे, चाप के चोप बाढ़े॥९॥

---

५. तासन : सुनहरे तारों का जड़ाऊ एक कपड़ा। बितान : तम्बू। जरवाफन : जरबाफ : सोने के तारों से कपड़े पर बेल बूटे बनानेवाला कारीगर (फा० श० जरकाफ)। झकन : झाँकना। कर : हाथ। सदीद : सुदृढ़, मजबूत (अरबी शब्द)। धुरंधर : नन्दी बैल।

८ जरायन : रत्न जटित। सिदन : स्यंदन, रथ।

९. रसनि रस मसैं : रस में सने हुए। जूहैं : यूथ।

दोहा

बन उपबन सब भरि गये, और न कहूं समाइ।
सकल रूपमय भूपमय, भूषनमय बहुधाइ ॥१०॥

छप्पै

सिया स्वयंवर सोघ, सुनत तिहुंपुर मन भाये।
देव अदेव नृदेव, नाग गंधर्बहु आये॥
आगें लेइ बिदेह, सबनि आदर अति कीन्हें।
जिहि विधि जिनहीं उचित, माच बैठक तिमि दीन्हें॥
गोपाल प्रबल भुज दंड बल, महि मंडल मंडन सकल।
कोदंड चंड चंडीस कौ, करहि सोच, लखि जनक चल ॥११॥

करषा

राज राजा घने, अंग भूषन बने। रूप अद्‌भुत सने, जात नाहिन कहै।
माच माचनि लसैं, चाहि कौतुक हंसैं। भुजनि बल सौं मसैं, समर जय जय लहैं।
सकल रूपनि बढ़ी, करन विधि की गढ़ी। महल महलनि चढ़ी, भूप भामिनि तकैं।
सोचि मनहीं मनें, रूप अगनित गनैं। जनकपुर के जनैं, बैन नहि कहि सकैं परैं।
विविध बाजन बजैं, जोर गज गन गजैं। साजु जित कित सजैं, बरनि नाहिन हरैं।
नारि नागरि नचैं, गान किन्नर रचैं। निरखि गोपाल छवि, मुनिन मानस॥१२॥

सोरठा

सुमति सदामति नाम, सुंदर सुत बैताल कें।
सकल सुजस के धाम, भूपन की कीरति करैं ॥१३॥

पद्धटिका

सुमति सदामति नाम सब गति जानैं।
सब राजन के सुजस बखानैं॥
जिहि विधि जौन जहां कोइ आवैं।
तिहि विधि बैठक तिहि बैठावैं ॥१४॥

---

११. सोघ : समाचार। चंडीस : शिव। आगे : आगे, बढ़कर। माच : मंच।
१२. सुमति-सदामति : बैताल भाट के दो पुत्र।

आदर भाव प्रीति अभिलाषें।
रूप शील गुन बहु विधि भाषें।।
एक एक ते आगर सोहें।
जिनके निरखत तन मन मोहें।।१५।।

दोहा

कहै सदामति सुमति सौं, लखत न बनत बनाइ।
कौन भूप किहि देस के, हमहि कहौ समुझाइ।।१६।।

छप्पै

सुमितौवाच—

सकल राज श्री भोग, रसिक उप्पम सब उप्पर।
समर-सिंधु अवगाहि गाहि, जानौ सु धनुध्धर।।
धर्म्म धीर धरमज्ञ जज्ञ, व्रत नियम दान नित।
अति उद्दित चहुँ खंड, प्रबल भुज दंड जंग चित।।
=गोपाल भनत बिहसंत मुख, कहत चाप बानक बनिय।
=जिहि लखहु अंग चर्चित मलय, बिसद सुजस गुज्जर धनिय।।१७।।

सवैया

अंग सुरंग कबाइ लसै, सिर पाग हरी, पटुका चटकीलौ।
कीरति आगर, रूप उजागर, जंग जुरै, रन मैं गरबीलौ।।
चंचल चारु तुरंगन के गन, रीझि गुनीन कौ देत रसीलौ।
चाप चितै मुसक्यात गोपाल, सु छाजत कच्छ छितीस छबीलौ।।१८।।

---

१५. आगर : बढ़कर।
१६. बनाइ : प्रशंसा करके।
१७. गुज्जर : गुर्जर, गुजरात। धनिय : धनी, स्वामी, राजा।
१८. सुरंग : लाल रंग। कबाइ : अंग रक्षा, कुर्ता। पाग : पगड़ी। कच्छ : कच्छ की खाड़ी।

प्लवंगम छंद

सुंदर रूप निधान सर्व गुन जाहि है।
जानत-संगर-सिंधु सदा अवगाहि है॥
देखत है धनु ओर सु नैननि कोर सों।
मालव के नृप राज ये राजत जोर सों॥१९॥

ये सब राजन माँहि उजागर मानिये।
कोटिन मै इन रूप गुने पहिचानिये॥
चंचल लोचन चारु चितै मुसक्यात है।
सो करनाटक भूप, कही नहि जात है॥२०॥

सुंदर रूप उजागर नागर नागरी।
भूषन अंग विचित्र, सर्व गुन आगरी॥
है तिनके सिर ताज, विराजत दानिये।
वेदर देस नरेस, इन्हैं पहिचानिये॥२१॥

सवैया

बागे सुगंधनि के महकैं, बहु भौंरनि के भननाहट गाजैं।
कानन मोतिन की गज जोतिन, मोतिन हार हिये छवि छाजैं॥
फूलनि के कर किंदुक झेलत, काम सरूप गोपाल बिराजैं।
येइ हैं भोग मलार के भूपति, आए हैं चाप चढ़ावन काजैं॥२२॥

सोरठा

हैं कीरति कुल दीप, दीपति नृपतिन मैं दिपैं।
दीपक सिंघल दीप, दीप दीप जस जानियैं॥२३॥

---

२०. करनाटक : कर्नाटक।
२१. वेदर : विदर्भ।
२२. बागे : अंगे की तरह का पुराने समय का एक पहनावा जो घुटने तक लम्बा होता है और जिसमें छाती पर तीन बंद लगे रहते हैं। मलार : मालावार।
२३. दिपैं : दीप्तिमान।

गीतिका

घन स्याम अंग सरूप सुंदर, बच्छ बांह बिसाल हैं।
मनि लोल कुंडल गंड-मंडल, तिलक केसर भाल हैं॥
उर हार गज मोतीन के, सिर चूड़ कुसुमनि तें लसैं।
येइ अंग बंग कलिंग के नृप, राज राजन कौं हँसैं॥२४॥

घनाक्षर

सकल समाज जाके केसरि सचागे अंग। रंग रंग पाग जरकसन के चीर कौं।
भावत सुगंध निसि वासर सरस जाहि। छूटत फुहारे हैं गुलाब ही के नीर कौं।
जानत विधान, घने बल कौं निधान महा। देखौ धनु चाहै देखौ येई बलवीर कौं।
कहतगोपालकासमीर आलबालनि के। रस कौ विलासीयोंनिवासीकासमीर कौं॥२५॥

सवैया

कुंडल लोल कपोल लसे मनि, मोतिन के हिय हार सुहाये।
चंदन चित्र विचित्र किये तन, गुंजत भौंर सुगंधनि भाये॥
फरत पानि सरोज गोपाल, नरेसन मैं पदवी अधिकाये।
सो नृप राज अवंतिय के, जिन कीरति है छिति मंडल छाये॥२६॥

चंद्रमनि छंद

रंग रंगै महा रंग भूले भले। तिलक मृगमर्दहि मिलि, झलक द्युति भाल के।
सीस मनि मुकुट, मनि श्रवन कुंडल लसे। जोति जग मगि रहै, कंठमनिमालके॥
देखि कोदंड भुज दंड, बल तें कहै। कौन तान्यौ न है चाप चिर काल के।
भगति गोपाल रत, दान बहु मान मत। जानिये भूप ये गौड़ बंगाल के॥२७॥

सवैया

सुंदर लोचन श्रोननि तें, सरसैं भुव भंग कुतूहल के हैं।
देखत चापहि ए हरषैं अति, मानि भरोस भुजा बल के हैं॥
जी अभिलाष हुलासनि सौं, हुलसैं दृग रूपहि कौसल के हैं।
जानहु ये मथुराधिप हैं, रज कीरति जोति जिन्हें झलके हैं॥२८॥

---

२४. अंग : पूर्वी बिहार। बंग : बंगाल। कलिंग : उड़ीसा।
२५. आल-बाल : थाल्हा।
२७. मृगमद : कस्तूरी।

सोरठा

इतनी केसरि अंग, विहरत जल जुवतीन स्यौं।
जमुना पीत तरंग, करत केलि मथुराधिपति ॥२९॥

घनाक्षर

आदि राज राजन मैं परम पुनीत बड़े। विरद बड़ाई बड़े जोति झलकत हैं।
होत दोऊ ओर चौंर चारु जाके सीस पर। मुकुट जरायन के छवि छलकत हैं।
छोड़ि कै अडंबर कौं, आये हैं स्वयंबर कौं। निरखि गोपाल नैन जाहि ललकत हैं।
हैहय नरेस सो तौ महिषमती कौ पति। प्रबल भुजानि धनु देखि बलकत हैं ॥३०॥

प्लवंगम छंद

लीलक अंगकबाइ हैं, पाग सुरंग के।
कीरति सातहु दीप, जितैया जंग के॥
देखत जे भुज-दंड, प्रचंड सुबेस हैं।
जानहु सो नृप नाथ, महा मगधेस हैं॥३१॥

सुंदर नैन बिसाल, बिसाल सु बाहु हैं।
कंकन की मनि जोति, मनौ ग्रह नाहु हैं॥
चाप चढ़ावन चौज करैं, नित मौज के।
भूपन सौं मुसक्यात ये, भूप कनौज के॥३२॥

छप्पै

जिहि सुसथ्थ बहु रथ्थ प्रबल, रथ्थिन समरथ्थह।
चलत गज्जि गज-झुंड दलित गिरि बन पग पथ्थह॥
कितिक जित्ति रन रंग जंग बजरंग निसंकह।
छिति मंडल छिति पत्ति, छत्र पत्तिन महं बंकह॥

---

२९. स्यौं : सहित
३०. चौंर : चामर।
३१. लीलक : नीला। सुरंग : लाल। अंग कबाइ : अँगरखा कुर्ता। जितैया : जीतने वाले। सुबेस : सुन्दर भेष। मगधेस : मगध के स्वामी।
३२. ग्रह नाहु : नवों ग्रहों का राजा अर्थात सूर्य। चौज करैं : मजाक करना।

सब विधि समथ्थ हथिनाधिपति, उदित मंच महँ मंच पर।
हठि उठन चहत करि कठिन पन, जनु करषत धनु अबहि कर ॥३३॥

करखा

इद्रगन चंद्रगन, अग्नि रवि तेज गन। वायु गन जच्छगन, गंधर्व किन्नर गनै।
सकल मुनि सिद्ध परसिद्ध तीरथ जिते। राज राजाधिपति दिगनि पति दनु घने।
नागगन सिंधु सर सरित धरि धरि कला। कौन किंहि भाँति के वेषधारी बनै।
सबहि सब दरस कों आइधनुथल भये। होत चित चकितलखिजनकपुरके जनै॥३४॥

सवैया

उत्तर के नरनाह विचच्छन, लच्छन लच्छ बिलोकन धाये।
पूरब के जु अपूरब सावनि, बात अगाधहि कों ललचाये॥
पच्छिम के छवि ते छलकें नृप, दच्छिन के बल दच्छ सुहाये।
चारि दिसा बिदिसानुहुँ के, सब सीय स्वयंवर देखन आये ॥३५॥

सोरठा

महि मंडल बलवंड, मंडित सोहैं तिहि सभा।
निरखि कठिन कोदंड, हरषि करषि कोइ न सकै ॥३६॥

घनाक्षर

टेरि के नरेसन सौं सुमति सभा के बीच। लागे हैं कहन भूप सासन सुनाइ हैं।
जासों बनि आवैं, सोई चाप ही चढ़ावैं आइ। कोई होइ कौने भाँति, सोइ हरषाइ हैं॥
तानि गुन श्रवन समान आनि जीति पद। पदवी असेषन कों जय पद पाइ हैं।
आवैं बनि ऐति जाहि, कीरति विराजे ताहि। जनक किसोरीजयमालापहिराइहै॥३७॥

---

३३. सुसथ्थ : साथ। कितिक : कितने। निसंकेह : निःसंक। छिति मण्डल : पृथ्वी मण्डल। छिति पत्ति : छत्रपति। बंकह : बक, बांका। हथिनाधिपति : हस्तिनाधिपति, हस्तिनापुर के राजा। करषत : खींचना।

३४. जच्छ : यक्ष। परसिद्ध : प्रसिद्ध। दिगनि पति : दिक्पति : जनकपुर। जनै : जनकपुर के निवासी।

३५. बिचच्छन : विलक्षण। अपूरब : अपूर्व। बिदिसानिहुँ : दो दिशाओं के बीच की दिशा।

३६. बलवंड : बलवंत।

३७. सासन : आज्ञा।

सवैया

फेरि सदामति भूपन सौं, कहि कीरति जो कोइ आजु लहैगो।
जौ न कछू करिहै पुरुषारथ, तौ कटु कोटिन बात सहैगो॥
बैठि तकै, न बनै कछु बानक, है कहिबौ, फिरि कैसु कहैगो।
जौ न सकै हर चाप चढ़ाइ तौ, बात गँवाइ कै बाट गहैगो॥३८॥

मदन छंद

बात बज्र समान सौं यह उठे सुनि बहु बीर।
आइ धनु ढिग भए ठाढ़े हुते जे भट भीर॥
उमड़ि हर कोदंड कौ गहि रहे करि करि जोर।
मनहु पीत पतंग लागे कुलिस कोरन कोर॥३९॥

थके श्रम करि कै घनै अरु घने व्याकुल गात।
घने स्वासनि सिहरि हहरैं, धनुक-बल उतपात॥
एक लाजनि तें चले लजि, एक कोप निवारि।
देखि कौतुक हँसै जित कित, जनकपुर नर नारि॥४०॥

छप्पै

खंडपरस कोदंड चंड भुज दंड दंडि बल।
झरझरत तन स्वेद बिवस, कहुँ कल न परत पल॥
इक्क सुक्कि, इक धुक्कि, इक्क मुख श्रोनप मुक्कहि।
लज्जि इक्क थल तज्जि असित, जिय जित कित ढुक्कहि॥
गोपाल पिष्षि कौतुकइ इमि, हँसहि जनकपुर जन सकल।
चहुँ चक्क चलत तकि चक्कवनि, चलिय चवनि महलनि महल॥४१॥

---

३८. बानक : संयोग, अवसर। बाट गहैगो : रास्ता पकड़ना, लौट जाना।

३९. ढिग : पास। कोदंड : धनुष। कुलिस : वज्र।

४१. खण्डपरस : शिव। चण्ड : प्रचण्ड। झरझरत तन स्वेद : शरीर से पसीने का गिरना। कल न परत पल : एक क्षण के लिए भी शान्ति नहीं। सुक्कि धुक्कि : सूखना तथा कर्तव्यविमूढ़ होना। मुख श्रोनप : मुख पर रक्त आ जाना। लज्जि : लजाना। तज्जि : त्यागना। जित कित ढुक्कहि : यत्र तत्र छिपना चवनि : चर्चा करना।

सवैया

नक हल्यो न चल्यो कहुँ चाप, विचारि हिये सब हारि चले हैं।
साध रही मन की मन हीं, फल आइ फजीहति कोटि फले हैं।।
एक कहैं कोइ देव कला, यह छंदनि आइ छितीस छले हैं।
ठानि स्वयंवर, आनि सबै, महिपालन के अभिमान मले हैं।।४२

सोरठा

चले चहुं दिसि हारि, महि-मंडल-मंडन जिते।
सोचहि सब नर-नारि, को बरिहै अब जानकी।।४३।।

सवैया

ठाढ़ि झरोखनि मैं उझकैं तिय, एकनि येक कहैं मति भोरी।
हारि चले नृप डारि अडंबर, जे धरनी पर के सब धोरी।।
रूप की रासि रची विधना, सिय कौन सरूप मिलै बर जोरी।
बारहि बार बिलोकि कहैं, अब को बरिहै नृप-राज-किसोरी।।४४।।

छप्पै

अंतहपुर नृप राज सहित, रानिन जित सोचैं।
निरखि जानकी नैन, नैन मिसु करि जल मोचैं।।
थक्यौ स्वयंबर काज, राज पाए सब लाजहि।
को तानै कोदंड, काहि यह सुता बिराजहि।।
चित चकित जनक यह रटत मुख, अवलंबन हर वर हमहिं।
विधि गति विचित्र बिरचत मनहि, रचिय कौन घर बर समहि।।४५।।

सोरठा

इहि अंतर तिहि बार, आइ भयो लंकाधिपति।
सबहिन पर्यो खभार, बीस भुजा दस सीस लखि।।४६।।

---

४२. हल्यो : हिलना। साध : अभिलाषा। छंदनि : छल कपट।

४४. धोरी : श्रेष्ठ पुरुष, सर्व श्रेष्ठ (संस्कृत का शब्द धौरेय)

४५. मिस : बहाना। जल मोचैं : आंसू बहाते हैं। थक्यो स्वयंबर काज : स्वयंबर का काज रुक गया। समहि : समान।

४६. खभार : घबराहट, भय।

छप्पै

भ्रमित सकल पुर भयेउ, भयेउ अंतहपुर खल भल।
चवनि चाउ रहि गएउ, गएउ मिटि राग रंग थल॥
चकित चित्त छिति पत्ति, सुमति आदर करि लीन्हेउ।
बैठत हीं विकराल रूप ताकि, आयसु दीन्हेंउ॥
नृप कुंवरि बोलि किन लेहु इत, हरषि चित्त बहु गर्व्व मंह।
विषदंड मान कोदंड यह, कितिक चंड भुज-दंड कंह॥४७॥

दोहा

हर हर हर नृप बान रटि, करि अभिअंतर ध्यान।
सुमिरत हीं तहँ आइ कें, मिले सहायक बान॥४८॥

मदन छंद

बान के सनमान भूपति, किये भाँति अनेक।
चाप चौकहि मैं लसैं, भुवपाल येकनि येक॥
गये कितने हारि है पुनि, आइ पहुचे और।
आदरें कहि कौन कौ, कोइ मिलत नाहिन ठौर॥४९॥

सवैया

रावन बूझि उठ्यौ सब राजन, लाज तुम्हें न तिलौ भरि आयौ।
कौन नरेस कहाँ जु स्वयंबर, का यह चाप वितंड मडायौ॥
नैंक न सोच दियो हम को, अब लौं करतौ इनकौ मन भायौ।
देखत भौंह मरोरि यहै, कहि केहरि कौं भख कुंजर खायौ॥५०॥

---

४७. खलभल : खलभली। तकि : देखकर। चवनि चाउ : चर्चा चलाना। विषदंड : कमल नाल। चण्डभुज : प्रचण्ड भुजाएँ।
४८. अभिअन्तर : हृदय में। बान : बाणासुर।
४९. चौकहि : चौक में
५०. बूझि : पूछना। तिलौ : तिलभर, रंचमात्र। वितंडमडायो : विडंबना मचना। मरोरि : मरोड़ना, भौंह चढ़ाना।

बानौवाच—

रावन कौ सुनि बैनहि बान, कहै इहई सठ पाठ पढ़्यौ है।
राज सभा तिनु सौ निदर्‌यौ, करि अधिक बात इतेक गढ़्यौ है॥
का दससीस, कहा भुज बीसक, नाहक बातनि जात बढ़्यौ है।
झूठिऐ बात सबै तब लौं, जब लौं नहि संकर चाप चढ़्यौ है॥५१॥

रावनौवाच—

बान से बान के बोल लग्यो हिय, बोलि उठ्यो गरबै गरबीलौ।
जानि प्रताप तुम्हें न पर्‌यो कछु, कीरति में तिहुं लोक छबीलौ।
ये भुज दंड अखंडल दंडन, को महिमंडल मैं गरबीलौ।
हौं हठ हीं हठ जीति लियो जग, तानत हौं हठि चाप हठीलौ॥५२॥

बानौवाच—

जानत हैं हमहूं करतूति, किये जितनौ भरि कै जग चार्‌यौ।
काहू तें काहू की बात छिपी नहि, जौन सौं जो जितन्यौ भरि हार्‌यौ॥
ता दिन भूलि गए तुम रावन, जा दिन कांख तरे कपि धार्‌यौ।
झूमरि कै जु झुलावत हौं, वह बालि कौ बालकु लातनि मार्‌यौ॥५३॥

दोहा

रावन—

लाल लाल लोचन भए, कंपत अधर सुरंग।
बोलि न जानै बोल तौ, कहा भजावहु अंग॥५४॥

सवैया

जानत हैं हम हूं बनिकै, हर कौ हरपाइ, इतौ भुज पायो।
कौन कहां करतूति किये तुम, कीरति लोकनि कौन सु गायो॥
जे न भये नृप तारन मारन, तें भुव राज कहा अधिकायो।
ता दिन बान कहां हुते, बावन बापहि बांधि पताल पठायो॥५५॥

---

५१. निदर्‌यो : निरादर, अवहेलना किया।

५२. बान : बाण। बान : बाणासुर। अखण्डल : आखण्डल, इन्द्र।

५३. करतूति : कृतित्व। कांख तरे : कांख के नीचे, कुक्षि में। बालि कौ बालक : अंगद।

५४. भजावहु : घुमाना।

सोरठा

बान—

जे त्रिभुवन के नाथ, हाथ पसार्‌यो दान कौं।
सुनि बलि कीरति गाथ, साथ रहत श्रीपति सदा॥५६॥

सवैया

भूलि न बात कहो तुम रावन, है प्रभुता जनकी जग भारी।
जे पद को विधि संकर लोचत, सेस सुरेसहुं से अधिकारी॥
ते गहि दीन दसा भये दीन-दयाल गोपाल कृपा सुखकारी।
जे पग तीनि किये तिहुँ लोकहि, ताहि किये बलिराज भिखारी॥५७॥

रावनोवाच—

मोहि न संक कहूं कछु काहु की, कौन भुजा बल कौ पहिचानैं।
कोप कृसानु के झारन झौंसि, करौं धरि छार सबै अभिमानैं॥
आइ सहाइ मिले इन बान, सु काहे न बाद करो गरबानैं।
ह्वौ तुम दीन मलीन सबै, अब मो बिनु कौन सरासन तानै॥५८॥

छप्पै

जिहि भुज सुर पति जित्ति, सुरनि बहुधा विपत्ति किय।
जिहि भुज हर गिरि हरषि, कमल करि कमल-पानि लिय॥
जिहि भुज बल धन पत्ति ठेलि, लिय लंक बंक कहं।
जिहि भुज सरण समस्त करहि, सुख लोक लोक महं॥
तिहि भुज वितंड कोदंड करि, कठिन काल मोहि किये उदव।
यह धनुक स्वयंबर जनक पन, उथल पथल थल करहुं सब॥५९॥

बिबोहा

कहे सदामति रावनैं, तुम से है न भये।
हौंस न राखौ बैसिअैं, वे दिन बीति गये॥६०॥

---

५६. श्रीपति : विष्णु भगवान।
५८. कृसान : अग्नि।
५९. जित्ति : जीतकर। बहुधा : अनेक प्रकार। धनपत्ति : कुबेर। उदव : उदय।
६०. हौंस : इच्छा। बैंसिअैं : बैसौ।

सोरठा

नोकतही तिहि बार, अनख भर्‍यौ लंकाधिपति।
कोपानल कैं झार, झपटि गह्यौ कोदंड कर॥६१॥

करखा

ठोकि भुज-दण्ड बलिवंड रावन उठ्यौ। कठिन कोदण्ड यह कौन जुग कौ सर्‍यौ।
पानि पल्लवनि सौं गहत बनत न कछू। छुवत पावकहि सौं छोड़ि डाहनि डर्‍यौ॥
बज्र कर करज सौं मसकि उसकारि बहु। टारि इत उत घनौ हारि कोपनि जर्‍यौ।
स्वेदझरझरझरैं, उदर स्वास निभरैं। चलत नहिं हलत, श्रम तैंसु पचिपचि मर्‍यौ॥६२॥

मंडि मंडल करैं, दंड फिरि फिरि भरैं। मुकुट खसि खसि परैं, टूटि भूषन घनैं।
अङ्ग भूरज भरैं मनहुँ भूधर झरैं, बाल लीलाहिं सौं, कहत नाहिन बनैं॥
देखि भूपति रसैं, बान खद खद हँसैं। नारिनर छवि लसैं, चकित मन हीं मनैं।
थाकित रावन भयौ, गर्व गिरि कैं गयौ। चाहि धनु ख्याल, गोपाल कौतुकभनैं॥६३॥

छप्पै

आगम निगम विचारी, ध्यान अभिअन्तर ठान्यौ।
अवगति अगम अपार, राम अवतारहि जान्यौ॥
यह न जनक तनया सु सकल, सुर नर मुनि ध्यावै।
क्यौं न अचल धनु होइ, कौन जय कीरति पावै॥
अति लाजन बदन दुराइ कै, प्रबल कोप सब पर भयेउ।
तब छोड़ि स्वयंवर सीय कौं लंकापति लंकहि गयेउ॥६४॥

विदोहा

सब जानै धनु प्रबल तैं, दस मुख विमुख भयौ।
अरुनोदय कौ होत ज्यौं, तिमिर दिगंत गयौ॥६५॥

---

६१. नोकत ही : नोकना, ललचना। कोपानल : क्रोधाग्नि।
६२. डाहनि : दाहनि, दाह। सर्‍यौ : सड़ा हुआ। करज : करसे जयमान अर्थात् अँगुली। उसकारि : खिसकाना।
६३. भूधर : पहाड़। बान : बाणासुर। खदखद : खिलखिला कर।

राजा बाच—

सवैया

जद्यपि है करुना हर पूरन, तद्दपि आपु लहैं जस भारे।
बूड़त पाप पयोनिधि तें, गहि बाँह बड़े सुख पार उतारे।।
है अब सीय स्वयंवर साध, रची रचना न बची पचि हारे।
और गोपाल कहा कहिअे अब, बान से आनहि तू न हमारे ।।६६।।

दोहा

धनुक जनक पन राखि कें, चले बान हरखाइ।
महल रवनि सब चवनि बिनु, काहू न कछू सुहाइ ।।६७।।

इहि विधि बरने सम्भु मुनि, सिया-स्वयंबर आप।
दिनकर-मनि गोपाल भनि, दिन दिन राम प्रताप ।।६८।।

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल
विरचितायां सिया स्वयंवर वर्णनोनाम अष्टमोध्यायः ।।८।।

विश्वामित्र-राजा जनक-मिलन

१

दोहा

इहि विधि सकल धराधिपति, गये धनुक सौं हारि।
राज-भवन तेहीं समै, मिलि आई मुनि-नारि ॥१॥
आवत मुनि नारीन लखि, उठीं सकल रनिवास।
चरन बंदि आसन दई, मन मलीन मुख हास ॥२॥

मालिनी छंद

जब बहु मुनि रानी, राजभौनै सिधानी।
निरखि नृपति-वामा, दीन बानी बखानी ॥
विधि गति क्रूरं, कौन चापै चढ़ावै।
दिन दिन सिय सोभा, नैन काके समावै ॥३॥

ऋषि पत्नी—

छप्पं

सीय-स्वयंबर हाल सुनी, हम भाँति भाँति करि।
कौसिक मख उतपात करत, दनु प्रबल भारि धरि ॥
तिहि हित ल्याये जाँचि, अवध-नृप राजकुमारन।
ताड़िकादि सँघारि भए, मुनि जज्ञ उधारन ॥
गोपाल राम लच्छन कहिय, अति अद्‌भुत परताप जिन।
पद परसि सिला सुंदरि भई, कितिक प्रबल कोदंड तिन ॥४॥

द्रुमिला

उन राजकुमार महा सुकुमार, लिये मुनि साथहि आवहिंगे।
घन सुंदर स्यामल गौर किसोर, विलोकत ही मन भावहिंगे ॥
मख राखि भुजा बल तें जिन है, तिन क्यों न इते मन भावहिंगे।
पन रोपि गोपाल कहैं निहचै करि, वे सिव चाप चढ़ावहिंगे ॥५॥

---

५. निहचै : निश्चय।

दोहा

नृप रानी हरखी सबै, सुनि-मुनि-नारिन बैन।
को जानै विधि की रची, रचना जो जो कछु अंन ॥६॥
सुनि इत सीय स्वयंबर, हरष भरे ऋषिराज।
चले जनकपुर राम लै, धनुक उधारन काज ॥७॥

दीपकल छंद

सुनि सकल स्वयंबर मुनि समाज।
अवलोकि सबै रवि बंस राज॥
अब कौसिक लै चलिए कुमार।
कछु और है न करने विचार॥८॥

निसिपालिका छंद

सुनत रिषि राज सुभ काज आगम भले।
राम लच्छन लिये संग मिथिला चले॥
निरखि दोउ कुँवर छवि, हरष बहुधा भये।
गाइ गुन रूप सब, अङ्ग आनंदमये॥९॥

गीतिका

धनु गाथ सुनि, रघुनाथ को मुनि नाथ लै मिथिलै चले।
बहु बनं बनं रिषीस सोहत, तरुन वृद्ध भले भले॥
मुनि वृंद में रघुनंद हैं, बिबि चन्द उडगन मैं मनो।
धनु बान पानि विचित्र भूषन, हरत मन मनमथ घनो॥१०॥
बहु रंग रंग तड़ाग निर्मित, बाग बापी कूल हैं।
तहँ कोकिला अलि कीर कल, धुनि रसिक जहँ रति भूप हैं॥
मन हरन सुंदर स्याम घन, छवि लसत मुनि गन मे बनै।
लखि हरित होत तमाल सूखे, ललित पुंज घने घने॥११॥

---

६. बैन : ठीक।

१०. धनु गाथ : धनुष की गाथा, तरुन : जवान। वृद्ध : बूढ़े। बिबि : दो। मनमथ : कामदेव।

११. बापी : बावली। कीर : तोता। तमाल : समुद्र के किनारे होने वाला एक बहुत ऊँचा सुन्दर सदाबहार वृक्ष, जिसकी पत्तियाँ चौड़ी और कालापन लिये लाल होती हैं, वरुण वृक्ष।

प्लवंगम छंद

देखत बाग तड़ाग मनोहर राम हैं।
मानहुं काम बिहारहि के रस धाम हैं॥
रंग अनेक बिलास कही नहिं जात हैं।
केवल है बिरहीन महा उतपात हैं॥१२॥

दोहा

चले निसा भरतं सबै. ह्वै आयो प्रति भोर।
संध्या बंदन सबनि मिलि. करिअ राम किसोर॥१३॥

श्री रामोवाच—

कैधौं पद्‌मरागनके पीठि पुन्य बैठिबे को। कैधौं पद्म ही के अनुरागन के बास है।
कैधौं दिग देवता के जज्ञ को सुभग वेदी। लोचन गोपाल जग जोति को बिलास है॥
कैधौं दिवि-दर्पन मैं बाड़व को प्रतिबिम्ब। कैधौं कृत्यबासही को दृग को निवासहै।
कैधौं ग्रह बालन को थाल महा मंगल को। कैधौंमारतंडजूकोमंडलप्रकास है॥१४॥

छप्पै

मुनिरुवाच—

सकल भूत भूताधिपति, भूतल बिभूति कर।
सकल विस्व जीवन अधार, आनंद कंद बर॥
सकल लोक निस्तार, सकल, लोचन के लोचन।
सकल दनुज दल मलन, सकल सुर संकट मोचन॥
अति अरुन जोति प्रति काल जिहि अरविंदन अनुरागमय।
कुल मारतंड मंडल सुनो. संध्या बंदन सिध्दि जय॥१५॥

पाठान्तर—१४—दिवि : विवि (१,२)

---

१३. निसा भरतं : रात्रि समाप्त होते ही।
१४. कैधौं : किंवा। पद्‌मराग : एकप्रसिद्ध रत्न (लाल, माणिक्य) कृत्यबास : शिव। दिवि : दिव्य। ग्रह बालन : ग्रह रूपी बालक। थाल : थाली।
१५. सकल भूत : जितने प्राणी हैं। कंद : बादल। प्रतिकाल : प्रतिक्षण। कुल मारतंड : सूर्य।

मोटक

अति रम्य सरोदक दीह लसैं।
प्रति भोर सदा, जहँ श्रीविलसैं॥
चहुँ पारनि भाँति अनेक बने।
छतुरी मनि मंडप, सोभ घने॥१६॥

उहि पार सिवालय सोभ धरैं।
तिन मैं बहु रंग धजा फहरैं॥
जल जात जिते बहु रंगन हैं।
बिलसैं बहु रंग उमंगन हैं॥१७॥

बहु रंग सरोज सुगंध बमैं।
रस मत्त समूहनि भौंर भ्रमैं॥
अवलोकि सर्व बनि सोभ लसैं।
मुनि बृंदनि मैं रघुनंद हँसैं॥१८॥

सोरठा

मंजन करि, रघुबीर, निरखत सोभा सकल तहँ।
जल जुवतिन की भीर, करहिं केलि उहि पार सब॥१९॥

भुजंगप्रयात

लसै सोभ चौहूँ दिसा राम लाला।
मनो मैन आपै रच्यो नृत्य-साला॥
जहाँ कोकिला पुंज हैं गानकारी।
तहाँ सारिका औ सुको ताल धारी॥२०॥

---

१६. दीह : विशाल। भोर : प्रातः, ब्रह्म मुहूर्त। बिलसैं : शोभित होना। पारिन : तालाब का भीटा (संस्कृत शब्द पाली) छतुरी : छत्र। मनि मण्डप : मणि मण्डप।

१७ उहि पार : उस पार। जलजात : कमल।

१८. बमैं : निकलना (वमन, संस्कृत-शब्द)। बनि : उपवन

२०. गानकारी : गानेवाले।

सभा हंस राजैं विराजै चकोर।
रसै आपने चक्रवा तान तोरैं॥
भ्रमै भुण्ड भृंगावली, नाद पूरैं।
नचै नृत्यकारी, मयूरी मयूरैं॥२१॥

बहे गंधवाहे सुगन्धी सु तीनौ।
विलासी जहाँ पुष्पधन्वा प्रवीनौ॥
सबै हैं सबै भाँति ते अंग भूले।
तकैं राम गोपाल, सोभा वितूले॥२२॥

दोहा

सुंदर सकल कुमारिका, सजि सजि भूषन अंग।
प्रातहिं सिव पूजन चली, राजसुता के संग॥२३॥

सवैया

भूषन अंग जराय जरी सब, एक ते एक सरूप सलौनी।
जाति चली मति मंद मगै, अरविंद-मुखी दिन ही छवि हौनी॥
राजति राज-सुता तिनमैं, अति नैननि लाज चितै तिरछौनी।
लाल हरी सित पीत सबै महँ, सोहत सीतहि नील उढ़ौनी॥२४॥

सोरठा

मुनिन संग रघुबीर, मंद मंद विहँसत चलत।
उत जुवतिन की भीर, चाहि रूप सब चकि रहीं॥२५॥

पाठान्तर—२१-नृत्यकारी : नृत्यकाली (१,२)

---

२२. सु तीनौ : शीतल, मंद, सुगन्ध। पुष्पधन्वा : पुष्प के बाणों से युक्त धनुषवाला कामदेव।

२४. मगै : रास्ते में। छवि हौनी : सुन्दर होनेवाली। चितै तिरछौनी : बांक दृष्टि, तिरछी दृष्टि। सित : स्वेत। उढ़ौनी : ओढ़नी।

२५. चकि रहीं : चकित हो गईं।

झूलना

अरचि त्रिपुरारि सब नारि सुकुमारि। बनि विहँसि, श्री राम-शोभा निहारें।
चाहि औचक चकी, चरन चलत न। कहुं जे सु चपलाहिं की मान मारें॥
एक नैनन रसी, एक विहँसनि फँसी। एक भृगुटीन तें टक न टारें।
एक कुण्डल तकैं, अलक झकमक झकैं। रीझि रीझनि सबैं प्राण वारें॥२६॥
एक भुज लखि रहैं, जानकी तन चहैं। लाज गौरा गहैं, कहि पुकारें।
जुगल जोरी जुरी छबिन की छबि मुरी। लखहु री नैन नैननि निहारें॥
चोरि सब तियनि सिय, सलजि हुलसी हिये। जियहिं मैं मोहि विधि विचारें।
दृगनि रस दृग लहैं, हृदय मिलि वे रहैं। रूप गोपाल लोचन विहारें॥२७॥

सवैया

पूजि सिवा-सिव सीय विलोकति, अंगनि अंग अनंग प्रभा के।
देखि छकी छबिवंत महा, मति मारत मान सबै सुषमा के॥
हैं कमलापति से अति सुंदर, सेवत पांइ पुरंदर जाके।
आवत हैं मुनि संग बने अलि। ए दोउ राज कुमार हैं काके॥२८॥

दोहा

सखीवाच—

दसरथ राज नरिंद के, राम लखन दोउ वीर।
आवत कौसिक संग लै, और रिषिन की भीर॥२९॥

घनाक्षर

दूर तें दरस देखि, हरषित रसीले नैन। नेह रसीले बढ़ आनंद के कंद मैं।
सलजि सलोनी जिय मूरति बसी है हिय। जानकी जकीसी हें परी ज्यों मनि फंदमैं॥
मन हीं विचारि तीन, पूजि सिव चली मौन। जानें यह हेत कौन, नाही मतिमंदमैं।
ए तेमान लोचन चकोर चित चोर चाहि। मोमैरामचन्द्रकेवौंहोहीरामचंद्रमैं॥३०॥

पाठांतर—२७-निहारें : विहारें (१,२)

---

२६. अरचि : अर्चना, उपासना करके।
२७. तन : ओर। गौरा : पार्वती। मोहि : मोहित होकर।
२८. पुरदर : इन्द्र-पुर नामक राक्षस के मारने वाले इन्द्र को 'पुरदर' कहा गया है। काके : किसके।

पाठान्तर—३० चलीमौन : चली भौन (१,२)

दोहा

निरखि सरूप कुमारिका, मनहिं गही रुचि मौन।
सोचत सकुचति अलिन मिलि, सब आईं सुख भौन ॥३१॥

त्रोटक

मन की मन हीं रुचि राचरहीं।
सलजी सब सौं नहिं जात कही ॥
रघुबीर इतै मुनि संग लसैं।
सिय की सुषमा हिय में बिलसैं ॥३२॥

मग बीच तकैं सिय बाग तबै।
जिहिं सूकि गये तरु बल्लि सबै ॥
तिहिं मैं रुचि रंचक राम करे।
उलहे उठके द्रुम पुंज हरे ॥३३॥

सब फूलनि तें तरु फूलि रहे।
फल भूमि फलै नहिं जात कहे ॥
नर नारि अचंभित देखि भये।
चलि बात सबै पुर मांहि गये ॥३४॥

दोहा

मालिनि वह फुलवादि की, रचि रचि फूलनि माल।
मिली जाइ रनिवास में, अंतहपुर भुअपाल ॥३५॥
सुनि रानी चक्रत भई, जनक कहें सब आदि।
रिषि प्रताप जानि न परे, कै क्वौ पुरुष अनादि ॥३६॥

पाठान्तर—३२ बिलसैं : बिहसैं (१,२)

---

३१. रुचि : सुन्दरता।

पाठान्तर—३६ क्वौ : को (१,२)

---

३३. सूकि : सूखना। उलहे : लहलहा उठे, हरे भरे हो गए। उकठे : आमूल सूखना।

३४. चलिबात : चर्चा करते हुए।

३५ भुअपाज : भूपाल, राजा।

रिखिन साथ रघुनाथ इत, विरमत चलत सुभाइ।
उत आगे मिथिलाहि कौ, नारद पहुंचे जाइ ॥३७॥

दीपकल

मुनि निरखि जनक उठि किय प्रनाम।
हँसि कहे आजु किय सुफल काम ॥
तब बूझि उठे हिय प्रीति पूरि।
रिषि-राज कहो, मुनि कितिक दूरि ॥३८॥

दोहा

मुनि

नित्य नेम मुनि बृंद करि, बरनत तुम गुन गाथ।
आवत राज कुमार लै, लखन सहित रघुनाथ ॥३९॥

दीपकल छंद

मुनि राज लोग नृप बोलि लीन।
सब मुनिन गुने जे अति प्रवीन ॥
सब नगर सुने गह गह निसान।
नर नारि सजे नाना विधान ॥४०॥

बहु भौन भौन मंगल हुलास।
अति नृत्य गीत ठाने विलास ॥
उमहे जु लोग बनि ठनि समाज।
श्री राम लखन, मुनि दरस काज ॥४१॥

दोहा

जित कित सोभा सोभिजत, नर नारिन शृंगार।
ज्यों नव पल्लव होत बन, करत वसंत विहार ॥४२॥

बूझत बिहँसि रिषीन सौं, निरखि जनकपुर राम।
रति सरूप सब सुंदरी, किधौं मदन कौ धाम ॥४३॥

---

३७. विरमत : रमना, मोहित होकर रुक जाना।
३८. कितिक : कितना।

घनाक्षर

कल्प तरोवर सें सुंदर तरोवर हैं। अमल सरोवर मैं कमल सुहाये हैं।
भौंरनि की भीरनि सौं, सीतल समीरन सौं। फूलि फूलि फूलन सौं बासु सरसाये हैं।।
बाग बाग कोकिला कुलाहल करत बहु। हंसनि समेत राजहंस हरषाये हैं।
देखि हुलसंत राम मानहु बसंत धाम। कामकेसीवाम चाहि लोचन अघाये हैं।।४४।।

पद्धटिका

यह कहि राम लखन हरषाने।
चलत मंद गति अति सुख माने।।
नगर नारि नर चहुँ दिसि धाये।
राम दरस कौ सब अकुलाये।।४५।।

जित कित भीर ठिलैं, नाहि भावै।
झालरि कंबु मृदंग बजावें।।
धरि धरि रूप नारि नर नाचें।
मंगल हुलि चहूँ, दिसि माचें।।४६।।

त्रोटक

मुनि नारद लै नृप राज चलें।
जनु मानस के अभिलाष फलें।।
मुनि पडित संत समाज सजे।
जिन चारि सरीर सुभाइ तजे।।४७।।

बहु आनंद मोद विनोद भरे।
रघुनाथ बिलोकन साध करे।।
इत की उत की छवि कौन लहै।
जनु प्रेम–सुधा–रस–रंग बहै।।४८।।

---

४६. ठिलैं : भीड़। झालरि : वाद्य यंत्र। कंबु : शंख।
४७. चारि : बंधन

सवैया

नारदोवाच—

वे निरखौ नृप राज-कुमारन, कौसिक के ढिग ही बनि ठाढ़े।
कंध धरें धनु, तून अषै कटि, नैन बिलास भुजा बल बाढ़े।।
कौन गोपाल सरूप कहै, जनु रूप समुद्र बिलोइ कै काढ़े।
बंदन कै मुनि के पद कौं, पुनि भेंटहु भूप भुजा भरि गाढ़े।।४९।।

चंचरी

जैजैकहिजनकराज, निरखत मुनिगन समाज। बंदनरिषि-राजचरनकीन्हेहरषाये।
बिहँसतकौसिक रसाल,मिलियैअवधेस लाल। लीन्हेकरिअकमाल,छोड़ेकरिभाये।।
फूल्योअरविंदउरसिहुलसितअलिरसनिपरसि।सुरभितअभिलाषसरसिदोऊहरषाये
निरखतआनंदकंद,लच्छणमिलिबिहँसिमंद,हरनसंकलदंदरामजनगोपालगाये।।५०।।

दोहा

सकल मुनिन कौ जोरि कर, कीन्हों जनक प्रनाम।
उन सब आसिष दे, कहे, सुफल फलो सब काम।।५१।।

मेघ विस्फूर्जिता

चले आगे लैकै, मुनि वर सबै प्रीति कौ को बखानैं।।
लखै सोभा देवै, त्रिय-जुत सबै व्योम फूले बिवानैं।।
रसैं नाना रंगे, पुर जन सबै नैन नैको न टारैं।
हँसे नाना देखैं, महलनि चढ़ी राम सोभा निहारैं।।५२।।

चामर छंद

धाम धाम नागरी विचित्र चौखण्डे चढ़ी।
कै सरूप-सिंधु की तरंग तुंग हैं बढ़ी।।
देखि-देखि सुंदरी पुरंदरी-सी हर्षहीं।
दैं असीस राम सीस फूलि फूल वर्षहीं।।५३।।

---

४९. तून : तूणीर। अषै : अक्षय। बिलोई : मथकर।
५०. छोड़े कर भाये : जब उनकी इच्छा हुई तभी छोड़े। उरसि : उर में।
५२. त्रिय : स्त्री।
५३. चौखंडे : चार खंड। पुरंदरी : इन्द्राणी। फूल : प्रसन्न होकर।

घनाक्षर

जा दिन तें जनक महीप कौ जिले हैं राम। फूलि फूलि धाम भूली है टहल मैं।
लाख-लाख भाँति अभिलाषन सौं भरि-भरि। हेरि रही राम-मुख चहल पहल मैं॥
एकै मति बौरी, एकै लागी है ठगौरी। चाहि एकन के नैन चढ़े नेह के बहल मैं।
देखि छवि अंग-अंग, राघव सोभा तरंग। रंग रंग भूली रंग महलै महल मैं॥५४॥

दोहा

चहुं दिसि लागो टक टकी, निरखि राम मुख चंद।
अमल कौमुदी परसि जनु, सभा कुमुद आनंद॥५५॥

मंगल-घट जुवतिन लिये, दधि फल फूल रु मीन।
लाजनि मारे मुरि लिया, कौतुक तकें प्रवीन॥५६॥

छप्पै

सकल नारि नर नगर, सकल मंगल सरसावहि।
चारन मागध सूत, भाट कोटिन बिरदावहिं॥
करहिं बेद धुनि विप्र, भीर बहुधा अधिकारे।
लै रिषि-राज समाज, भूप भीतर पगु धारे॥
बैठे जु जाइ बैठक विसद, हरषत लखि गोपाल सब।
जल चरन सबनि पावन कियेउ, उचित जौन विधि तौन तब॥५७॥

सोरठा

लै बैठे रिषि राज, राम लखन दोउ भ्रात ढिग।
दुहुँ दिसि मुनिन समाज, राज लोग लै जनक नृप॥५८॥

दोहा

राजा वाच—

कै सुत दसरथ राज के, कौन सु किन उनहारि।
कौन बड़े लघु कौन से, हमहिं कहौ मखकारि॥५९॥

---

५४. चहल पहल : शोरगुल, धूमधाम। बहल : वाहन, बहली, रथ।
५६. मंगल घट : शुभ कलश। मुरि : मुड़ना। तिया : स्त्री।
५९. उनहारि : रूप, सादृश्य। मखकारि : यज्ञ करनेवाले विश्वामित्रजी।

घनाक्षर

रिषिरुवाच

नव घन स्याम अभिराम जानौ राम नाम । सुषमा के धाम सुखदायक सुरेसके।
अरु सुकुमार तीनि सुंदर अनुज इन्हें । लच्छण असेस गुन जानें सब सेस के ॥
एई नउखंड धनी, मारतंड बंस मनी। कीरति गोपाल भनी, भूतल सुदेस के।
जानौ जग बंद, देखौ सुंदर मुखारबिंद। आनंद के कंद, दोऊ नंद कोसलेस के ॥६०॥

दोहा

राम लखन अरु भरत कहि, सत्रुघ्न आनंद ।
नृप-मनि दसरथ राज के चारि चारु छवि नंद ॥६१॥

जानौ जनक महीप तुम, इनके अमित बिचार ।
एई मख पावन किए, तपी भरे तप भार ॥६२॥

इहि बिधि सब के रूप गुण, बरनि कहे मुनि आप ।
मंगल मनि गोपाल भनि, अद्भुत राम प्रताप ॥६३॥

इति श्री रामप्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल बिरचितायां बिस्वामित्र रिषि राजा जनक मिलनोनाम नवमोध्यायः ॥९॥

---

६०. सुदेस : सुन्दर।

धनुष-भंग

१०

बिदोहा

राजा वाच—

अपने सकल समाज सों, जनक सुनाइ कहे।
सब बिधि बिस्वामित्र ए, सकल प्रताप लहे॥१॥

द्रुमिला

इनके तप तेज समान न आन, अनेगन के अघ ओघ हरे।
हठ ठानि बिरंचिहु की रचना पर, आपु घने रचना बिचरे॥
अति गाधि के नंद अगाध, हमैं परिपूरण जोग समाधि भरे।
जिन खेलहि मैं खल की गति कों, इतके उतके न त्रिसंकु करे॥२॥

सोरठा

रिखिरुवाच

यह सुनि बिस्वामित्र, हरषि कहे रघुवीर सों।
इनके अमित चरित्र, चन्द्रचूड़ से बस किए॥३॥

---

२. अघ : पाप। ओघ : समूह। इतके उत के न : न इधर के न उधर के। त्रिसंकु : सूर्यवंशी जो सदेह स्वर्ग जाना चाहते थे किन्तु इन्द्र एवं देवताओं के विरोध के कारण स्वर्ग नहीं जा सके और विश्वामित्र के तप से पृथ्वी पर भी नहीं आ सके, आकाश में टंगे रह गये। गाधि : विश्वामित्र के पिता।

३. चंद्रचूड़ : शिव।

द्रुमिला

दिन अंस हजार अपार अहोनिसि, तेजहु तें तप तेज नए।
रथ एक, अनेकन हैं, थिरता थिर राज गोपाल बिसाल भए॥
करषैं बरषैं बिनहीं करषें, बरषैं नित ही जल कंचन ए॥
नृप अंग प्रमान अनंग लखौ, निमि बंश मैं अद्‌भुत हंस भए॥४॥

सोरठा

राजा—

सित गुण बरहि जगाई, काय कर्मकुत साकलहि।
ये कौसिक रिषिराइ, अरुन असित गुन समिध किय॥५॥

सवैया

जे बसवासन के निज बास, सु ते बसवासन तें बिडरे हैं॥
काय मनौ बच कर्मन तें, नर ते बरते पदवीनि बरे हैं॥
जेत मही तप ही तप तापित, यों निधि बाम बिराम खरे हैं।
सिद्धिन संहत कै यहई, जिन भू-भुज तें भुव-देव खरे हैं॥६॥

गीतिका

नारद—

सुनि कहे नारद सबन सौं, सम कौन कौसिक को करैं।
तप तेज उग्र प्रताप त्रिभुवन त्रिदस तापनि को हरैं॥
इत राजु जनक बिदेय कहिवे, नेह तें हरबर गहें।
धनि धन्य तनया, धनुक धन्य, सु धन्य कीरति नृप लहें॥७॥

---

४. अंस हजार : हजार कर वाले अर्थात् सूर्य। अहोनिसि : अहर्निश, रात-दिन। निमि : निमिवंशी। करषैं बरषैं : बिना नदियों से जल खींचे सोना बरसाना। हंस : सूर्य। नृप अंग : सदेह, सशरीर। अनंग : बिना शरीर, कामदेव।

५. सित गुण : सतो गुण। काय कर्म : काया के कर्म। साकलहि : हवन के समय जौ, दशांग, कपूर, घी, तिल इत्यादि मिलाकर समिधा पर रखी जाने वाली सामग्री। असित गुण : तमोगुण।

६. बसवास : घर, निवास। बिडरे : अलग हो गये। काय मनौ बच कर्म : शरीर मन बचन और कर्म। जेत मही : जितनी पृथ्वी। संहत : एकत्र। भू भुज : क्षत्री। भुव देव : ब्रह्मा।

७. त्रिदस : देवता। हरबर : शिवजी का वर।

सवैया

रिषि—

चारि गोपाल विचारि कहै, उन चारि विचारि हिये बिचरे हैं।
भूलि रहे निज आपु चरित्र, चरित्रनि ए जु विचित्र खरे हैं॥
हैं उनके गुण, तेउ न निर्गुण आपु गुनें सत भाव भरे हैं।
यों त्रिषि तें विधि और करे, तिहि तें विधि नारद नाम धरे हैं॥८॥

सवैया

बैठे विनोद बिलास भरे रस, हास हुलास हिये हरषें हैं।
पूरन पुन्य समाज विराजत, प्रीति पुनीत प्रभा परखें हैं॥
झाँकि झरोखनि राज-बधू, कहती सब ए छवि को करषें हैं।
राम सरूप-समुद्रहि-तें, जनु प्रेम बलाहक से बरषें हैं॥९॥

घनाक्षर

देखि देखि माधुरी सरूप की निकाई। सब रानी अनखानीकहै, बारेधनु ख्याल कौं।
बर कहिअे तौ मन-काम कौं कलप-तरु। घर कहिअे तौ रविवंस से विलास कौं॥
सौ गुनो पिनाक तें हमारी टेक हर की सौं। टरिहै न कयौ हू कहौ जनकनृपालकौं।
गानसुभगावौ,जयमालपहिरावौ। वेगिबाम्हनबुलाओ,सियदीन्हीरामलालकौं॥१०॥

सोरठा

को जाने का होइ, ए कोमल धनु कठिन अति।
खेल न परिअैसोइ, खलि गए तिहुं लोक जिहि॥११॥

---

८. उन : ब्रह्मा। चारि : वेद। चारि विचारि : गमन के लिए विचार करना। चरित्र : लीला। चरित्रनि : चालचलन।
९. निकाई : सौन्दर्य। परखे : परीक्षा। झरोखनि : वातायन। बलाहक : बादल।
१०. अनखानी : नाराज होकर। बारे : निकाल दे, निवारण कर दें। धनु ख्याल : धनुष के ध्यान को। पिनाक : शिवजी का वह धनुष जिसे श्री रामचन्द्रजी ने जनकपुर में तोड़ा था। हर की सौं : शिवजी की सौगंध।
११. परि : परंतु। अैसोइ : ऐसा।

घनाक्षर

रिषिरुवाच—

कैसो है धनुक वह कठिन जनक राज। हारे राज जासों पाए सब लाज हैं ॥
सुनि-सुनि कौतुक असेपसी-स्वयंवरकों। वासव से आए ते सिधाए खाइ बाज हैं॥
ताते वह चाप रघुनाथहि दिखैये आप। जिन परताप पूरे रिषिन के काज हैं।
सुंदर सलोने लोने, कौने धौं सँवारे इन्हें। जानतहौंसब ही के येई सिरताज हैं॥ १२॥

सोरठा

राजा—

भयो न एकहु काम, सकल मनोरथ थकित हुव।
सो धनु देखत राम, कहत होत अचरज्ज सुनि ॥१३॥

छप्पै

अचला हु ते अचल गरु सुर गिरि ते जानहु।
कठिन कुलिस तें कोटि, सेष बल गुन पहिचानहु॥
प्रबल बली लंकाधिपत्ति, आदिक पचि हारिय।
तिन न एक थल तें सु असुर, सुर नर कोइ टारिय॥
गोपाल राम कोमल बयहि, तिनहि कहत मुनि धनुक हित।
धकपकत हृदय यह रूप लखि, भरत नेंक नहि चाहि चित ॥१४॥

रिषिरुवाच—

सवैया

कौन है सोचि न संक करौ चित, ए अवतार सिरोमनि आपें।
खेलहि में जिन मारि दले दनु, नीदनु काल करालनि दापें॥
देखत के सुकुमार महा, करतूतहि को सु कहा हर चापें।
जानि परी अबलौं न तुम्हें, नृप-राज भुजा-बल को परतापें॥१५॥

---

१२. वासव : इन्द्र, अहमन्यता से परिपूर्ण। खाये बाज : बाजी खाकर, हारकर।

पाठान्तर—१५-करौ जिय : करौ चित (१,२)

१४. अचला-पहाड़। गरु : भारी। सुर गिरि : सुमेरु पर्वत। कुलिस : बज्र। कोटि : धनुष के दोनों किनारे। बयहि : उम्र। धकपकत : धक धक, धुक धुक करना। भरत नेंक : रंचमात्र भी नहीं भरता।

१५. नीदनु : निंदित करनेवाले।

राजो वाच—

चाहि मखी मख होत महा सुख, पावत ज्यों सुख ही सुख सातो।
ईस प्रसाद प्रताप तयैं लकि, होत कलाधिप सो अवदातो॥
मंजुल मालति मालहु तें, अति यों गुनि तीनि दसा कुम्हिलातो।
सोचि नृपाल गोपाल कहैं, विधि के विधि तें विधि अद्भुत मातो।१६॥

दोहा

कहैं सतानद विप्र सों, नृपति सोचि अकुलाइ॥
लै किन राम कुमार कौं, ल्यावहु धनुक दिखाइ॥१७॥

गीतिका

रिषिरुवाच—

तब कहैं कौसिक राम सों, अब नेक झेरन कीजिअै॥
निज धनुक दै कर लक्षनें, चलि आपु कीरति लीजिअै॥
सब मेटि जनक विषाद कौ, बरि जानकी हरषाइअै॥
कछु आप काज, न लाज है, यह अजय ते जय पाइअै॥१८॥

दोहा

राम उठत सबहीन सों, लक्षन कहे सुनाई।
सज्जत ही रघुनाथ धनु, धरनि उलटि मिटि जाई॥१९॥

छप्पै

लक्षन वाच—

कच्छ बच्छ बल करहु, करहु भूदार बज्र रद।
बल अनन्द फन मंडि, छंडि मति ककुभ कुंभि मद॥
धराधरनि मंति डगहु, धरनि मति धसकि उलट्टहु।
उदयाचल भ्रम तें न भानु, भ्रमि मग्गहि पलट्टहु॥
गोपाल राम कोदंड कर, जब गहि गुण सज्जित करहिं।
तजि धिज्ज अधिज्जन हुज्जियहु कठिन काल जानिन परहि।।२०॥

---

१६. सुख ही : सहज ही। ईस प्रसाद : शिव की कृपा से। अवदात : उज्वल। कलाधिप : चन्द्रमा। मालहु : माला। तीनिदसा : देवता। मातो : प्रमत्त।
१७. सतानद : सतानन्द—गौतम ऋषि के पुत्र जो राजा जनक के पुरोहित थे।
१८. झेर : देर विलम्ब। बरि : वरण करके।
१९. सबहीन : सभी लोगों से।
२०. कच्छ : कच्छप। भूदार : सूकर, बाराह। रद : दाँत। ककुभ : दिशा। कुंभि : हाथी। धिज्ज : धैर्य। अधिज्ज : अधैर्य, अधीर। हुज्जियहु : होवो।

झूलना छंद

बंदि गुरु चरन रघुनाथ धनु कौं उठे। मनहुँ मृगराज गज कौ उठायो।
चलत गति मंद, अरविंद मुख हास मृदु। चंद बदनीन कौं चित चबायो॥
चाप के चौक मैं चारु सोभा भरे। कौन अद्भुत कला पार पायो॥
निरखि गोपाल कोदंड रघुबीर छबि। हृदय सबहीन को धकपकायो॥२१॥

दुमिला

कटि सौं पट पीत लपेटत राम, गोपाल बिलोकत ही हरषें।
अति जीरन चाप बिचारि हरें, कर कोमल कंजहिं सौं करषें॥
गुन देतहिं गाइ उठीं तिय मंगल, पूरन देव कला परखें।
भरि प्रेमनि सौं सुर ब्योम बिवाननि, फूलन के बरषा बरषें॥२२॥

घनाक्षर

पंकज चरन धरि, धनु कौ नवाइ करि। सिजनी सजत, अब लोक अकुलायो हैं।
अवितल सुतल तलातल रसातल लौं। कसकि मसक जाइ कोल वितितायो हैं॥
छिति आई सिमिटि, दिगीस आये ऊँचे बढ़ि। धुकि आयेअचलअचंभित मचायो हैं।
चौंकि उठे संकर, सुरेस अकुलाइ उठे। जब हीं कठिन चाप राघव चढ़ायो हैं॥२३॥

झूलना छंद

अकथ गुन-गाथ, कथि जात नाहि न कथा। जबहिं रघुनाथ धनु हाथ लीन्हें।
पालि सिव सासनै, नृपति पन राखनै। अफल अभिलाष सब सुफल कीन्हें॥
करत टंकोर धुनि, भ्रमित हर बिधि भए। संकि सुर राज, सुर सहित सारे।
दिगनि दिगपति डरे, नृपन खर भर परे। कोप भृगुपति भरे, जानि भारे॥२४॥

---

२१. धनु कौं : धनुष के लिए। चंद बदनीन कौं चित चबायो : चंद्रमुखियों के चित्त में चौबाई, अस्थिरता आ गई।
२२. गुन देतहि : धनुष की डोरी चढ़ाते ही, धनुष की दूसरे कोटि से प्रत्यंचा बाँधते ही। जीरन : जीर्ण।
२३. सिजनी : प्रत्यंचा। सजत : चढ़ाते ही। कोल : बाराह। दिगीस : दिग्पाल।
२४. हर बिधि : शंकर और ब्रह्मा।

प्रबल भुज दंड त चंड कोदंड कों। दंडतें धरनि नभ धुनि सिधायो।
मंडि रवि मंडलं, बोधि आखण्डलं। नाकि गयो, नाद तिहुँ लोक छायो॥
राज-रमनी सबं गाइ मंगल उठीं। जानकी निरखि बपु सुफल मानी।
भनत गोपाल रघुनाथ मुख चन्द कौ। एक टक ताकि जिय धन्य मानी॥२५॥

दोहा

टूटत ही कोदंड कं, रह्यो मंडि धुनि घोर।
बेधि गयो ब्रह्माण्ड कौ, जहाँ न संध्या भोर॥२६॥

घनाक्षर

द्वै डग उससि, कसीस भरि तानत ही। सिय की चितौनि-सर नाघे गुन गनि हैं।
विक्रम सरूप, ते त्रिविक्रम सें सोहि रहे। मोहि रहे मानौ महा मोह ही मैं मुनि हैं॥
सेषादिक दिग्गज सिवादि विधनादि इन्द्र। काहू की रही न सुधि श्रौन नहीं सुनि हैं।
टूट्यौनापिनाक,नाकटूट्योवलवाननकौ॥सातौनाकनाकिकं,धमकिलागीधुनिहैं॥२७॥

छप्पै

टूटत हर कोदंड चंड, धरराट घोर धुनि।
धक धक्किय नव खंड, धुक्कि बलवंड सुक्कि सुनि॥
सप्त उदधि उच्छलित, सेस भारह कलमल्लिय।
धरसल्लित दिग्गज गगज्जि, पव्वय हल हल्लित॥
गोपाल राम भुज दण्ड बल, सकल बलिन बल खडियउ।
कुल मारतंड मंडन विदित, तिहुँ मंडल जस मंडियउ॥२८॥

दोहा

जै जै जै तिहुं पुर भयो, गयो दुसह दुख भार।
सब जाने पूरन कला, रामचंद्र अवतार॥२९॥

पाठान्तर—२७ द्वै डग : दै डग (१,२)

---

२५. मानी : कहा।

२७. उससि : उससना, खिसकना। कसीस : खींचना (फा० धा०—कशिस)। विक्रम : पराक्रमी। त्रिबिक्रम : विष्णु के समान। नाक टूट्यो : मर्यादा भंग। सातौ नाक : सात स्वर्ग। धमकि : धमाका, तेज आवाज।

२८. सुक्कि : कानों से सुनकर। पव्वय : पर्वत। बलिन : बलियों को। जस मंडिय : यश मंडन करना।

रुचिरा

धनुक भंग धुनि ते अति आरत, जनकादिक सब मोद रहे।
सोवत सोक नींद निसि ते, जनु जागि सकल सुख प्रात लहे॥
लखि कौसिक नारद बिहँसाने, नृपहिं राम ढिग लै जु चले।
सकल पुन्य तप सकल सिद्धिबल, सकल मनोरथ सुफल फले॥३०॥

सवैया

राजा—

क्यौंकरि राम पिनाक उठाइ, नवाइ चढ़ाइ सबै हरषायो।
रंचक हू नहिं बार लगी, धनु-भंग तिहू पुर कौं धुनि छायो॥
जानत हौं हर तें पर हैं कोउ, कौतुक हीं सिसु खेल मचायो।
साध गोपाल रही मन की मन, नैनन ही बल देख न पायो॥३१॥

छप्पै

जिन गुन पार न वार, कौन गुन गाइ सुनावैं।
जिन सरूप ब्रह्मादि देव, संतत सुर ध्यावैं॥
जिनहिं जागि जोगीस, जोति सपने नहिं देखैं।
जिन माया सनकादि, चंद्रचूड़हिं अनलेखैं॥
मिलये जु तिनहि कौसिक हमहिं, अति अद्भुत संकट-हरन।
अभिलाष लाख बिधि लखि लहे, नव नीरद सुंदर बरन॥३२॥

सवैया

रिषि—

है रवि वंस बिसाल उतै, इत है निमि ज्यौं कुल ही चलिये जू।
बीच बढ़ी चहुँधा बसु दीपति, सीतहि तैं उपमा लहिये जू॥
औ सम कंधहिं सो सनबंध, गोपाल सबै सुषमा गहियेजू।
बंदत तीनहुँ लोक त्रिबेनिहिं, और बड़ाई कहा कहिये जू॥३३॥

---

३१. पर : परे। साध : इच्छा।
३२. पार न वार : जिसका अन्त न हो, अनंत।
३३. निमि : राजा इक्ष्वाकु के एक पुत्र का नाम था। इन्हीं से मिथिला का विदेह वंश चला। वशिष्ठ के शाप से शरीर नष्ट हो जाने पर इन्होंने प्राणिमात्र की पलकों का आश्रय लिया, जिससे इनकी आखें बन्द होने और खुलने लगीं।

मदन छंद

सुंदरी सुकुमारि मंगल गावती हरषाइ।
संग सीतहि लै सबै रघुनाथ घेरी जाइ॥
पुलकि अंग सरूप निरखें सकल प्रेम समेत।
मनहुँ दामिनि पुंज मैं नव नील घन छवि देत॥३४॥

घनी तिय अभिलाष करि करि, साँस भरि भरि लेहिं।
घनी नैननि सलजि मोहहिं, मुख न उतरु देहिं॥
घनी बीजनु करहिं, विहँसी, श्रमित गात निहारि।
घनसार चंदन अंग चर्चित, करहिं बहु सुकुमारि॥३५॥

घनाक्षर

रूप कैंसी मंजरी, जरायन जरित अंग। संग लै कुमारी गावैं मंगल रसाल कौं।
आई चलीपास, हुलसात, मंद हासनि सौं। हेरि राघव की सोभा प्रति जाल कौं।
नैननि मिलत नैन दोऊ मुसक्यानि मृदु। सुधा-सुख-सिंधु कोटि आनन्द गोपाल कौं।
जोइ जयमाल महिपालन कौं मानमल्यौ। सोईजयमालसियमेलीरामलालकौं॥३६॥

दोहा

जै जै धुनि दुहुँ पुर भयो, जय मंगल चहुँ ओर।
थकित भये नर नारि लखि, जोरी जुगल किसोर॥३७॥

गीतिका

जब जानकिय जैमाल मेली, सकल पुर जय धुनि भयो।
बहु बजे दीह निसान घर घर, सुमन सुर बरखन लयो॥
रनिवास आस विलास फूल्यौ, खुल्यौ सिय निजु भागु है।
उठि गई सब सुख पाई सुंदरि, गीत मंगल रागु है॥३८॥

---

३५. उतरु : उत्तर।
३६. रसाल : मधुर। हेरि : देखकर।

जग मगित भूषन अंग अंगनि, अंगना आँगन कढ़ी।
कलधौत की लतिका किधौं, रितुराज सुखदनि सौं बढ़ी॥
मुख इंदु, इक अरबिंद बदनी, बिन्दु कुंमकुंम को दिये।
नग जरित जोति जराय भूषन, भूषि तन मधि सी लिये॥३९॥

कोइ आरती अति आरती सजि, आरती करैं राम कौं।
कोइ रचित रोचन दूध दधि, सिर तिलक पूरन-काम कौं॥
इक रचत नाना रंग रंगनि, अंगना आनन्द भरी।
बरनैं कहौ मिथिला कुलाहल, सुंदरी सुखमादरी।४०॥

कहि जनक त्रिभुवन तिलक ये, वपु तनकसे बिबि ह्वैं बनें।
तिनकौं कहा सु पिनाक है, कहि करत भूप बिनै घनें॥
रस हास बिबिध बिलास धनु-थल सुखद बहु सुषमा छयो।
अवलोकि जुगल किसोर, जन गोपाल उर आनंद भयो॥४१॥

घनाक्षर

ठाढ़े मुनि साथ रघुनाथ ढिग सोहैं भूप। बोलैं बिहँसाये देखि बीर बलवंड कौं।
ईसन के ईस, जगदीस जगदीसहु के। मंडन किये हैं कुल आइ मारतंड कौं॥
बार-बार पुलकैं बिलोकि कै बिलास बाहु। मेटे उरदाह तोरि चाप परचंड कौं।
भनत गोपाल लै लै अक्षत प्रसून गंध। पुजे हैं जनकराज रामभुज दंडकौं॥४२॥

दोहा

नारद बिस्वामित्र सौं कहे जनक सलजाइ।
हम लघु मति जानैं कहा अद्भुत गति रघुराइ॥४३॥

---

३९. कढ़ी : निकली। कलधौत : सोना। बिंदु : बेंदी। मधि : मध्य।
४०. सुखमा दरी : सौंदर्य को विदीर्ण करने वाली, सौंदर्य को दलित करनेवाली।
४१. बिबि : दो, राम और लक्ष्मण के सन्दर्भ में प्रयुक्त।
४२. परचंड : प्रचंड।

घनाक्षर

विधि के विधाता किधौं त्राता त्रिदसनिहूंके। जानिये न आदि अंत कैसेअपनायोहौं।
गुनि गनि बेदन विनोदन विचारि करि। अंतहकरन सार निधि ठहरायो हौं।।
कहत गोपाल कछू कहिये न जात गति। अवगति लीला आपु नीकैं जानि पायो हौं।
लोचन विहीन येक रसना निरूपै कौन। रूपन के रूप मुनि भूप दरसायो हौं।।४४।।

दोहा

अद्‌भुत राम प्रताप रुचि कह्यो बरनि गोपाल।
त्रिभुवन जन बल जगमगें, रघुवर उर जयमाल ।।४५।।

इति श्री रामप्रताप प्रकास भास्कर चूडामनि गोपाल
विरचितायां धणुभंग वर्णनोनाम दसमोध्याय: ।।१०।।

---

४४. त्रिदस : देवता।

दशरथ-जनक-मिलन

११

विदोहा

लै मंदिर रघुनाथ को, जनक महीप गए।
जैसे संपतिहीन के, संपति सकल भए॥१॥

भुजंगप्रयात

चलै भूप लै राम कौ रंगसाला।
चहूं ओर घेरी घनी रूप बाला॥
लखैं चित्रसारी विचित्रै वितानै।
भ्रमै भृंग माते सुगंधै अघानै॥२॥

दीपकल छंद

नृप राज भवनै सुख कहि न जाइ।
आनंद नगर नाहिन समाइ॥
रचना अनेग नाना विधान।
बहु नृत्य गीत तिय करहि गान॥३॥

मनि जटित सिंघासन सोभ राम।
छवि लच्छन लच्छन रूप-धाम॥
अति जलज नैन दोउ सजल भ्रात।
लखि राज रवनि जनु निज सुमातु॥४॥

---

२. अघानै : तृप्त होकर।
३. अनेग : अनेक।
४. लच्छन : लक्ष, लाख। छवि लच्छन : सौंदर्य के लक्षण। लच्छन : लक्ष्मण। रवनि : रमणियाँ।

मुख चूमि देहिं आसिष निहारि।
बहु धूप दीप आरति उतारि॥
लखि नगर—नागरिन हरष होति।
चुभि नैन रहिय घन वपुष जोति॥५॥

दोहा

कौसिक आदि रिषीन सौं, नृप बिनये करि साध।
मो मंदिर पावन करौ, करिकैं कृपा अगाध॥६॥

छप्पै

लै रिषि राज समाज, राम लच्छन हरषाये।
चरन पखारि नरेस, सबन विधि-जुत बैठाये॥
भरि भरि बारि सुगंध, कनक-भारिन धरि राखे।
हरित पलासनि के जु ललित पनवारे नाखे॥
नरनाह प्रीति अवगाह जुत, परसत परम बिनोदमय।
फल सकल रसाल सुगंध बहु, दधि मधु मिश्री सहित पय॥७॥

दोहा

मुनि भोजन बहु बिधि करें, राम सहित हरषाइ।
षट रस सरस रसाल फल, रुचि रुचि सब मन भाइ॥८॥

छप्पै

बन उपवन फल सकल, सकल षट रसनि रसाले।
बहु बहु स्वादनि कंद, घ्रान भ्रमरावलि आले॥
गुड़ अनेग विधि के, सु छीर विदि कहिय न आवें।
देव कुसुम, घनसार मोद, रुचि अधिक बढ़ावें॥
मुनि बृंद बिहँसि भोजन करहिं, राम लखन हरषावहीं।
गोपाल सु विस्वामित्र कहँ, नारी गारी गावहीं॥९॥

---

५. वपुष : शरीर।
७. भारिन : झंझर, गड़ुआ, जलपात्र। पनवारे : पर्ण पात्र, पत्तल। नरनाह : सम्राट। परसत : परोसना। पय : दुग्ध।

बिदोहा

सुनि गारी नारीन की, नारद बिहँसि कहे।
सुख समाज के स्वाद सब, आजुहि नैन लहे ॥१०॥

सवैया

भोजन कै मुनि वृंद सबै, रघुनंदन स्यौं अति हीं हरषाए।
प्रीति की रीति परे न कछू कहि, राज सभा सुखहीं चलि आए॥
बोलि उठे मिथिलाधिप सौं मुनि, आप बड़े जस भूतल पाए।
पावहि जौ लगनै लिखि कै उत, आवहि साजि बरात सुहाए ॥११॥

रिषिरुवाच—

और न भूप कछू कहने, करने अब है सु करौ सुभकारी।
को तुम तें जग कीरतिवंत, घनै बलवंतन के बलहारी॥
है सब ते सनबंध बड़ौ, समकंध बराबरि सोभित भारी।
चारि बिचारि बिरंचि रचे, इन चारि कुमारन चारि कुमारी ॥१२॥

सोरठा

सुनि बिनए नृप राज, हम उनके समकंध नहि।
वें त्रिभुवन सिरताज, सुता देत हौं टहल को ॥१३॥

सवैया

जानि परी तबही हम को, जब संकर चाप हल्यो न चल्यो है।
काहू सौ क्यौं हूँ हुतौ सनबंध न, याही तें भूपन मान मल्यो है॥
और की और न होइ कछू, सब ही सब भाँति बिरंचि छल्यो है।
हैं जु गोपाल इहै निहचै, सिय बाग फल्यो न सुहाग फल्यो है ॥१४॥

दोहा

दिव्य महूरति सोचि कै, लगन लिखाए सोधि।
संबु मुनि कौ सब कहैं, रचना वचनि प्रबोधि ॥१५॥

---

११. स्यौं : सहित। लगनै : लग्न मुहूर्त। जौ : यदि।
१२. कीरतिवंत : कीर्तिवान। बलवंत : बलवान। सनबंध : संबन्ध। कंध : स्कन्ध, राजा। चारि बिचारि : चारों वेदों पर विचार करके। बिरंचि : ब्रह्मा।
१३. समकंध : समस्कंध, समान राजा। सुता : पुत्री। टहल : सेवा।

छप्पै

स्वस्ति श्री राजाधिराज, नृप राज राज वर।
श्री दसरथ्थ धराधिपति, नृप परन प्रभाकर॥
आसिर्वाद असेष दए, कौसिक आदिक मुनि।
प्रणपति जनक लिखाइ जिते, सानंद होंहि सुनि॥
लिखि मेष लगन सुदि मार्गसिर, तिथि दसमी सुभ कारिका।
हम चारि कुमारन टहल हित, दीन्हीं चारि कुमारिका॥१६॥

दोहा

चले लगन लै संभु मुनि, अति तन मन हरषाइ।
सकल राज श्री सोभता, लखे अवधिपुर जाइ॥१७॥

सोरठा

संभु मुनि के साथ, पुर जन आए केतको।
मिले जाइ नरनाथ, हुते सभा दसरथ्थ जहँ॥१८॥

सवैया

संभु मुनि वाच—
जद्यपि भूषन ते सब भूषित, तद्यपि सुंदरता बिनु फीको।
जद्यपि सुंदरता अति सोहत, है दुति तैं दुति भूषन ही को॥
यों पुर औधि सभा नर हेरि, बिचारहि विप्र सबै मति जी को।
रामहि की प्रभुता सब ठौरनि, रामहि ते सब लागत नीको॥१९॥

दोहा

आवत मुनिहि प्रनामु कै, बिहँसे मनहिं नृपाल।
उन बहु आसिष दै धरे, आगे मंगल थाल॥२०॥

पाठान्तर—१६–कौसिक आदिक : कौसिकादि (१,२)

---

१६. स्वस्ति : शुभ। प्रणपति : प्रणाम, प्रणति, विनती। मेष लगन : मेष लग्न। सुदि : शुक्ल पक्ष। मार्गसिर : अगहन। कारिका : करनेवाली। परन : प्रण।
१७. सोभता : शोभा।
१९. हेरि : देखकर।

रुचिरा

कंचन थाल भरित मनि गन सौं, श्रीफल जुत दधि दूब हरे।
लगन पत्रिका सहित विप्र दै, आसिष भूपति नजरि करे॥
बाँचि विधान धरे माथे पर, धनि कौसिक कहि धरनि परे।
बाजन लगे निसान गहगहे, सकल अवधिपुर हरष भरे॥२१॥

छप्पै

लगन थाल महिपाल लै जु, भीतर पगु धारे।
मानहु सकल प्रताप सिद्धि, कर परहि बिहारे॥
किलकित पुलकि महीप महा, हरषीं सब रानी।
लीन्हीं सीस चढ़ाइ गाइ, सुभ मंगल ठानी॥
गह गह निसान बाजे सकल, बहु वह वह नर नारि उर।
रावर उराव बरनि न परत, चहल पहल सब अवधि पुर॥२२॥

दोहा

राज लोग उमहे सबै, राज काज के काज।
मचो घचाघच भीर बहु, लगे सजावन साज॥२३॥
बड़े राज राजानि कौं, धाए दूत अपार।
ल्याये न्योति बरात को, सूर बीर सिकदार॥२४॥

छप्पै

सोधि सकल भंडार, साज राजा सजवाए।
भूषण वसन सुगंध दिव्य, धनु बान सुहाए॥
नाना रंग विचित्र स्वर्न, रथ कोटिन साजे।
मनहुँ मनहिं के मित्र, मित्र बाहन हय राजे॥

---

२१. श्रीफल : नारियल, कच्ची सुपारी। नजरि करे : प्रस्तुत किया, दृष्टि के सामने भेंट किया। बाँचि : पढ़कर।

२२. रावर : अंतपुर। उराव : उत्साह।

२३. घचाघच : खचाखच।

२४. सिकदार : माननीय, प्रतिष्ठित। न्योति : आमन्त्रित।

रवि बेद बरात रसाधिपति, अति अतिसय उत्सव सहित।
उत सुरन सहित सुरराज सजि, दुहुँ दिसि सुख पूरन अमित॥२५॥

दोहा

नर पुर सुर पुर लोक हूं, सातों सुख न समात।
चार्‌यो दूलह ब्याह कों, चार्‌यो सजे बरात॥२६॥

त्रोटक

नृप चारि बरात बिचारि सजे।
बहु भाँतिन बाजन दीह बजे॥
गज पुंज सिंगारन सौं सरसे।
अति चित्र बिचित्रन सौं दरसे॥२७॥
बहु बंदन मूरति भाँति भले।
अरुनोदय के अनुराग चले॥
तिन ऊपर रंग निसान घने।
छतुरी मनि नीलनि छत्र बने॥२८॥

घनाक्षर

साजत बरात दसरथ्थ के गयंद बृंद। गाजत हरत दिगपालन के बल हैं।
कंपित कलिंग गंधमादन सहित बिंध। केते धँसि जात गिरि त्रास तलातल हैं॥
सुंडनि पसारैं सुरपति कें सहर सोर। सुर गज राजैं सुर संकत सकल हैं।
कहत गोपाल देखि बारन बरन डरैं। डारैं मति सोखि सातौ सागर के जल हैं॥२९॥

गीतिका

बनि सजे चारि बरात दसरथ, राज राजनि सौं तबै।
गजराज बाजि बिचित्र स्यंदन, साजु सौं सरसे सबै॥
बहु दीह दुंदिभि कोटि कोटिन, धुनि दिगंतनि जात हैं।
सुनि संक दनु उतपात सत्रुनि, अनत कंपत गात हैं॥३०॥

---

२५. मनहुँ मनहि के मित्र : मन के समान वेग वाले घोड़े। मित्र वाहन : सूर्य का रथ। रसाधिपति : पृथ्वी के राजा।
२७. गजपुंज : हाथियों का समूह।
२९. गंधमादन : पुराणों में अपने सुगंधमय वनों के लिए प्रसिद्ध मेरु से पूर्व का एक पहाड़। सातौ सागर : लवण, इक्षु, दधि, क्षीर, मधु, सुरा और घृत। सुरपति कें सहर : अमरावती। सुर गज : ऐरावत। बारन : हाथी।

घनाक्षर

चार्‌यौ सुत व्याहन कौं, चार्‌यौई बरात साजे। भूषन बसन चारु चारिविधिकेकरे।
आगे दसरथ्थ, तैसे साजु सौं भरथ्थ। तैसे सोहत बसिष्ट, लथ्थ सत्रुघन त्यौं खरे।।
राजैं कोटि कोटि गज रथ हय रथ्थ घने। घूमत नगारे भारे दिग्गजन हू डरे।
सोहैं देस देस के नरेस कोसलेस संग। राम के बराती कामहू के हिय कौ हरे।।३१।।

रंग रंग हेम रथ ऊरध पताका रंग। रंग रंग तरल तुरंग बने साज के।
रंग रंग पागे अरु बागे अंग रंग रंग। रंग रंग भूषन विभूषित समाज के।।
रंग रंग गज के अमारिन मैं राजैं भूप। भनत गोपाल हैं प्रवीन इक ताज के।
रामकेबराती कैधौं काम के बराती। सुरराज के बरातीकैं बरातीरितुराजके।।३२।।

दीपकल छंद

इहि भाँति चले नृप सजि बरात।
उमहे जु मनौ सुख सिंधु सात।।
रथ रंग रंग अति सोभमान।
जनु रतन जरित महि के विमान।।३३।।

तिनमैं जु राज राजैं अपार।
बिहरैं कि भूमि दामिनि—कुमार।।
चले चारन मागध बंदि सूत।
जनु भूतल कीरति के सु दूत।।३४।।

घनाक्षर

राजन के राजा, महाराजा, राजा राजन के। सोहैं भाँति भाँति सजु बरने न जातहैं।
भूषित असेष अंग भूषन बसन रंग। चरचे सुगंध गंधवाह हू अघात हैं।।
घुंघरित धूरनि हैं पुरित पयोधि पय। हय गय भूरज तें भूरित सुहात हैं।
भनत गोपाल सोभा तीनहू भवन हू की। देव नर देव साजे राम के बरात हैं।।३५।।

---

३२. पागे : पगड़ी। बागे : परिधान। अमारिन : अम्बारी, हौदा।

उत्तर के राजा साजन सौं आए सजि । पूरब के भारे भारे भूप बनि आये हैं ।
अंग बंग दच्छिन कलिंग करनाटक के । बेदर नरेस गुज्जरेस हरषाये हैं ।।
कासमीर राज कासिराज हैहै बत्सराज । जेते मध्यदेस राज सोभित सुहाये हैं ।
केसरि सबागे छत्रधारी छत्र धरि धरि । राजा दसरथ्थ साथ मिथिलासिधाये हैं ।।३६।।

छप्पै

साजि समूह समाज, चले नृप राज सुहाये ।
हय पयदल गय दलनि, जात मारग नहीं पाये ।।
गिरि गह्वर चकचूर, सजल सर निजल होत अति ।
धरणि धूरि, नभ पूरि, सूर रथ अमित भूलि गति ।।
रथ रथनि सकल चचमचत पथ, ध्वजनि उरझि ध्वज लरखरहिं ।
दिगपत्ति, दनुप्पत्ति, फनिग पति, अतल बितल थल थरहरहिं ।।३७।।

दोहा

जोजन भरि मिथिला [।]तें, बिरमे नृपति समाज ।
निरखत हीं अगुवान उत, हरषि उठे नृप-राज ।।३८।।

लीला छंद

यों अवधेस बिलोकि समाजहि मोहि रहे ।
भागि बड़े अनुरागनि नैन हुलास लहे ।।
दूलह रामहिं लेन तबै अगवान गये ।
बूझि बसिष्ठहिं इस्ट रथी बहु है पठये ।।३९।।

करखा

आग ही संभु मुनि जाइ कौसिक मिले । नृपति कै कोटि प्रनपत्ति कहियो तबै ।
सुनत रिषिराज कहें जनक नृपराज सौं । सकल राजान जुत राज आये अबै ।।
रतन मनि जरित रथ दिब्बि बिबि हयनि जुत । बसनिभूषनघनेंभाँतिभाँतिनिकरें ।
अवधिपुर राम जन राम टहलनि लगें । बसन बागे 'डबें' पान चामर धरें ।।४०।।

---

३६. हैहै : हैहय । बत्स : कौशाम्बी । केसरि सबागे : केसरिया रंग का वस्त्र ।
४०. कोटि प्रनति : करोड़ों प्रणाम । दिब्बि : दिव्य । जन : सेवक लोग ।
डबै पान : पनडब्बा ।

तबहि रघुबीर दोउ बसन बागे बने। भूषि भूषन घने अंग अंगनि छजे।
रूप निधि रतन मनि, जोति जगमगि रहे। जबहि रघुनाथ जू साजु दूलह सजे॥
चाहि पुर नारि नर, थकितजितकितसबै। तात के मिलन कौं, गात आनंद बढ़े।
भनत गोपाल, दोउ लाल दसरथ्थ के। मिलन राजान तब जाय पथररचढ़े॥४१॥

मालिनी

महल महल ठाढ़ी, राज-बामा निहारें।
सकल भुवन सोभा, हेरि कै प्रान वारें॥
छिन छिन प्रति औरे, सीय शृंगार साजें।
हृदय नयन रामा, राज श्री राम राजें॥४२॥

चौबोला

आवत निरखि भरथ रघुनाथहि, हरषि अनुज जुत धाए।
अंग अंग सुख-सिंधु मात नहि, मनहुँ रंक निधि पाए॥
रथ तें उतरि प्रदछिन करिकै चरन कँवल लपटाए।
लोचन-भृंग छुधित जनु कब के, छवि-मकरंद अघाए॥४३॥

रघुवर बिहँसि दुहुँन उर लावत, लक्षन मिलि हरषाए।
दूलहँ नवल सरूप रासि अति, नृपति पास चलि आए॥
राम लखन पितु चरन परस तें, आनन्द उमगि न माए।
अति आनंद बिनोद बिलोकत, जन गोपालहिं भाए॥४४॥

दोहा

उमहे राज समाज सब, मिलन हेतु रघुबीर।
महारथिनि के रथन मैं, मची घचाघच भीर॥४५॥

---

४२. रामा : कामिनियाँ।
४३. मात : समाता।
४४. माए : समाए।

रुचिरा छंद

राजा सकल राम कहँ मिलत, राम सवन सनमान करे।
विहँसत प्रीत परस्पर सबहीं, अभिअंतर अभिलाष भरे॥
चौंर चारु दुहुँ ओरनि ढारें, छत्रपतिन कहु छत्र धरे।
बिबिधि मनिन मधि मनहुँ नील मनि, सब जोतिन के जोति हरे॥४६॥
ब्रह्मा सुत पढ़ि कोटि स्वस्तयन, रतन जरित सिर मौर रचे।
कंकन कमल-पानि चारिहुँ के, भूषण अंगनि अमित खचे॥
केसरिया पागे, पट झीने, नहि सोभहि कहुँ सोभ बचे॥
दूलह राम रूप अवलोकनि, तिहुँ पुर आनंद हूलि मचे॥४७॥

भुजंग प्रयात

चहूँ ओर सोभा घने साज साजें।
चहूँ ओर बाजे घने भाँति बाजें॥
चहूँ ओर नाना, स्वरें साधि गावें।
चहूँ ओर केते सो नाचें नचावें॥४८॥
चहूँ ओर नाना धरे स्वांग सोहैं।
चहूँ ओर नाना रसें चित्त मोहैं॥
चहूँ ओर आनंद के कंद फूले।
चहूँ ओर श्री राम सोभा वितूले॥४९॥

छप्पै

सकल रतन जगमगित, सकल पट भूषन भ्राजहि।
सकल बाजि, रथ सकल, सकल गज साजनि छाजहि॥
सकल सुगंधनि गंधवाह, गति जात दिगंतन।
सकल रंग रस हास, सकल विद्यागुनवंतन॥
गोपाल राम दूलह जहँ सु, सकल देव देवाधिपति।
सुख सकल समाज सिगारमय, परमानंद विनोद अति॥५०॥

---

४६ मधि : मध्य।
४७. ब्रह्मासुत : नारद। स्वस्तयन : स्वस्ति वाचन।
४८. स्वरें : स्वरों में, राग-रागिनी में।

दोहा

इत बहु भांति विलास तें, विरमत चलत सुभाइ।
उत सुख सोभा जनकपुर, बरतत बरनि न जाइ ॥५१॥

सोहत दूलह चारि के, चारिहुं भांति बरात।
सजे चारि अगवान हैं, जनक राज हरखात ॥५२॥

करखा

चारि अगवान चतुरंग साजनि सजे। बाजि गज राज रथ कौन पैंदल गनें।
मिलन-भू-भुजन कौं जनक भू-भुज चले। संग भूपाल बहु भूपि भूषन घनें ॥
जात सोभ न कहे, जोति जगमगि रहे। सबहि बहु बह बहे, लोग अपने मनें।
रंग रंगनि लसें, एक एकनि हंसें। निरखि गोपाल बहु हरषि कौतुक भनें ॥५३॥

द्रुमिला

मद मत्त गयंदनि वृंद अगार, दिये चतुरंग चमूनि गजें।
रथ रंग अनेक रथी भट संघट, भूषन चित्र विचित्र छजें ॥
बहु जूहनि जूहनि कूह चहूं, दिसि दीरघ दुंदुभि दीह बजें।
परगाहन श्री दसरथ्थ महीपहि, यों मिथिलाधिप साजुसजं ॥५४॥

दोहा

जनक राज सब साज सजि, चलें लेन नृप राज।
निकसे सहन भंडार ते, सकल राज श्री राज ॥५५॥

नाराच

बने अनेगधा सबें, विचित्र आप आप कौं।
चले विदेह राज, कौसलेस के मिलाप कौं ॥
बड़े बड़े रिषीस औ, छितीस देस देस के।
किधौं सुरेस के, दिनेस ज्ञान ज्यौं गणेस के ॥५६॥

पाठान्तर—५१-उत सुख सोभा : उत बहु सोभा (१,२)

---

५३. भू-भुज : राजा।
५४. गजें : गर्जन करते हैं। परगाहन : परिगहन, स्वीकार करना, स्वागत करना।
५५. सहन : (अरबी-सह्न), आंगन।
५६. अनेगधा : अनेक प्रकार से।

बजें मृदंग बीन हैं, नवीन नायका नचें।
सबै जहाँ प्रवीन हैं, प्रवीनताहि कौं रचें॥
कहूँ जु भाँति भाँति कौं, अनेग भाँति ते बने।
विलोकि सोभ हर्ष होत, देवतानि कौं घने॥५७॥

छप्पै

दुहूँ ओर भगवान मिले, आगे सब कैसे।
मनहुँ सागरहि जाइ मिलत, सलिता जल जैसे॥
दुहूँ दिसि गर्जं गयंद, दुहूँ दिसि बाजन बाजैं।
दुहूँ दिसि अमित उराव, महाराजा सब राजैं॥
गोपाल दुहूँ दिसि सोभ लखि, सुमनस मन हरषावहीं
रवि बंस सकल कीरति अमल, बंदीजन बिरदावहीं॥५८॥

घनाक्षर

कहूँ हैं अनत बलबंत सेष वेष धरें। कहूँ हैं सरस सातौ सिंधु पहिचानिये।
कहूँ हैं निसाकर दिवाकर सरित सर। सुर-गुरु सोभा दनु-गुरु उनमानिये।
कहूँ हैं कमलभव भूषण विभूति भरि। भनत गोपाल कामधेनु उर आनिये॥
महाराजा अजके, अवनि राजा दसरथ। रावरो सुजस तीनौलोकनिबखानिये॥५९॥

दोहा

कीरति दसरथ राज के, सुनि सुनि सुखद अपार।
सुजस तबै मिथिलेस कौ, सुमति पढ़े तिहि बार॥६०॥

घनाक्षर

पूरन प्रताप तप तेज रज राजस को। तीनहू भुवन भरि करत बिहार हैं।
अजर अमर जुग जुगनि जगति जोति। जोतिन तें जोतिबंत कीरति अपार हैं।
देव दनु मनुज मनोरथ के थाके सब। कौन को गयौ न गिरि भुजबल भार हैं।
ईस बरदान धराधीसन मैं भानु ऐसो। जनक नरेसनिमिबंस कोसिंगारुहैं॥६१॥

---

५७. प्रवीनताहि : प्रवीणता।
५८. सलिता : सरिता, नदी। सुमनस : देवता।
५९. सुर-गुरु : बृहस्पति। दनु-गुरु : शुक्राचार्य। कमलभव : ब्रह्मा।

पाठान्तर—६१-प्रताप तप तेज : प्रताप तेज तेज (१,२)

छप्पै

रथ पर दसरथ निरखि जनक, रथ निपट निकट करि।
भुज भुज भू-भुज परसि, बरसि रस सरस अमिय झरि।।
दुहुँनि पुलकि प्रति लोम, मंद मुख बिहँसनि बिहँसति।
निरखि सबनि अहलाद स्वाद, बहु प्रीति प्रेम रति।।
गोपाल सकल भुवपाल मिलि, लै चारिहुँ दूलह तबै।
उत होत कुलाहल जनकपुर, रचहिं सकल मंगल रबै।।६२।।

दीपकल छंद

नृप जनक वसिष्ठहिं इस्ट जानि।
सिर धरे जोरि कर कमल—पानि।।
मन विहँसि दीन आसिष उदार।
उर प्रीति परसपर बढ़ि अपार।।६३।।

चौबोला

जनक राज सब राजनि मिलि कै, निजु मंदिर फिरि आए।
सब विधि करन सुदेस सबन के, सब हीं साजु सजाए।।
भाँति-भाँति पुर मंदिर रचना, रचि रचि बहु बहु धाए।
जरकस सरस बितान पाँवड़े, शोभित सोभ सुहाए।।६४।।

उड़ियाना

भूप महल चहल पहल लोग टहल लागे।
भूषन मन जोतिन तें तेज तिमिर भागे।।
गह गह गह बहु बहु धुनि बाजे सब बाजें।
गिरि से गजराज प्रबल बारिद से गाजें।।६५।।

---

६३. बढ़ि : वृद्धि।
६४. सुदेस : सुन्दर। जरकस : वह वस्त्र जिस पर सोने के तार आदि लगे हों (फा० श०)।

तोरन चहुँ ओरन कहुँ पीत हरित राते।
ताने जरकस वितान जोतिन सरसाते॥
थल थल बैठक सुरंग भाँति भाँति डारे।
देखत पुर सोभ सकल देवराज हारे॥६६॥

दीपकल छंद

नर नारी नगर सुख कहि न जाइ।
जगमगित जोति सब रहिय छाइ॥
सरसंत सकल रस रंग हास।
सब गलिन गलिन मंगल विलास॥६७॥

सजि अंग सकल शृंगार नारि।
पट रंग रंग पहिरे सु झारि॥
बहु नृत्य गीत बाजै निसान।
सब ठौर ठौर नाना विधान॥६८॥

दोहा

सुंदरता न समात कहुं, नर नारिन की भीर।
उमहे सब अभिलाष भरि, अवलोकन रघुवीर॥६९॥

छप्पै

बन उपवन भरिगयेउ, सकल गज राज बाजि रथ।
दल पैदल अनलेख, मिलत नहिं कहुँव काहु पथ॥
देव लोक नर लोक, हरष-जुत होत कुलाहल।
हल बल गल बल सकल, जनकपुर मंगल थल थल॥
गोपाल राम दुल्लह नवल, निरखि नैन निमिष न परत।
उत मुनिन सहित नृप आइ लिय, विधि विधान बहु विधि करत॥७०॥

---

६६. तोरन : तोरण, फाटक।
६७. सरसंत : शोभित होना, सरस होना।
६९. उमहे : उमड़ पड़े, उत्साहित हुए।
७०. अनलेखे : अगणित। कहुँव : कहीं भी। काहु : किसी को।

सवैया

चारिहुँ दूलह चारिहुँ मंडप, चारि विधान नरेस करे हैं।
और गलीनि ठिलीजित हीं कित, आनंद मोद विनोद भरे हैं।।
कौसिक आदि रिषीन विलोकत, भूप तबै रथ तें उतरे हैं।
राजसिरी अभिषेक किधौं विधि मंगल साजु सुधारि धरे हैं।।७१।।

मदन छंद

निरखि दसरथ हरषि कौसिक-चरन परसे धाइ।
दीन जन कौं कलपतरु कहि उठे अस्तुति गाइ।।
दै सु आसिष भूप कौं मुनि कहे सुफल सु काम।
प्रीति रीति विलोकि बिहँसत, भरथ लछन राम।।७२।।

दोहा

नारदादि मुनि सबन कौं, करि प्रनाम नरनाह।
अंकमाल नृप जनक सौं, भये सबन उत्साह।।७३।।

छप्पै

विप्र बेद विधि पढ़हिं नारि मिलि मंगल गावहिं।
गौरि गणेस पुजाइ कुँवर, मण्डपनि छिवावहिं।।
हय गय रथ धनु बान, विविध भूषन मनि दीन्हे।
हाथ जोरि नरनाथ विनय, बहुधा जुत कीन्हे।।
सब नृपनि सहित मुनि वृंदबनि, लोक रीति करि प्रीति हिय।
जिन आदि न अंत, अनंत गति, तिनहिं जनक जनवास दिय।।७४।।

दोहा

रंग महल के चौक में, बिछे बिछौना चारु।
मनौ रसा उर मलयमय, चरचित सोभ अपार।।७५।।

---

७१. ठिली : ठेलमठेल।
७५. रसा : पृथ्वी।

सवैया

सीपज की गच-गौरिन ऊपर, पंक मलै महि चारु सुधारे।
ता पर सुभ्र बिछौननि की छवि, तापर तास बितान सँवारे॥
चारिहुं ओर सुगंधिनि की घट, छूटत हैं घनसार फुहारे।
चंद्र कला जनु चंद्र सौं हंसि, रसा अपने रस आइ बिहारे॥७६॥

उड़ियाना

राजत पुर जनक जगत, जोति सु जनवासैं।
पुलकित नर नारि नगर, चंचल चपला सें॥
गावत बर नारि, बिबिध मंगल मन भाये।
दूलह रघुबीर निरखि, आनंद उपजाये॥७७॥
बैठे जनकादिक सनकादिक, मुनि जैसे।
सोभित जहं कोसलेस, सुन्दर सुत तैसें॥
फूलन के सुभ बितान, ताने बहुभाई।
मानहुं त्रइलोक फूल, प्रफुलित हरषाई॥७८॥
सोभित मनि हेम सदन, सुंदर बहुभाए।
बिच-बिच मनि-लाल-जाल; जोतिन पुर छाए॥
सोभित मनिलाल सिलनि सुन्दर अंगनाई।
मंडप तहँ अति बिचित्र, मंडित छबि-दाई॥७९॥
कंचन मनि खम्भ रचित, तोरन छबि छाजें।
झालरि मुकतानि झमक, झूमक मनि राजें॥
सोभित थल-थल बिचित्र, बैठक बहुवा हैं।
आनंदघन भजि गोपाल, कीरति अवगाहैं॥८०॥

दोहा

कहे कृतारथ जन सबे, हरे त्रिविधि संताप।
हरषत मनि गोपाल हिय, निरखत रामप्रताप॥८१॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल बिरचितायां राजा दसरथ राजा जनक मिलनुनाम एकादसमोध्याय:॥११॥

---

७६. सीपज : मोती। गचगौरिन ऊपर : फर्श के ऊपर।
८०. झकत : खूब साफ और चमकता हुआ, झलाझल।

राम-विवाह

१२

सवाई छंद, राग सारंग

राजत राज समाज सुहाए।
तैसे कोसलेस बनि बैठे, तैसे जनक भूप बनि आए॥
भूषित विविध भूषननि भू-भुज, कीरति लोक लोक मन भाए।
मानहु सूर सोम इक आसन, अंस असेष प्रतापनि छाए॥
फूले जहाँ सुखद मुख-पंकज, लोचन कुमुद सनेह सदा ए।
प्रफुलित मनहुँ प्रेम जुत जित कित, पुर जन भृंग भीर बहुधाए॥
उर आनंद कंद मकरंदनि, पीवत सकल लोक सुख पाए।
पुलकित अंग गोपाल निरखि छबि, बंदिन बिसद बंस-जस गाए॥१॥

चच्चंरी

बैठे मिलि राज राज, राजत बहुधा समाज। तैसे रिषिराज ज्ञान मानस छबिछाजै।
सुंदर अरविंद नैन, मुनिगन अलि दलित चैन। पीवत मकरंद ऐनमाधुरिमुखराजै।
निरखत श्रीरामचंद्र, हरन त्रिविध ताप दंद। होत सकल कलुषमंद,सुंदरसुतसोहैं।
नवघनमनहरनस्याम,देखतत्रयधामधाम। वारतसतकोटिकामरामसकलमोहैं॥२॥

कोमल सुकुमार अंग, सुंदर त्रय अनुजसंग।संग सकल ज्यों अनंग मित्रन को लीन्हें।
देखिसकलसोभगात,बूझतरिषि-राजबात।कीरतिकुलकहिनजातकीरतिजिमिकीन्हें।
लायक रघुनाथ सर्व, गर्विन के दलित गर्व। जिनके गुन अर्ब खर्व, सारद विरदावैं।
राजिवलोचनबिसाल,हरनसकलकलुषजाल।गावतजसजनगोपाल,संतनमनभावैं।३

---

१. बिसद : विशद, सुन्दर।
२. अर्ब खर्व : अरब खरब।

भुजंगप्रयात

बजैं दुंदुभी भेरि, करनाल भारे।
मनो चौहुधा तें, गजैं मेह कारे॥
नचैं नृत्यकाली, कला कोटि कीन्हें।
नटी विद्यु कैंधौं, नचैं सोभ लीन्हें॥४॥

सवैया

बाजत दुंदुभि देव-दरी, दरबार महाभट भीर सुहाए।
राखत हैं सिर आषद लै द्विज भाषत वेद उमेदनि छाए॥
होत कुतूहल हूलि जितै, कित कीरति तीनिहुँ लोकनि गाए।
सातौ रसातल भूतल के सब, देखन दूलह रामहिं आए॥५॥

रुचिरा छंद

सकल समाज सकल सुख सोभा, सकल रूप गुन कहि न परे।
सकल हास परिहास सकल जहँ, सकल विलासनि रस बिहरे॥
सकल कला सरवज्ञ विदग्धन, सकल सुगंधनि उदर भरे।
लोचन सकल चकोर विलोकत, रामचंद ते चित न टरे॥६॥

दोहा

राज भवन सब सुंदरी, सजि सजि अंग सिगार।
करहिं कुलाहल निरखि, हैं मंगलचार अपार॥७॥

भुजंगप्रयात

सबै अंगना अंग शृंगार सोहैं।
सुधा सिंधु की कन्यका सी विमोहैं॥
करैं गान नाना विधै प्रेम फूली।
सजैं और की और साजैं वितूली॥८॥

---

४. करनाल : नरसिंघा नाम का एक टेढ़ा बाजा (करनाय अरबी शब्द)। नृत्यकाली : नृत्यकारी।

५. देव दरी : देव दारा, अप्सरा। आषद : अक्षत।

६. विदग्धनि : चतुर लोग।

८. सुधा सिन्धु की कन्यका : लक्ष्मी। वितूली : आश्चर्यजनक।

दोहा

घनी सुवासिनी सुंदरी साजें साक विधान।
जिती मया की जानकी, तितनी रूप—निधान ॥९॥

छप्पै

सकल रूप की रासि, सकल शृंगार सुहाई।
विधु-वदनी विधि चारि तें, सु जनवासहिं आई॥
इक मुरि मुरि मुसक्याइ येक गावें रस गारी।
करहिं बिहँसि परिहास, जानकी निपट मयारी॥
अवलोकि देव कौतुक कहँहि, जिन्हहिं बेद विधि गावहीं।
तिनको सु जनकपुर भामिनी, भाजी बिहँसि खवावहीं ॥१०॥

सोरठा

भूषन रतन जराय, वसन विचित्र सुगंध बहु।
दीन्हें नृपति मँगाइ, नेगचार सब सबनि कों ॥११॥

विदोहा

बहुराई जुवती सबै, दुहुं दिसि हरष ठये।
इतै जनक लै नृपन कौं मंडप मांह गये ॥१२॥

दोहा

चहल पहल सब महल में, टहल लगी वर नारि।
परे पांवड़े गलिन में, जरबाफन के भारि ॥१३॥

पाठान्तर—१०. कौतुक हँसहि : कौतुक कहहि (१, २)

---

९. सुवासिनी : सधवा, सयोतिनी। साक : सब्जी।
११. नेगचार : विवाह आदि के शुभ अवसर पर सम्बन्धियों, आश्रितों तथा कृत्य में योग देने वाले लोगों को कुछ उपहार दिये जाने का लौकिक नियम।
१२. बहुराई : वापस लौटाई।
१३. जरबाफन : जरबफ्त (फा० शा०) सोने के तारों से बने कपड़ों के बेल बूटे वाले वस्त्र।

गीतिका

तब सकल राज समाज सौं, बनि बिहँसि दसरथ राज हैं।
तहँ लखे मंडप जाइ मंडित राज श्री सब साज हैं॥
बहु रंग रंगनि के सु बैठक, भाँति भाँतिन सौं लसैं।
अति चित्रतानि विचित्र चहुँ दिसि, मय चरित्रनि कौं हँसैं॥१४॥

मनि रतन जरित जराय बेदी, कलस पूरन जोति हैं।
छवि चंद्र मंडल मैं मनौ, सब नखतमय चहुँ ओर हैं॥
तहँ सकल मोद सुगंध मह मह, भ्रमर मत्त उमेद हैं।
जहँ नारदादि अनेग मुनिगन, करत बेद निषेद हैं॥१५॥

चौबोला

चरन पखारि रतन चौकिन मैं, सब राजन बैठारे।
जल भारिन कचन की जित कित, परे सरस पनवारे॥
छप्पन भोग छतीसौ व्यंजन, सबनि सबै बिधि भावैं।
सुर मुनि नृपनि सहित दसरथ कौं, नारि गारि सब गावैं॥१६॥

गारी, राग मंगल

राम तिहारी माया लंगर, निपट निलज हम जानी।
तीनहुँ लोक परस्पर बिलसत, अति जोबन गरबानी॥
चतुर बड़े चतुरानन कहिअैं, तिनकी सुमति भुलानी।
लाज कानि मरजाद सकल तजि, तिन धी सौं रति मानी॥
जोगी बड़े सदा सिव कहिअैं, बिरह-बाय तिन लागी।
भटकत नगन निपट बिनु लाजहि, तिय अरधंग सुहागी॥
सुर-पति बड़े ब्रह्म रिषि के घर, अंग सहस भग पाए।
पारासर ते तप बल आगर क्योटिन लखि ललचाए॥

---

१४. मय : दानव, एक बड़ा शिल्पी, मंदोदरी के पिता।
१५. कोति : कोद, दिशा।
१६. पनवारे : बड़े-बड़े पत्तल।

जानि अंगिरा शृंगी रिषि दै, भए फजीहति जासौं।
दानव देव भेव नहिं पाए, हारि रहे सब तासौं॥
धरि धरि रूप करति अति ऊधम, धरणि-सुता तिन जाई।
दनुज मनुज तिहिं भुगति सिराने, काहू रस न अघाई॥
जाति कुजाति एक नहिं छोड़ी, भई सबन की प्यारी।
काहि काहि नहि तजी निलज करि, चारि चारि दिन यारी॥
ऐसी निपटि जुठेलि जुगन की, यह कासौं, हित पाली।
दसरथ कहा जानि तिहिं अब सो, घर घालिन घरघाली॥
है अब लाल लाज सब तुमहीं, कहती नात बिसेखैं।
सोई करहु कुंवर रघुवर हो, ज्यौं न और मुख देखैं॥
गावैं सब रस गारि रसीली, सुनि रघुबर सलजाने।
तन मन रीझि भूप सब हरषे, जन गोपाल बखाने॥१७॥

दोहा

आए नृप जनवास मैं, करि कै सब ज्यौनार।
सीता जू कौं सुंदरी, लगीं छुड़ावन खार॥१८॥

घनाक्षर

कुंकुम जवादि संग, उबटनु कै कै अंग। अंगना सुहाई मिलि गान सुभ गावतीं।
अमल सुगंध जल कोमल कमल कर। मानहु कमल-मुखी कमला न्हवावतीं॥
एकैं मुसक्यातीं रसमाती सरसाती नेह। नवल सनेह ताकि आगम जनावतीं।
बरनिबरनिरूपराघवकिसोरजूकी।जनककिसोरिअंकिसोरीवौ रिझावतीं॥१९॥

---

१७. धी : पुत्री। सहस भग : सहस्र स्त्री योनि। क्योटिन : मल्लाहिन। धरणि-सुता : सीता। रस न अघाई : रस से तृप्त न होना। जुठेलि : जूठी।

१८. ज्यौनार : भोजन। खार : उबटन का मैल।

१९. कुंकुम : केशर। जवादि : जव। किसोरीवौ : किशोरियां। उबटनु : शरीर पर मलने के लिए पिसी हुई सरसों, तिल, आटा चिरौंजी आदि का लेप। उद्वर्त्तन (सं० श०)।

गीतिका

सब नारि जनक कुमारि अंग, सिंगार रूप निहारहीं।
सुभ सोभ अद्भुत निरखि सुंदरि, सकल उपमा वारहीं॥
बहुँ भाँति तप विधु साधि, पय-निधि, बदन-दुति तें दुति धरें।
अलकावली झक तिमिरमय तें, तरनि आतप विधि करें॥२०॥

लहि दंत चमकन चंचला, नव नील मेघहि में दुरी।
तन गंध सकल सुगंध लै, गति गंधवाहनि माधुरी॥
जिन चाहि चरन सुरंग कोमल, कमल कछु कछु छवि लहैं।
तिहुँ लोक पूरन प्रभा जिनकी, जात कासों दुति कहैं॥२१॥

घनाक्षर

खंजन कुरंग मीन दिन दिन दीनता लै। डोलत वियोग भरे कोकिलन कोक हैं।
चातिक चकोर मोर सोर कै मरत पचि। मनि ह्वै कठोर घने घाय घन कौ सहैं॥
कहत गोपाल कलानिधि से कला विहीन। मानसर हंसन कौ मान मद ना रहैं।
देखि देखि जानकी सरूप कौ सरूप जात। जातरूप आपरूपजातवेदमैदहैं॥२२॥

सोरठा

इहि अंतर नृपराज, चारिहुँ दूलह सहित लै॥
आये सहित समाज, बनि बनि मंडप मै तहाँ॥२३॥

राग सारंग चौबोला

जबै बनि मंडप माँह सिधाए।
दसरथ निरखि सोभ कुँवरन की, अति तन मन हरषाये॥
कुसमित पाग कुसेसय मुख पर, निरखि सबनि मन भाये।
मानहु प्रात पतंग प्रगट ह्वै, जलज जगावन आये॥
बागे पीत लसत सब हिन के, कनक रथन पर सोहैं।
मानहु धरि धरि देह धरनि मै, नखत इंदु मनि सोहैं॥

---

२१. दुरि : छिपी।
२२. जातरूप : सोना। आप रूप : अपना रूप। जातवेद : अग्नि।

बाजत विविधि बाजने दुहुँ दिसि, मनहुँ रसनि घन गाजैं।
दुहुँ दिसि पढ़त बंदि बिरदावलि, दुहुँ दिसि मंगल साजैं।।
चारि बरात, चारिहुं दूलह, चारु सरूप सुहाने।
निरखे आइ विचित्र मंडपनि, सरस विताने ताने।।
जितकित भूमि रहे मनि झालरि, अरु झलकैं गज मोती।
मानहु इंदु बदन अवलोकत, अमल जोति निजु मोती।।
मनिमय अजिर अनूप भूप को, ता मधि लसत सुहायो।
जगमगि रही जंबुनद बेदी, ता पर कलस धरायो।।
बिच बिच विविधि वृक्ष स्वनर्नन के विद्रुप लतिकनि राजैं।
फलि फलि रहे विविधि मनि फल तें, नील मनिन अलि छाजैं।।
तिन तर चित्र विचित्र बैठकैं, निरखि सबनि मन भावैं।
सोहैं चौक चारु गज मोतिन, बरनि काहि कहि आवैं।।
जनक राज सब राजन लै करि, विधि जुत लै बैठावैं।
हरषत जन गोपाल निरखि कै, जुवतिन मंगल गावैं।।२४।।

द्रुमिला

पुर नारि सबै मिथिलाधिप की, बर देखि सबै सुख पावति हैं।
ठगि सी रहि ठौरनि ठौर घनी, मुख चाहि घनी मुसक्यावति हैं।।
किलकैं पुलकैं चपला-सी सबै, बनिता बनि भूषण भावति हैं।
कल कोमल कोकिल कंठनि सौं, जितहीं कित मंगल गावति हैं।।२५।।

दोहा

ब्रह्मा ब्रह्मा-सूनु सब, सब सुरजुत सुर-राज।
भू-देवक नर-देव जुत, अद्भुत सोभ समाज।।२६।।

---

२४. कुसेसय : कमल। पतंग : सूर्य। जलज : कमल। अजिर : आँगन। जंबुनद : सोना। बिद्रुप : मूँगा।
२६. ब्रह्मासूनु : ब्रह्मा के पुत्र नारद।

छप्पै

भृंगी रिषि कौसिक सु व्यास, नादर भृगु जानौ।
च्यमन कम्बु मैत्रेय गर्ग, गौतम पहिचानौ॥
बालमीक दुर्वास मारकंडे, अगस्ति जहँ।
भरद्वाज पोलस्ति अत्रि, दालभ्य आदि तहँ॥
उच्चरत वेद मंडप सकल, जातवेद-मुख समिध हुत।
रवि बंस सकल विहँसति निरखि, सोहत दुलह चारि जुत॥२७॥

मदन

वेद मंत्र वसिष्ठ उच्चरि, सकल अर्चन कै सु।
सतानंद समेत पढ़ि, स्वस्तेन अर्घहि दै सु॥
चौक चारिहुँ कुँवर बैठत, सोभ कहि नहि जाइ।
गौरि और गणेश विधि जुत, सकल भाँति पुजाइ॥२८॥

घनाक्षर

जेते सब रतन निबेरे रतनागर के। तेते सब भूषन जरायन सु धारे हैं।
केते रंग रंग मनि जोतिन के जाल माल। मोतिन के हार हेरि तारे दूखि डारे हैं॥
नील पीत हरित सु रंगनि विचित्र बास। सकल सुबासिन तें भँवर बिहारे हैं।
चढ़त चढ़ाव जानकी (जु) के सरणअंग। अंगअंग रूप पर रूप सब वारे हैं॥२९॥

दोहा

कुँवरि अरघ दै सुंदरी, चौक चारु बैठारि।
मंडप मैं पट ओट कहि, जुरि आई सब नारि॥३०॥

ब्रह्मा ब्रह्मा-सुत सहित, रचि रचि बेद विधान।
पानि ग्रहन के करत हीं, बाजे देव निसान॥३१॥

---

२७. उच्चरत : उद्धृत करना। समिध हुत : समिधा की आहुति।
२८. सतानंद : गौतम ऋषि के पुत्र, जो राजा जनक के पुरोहित थे।
२९. निबेरे : निकाले हुए। रतनागर : रत्नाकर। दूखि डारे : दूषित कर दिया है। सुबासिन : सगोत्री स्त्री। चढ़ाव : चढ़ावा।
३०. अरघ : अर्घ्य। पटओट : वस्त्र की आड़। जुरि आई : एकत्रित हो गई, जुट गई।
३१. पानिग्रहन : पाणिग्रहण, ब्याह।

सवैया

जानकि राम के लै विधि पानि, विधान तें सुंदरता सरस्यौ है।
मोहि रहे नर नारि विलोकत, सो सुषमा सब जीव लस्यौ है॥
ता छिन की छबि क्यौं कहि जात न, नेह गोपाल हिये हुलस्यौ है।
नील सरोज के ऊपर मानहु, हेम सरोजहि सौं विगस्यौ है॥३२॥

दोहा

जनकराज रानिन सहित, जोरि सु गाँठि विधान॥
चारिहुं पाँइं पखारि कै दीन्हे कन्या दान॥३३॥

गीतिका

नृप देत दायज हेम मनिगन, रतन कोटिन मान हैं।
दिय दास दासी सहज सहसनि, बसन भीन वितान हैं॥
गजराज रथ धनु बान कवचैं, चौंर छत्र सु बाजि हैं।
बहु भाँति बैठक रतन चौकी, सकल राज समाज हैं॥३४॥

मिथिलाहि की बर नारि पाँइं पखारि दायज दै सबैं।
उठि गईं सोकित महल रानी, जनक सोकित ह्वै सबै॥
कर जोरि कै नृप राज बिनये, यह न कछु प्रभु जोगु है।
तिहुँ लोक भूरि विभूति जिनकी, तिनहि किय कृत लोग हैं॥३५॥

घनाक्षर

मंडप मैं बैठे राजमंडल बिराजमान। मानौ विधु मंडल मैं सोभा रति काम की।
माधुरी लसनि, मधुराधर हँसनि चाहि। बिहँसैं बिलोकिपुर बाम बाम की॥
वारैं सब तन मन, मानस मुनिनगन। बरनैं गोपाल कौन प्रेम अति माम की।
नवलकिसोरतैसीनवलकिसोरीभोरि।सबनिकीचोरीचित्तजोरीसीतारामकी॥३६॥

---

३२. पानि : हाथ।
३४. दायज : दहेज, भेंट। भीन : सुगंधित।
३५. जोगु : योग्य।
३६. माम : ममता।

गीतिका

सिर मौर राजत जानकी, सिर मौर सुर-सिरताज कैं।
सुख कंद श्री मुख चंद सुंदर, आनंद राज कैं॥
चहुं ओर सुर नर नाग किन्नर, राम छवि लखि लोभ हीं।
नृप-राज सकल मुनिंद्र-मंडल, मंडि मंडप सोभहीं॥३७॥

जिन रूप रंगन रेख है, तिन रूप रंगन रंगियौ।
इमि आदि श्रीपति श्री लिए, नर वेष करि व्याहत सियौ॥
जिन नेत नेतन निगम गावत, नारि गारिन गावहीं।
तिहुं लोक पूजत जासु पद, मुनि कलस ताहि पुजावहीं॥३८॥

चंचरी

जै जै रघुकुल किसोर, सुरनर हित चितनि चोर।
सुंदर सिर धरें मौर, मंडप मधि राजैं॥
नव घन मन हरन स्याम, सीता दुति तड़ित धाम।
मानहु रति सहित काम, राम अमित भ्राजें॥
चुनरी चुहि चुहित रंग, झलकति दुति गोर अंग।
जोरी पट पीत संग, गोरी गठ जोरें॥
सुंदर सिर धरे मौर, जद्यपि सुर सीस सौर।
छवि को नहिं और ठौर, कहियें किहि मोरें॥३९॥

उचरें दुहुं ओर गोत, दोऊ कुल सम उदोत।
मंगल बहु भांति होत, बेदनि विधि जैसे॥
पानिग्रहन भांति भयो, भांवरि सुभ सात भयो।
सोच—तिमिर नास गयो, रवि कुल रवि तैसे॥
बाजत बाजन अपार, राजत दसरथ कुमार।
बरपत सुत सुमन धार, मंडप छवि छायो॥
रामचंद्र चन्द्र ओर, लोचन पुरजन चकोर।
चितत गोपाल चरण, चारिहु पद पायो॥४०॥

छप्पै

सकल ब्याह विधि साधि, सकल कुल कर्म धर्म करि।
देइ सुआसिन अरघ, लई मंदिर विनोद भरि॥
देस रीति कुल रीति जौन, तिन्ह भांतिन्ह ठानी।
जोरी जुगल किसोर देखि, मोहित सब रानी॥
दुहुँ खोलि गांठ ज्यौंनार करि, अनुजनि जुत हरषावहीं।
आये जु राम नृप पास लखि, बंदीजन बिरदावहीं॥४१॥

त्रोटक

इहि भांति महा सुख सिंधु बढ़्यो।
सब के सब हीं चित चाप चढ़्यो॥
बहु चारण मागध बंदिजनौ।
बगसे तिनकौं सजि साज घनें॥४२॥

बिरदावलि कोटिन कोटि पढ़ें।
गजराज बड़े कविराज चढ़ें॥
हय हेम जराय के साजन सौं।
कर जोरि समर्पत लाजन सौं॥४३॥

दोहा

बगसे जे जे साज सौं, सुबरन सुबरन रूप।
ऐसे लसत दिमाक तें, मनहुं कहूं के भूप॥४४॥

घनाक्षर

पारावार पारावार परत पुकार दैन। दान कौ अपार जग जाचक बुलायो है।
दिग दिग दीप दीप देस देस अवनीप। पुर पुरहूत हू कौं सब्र पहिरायो है॥
साजि साजि भूषन जरायन के लाख लाख। भनत गोपाल देत रीझ मन भायो है।
राजा दसरथ्थ जू के दान को विधान देखि। संकत सुमेर औ कुबेर बिततायो है॥४५॥

---

४५. पारावार: समुद्र। पारावार: आरपार। पुरहूत: इंद्र।

जेते गिरि मेरु सिंधु भूतल रसातल लौं। लागत कितेक कहौं कूरम के पिष्ट कौं।
प्रबल प्रचंड मारतंड कौं केतक तम। पावक कितेक मान बराबर वृष्टि कौं॥
पातक कितेक अंग गंग के लगे तरंग। केतक विचार विधि रचिवे की सृष्टि कौं।
ऐसें यह केतक उदारता गोपाल भनो। केतक दरिद्र दाप राम के सु दृष्टिकौं॥४६॥

गीतिका

मिथिलेस राज समाज सब, गज बाजि रथ पहिराइयो।
बहु भाँति भूषन जोति जगमग, रंग बसन सुहाइयो॥
पुर अवधि के नर नारि जितने, सबन पूरे आस हैं।
नर, देव, मुनि, गोपाल बरनें, राम ब्याह विलास हैं॥४७॥

दीपकल छंद

सब देखि ब्याह सुख अवधि राज।
मिथिलेस लसैं अपने समाज॥
तब कहैं विनय-जुत हँसि नृपाल।
अब करहु बिदा किन राम लाल॥४८॥

सुनि विनय जनक अति ह्वै अधीन।
रज तैं जु आपु गिरि मोहि कीन॥
अब और कछू कहने न काज।
निजु कुंवरि चारि हूं की सु लाज॥४९॥

विदोहा

दसरथ प्रनपति कै घनै, जनक बिदाहिं करे।
सिया सुखासन साज तें, करुणा सिंधु भरे॥५०॥

---

४६. कूरम : कछुआ। पिष्ट : पीठ। पातक : पाप। गंग : गंगा।
५०. प्रनपति : प्रणति, विनय।

करखा

जनक पुर सकल जन, विकल नर नारि मन। राज रवनीन सिय कंठ लागी जबै।
चूमती करन सों, चारु अरविंद मुख। बैन कहती न कहि, नैन जलदित सबै॥
सीख दै दै घनी, सौंपि सब परिजनी। चलत ही मिलत फिरि, बहुरि मिलि हैं कबै।
रतन मनि जरित, गज दंत सुख पाल चढ़ि। जानकी रामगोपालदुहुँदिसिफबै॥५१॥

घनाक्षर

सोहत जराय मनि मुकुट मनोहर हैं। हेरति हरिन-नैनी आनंद के कंद को।
कुंडल जराय गंड, मानो बिंबि मारतंड। कंठ मनिमाल जोति जागे जग वद कौ॥
कनक जराय पानि राजत विचित्र और। उपमा लजात कौसलेस जू के नंद कौ।
चारु मुख सुषमा पियूष पान करिबे कौं। चाहत चकोर नैन रामचंद चंद कौ॥५२॥

छप्पै

श्री दसरथ नृप राज जनक, अति आनंद बाढ़े।
मिलि मिलि सकल समाज, जहाँ कोइ हुते जु ठाढ़े॥
राज लोग सब ले जु पुरहि, मिथिलाधिप आए।
हय गज रथनि समूह, चलत मग जात न पाए॥
गोपाल राम हरषत निरखि, चले सकल दलि दंद हैं।
खलभल बरात हलबल मचिय, रोके मग भृगु नंद हैं॥५३॥

दोहा

अद्भुत लीला सब रचे, हैं अति अद्भुत आप।
अद्भुत गति गोपाल भनि, अद्भुत राम प्रताप॥५४॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां श्री राम विवाह वर्णनोनाम द्वादसोध्यायः॥१२॥

---

५१. परिजनि : परिवार के लोग।
५२. कंकन : कंगन। पियूष : अमृत।
५३. भृगु-नंद : परशुराम।

परशुराम-श्रीराम संवाद

१२

दोहा

उत बिलखत सब जनक पुर, इत हरषित दसरथ्थ।
गह गह बाजन रहि गये, भृगु पति रोके रथ्थ ॥१॥
भृगुनंदन रघुनंद को, प्रगटत सब संवाद।
सूरन को सच होत हैं, सुनें वीर रस स्वाद ॥२॥

चंद्रमनि छंद

तोरि कोदंड चंडीस को, मंडि जस। ब्याहि सिय, सुफल किय जनक मन काम हैं।
जदपि जगदीस, नर रूप लीलाहि तें। परम सानंद, आनंद घन नाम हैं॥
सुभट भट सकल, चतुरंग चमू चारु मधि। लसत रथ चारि दसरथ्थ, सथ्थ साम हैं।
नील घन स्याम, अभिराम छवि धाम अति। बसत गोपाल हियमाँहि, सियरामहैं।॥३॥

त्रोटक

रघुवीर सबै मन मोहत हैं।
सिय संजुत स्यंदन सोहत हैं॥
घन सुंदर स्यामल अंग लसें।
मृदु हास मनो रद विद्यु वसें॥
नव दूलह राम किसोर बने।
दुलही सिय आनंद मोद सने॥४॥

दोहा

सैन सिंधु भूतल बढ़्यो, गाजत दुंदुभि घोर।
भृगु-नंदन कुंभज भयो, कीन्हों धनुक टँकोर ॥५॥

---

१. रहि गए : रुक गए।
३. साम : शस्त्र।
४. विद्यु : विद्युत। सने : सिक्त, सना हुआ। रद : दाँत।
५. कुंभज : समुद्र को पी जाने वाले अगस्त्य ऋषि।

घनाक्षर

धनुक कौ टूट्यो सुनि, धायो प्रसराम वीर। देखि रघुवीर-दल खल भल भयो हैं।
मोचि मोचि मदन मदोनमत्त, पत्त से ह्वं। जत्त कत्त भागे, सत्त छोड़ि पथ्य लयोहैं॥
डारि-डारि अस्त्र, नारि वेष करि सूर चले। भले भले भले भृगु-नंद हांक दयो है।
छोरि छोरि मारौं श्रोन-सरिता बहाइ घने। छत्रिन केछरिबेकौछोनीकोपछायोहैं॥६॥

नाराच

भगे अमत्त मत्त दंति, जत्त कत्त पत्त से।
दिसा दिसानि कौं चले, सुभट्ट भूलि सत्त से॥
महा महा रथी विरथ्थ, जत्त कत्त भज्जियो।
प्रचंड मारतंड वंस कौं, दुजेस सज्जियो॥७॥

दोहा

कोपानल तें प्रज्वलित, रूप लपट विकराल।
कदन कौन कोदंड को, सो उर सलकत साल॥८॥

झूलना छंद

विकट कटकटित, कटि तट सुतुनीर छवि। बच्छ लांछन महा सोभ भ्राजें।
परसु कर चाप अति तिच्छ सायक गहें। मुद्रिका कुसन के स्वच्छ छाजें॥
मेखला मुंज मुनि धर्म सात्विक धरें। कहत गोपाल दुज देव राजें।
मंडि रह्यो कोप तन, भंग कोदंड सुनि। रोस रन रंग, भृगु नंद गाजें॥९॥

---

६. रघुवीर : दशरथ। प्रसराम : परशुराम। खल भल : खलभली, व्याकुल। मोचि मोचि : छोड़कर। मदन : मदं (मद का बहुवचन)। पत्त से ह्वं : पत्ते के समान। जत्त कत्त : जहां कहां। सत्त छोड़ि : सच्चाई छोड़कर। पथ्य : रास्ता। लयो : लिया। अस्त्र : अस्त्र, हथियार। हांक दयो : ललकार दिया। छरिबो : छलना, पछाड़ना, परास्त करना। छोनी : छोणी, भूमि।

७. दती : हाथी। सत्त : सत्व। भज्जियो : भगे। दुजेस : परशुराम। शस्त्र से सज गये। प्रचंड : प्रबल सूर्य वंश पर आक्रमण करने के लिए वीर ब्राह्मणवंशीय परशुराम शस्त्र—सज्ज हो गये। सज्ज : फौज की तैयारी। सज्जियो : शस्त्र से सज गये।

८. कदन : तोड़ने वाला। सो उर सलकत साल : वह कांटा हृदय में पीड़ा दे रहा है।

९. कटकटित : कमर बंद, करधनी, मेखला। कटि तट : कमर में। तुनीर : तूणीर। बच्छ : वक्षस्थल। लांछन : चिह्न (भृगु के लात का)। तिच्छ : तीक्ष्ण। कुसन : कुशोंकी। मेखला : करधनी। मूंज : मूंज।

दोहा

भृगुपति को अवलोकि कै, मग्यो चमू महराइ।
बूभल भग्गुल लोग कौं, भयं अर्थ अकुलाइ ॥१०॥

भूलना छंद

देखि चतुरंग दल मध्य गलवल घनो। घहर भहराइ कहैं भर्थ आछैं।
कौन की संक आदंक ऐसो भयो। भगल सब सैन श्री राम पाछैं॥
हांक दै बीर उत बैन गोपाल कहि। रोकि रहे पथ्थ द्विज देव साछैं।
परम रन बीर तुन्नीर कटि तीर धनु। बीर भृगु-नंद बपु बीर काछैं॥११॥

घनाक्षर

सत्रुघ्नोवाच–

बीर रघुवीर तैं न बीर हम देखे आन। जाके बीर बान लागे बीर बिललात हैं।
जाके धाक धक धक धरकत धराधीस। ईस धनु खंडे सुनि कहत न बात हैं।
बड़े बड़े बड़े बलवंडन के मोरे मुख। को रे हलकोरे जाके संक न सकात हैं।
फूलि फूलि भूलि ऐसे रोस करि राम पर।बाम्हन ह्वै ऐसे कोऊ बातन बतात हैं॥१२॥

दोहा

प्रस्वराम—

देखि भरत सत्रुघ्न कौ, परसराम परचंड।
को खंडक कोदंडकौ, करिहौं भुज सत खंड॥१३॥

---

१०. भग्गुल : भगोड़े।

११. गलबल : हल्लागुल्ला। आछे : अच्छी तरह से। आदंक : आतंक। साछे : साक्षी। बीर : भरत के अर्थ में प्रयुक्त।

१२. बिललात : व्याकुल होना। धाक : रोब, दबदबा। मोरे मुख : मुख मोड़ना, पराजित करना। रोस : क्रोध, आवेश।

झूलना छंद

मंडिहौं आजु रन-रंग परचंड मैं। छंडिहौं धर्म नहि छत्रि याकौ।
डारिहौं आजु महि कमठ के पृष्टि तें। सृष्टि मद मोड़ि करौं पंक वाकौ॥
वालिहौं घटिक मैं राज दसरथ्य कौ। राखिहौं आपनो येक साकौ।
कौन चंडीस कोदंड धनुक खंडन कियो। खंडिहौं आजु भुज-दंड ताकौ॥१४॥

दोहा

उत भृगु-पति अति प्रज्वलित, इत अति रोस भरथ्थ।
निरखि नैन करुना भरे, बिलखित नृप दसरथ्थ॥१५॥

घनाक्षर

राजा वाच—

आयो गलगज्जत, दुजेस बड़वानल सौं। कैसे कोपानल-पारावार पगु धारिहैं।
काल तें कराल कौ, रे रोरत भरथ काहे। जासौं कच्छ छोरिकै यों बारमानी हारिहैं॥
गंजे जिन सर्व बलवंत खंड खंडन के। और या प्रचंड या तें कहत बिचारि हैं।
बोले बिलखाइ, रहैं पछिताइ पछिताइ। हाइ हाइ कैसे राम दुल्लह उबारिहैं॥१६॥

दोहा

हरख बदन, छबि मदन जनु गुन गंभीर सधीर।
देखि दुखित दसरथ्थ कौं, रथ चाले रघुबीर॥१७॥

राम बिलोके राम कौं, राम बिलोके राम।
राम राम अभिराम हैं, द्वै बपु येकै नाम॥१८॥

---

१४. परचंड : प्रचंड। याकौ : एक भी। कमठ : कच्छप। पृष्टि : पृष्ठ, पीठ। पंक वाकौ : उस (पृथ्वी) को कर्दमयुक्त, कीचड़मय कर दूँगा।

१५. बिलखित : बिलखनो, अश्रुपूर्ण होना।

१६. गलगज्जत : गाल फाड़ फाड़कर गरजते हुए। दुजेश : द्विजेश, द्विजों में श्रेष्ठ। कोपानल पारावार : कोपाग्नि-समुद्र। रोरत : उपद्रव करना, उद्धतता दिखाना। उबारिहैं : बचाऊँगा।

१८. राम बिलोके राम कौ : परशुराम ने राम को देखा। राम बिलोके राम : राम ने परशुराम को देखा।

घनाक्षर

देखि देखि रूप रघुनंदन को स्यंदन में। दंद भृगु-नंदन यों मग में बढ़ायो है।
दिन के है थोरे तोरे कैसे कै सरासन कों। कौरि कर कैसे इन चाप को चढ़ायो है॥
चंद्रचूड़ की सौं करें कहत हौं बार-बार। फार-फार करौं फारि भुजन डिढ़ायो हैं।
पी है श्रोन कंठ लागि रघुकुल तिलक को। तौलितौलिकरसौंकुठारहिपढ़ायो हैं॥१९॥

दोहा

गहे भरथ के हाथ हैं, रघुपति आनंद कंद।
देखि बनक बिहँसत महा, दुज कुल पूरन चंद॥२०॥

घनाक्षर

मंद मुख हास प्रसराम ढिग राम आये। कीन्हें परनाम मन काम कर जोरि कै।
आसिषअसेषदुजदीन्हें,"चिर करौ राज।कीन्हौं हौ अकाज मेरौ, हर धनु तोरिकै"॥
"तुमतो जगतईस,हमारे हो जगदीस। छिमाकरि छोड़ो कोप, हमैं निज खोरिकै"।
"सील के समुद्र, सुनि, छुद्र हैंअनुजतेरो।रुद्र कोसौंछोड़िहौंजोजैहौकच्छछोरिकै"॥२१॥

झूलना छंद

लक्ष्मण वाच—

कच्छ को नाम सुनि कोपि लच्छण कहैं। अच्छ भरे अरुन परतच्छ मानो।
आपनो धर्म जो छोड़ि छत्री भजे। तासु वृग जीव, जग-मध्य जानो॥
कीजिअे गर्व नहिं, सर्व थाहौं करो। राखिअे आपनो बीर बानो।
विस्व-उध्धरन रघुवंस-उध्धरन को। धनुक-उध्धरन को धनुक तानो॥२२॥

दोहा

प्रस्वराम—

सुनि प्रचंड भुज-दंड बलु, कोपि उठे भृगु-नंद।
रघुबंसिन के बस हो, करिहौं आजु निकंद॥२३॥

---

१९. दंद : द्वंद्व, झगड़ा। थोरे : थोड़े। कौरि : कोमल। चंद्रचूड़ : शिव। सौं करे : कसम।

२१. खोरि : दोष, अपराध। अनुज तेरे : तुम्हारे छोटे भाई लक्ष्मण। कच्छ:जाँघिया।

२२. अच्छ : आँख। परतच्छ : प्रत्यक्ष। भजै : भागता है। थाहौं : थाह पाना।

२३. निकंद : समाप्त, नष्ट।

घनाक्षर

छत्रिनकेछत्र करि छार किये छिन मध्य। छपे हैं जे छिति मैं, ते छानि छारि डारिहौं।
छोटे छोटे मुख मेरे, बोलत हौं बात फूलि। फर मैं या फरसा मैं गाल गहि फारि हौं॥
राखिहौंनकानि आजु काहू की गोपाल भनि। पुंडरीक झुंड पुंडरीक सौं बिदारिहौं।
रेरेछुद्रछिद्रउर, रुद्रकीसौंटेरि कहौं। श्रोन कें समुद्र तुम्हें बोरि-बोरि मारिहौं॥२४॥

दोहा

भरत—

बालक बालक देखि कें, ऐसे बलकत आप।
क्यों लीजे सिर आपनें, ब्रह्म बध्य के पाप॥२५॥

घनाक्षर

ब्रह्मन कहाइ, कहूं रोरत हौ छत्रिन सों। छोनी के छितीस इन त्रास न छपात हैं।
ऐसे बलवंड महिमंडल मैं येई बड़े। पाए डरवाइ कहें बड़े बड़े बात हैं॥
रावत हैं धर्म, भर्म कढ़ि हैं घरीक मांह। कहत गोपाल, भर्यं अर्थ अनखात हैं।
तोरयौनापिनाक,नाकतोरयौसबभूपनकौ। नाकलोकनाकि रामकीरतिसमातहैं॥२६॥

प्रस्वरामवात्र—

मेरे डर डाग-डाग डोली फिरी बैरी वाम। बामन के छूटतें सुमेर दरकत हैं।
धाइ धाइ धरती मैं रंग रन खेत कर्यौ। भार तें रसातल लौं सेस सरकत हैं॥
ककुभ कुभरि कूक देत वे दिग्गज भजें। कच्छ छोरि छत्री महि दंड अरपत हैं।
कहत फुलाये मूँछ फारे जे मैं फर मध्य। सफर से फरसा के फारे फरकत हैं॥२७॥

---

२४. छार कियो : राख करना। छानि : खोजकर। छारि : जलाना। फूलि : प्रसन्न होकर। फर : रण। कानि : मर्यादा। पुंडरीक : हाथी। पुंडरीक : कमल। बिदारि : विदीर्ण। छिद्र उर : दोषयुक्त हृदय।

२५. बलकत : उबलना, उत्पन्न होना। ब्रह्म बध्य : ब्रह्म हत्या।

२६. अर्थ : व्यंजना भरी बात। अनखात : क्रोध करके। नाक लोक : स्वर्ग लोक। नाकि : लाँघकर।

२७. डाग डाग : पर्वत पर्वत। बैरी वाम : शत्रुओं की स्त्रियां। कुभरि : चिग्घाड़ते हुए। फर : रण। ककुभ : दक्ष की कन्या और धर्म की स्त्री, एक रागिनी विशेष। सफर : मछली।

श्री राम वाच—

करिये न रारि, हारि मानिये हजार बार। बार-बार रोस धाइ करत अकथ्थ के।
पूजियत पाइ गाइ ब्राह्मन को नाइ सिर। हाइ हाइ तिन्हें कैसे हनियत ह्व्य के॥
कहत गोपाल राम रावरे सों जोरि कर। भूलि कहें बालक ये जानत न सथ्थ के।
ए तौ तरकीले हैं, करीले रनरंग हीले। रज के रजीले, रजपूत दसरथ्थ के ॥२८॥

प्रस्वरामवाच—

ऐसे ना बजायो काहू गाल एते काल मोसों। कीन्हें घमसान आसमान हाहाहूत है।
प्रबल प्रचंड बलवंड खंड खंडन के। करे खंड खंड रथ रथी रथ सूत हैं॥
बलकत दूसरे सहस्त्रबाहु कैसे सब। जें हो जमलोक, ताते करौं कवकूत हैं।
ऐसे रजपूत रजपूती की करत हौंस। बाप रजपूत तैसे पूत रजपूत हैं ॥२९॥

राजा वाच—

चार्यो सुत आगें दए दसरथ जोरें कर। कहत हैं बार बार कैयो सौंह खाइ कें।
तुम तो हमारे देव, तारन तरन। अब कें हौं राम(चंद्र) चूक पाऊं बकसाइ कें॥
दहौं सीस ईस की सौं, धनु की कितेक बात। जें से बलि बावन कौं दीन्हें सुख पाइ कें।
महा सुकुमार हियो कोमल कमल हू तें, रावरे ये बैन बान बेधे रघुराइ कें ॥३०॥

प्रसुराम—

खंड खंड खंड करि खंडौं भुज-दंड आजु। छंडिहौं न बेरु मेरो बिरद लजाइगौ।
खेलत सिकार छिति-मंडल मैं छत्रिन कौ। छोना हू न छंडौं, कोप ऐसो अंग छाइगौ॥
हा हा कोटि खाइ, सिर नाइ गहौं पाइ धाइ। तौबो ना बचेहौं रघुबंसी आजु पाइ गौ।
कोमल कमल कंठ कठिन कुठार धार। ससकि ससकि श्रोन पवित अघाइ गौ ॥३१॥

---

२८. रारि : झगड़ा, टंटा। अकथ्य : व्यर्थ। गाइ : गाय। हनियत : हत्या करें। सथ्य : शास्त्र। तरकीले : तड़क जानेवाले, क्रोध करनेवाले। करीले : विकराल। हीले : घुसना, प्रविष्ट होना। रज : रजो गुण।

२९. हाहाहूत : भयपूर्ण कोलाहल, हाहाकार। सूत : सारथी। कवकूत : कौतुक। हौंस : इच्छा।

३०. कैयो : कई। चूक : गलती। बकसाइ : बक्श देना, क्षमा करना। ईस : शिव।

३१. छोना : बच्चा। हा हा : बिनती। तौबो : तब भी। गौ : दाँव, अवसर।

लक्ष्मनोवाच—

ऐसो कहा तुम सें बली न और वसुधा में। बोलत हौ बोल बड़े, भौंहनि मरोरि हौ।
जानत हौ छोटे छोटे बालक डरेंहैं मोंहि। देखें धनु रावरे ये, राख क्यौं चहोरि हौ॥
तुम हौ अवध्य, हम कैसे ब्रह्म बधकरें। क्रोध उपजाइ कै निदान कौन जोरिहौ।
तबहींपतैहैं बलधारीभारी भूतल मैं। सातभरिश्रोन कें समुद्रमाँहि बोरि हौं।।३२॥

प्रस्वराम—

कोपे अति भृगुपति बात अनखात सुनि। कहैं अब नीकें तू फुलाइ मूंछ आपको।
दीन्हें अनुआहि ले चढ़ाइ सुख पाइ बीर। भैयन समेत लै बुलाइ तेर बाप को॥
सुनि कें सपूत दसरथ्थ कें कुमार तीनौ। तम्कि ततकालहि उठान लागे चापकौ।
बरजत रामचंद्र, करिये न दंद। ये तौ नंद जमदग्नि के, पुनीत बड़े जाप को॥३३॥
दंडे मैं अदंड महिमंडल के बलबंड। छंडे मैं कपूत रजपूत ते कहाये हैं।
भरि भरि श्रोन कुंड होमे घनें घनें मुंड। महिमैं मैं मारि श्रोन सरिता बहाये हैं॥
मत्त रु असत्त दंति मारे भोर रन खेत। कर्‌यो घमसान समसान घोर घाये हैं।
आजु ही बुझै है प्यास करसा को नीकें करि। घात पर घनें रघुवंसीघेरिपायेहैं॥३४॥

दोहा

श्रीराम—

ऐसे पुरुष पुरान ह्वै, लगत बालकन संग।
योग यग्य व्रत डारि कै, करत फिरत रन-जंग॥३५॥

जथा

बंस की बिसरिसुधि,साररिचौ छत्रिनसौं। हारि मानिमुनिमानिटरिदीजियतुहैं।
तनगि तनैन ह्वै ह्वै, तानि धनु धावत हो। ऐसे बलबीर हम मारि मींजियतु हैं॥
कहत गोपाल राम रोस भरे बोलत है। भिक्षुक की गारि सिर धारि लीजियतु हैं।
भये हो सपूत रजपूत तप तेज बल। ब्राह्मन ह्वै काटि कंठ श्रोन पीजियतुहैं॥३६॥

---

३२. और : दूसरे। चहोस : सम्हाल कर रखना। निदान : अंततः। पतैहैं : विश्वास करेंगे। सात : सप्त-सागर।

३३. नीकें : भली भाँति। तम्कि : क्रोध करके। जमदग्नि : एक प्राचीन ऋषि जो भृगु के वंशज भार्गव ऋचीक के पुत्र और परशुराम के पिता थे।

३४. अदंड : अदंडनीय। घाये है : मारा है, घाव किया। घात : दाँव, अवसर।

३६. तनगि : क्रोध करके। तनैन : आवेश में, शरीर में तनाव पैदा कर, खड़ा होकर। गारि : गाली।

प्रस्वराम—

सख्यौ सरासन ईस कौं, तोरि भयौ हौ वीर।
अब जं हौ घर आपने, तौ बदिहौं रन धीर ॥३७॥

जथा

प्रस्वराम—

फारि डारौं गाल, मारि डारौं स्यौ अनुज आजु। मेटि डारौं मेदनी उमेद मद दाहुकौ।
दलि डारौं दिग्गज उसालि डारौं सुरपति। करि डारौं प्रलय न राखौं कानि काहुकौ॥
जारौं कोप अग्नि जौ न जायौ जमदग्नि तौन। काके बल बलकत देखौं बल ताहुकौ।
जोई बाहुबल तेरे प्रबल पिनाक खंड्यौ सोई बाहु खंडौं बाहु ज्यौं सहस्राबाहु कौ ॥३८॥

दोहा

श्रीराम—

टारि देत बुज जानि कै, हारि मानि सै बार।
त्यौं त्यौं होत प्रचंड है, देखौ कठिन कुठार ॥३९॥

जथा

फूलि फूलि काहे को फुलावतो रे मूंछ दुज। फरसा कौ फूल गहि याही फर फारतौ।
डारतौ उखारि मेरु मारतौ मरदि सब। कोपानल ज्वाल मैं जहान गहि जारतौ॥
येक करि डारतो समुद्र रुद्र मेटि ग्यारो। बेधि ब्रह्मंड खंड खंडन बिदारतौ।
ब्रह्मन बिचारि छोड़ि देत दसरथ्थ कौ सौं। नातौ आजु तोहि डरी डरी करि डारतौ ॥४०॥

छप्पै

इत रघुबीर प्रचंड, उतहि प्रज्वलित प्रस्वधर।
देखि रोस हाहूत हूलि, हलबलित भ्रमित हर॥
सप्त उदधि उच्छलित, मेरु हल्लित आदंकनि।
डुल्लित सुर नर लोक, सर्व्वं थरसल्लित संकनि॥
सटपटित सुभट चटपटित सिय, लटपटित पीठ रघुवंस सुव।
रथि रथ बिरथ्थ थकित थहरि, थर थर थर दसरथ्थ हुव ॥४१॥

---

३८. सहस्राबाहु : हजार भुजाओं वाला हैहयराज।
४०. फूल : स्फुलिंग, चिनगारी। ग्यारो : ग्यारहों रुद्र—अज, एकपाद, अहिब्रध्न, पिनाक, अपराजित, त्र्यंबक, महेश्वर, वृषाकपि, शंभु, हरण, ईश्वर।
४१. हल्लित : प्रकम्पित, हिलना। सल्लित : कष्ट। आदंकनि : आतंकसे। डुल्लित : डोलना। सटपटित : सशंकित। लटपटित : लटपटा जाना। रघुवंस : दशरथ। सुव : पुत्र।

दोहा

प्रस्वराम—

अध की स्वांसा अध रही, ऊरध ऊरध भाइ।
सीता कोमल कंज मुख, देखि गई कुम्हिलाइ ॥४२॥

रोस भरे भहरात हैं, भृगु-नंदन रघुनंद।
छायो व्योम बिवान सुर, निरखि दुहूंनि को दंद ॥४३॥

घनाक्षर

दोऊ थहराने भहराने घहराने घोर। जोर भयो रोर दुहूं ओर तें प्रचंड हैं।
हाइ हाइ हाइ सुर लोक खैल भैल भयौ। देखौ देखौ देखौ प्रलै होत नौहूं खंड हैं॥
धाए लै कुठार, न्यान खैंचे रघुबीर बान। एक ही समान जानि भाग्यो मारतंड हैं।
भारी अंधकार भयौ देवन दुहाइ दयो। थहर थहर थहरानो ब्रह्मंड हैं ॥४४॥

दोहा

हर दौरे हर लोक तें, हरि हरि को लखि क्रुध्ध।
होत प्रलै त्रै लोक कों कीन्हें इनके जुध्ध ॥४५॥

घनाक्षर

धाये बेसम्हार आए पंचानन पल मध्य। दोऊ समुझाए हठ एतो करियतु हैं॥
एकं तुम दोऊ, कोऊ और हैं न, काहे कहि। रारि रचि राम राम बृथा लरियतु हैं।
कहत गोपाल सितकंठ सौंह दे कं कहैं। डारिऔ हथ्यार, ऐसे रोस भरियतु हैं।
दीजिऔ धनुक धनु धारी धनु धारक को। जीरन धनुक काजै एतो अरियतुहैं ॥४६॥

दोहा

कीन्हें सिव संबोध बहु, अतिहित हेत सुभाइ।
दीनें धनु रघुनंद को, प्रस्वराम हरषाइ ॥४७॥

---

४३. भहराना : टूट पड़ना, भिड़ जाना। दंद : द्वंद्व, संघर्ष।

४४. नौ हूं खंड : पृथ्वी के नव खंडों—इलावृत्ति, रम्यक, हिरण्यमय, कुरुहरि, भारत, केतुमाल, भद्राश्व, किंपुरुष, कुश। कुठार : कुल्हाड़ी, परशु, फरसा। न्यान : अल्प वयस्क, थोड़ी उम्र।

४६. पंचानन : शिव। लरियतु है : लड़ते हैं। सितकंठ : शितकंठ, शिव। रोस भरियतु हैं : क्रोध से युक्त।

४७. संबोध : समझाया।

सीता जू कं भ्रम बढ़यो, सुनि हर को धनु (बैन)।
सोचत अधमुख छवि लसें, सलज जलज से नैन ॥४८॥

घनाक्षर

सीता—

आयो है कहाँ ते यह बाह्मन निगोड़ो। जैसे कोपन कंपत प्रलै काल की लहरि हैं।
जानत हुतें इहैं प्रचंड महिमंडल मैं। एते मान निदरे, तो अब क्यों निदरि हैं॥
मारतंड तिलकहि चाहत तिलक दयो। चापहि चढ़ाइ टूक चारिक जो करिहैं।
यह धनु तोरि कं तौअबहीं बरीहैमोहि। यहधनुतोरि कसी कन्यका कों बरि हैं॥४९॥

दोहा

येक नाम अभिराम हैं, एक विस्नु विधि जुक्त।
राम हते निज ज्ञान कों, राम हते निज मुक्त॥५०॥

घनाक्षर

उन मेट्यो ज्ञान,इन मुकति विधान मेट्यो। कीन्हें ये प्रनाम वे सु भाषे सुख पाइ कें।
दीन्हें भृगु-नंद धनु, लीन्हें रघुनंदन जू। करी जय जीत, हनी अरिन अघाइ कें॥
कहत गोपाल जै जै कार तीनों लोक भयो। बरषैं सुमन सुर सुजस सुनाइ कें।
चार्योदल दुल्हविचित्रचारिदुलहीलें चले राम राइ दीह दुंदुभी बजाइकें॥५१॥

दोहा

भृगुपति रघुपति सों भयो, बिरसनि सरस मिलाप।
परिपूरन गोपाल भनि त्रिभुवन रामप्रताप॥५२॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल
विरचितायां प्रस्वराम—श्रीराम संवाद
वर्णनोनाम त्रिदसमोध्याय: ॥१३॥

---

४९. निगोड़ो : निगोड़ा, जिसके आगे पीछे कोई न हो, अभागा। निदरे : निरादर किया, मात किया।

५० राम हते निज ज्ञान कों : परशुराम ने अपने ज्ञान की हत्या की। राम हते निज मुक्त : राम ने मुक्ति की हत्या कर दी।

राम-विवाह-विलास

१४

दोहा

चहूं ओर अगनित महा, बाजैं जौति निसान।
आगे लेन बरात उत, पहुंचि गए अगवान ॥१॥

गीतिका

जहँ दीह दुंदुभि बजत कोटिन, गजत घन ज्यौं घटा।
बहु बर्न बर्न पताख स्यंदन, चलत चहुँ दिसि ज्यौं छटा॥
नव नील नीरद स्याम तन, अभिराम राम विराजहीं।
रति संग मनसिज रंग जनु, रथ मध्य यों छवि छाजहीं ॥२॥
किधौं संग श्रीपति श्री लिये, सुख सिंधु, तैं निकसे भले।
इहि भांति दूलह राम राजत, मान भृगुपति के मले॥
अवधेस पट्टन निकट पहुँचत, जय सु बज्जन बज्जियो।
उत सुंदरी नव साज सौं, घर घरनि मंगल सज्जियो ॥३॥

घनाक्षर

महल महल ठाढ़ी गावती मधुर सुर। सारी जरतारी, उत मोतिन के हार हैं।
बरनै बिलोकि गज-बृंद के कलिंद बिद्य। बाढ़े गंध मादन तें उन्नत अपार हैं॥
बंदन चढ़ाए भुंड धावत अमारिन सौं। रते पीरे घजनी तें सोहत सिंगार हैं।
जलद के जाये कैधौं दामिनी खेलाये ऐसे। आइ गए बारन बरात के अगार हैं ॥४॥

पाठान्तर—१. जौति निशान : देव निशान (१, २)

---

१. अगवान : अग+वान : अगवान, अगवानी या अभ्यर्थना करनेवाले। विवाह में कन्या पक्ष के लोग जो आगे बढ़कर बारात का स्वागत करते हैं।

२. दीह—दीर्घ। नीरद : बादल। मनसिज : कामदेव।

३. सु बज्जन : सुंदर वाद्य, मांगलिक वाद्य। पट्टन : नगर, अयोध्या।

४. गंधमादन : एक पुराण वर्णित पर्वत जिसकी स्थिति इलावृत्त और भद्राश्वखंड के बीच बतायी गयी है। उस पर्वत पर लगा हुआ सुगंधित वृक्षों का मनोरम जंगल; भौंरा। बंदन : रोली। अमारिन : हाथी का हौदा। जाये : पुत्र। बारन : हाथी।

फहरैं पताका रथ लहरैं जलधि कैसे। गाजत नगारे गजराज गिरि—गन हैं।
चमकैं मनिन जोति, मैनका सी चहुँ कोति। नाचतीं मुदित, गावैं फूली तन मन हैं।।
आगर सकल रतनागर से नागर हैं। सागर समर जयकारी राज-जन हैं।
हय दल मय, बहु चंचल चपलमय। गय मय गाजैं मानौ पावस के घन हैं।।५।।

दोहा

हलबल आनंद की मची, अवधपुरी चहुं ओर।
अभिलाषन हरखैं सबै, निरखन राम किसोर।।६।।

घनाक्षर

आवत बरात सुनि मातन उराव उर। रावर सकल पुरनारि बिततानी हैं।
साजती सिंगार कोऊ मंगल कलस धार। एकनि सरूप चाहि एकै अनखानी हैं।।
केती चढ़ी महल महल जोवैं जित कित। जलधि तरंग से पलाखे पहिचानी हैं।
दुंदुभी धुकारन की धरनी धमक लागैं। धुकि धुकि मोतिन को पूरें चौक रानीहैं।।७।।

गीतिका

लखि अवधि पुर रघुनाथ की, कछु गाथ बरनिन जात हैं।
बनि साज सब नृप राज मंदिर, साजती मिलि मात हैं।।
बहुमहल महलनि चहल पहलनि, टहल लागी बाम हैं।
करि बसन भूषन वे सम्हारैं, गाइ दूलह राम हैं।।८।।
रचि चौक चार बिचार कंकन, जूप आदिक साजु हैं।
सुनि निकट आये जानि बितती, तरुन रूप समाजु हैं।।
उत नगर बगरन भीर मात न, पौरि खोरिन खोरि हैं।
तकि ठौर ठौर विचित्र तोरन, मलय सींचे घोरि हैं।।९।।
जहँ जाल कुसमनि के रचे, खचि सुमन गंध वितान हैं।
घनसार केसरि वारि घट भरि, धरे सकल विधान हैं।।
बहु साजि गज रथ बाज पुर जन, मिले घिरि चहुँ ओर हैं।
मुख रामचंद्र विलोकि वै, गोपाल नैन चकोर हैं।।१०।।

पाठान्तर—११. सोभा बनै न बखानी, सोभा परै न बखानी (१, २)।

---

१०. जाल : झुंड, समूह।

भुजंगप्रयात

सबैं राज सोभा,, बनं न बखानी।
तिहूँ लोक मोहै, महारंग ठानी॥
भरी भीर भारी, चहू ओर धा की।
कहै कौन कासौं, सुनै कौन काकी॥११॥
जहाँ बाजनैं कोटिकौ वृंद बाजैं।
नचैं कोटिकौ कोटिकौ स्वांग साजैं॥
ढरैं चौंर चौरी, गहे छत्र केते।
लखैं राम गोपाल, भूपाल जेते॥१२॥

छप्पै

पुर प्रवेश रघुनाथ करत, मुनि मंगल साजैं।
गह गह गहब निसान, सकल गज बाजन बाजैं॥
चारन मागध सूत, विरद बंदीजन बोलैं।
मानहु काम बसंत, विहग कलरवनि कलोलैं॥
गोपाल सकल सोभाहि लखि, तन मन सुर नर मोहहीं।
नृप राज समाजन मैं बने, चारिहुं दुलह सोहहीं॥१३॥

द्रुमिला

सजि मंगलचार चली पुर चारि, बिलोकन राम सिया दुलही।
भरि ही अभिलाष रही जितनी, तितनी सुख नैननि लाहु लही॥
कर अच्छत माल गोपाल लिये, बहु राज-बधू रघु के कुलही।
जनु जान बसंत समै कनकाचल, हेम लता सब है उलही॥१४॥

भुजंगप्रयात

सबैं राज रानी, सबैं साज साजैं।
सबैं अंग सोभा, अलंकार राजै॥
सबैं पद्मिनी, चित्रिनी रूप सोहैं।
सबै मोहिनी सी, महा मोह मोहैं॥१५॥

---

१४. लाहु : लाभ। कनकाचल : कनक का पहाड़।

१५. पद्मिनी—कोक शास्त्र के अनुसार स्त्रियों की चार जातियों में सर्वोत्तम जाति जिनके शरीर से कमल की गंध आती है। चित्रिनी : काम शास्त्र में वर्णित चार भेदों में से एक।

करे गान नाना विधं प्रम फूली।
लखें राम गोपाल, सोभा वितूली॥
चलै हंसिनी सी, हँसें मंद मेलें।
छरीदार चौहूँ दिसा भीर ठेलें॥१६॥

ढरें चौर नाना विधें चौहुँ ओरें।
सुगंधी घनं मोद गंधं झकोरें।
घनं छत्रधारी घने छत्र धारें।
घनं सीपजं युक्त लाजानि मारें॥१७॥

दोहा

सोभा सिंधु अगाध की लहि न सकत श्रुति ईस।
सुर कुल हित रघुकुल भए, प्रकट राम जगदीश॥१८॥

घनाक्षर

आवत अवधि पुर राजन समाज साजि। साजि सुर-राज, रिषि-राज हरषाये हैं।
लागे हैं टहल सब, चहल पहल माचे। राचे है गोपाल राम रंगनि अघाये हैं॥
पूरन प्रताप प्रभाकर तें सहस कर। वारि अनुकंपन तें बारिद उपाये हैं।
भूलि-भूलि सुखनि वितूलि उर फूलि फूलि। फूलनि के देवगन बरषालगायेहैं॥१९॥

द्रुमिला

लखि हूलि परी पुर आनंद की, उर आनंद मात न मात हिये।
तिय सीस धरे कलसं प्रति दीपक, मंगल थाल गोपाल लिये॥
जित हीं कित गावंहि राज बधू, कल कोकिल कंठनि प्रेम पिये।
सजि भूषण अंग जरायन की, सब सुंदरि रूप सिंगार किये॥२०॥

दोहा

चारिहुँ रंग सुखासनें, परछन करी सु मात।
चारिहुँ दूलह दूलहिनी, निरखी जिय हरषात॥२१॥

---

१७. लाजानि : धान का लावा, खील।
१९. उपाये : उत्पन्न किये।

द्रुमिला

दुलही चहुँ चाहि रही चकि सी, चकचौंधि सरूप की रासि बढ़ी।
गज-दंत सुरंग सुखासन मैं, सब ही बिधि सौं बिधना की गढ़ी॥
अवलोकि सबै पुरनारि छकीं, परछैं छबि सौं चितचाव चढ़ी।
रचि मंगलचार गोपाल धनी, सिय रामहि बाम असीस पढ़ी॥२२॥

दोहा

पुलकि अंग मुख जोवती, कौसिल्यादिक नारि।
भूषन रतन जराय की, दीन्ही करि मनुहारि॥२३॥

सिंघ पौरि रघुनाथ जू, उतरे अनुजनि साथ।
बाजैं देव निसान हैं, रवि-कुल करैं सनाथ॥२४॥

द्रुमिला

गज दंत विचित्र सुखासन मैं, रघुनाथ सिया सिर मौर धरैं।
चहुँ ओर जनी जन साजु लिये, बहु चौंर बड़े गज गाह ढरैं॥
सब खोरि निवास सुबेस बिछे, दुज मंगल बेद रिचा उचरैं।
जुवती जन दै विधि सौं अरघैं, निजु मंदिर माह प्रवेस करैं॥२५॥

दोहा

विस्वामित्र वसिष्ट मुनि, बालमीक भरद्वाज।
नारदादि मंडप लसैं, साजे विधि जुत साज॥२६॥

चारिहुँ रावर में ठये, चारिहुँ दूलह चार।
सियाराम सुखपालगो, कौसिल्या के द्वार॥२७॥

उड़ियाना

कंज बरन मंजु करन, मात चरन लागे।
चूमि बदन मोह सदन, सोच तिमिर भागे॥
सीय दुलहि रोम उलहि, पायन रज लीन्हीं।
रंकहि जिमि श्री विलास, अंकम भरि चीन्हीं॥२८॥

---

२४. सनाथ : कृतार्थ, सफल।

२५. गजगाह : हाथी का झूल। जनी जन : नौकर, नौकरानी। विधि : विधिपूर्वक। रिचा : ऋचा—वेद मंत्र जो पद्यों में हों।

२७. ठये : स्थित हुए। गौ : गाय।

दोहा

परछि जथाविधि चार कें, मड़ये दूलह राम।
निरखि सबै मोहित भई, सिया दुलहिया वाम ।।२९।।

घनाक्षर

एकं कहैं कमला, की कमला कमल मुखी। एकं सब उपमा कों वारि कं वरति हैं।
एकं कहैं सिध्धन की सिध्धता प्रसिध्ध भई। ऐसी कहि सुंदरी अनेग भ्रूगरति हैं।।
एकं चाहि बौरी, एकं लागी हैं ठगोरी। कहि काहु बेन औरी, औरे उकतें भरति हैं।
राजन की रानी रघुरानी पुर नारीमिलि। जानकीसरूपकों निरूपन करत हैं।।३०।।

दोहा

रावर भरि सब अजिर भरि, पुर नारिन की भीर।
देखन कों अकुलाति हैं, जनक कुंवरि रघुबीर।।३१।।

द्रुमिला

वहु भीर ठिली पुर नारिन की, रघुबीर सिया छवि चाहन कों।
जनु रूप समुद्र तरंगनि की तरनी, अँखियाँ अवगाहन कों।।
मिलि गावहिं आपु समाजनि मैं, कल कोकिल कंठ उछाहन कों।
अवलोकि गोपाल कुलाहल तें, सब लेति हैं लोचन लाहन कों।।३२।।

दोहा

पुर-नारी सुर-नारि मिलि, रचतीं मंगलचार।
मानहु तीनहुं लोक कौं, बिहरत मिलि सिंगार।।३३।।

सीता जू की दायजी, दासी अनी जमाति।
तिन तन भूषन रूप गुन, अवधि पुरी न समाति।।३४।।

---

२९. परछि : परछन. विवाह की एक रीति जिसमें स्त्रियाँ द्वार पर वर के आने के समय उसके ऊपर मूसल, बट्टा आदि घुमाती हैं। चार : मंगलचार।

३०. उकतें : उक्ति।

३२. तरनी : नौका। लाहन : लाभ। उछाहन : उत्साह।

३४. दायजी : दहेज में प्राप्त।

सवैया

कंचन थाल गोपाल मनोहर, मोतिन की रचि चौक करी है।
पानि दुहूंनि की मानि लिये हठि, लाख हिये अभिलाष भरी है॥
छूटत कंकन लूटत है, जन रावर कोस कला उघरी है।
सीय जनी, इत औधि जनी, मिलि नारिन गारिन होड़ परी है॥३५॥

गीतिका

वर नारि कंकन-चार मैं, मिलि गावहीं दुहुँ ओर है।
मृदु हास तें परिहास बिलसैं, निरखि राम किसोर है॥
नव कंज कोमल पानि पल्लव, सीय कंकन को गहैं।
तिन सिथिल कौतुक करन उरझैं, छोर जिन ब्रह्म न लहैं॥३६॥
लखि कहत हैं सब जूह जुवती, यह न जानहु ख्याल जू।
जिमि तोरि डारे तनक मैं, वह धनुक नाहिन लाल जू॥
सुनि जानकी पट ओट घूँघट, तकैं नहुं दुति ओर है।
लखि मनहुँ इंदु-कलाहि मोहैं, जुगल नैन चकोर हैं॥३७॥
कछु सिथिल लखि सखि मैथिली, मुरि कहत हैं तजि लाज कौं।
किन लेहि खोलि बुलाइ कहिये, कौसिल्या नृपराज कौं॥
सुनि मद विहँसि मरोरि भौंहनि, खोलि कंकन लेत हीं।
सब हँसी गाइ अघाइ जित कित, अमित कौतुक हेत हीं॥३८॥
अब जनक राज कुमारि डोरन, छोर अंगुरिनि-छोरहूं।
कछु काज हित नहिं लाज गुरु जन, मुखन उत को मोरहूं॥
सुनि डरन डोरन करन गहतें, कहैं उपमा बाल हैं।
लखि मनहु स्याम भुजंग पर, द्वै लता कनक मृनाल हैं॥३९॥
जिनि मात की नहिं नाँउ जानें, तात आधे देह कौं।
अब कौन खोलहिं आइ गाँठि, कहौ जोई नेह कौं॥
यह सुनत श्रवन बिलास हुलसित, उलहि डोरन आइयो॥
छबि देखि जुगल किसोर, जन गोपाल मंगल गाइयो॥४०॥

---

३५. दुहूनि : दोनों पक्ष की।
३७. नहुं : मत।

सोरठा

जूवा जूवा रंग, जुवा जुवा जु खिलावहीं।
बिलसैं मिलि इक संग, हारि जीति की को कहै ॥४१॥

घनाक्षर

बेर बेर पैंत लागै, सोचत कुबेर उर। सागर सकाने हैं उदारता कौ चाहिनैं।
भोरी सी भवानी, भोरानाथ की चलावै कौन। हरवै से लागें मेरु मन को उछाहिनैं।
हास ही के कौतुक मैं इन्द्र अकुलाइ उठे। कहत गोपाल सब सोचैं मन माहिनैं।
कर अरविंद मिले विकच मुखारविंद। सीताराम जू की जूपक्रीड़ाकहिआहिनैं॥४२॥

छप्पै

संपूरन विधि होत, अरघ दै भीतर लीन्हीं।
कोसल-राज-कुमारि, सुफल जग जनमहि चीन्हीं॥
मानि-दानि सनमानि, नेग चारन भरि पाए।
कवि कोविद कोटीन, कोटि कोटिन पहिराए॥
नृपराज भोज करि कै जु सब, ब्रह्मादिक आनंद भरे।
गज बाजि हेम रथ मनि बसन, भू भूषन भूपन करे॥४३॥

दोहा

अति आनंद विनोद सब, बिदा किये पहिराइ।
आप आपने चल गए, रघुबर प्रीति अघाइ॥४४॥

अवघ पुरी नर नारि उर, बढ़े सबै सुख सार।
रंग महल सिय राम जू, प्रति दिन करत बिहार॥४५॥

---

४१. पैंत लागै : पैंतरा लगाना, दाँव लगाना। हरवै : हल्का। मन माहिनैं : मन में। जूप : जूआ।

४२. कोसल राज कुमारि : कौशल्या।

घनाक्षर

सीता जू कौ मन मानसर मैं मराल राम। सीता रूप घन बन राम भए भोर हैं।
सीता दुति सलिल सफर फूले राम फिरैं। सीता नेह गथ राम चित वित चोर हैं ॥
सीता स्वाती बूँद, राम चकित गोपाल भनि। सीता गुण गीता,रामपठनकौंभोरहैं।
सीता-नैन-कंजन मैं गुंजैं भौंररामजू हैं। सीता-मुख-चंदरामलोचनचकोरहैं॥४६॥

कुरंग

अभिनव जल धर सुंदर बयस किसोर।
बिहरति दामिनि भामिनि हित चित चोर ॥४७॥

दोहा

प्रबल भुजा बल तैं दले, सकल बलिन के दाप।
त्रिभुवन जय गोपाल भनि, मंगल राम प्रताप ॥४८॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल
विरचितायां श्री राम-विवाह-विलास
वर्णतोनाम चतुर्दसमोध्यायः ॥१४॥

---

४६. सफर : मछली। गथ : पूँजी। भोर : विभोर।

श्रीराम-विलास

१५

छप्पै

प्रथम जाम श्री राम करत, मंजन रवि बंदन।
दूजे अनुजन सहित करे, भोजन रघुनंदन॥
तीजे बैठि सभाहि मित्र—मंत्रिन मैं राजे।
चौथे महल प्रवेस, जगे नौमत के बाजे॥
स्नान दान ज्योनार करि, सभा मोद मृगया वसें।
गोपाल राम परब्रह्म इमि, नर कौतुक रसहीं रसें॥१॥

भुजंगप्रयात

बड़े भोर चौहूँ दिसा सोर गाजे।
जहाँ के तहाँ सोच लें राज काजे॥
घने दास दासी, घने साजु लीन्हें।
सबै रूप तैं जात ना नैक चीन्हें॥२॥

दोहा

प्रति दिन तीनौं दुलहिया, महलनि ते हरषाइ।
सीतहि मिलि बंदन करे, कौसिल्या के पाँइ॥३॥

बहुरि सुमित्रा केकई, मानि दानि सनमानि।
मंजन भूखन कों करे, प्रति दिन यहई बानि॥४॥

---

१. जाम : याम। नौमत : नोबत।
३. पाँइ : पैर।
४. बानि : आदत।

चंचरी

भोर ह्वीं सिय भोज मंदिर, कै सु मंजन चारु हैं।
बिसद वस्त्र विचित्र भूषन, साजती ज्योनारु हैं॥
कनक मंजन विविध व्यंजन, फूल फल दल कंद हैं।
दारि चारि बरा सु पाचक, मनहुं सारद चंद हैं॥५॥

राम केरि सु तुलसि बासहिं, भ्रमर भीर विनोद हैं॥
राइ भोग रु दूध सारि, कपूर सारि कमोद हैं॥
महेकि महुवरि अमृतगुटिका, कनकजीर उसीर हैं।
हरि सु वल्लभ भोग लक्ष्मी, जानि दोनाजीर हैं॥६॥

अमित सालि सुगंध मह मह, महकि महलन में रहैं।
कढ़ी सात बरी बरीलनि, दसक भाजी विधि कहैं॥
पूर विधि विधि की पुरी, अरु खीर माढ़े खीच हैं।
सरस रोटी ललित लुचुई, पुवनि पुव अध बीच हैं॥७॥

सकल भांतिन की मिठाई, गनै नाहिन और हैं।
छपन भोग, छतीस व्यंजन, बहु सुगंध झकोर हैं॥
बारि शीतल अति सुगंधित, कनक झारिन झारि कै।
रतन चौकी चारु जगमग, धरी पांति सुधारि कै॥८॥

---

५. दारि चारि : चार तरह की दाल। बरा : बड़ा, एक स्वादिष्ट व्यंजन। सुपाचक : सुपाच्य।

६. राम केरि : राम केला, एक प्रकार का बढ़िया केला, एक अच्छे आम की जाति तुलसि बासहि : तुलसी की सुगंध। राइ भोग : राज भोग, एक प्रकार का महीन धान, आम की एक जाति। सारि : सारना, सानना। अमृतगुटिका : अमिरती। कनकजीर : एक प्रकार का महीन चावल। उसीर : खस। दोना : दमनक।

७. सालि : चावल। पूर : पूरन, पुड़ों में भरनेवाला मसाला। खीर : क्षीर, तस्मई। लुचुई : लूची। पुवनि : पूवा। खीच : खिचड़ी।

८. कनक झारिन : पानी परसने का स्वर्ण पात्र। पांति : पंक्ति।

दूत बोलत भूप आए, राम अनुजनि संग लिए।
कै सु मंजन सरस धोती, उचित बैठे रुचि हिए॥
उचित जुत पनवार आए, विविध दोननि साजु हैं।
देव कुसमनि मोदमय, घनसार ससिकर ताजु हैं॥९॥

सबन आगे सकल साजे, भाँति भाँतिनि आवते।
अरपि दसरथ राज भावनि, राम अति रुचि पावते॥
स्वाद बहु बहु सरस षटरस, बहु सुगंध सुबासु हैं।
निरखि परसनि सीय की, सब हरषि हँसती सासु हैं॥१०॥

भरथ बोले आजु लौं, हम यह न रस रुचि सौं लहे।
साध पूरे स्वाद के, सब जनम के फल नृप कहे॥
सबहि सब विधि भये पूरण, अँचे नृप जुत लाल हैं।
पुलकि प्रेमनि पाइयो, पनवार जन गोपाल हैं॥११॥

दोहा

इहि विधि रुचि, ज्यौंनार की, रसना स्वाद अनूप।
देस कोस भूषन बसन, सिय पहिराये भूप॥१२॥

त्रोटक

दिन ही बहुराम विनोद भरें।
सब हीं विधि सौं सब चित्त हरें॥
जिनकी गति कौं न लहैं हर जू।
तिन मंजन पैठि, करें सरजू॥१३॥

तिन संग सखा अभिलाष भरें।
जिन कौ सुर साधि समाधि धरें॥
कबहूं बन सैल हुलासन हैं।
बिहरें बहु रंग बिलासन हैं॥१४॥

---

९. दोननि : दोना, पत्तों से बना हुआ पात्र। मोदमय : सुगंधित। घनसार : कपूर।
११. साध : अभिलाषा, इच्छा।
१४. सैल : सैर, घूमना।

दोहा

रंग महल इक समय करि, बिछे बिछौना चारु।
सिया भया सी सुंदरी, बनि आई शृंगार ॥१५॥

पानडबा बीजनु चँवर, भरि बहु लिये सुगंध।
इक बैठी, ठाढ़ी इकै, इकै गहे कर कंध ॥१६॥

तंबो यंत्र कमाइचै, बीना सुरनि सुहाग।
साजि बजावैं गाल तिय, रहे मोहि षट राग ॥१७॥

रतन सिंघासन पर सिया, सुंदरता सरसाहि।
त्रिभुवन की तरुनी सबै, क्यौं न निछावरि जाहि ॥१८॥

सवैया

रागनि की अनुराग महा, मनि मंदिर छाइ रही इक ताजैं।
आइ भये रघुनाथ अचानक, चाहि सिया उठि आसन साजैं।
हास बिलास गोपाल कला, बहु गीत संगीतनि नृत्य समाजैं।
गंध सुगंध फुहारन तें, अति भौंरनि कौं भननाहट गाजैं ॥१९॥

दोहा

राम रीझि सबहिन दये, गज-मोती मनि-हारु।
ल्याई सखी सुभाइ तें, खेलन चौपरि चारु ॥२०॥

सोरठा

बाँटि लिये सु वती इत हूं, उत दाउ सुदाउ कुदाउ सुधारैं।
लाखन कोटिन बाजिन तें, बनि जीतत हैं कबहूँ हठि हारैं।
माचि गोपाल रही कल कौतुक, हास बिलासहिं रंग मझारैं।
नागरि नारि, बराबरि कै, दुहूं ओरनि तें रस जोरनि पारैं ॥२१॥

---

१६. बीजनु : पंखा।

१७. कमाइचै : सारंगी बजाने की कमानी। षट राग : संगीत के छः राग—भैरव, मलार, श्री राग, हिंडोल, मालकोस और दीपक।

१९. इक ताजैं : मिलकर। भननाहट : गुंजार।

२१. वती : गोट। मझारैं : मध्य में। लाखन : लाख।

दोहा

निसि बासर लीला करें, रंग महल रघुनाथ।
राज-सभा राजान कें, बूझत हैं गुन गाथ ॥२२॥
सिंघपौरि कौ पौरिया, इहि अंतर सिर नाइ।
जाचक दीप दिगत कें, पहुंचि गये सब आइ ॥२३॥
सुनत अवधपति सबनकौं, लीन्हें सभा बुलाइ।
आसिष दें सब सबन कौं, मिलि बैठे हरषाइ ॥२४॥

घनाक्षर

जीव ऐसे कोविद है, कवि से हैं कवि सब। हाहा से गुनी हैं के ते हूहू से सुहाए हैं।
केते बीनधारी से, प्रवीनता कौं किन्नर सें। नर हैं नवीन सुर गानन तें गाए हैं॥
भूपन के भूप सें, दिमाकिन ते जगमग। गुन तें गोपाल सभा सकल रिझाए हैं।
दूरि के हैंवासी,सुनौअवधिविलासीराज। रामललाव्याहकीबधाईलैनआएहैं॥२५॥
ऐसे सुत काके, महाराजा सुनौ दसरथ। समरथ कोटिन के गरबहि गारे हैं।
एक करे खंड खंड, कौंरे भुजदंडन। कोदंड हर चाप, जासौं दसमुख हारे हैं॥
को न छोरे कांछ छिति मंडल के छोनी पति। ऐसे भृगुपति जू के मगज उतारे हैं।
आए देखि लंका, दनु मानत अदका। सुनि रह्यो लंकापति, सोचन के मारे हैं॥२६॥

सबैया

बंस बड़े रघुराज भये, जिन जीति दसौ दिसि जस कराये।
दै सब दान, बची न कछू, तिहि औसर हीं दुज जाँचन आये॥
दीन दसा लखि, जान लगे तब, बोलत भूपहि बोल सुनाये।
कोपि अखंडल मंडल कौं, सर साधत हेम घटा बरषाये॥२७॥

दोहा

उन हूं तें अद्‌भुत कला, को बरनें गुन गाथ।
दरसन तें पावन भए, अवगति गति रघुनाथ ॥२८॥

---

२५. जीव : बृहस्पति। कोविद : विद्वान। कवि से हैं : शुक्राचार्य। हाहा हूहू : दो प्रसिद्ध संगीतज्ञ गंधर्व। किन्नर : एक प्रकार के देव योनि में माने जानेवाले प्राणी जिनका मुख घोड़े के समान होता है, गाने बजाने वाली एक जाति।

२६. गारे : गार देना, विनष्ट कर देना। कौंरे : कोमल। मगज उतारे हैं : अहंकार मिटाना। अदका : दबदबा, आतंक। सुकिरह्यो : सूख जाना, भयभीत होना।

घनाक्षर

बारिध के बारि सें कहै तौ सातौ सात भाँति। सेस सें कहै तौ महा बिष कौनिवासु है।
ससि से कहैं तौ एक सम ना रहत कहूँ। कालिम भर्यो ई कला प्रकट प्रकासु है॥
कहा घनसार, कहा पारद तुषार गार। पंकित मृनाल, कटु मलय सुबासु है।
सबहीं ते सब पर कहत गोपाल देखौ। तीनहूँ भुवन राम कीरति बिलासु है॥२९॥

दोहा

सबन बड़े सनमान तें, उपबन दये निवास।
बिलसैं रुचि रुचि सौं सबै, भोजन बसन सुबास॥३०॥

सोरठा

रावर कौं प्रतिहार, करी अरज ज्योंनार की।
चारिहुँ सहित कुमार, भोजनसाला नृप गए॥३१॥

घनाक्षर

ब्यंजन अनेग विधि महकैं सुगंधनि सौं। लै लै गंधवाह गंध दिगनि बिहार की।
लौने लौने रतन कचोरन मैं भाँति भाँति। कैधौं भरि राखी कामधेनु सुधा धार की॥
रसना अघाति है न काहू की रसनि रुचि। हरषि गोपाल राम पावैं घृतसार की।
बिहँसि परोसि बोलि नंदिनी जनक जू की। आजु की रसोई बधूभरथकुमारकी॥३२॥

दोहा

चतुर ब्यूह जुत नृप अचै, करि खरिचै सुचि पाइ।
सबहिन बोले आजु की, यह रुचि कही न जाइ॥३३॥

---

२९. सेष : शेषनाग। कालिम : कालिमा।

३१. प्रतिहार : प्राचीन काल का एक कर्मचारी जो राजाओं को समाचार आदि सुनाया करता था, अंतःपुर का द्वारपाल।

३२. कचोरन : कटोरन। बधू : मांडवी के अर्थ में प्रयुक्त।

३३. चतुर ब्यूह : चारों भाइयों का समूह। खरिचैं : खरिचा, दाँत खोदने की सींक। सुचि : सुख।

घनाक्षर

लक्षन—

अनिमा की आगरी है, महिमा उजागरी है। लघिमा तें नागरी, सो बेदनि बखानीहै।
ज्ञान गुण गरिमा की गुरुता प्रकासि रह्यो। प्रापती प्रकामता की पूरी ठकुरानी है॥
ईस्वर अनादिता की ईस्वरीकोईस्वताको। बरनी परे न सो गोपाल सुखदानी है।
राखीबिस्ववस्यताकेंआपनीसकति वर।ऐसीअष्टसिध्धिअन्नपूरना भवानीहैं॥३४॥

सत्रुघ्नोवाच—

मंगल सकल, महि-मंडल प्रताप मंडि। उमड़ि अखंडल के मन हीं हरति हैं।
मोहि मोहि देवता, अदेवतानि कीन्हीं बस। जीव पसु पच्छिन की उदर भरति हैं॥
वेद विधि, जज्ञ दान, पूजा भोग, राग रंग। कहत गोपाल जन लाजहि धरति हैं।
भगति अनंत, भगवंत अन्नदेव रूप। रंकनि निसंक, अन्नपूरणा करति हैं॥३५॥

दोहा

को लेखं को कहि सकं, को बरनं कहि बीस।
अति विचित्र गोपाल भनि, रघुबर की बगसीस॥३६॥

रुचिरा छंद

बसन कोस मनि भूषन जगमग, भरत बधू पहिराइ भले।
साजि सूत रथ ल्यावत ही चढ़ि, राम लला मृगयाहि चले॥
तीनहु अनुज धरे धनु बाननि, राज लोग जुत आइ भए।
चरनत्रान कसि गहगह गह्वर, धावत जित कित बिमल मए॥३७॥

घनाक्षर

नगर नगारे बाजें, सोभा बहु रंग साजें। भारें गज राज गाजें, गिरि सें सुहाए हैं।
भारी सूर बीरन हें, चार्‌यो रघुबीरन हैं। काम बीर कैसे राम मृगया सिधाए हैं॥
जिन भुज ओट तकें आदि सूर देव देव। सोई भुज बल मारि सावज गिराए हैं।
गणपति गिरापति गोपति गजाधिपति। सोचि गिरिजा केपति रघुपति गाएहैं॥३८॥

---

३४. इस छंद में आठ सिद्धियों के नाम आ गए हैं—अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईसत्व, वसित्व।

३५. अखंडल : इंद्र।

३७. चरनत्रान : जूता। गह्वर : घना वन।

३८. ओट : शरण। सावज : सौंजा, शिकार।

करखा

जात रघुवर चले, तीर सरजू भले। सरनि दह के दले सफर फर फर करें।
भाँति भाँतिन घने, गहनि जंतुन हनें। जात नाहिन गने, भयनि भर भर भरें॥
कूह करि हांकतें, जूह बहु बांक तें। चाहि सुर नाक तें, रटत हर हर हरें।
हनत गज झुंड हैं, खंड विवि मुंड हैं। सुंड कटि तुंड तें, श्रोन झर झर झरें॥३९॥

सोरठा

करि मृगया रघुनाथ, पुर प्रवेस संध्या समै।
सुर गाव श्रुति गाथ, तिन गुन गाव नर सबै॥४०॥

त्रिभंगी छंद

बाज बहु बाजें, जनु घन गाजें, पुर जनु साजें साज नए।
गावें मिलि नारी, छवि उजियारी, सिया मयारी वितत मए॥
खोरिन जिहि आवें, जित कित धावें, हँसि बरखावें, कुसुम नए।
भीतर पगु धारे, भीरनि टारें, भोजनहारे, साथ गए॥४१॥

घनाक्षर

फूलन के महल, बिछौना फूले फूलन के। फूलन वितान तानें, फूल सी बनक की।
फूलि फूलि मंजुल लतानि कैसी मंजरी वें। आगम वसंत भौंर भीरनि भनक की॥
भनत गोपाल राम कीरति श्रवन सुनि। सुंदरी अटानि चढ़ी वेली ज्यौं कनक की।
सोरहौं सिंगारन सौं सोहतीसुहाई चारु। आरतीसुधारतीहैंनंदिनीजनककी॥४२॥

सोरठा

करि भोजन रघुबीर, कुसुम महल कुसमित सयन।
जानकि करति समीर, प्रभु निद्रा बस होतहीं॥४३॥

---

३९. दह : ह्रद, गहरा पानी। गने : गणना। हांकतें : हांक लगाने से, हुकार करने से।

४१. वितत मये : अतिशयता-मय, अधिक। भोजनहारे : भोजन करने के लिए, भोजन करनेवाले।

४२. बनक : बाना, वेश, शोभा।

लागी रतन किवार, टरी भीर सब सुंदरी।
चरन कमल आधार, पाइ पलोवत जानकी ।।४४।।

घनाक्षर

बार बार बरनति चरन प्रताप सिय। एई गहि चाप घर विपति विदारे हैं।
पाहन हुतीऐ परी गौतम घरनि तरी। तरनि उधारे कीर जैसे करि ढारे हैं।।
महिमा असेष, सेष हू तें नहि सेष होइ। भजत गोपाल महामंगल विचारे हैं।
सुषमा के धाम, कामधेनु हू के मन काम। राम चरनारविंद हृदय हमारे हैं ।।४५।।

दोहा

बहुविधि रंग विलास तें, दले मदन के दाप।
हरषत जन गोपाल लखि, जानकि राम प्रताप ।।४६।।

इति श्री राम प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल
विरचितायां श्रीराम-विलास नाम पंचदसमोध्यायः ।।१५।।

---

४४. लागी : बंद किया। पलोवत : दबाना, मीजना।
४५. घरनी : पत्नी। तरनि : नौका। कीर : मल्लाह, केवट। असेष : सम्पूर्ण।

श्रीराम-वर्ष-गांठ

१६

सोरठा

अंतरजामी राम, निद्रागत आनंदमय।
करे सुफल मन काम, जगे निसा अवकास तैं ॥१॥

राग विभास सवाई

जागें री जुगल किसोर सवेरें।
बैठे रतन जरित पलका पर, लाजनि नीठि गई तित नेरें।
निरखें वदन मुकर कर लीन्हे, उरझें अलकनि अलक निवेरें।
मानहु जुगल जलज रवि मंडल, लपटे व्याल निरखि अलि घेरें।
सिय निरखें राघव मुख सोभा, राघव सिय मुख की छवि हेरें॥
पलकन परत नैन प्रतिबिंबनि, कहि गोपाल ध्यान सोइ मेरें ॥२॥

मंडल छंद

जनक किसोरी सहित सलोने, दसरथ राज किसोर।
जुगल सुधाकर वदन विलोकत, त्रिभुवन नैन चकोर॥
बिहरत रंग महल हौं निरखी, बहुरंगनि चित चोर।
मानहु रूप सिंधु तें निकसे रस की लेत हलोर॥
भूषित मनि मोतिन के भूषन, अधरन रुचिर तमोर।
नवल नेह गोपाल बरनतें, छवि की लहत न छोर ॥३॥

---

२. नेरें : निकट। निवेरें : निवारना। व्याल : साँप। हेरें : देखना।
३. तमोर : ताम्बूल।

चर्चरी

रंग महल रंग रंग, राजत नव रस उमंग। सीता रघुनाथ संग, विलसैं सुख भारी।
रूप रुचिर चारु हास,कोककलनके विलास। भूरिप्रीतिप्रतिप्रकास,कौनकामनारी ।।
अरस परस सरस नेह, बरषत जनु अमिय मेह। दोऊ दुति एक देह,विधनाअवतारी।
दुरि दुरिअवलोकबालकहतीगुनगुनिरसाल। मोहिमोहिछविनिहाल,रूपवारिडारी।।
भूषितभूषनअपार,मोतिनमनजोतिहार। दामिनि घनकरिसिंगार, मानौ वपुधारी।
अद्‌भुतआनंदकंदजोरीचिरु रामचंद्र। हास मधुर मदहि गोपाल सु बलिहारी ।।४।।

दुमिला

करि मंजन श्री रघुनंदन जू, सिय नैननि अंजनि रूप रसैं।
जनु प्रेम समुद्रहिं गाह्लन कौं, एइ राजिव-लोचन लोल धँसे ।।
उकसैं सकसैं निकसैं न सकैं, जल-जालहिं मानहु मीन फँसे।
अवलोकि हँसी सखियाँ तिरछीं, तिरछैं मिसि कै रघुनाथ हँसे ।।५।।

दोहा

अंतहपुर प्रतिहार सौं, द्वारपाल कहि मंद।
बैठे सभा विलास हैं, ज्यों तारे बिनु चन्द ।।६।।

कुरंग छंद

अंतहपुर प्रतिहारिनि, बिहसति मंद।
सुनि आए रघुनंदन, कुमुदनि चंद ।।७।।

नाराच

जहाँ तहाँ सभा उठे, बिलोकि राम लाल कौं।
रहे जु चाहि माधुरी, सरूपता रसाल कौं ।।
असेष देहि आसिषैं, असेष सीस नावहीं।
असेष कीरतैं पढ़ैं, गुनानुवाद गावहीं ।।८।।

---

४. कलन : कला। काम-नारी : रति। गुनि : सोचकर।

सवैया

भूप के दाहिनें राम लसैं, भुज बाँयें भरथ्थ लसें दुति भोरें।
आगे दुवौ सिसु लागं सुहावन, भूषनि अंगनि रूप हलोरें॥
हेरि गोपाल हिये हरषैं, भरि प्रेम निवारि बसे हलकोरें।
देखि सभापति मोहित हैं, मति चारिहुं राजत राज किसोरें॥९॥

दोहा

आए दूरि दिगंत के, जितने जाचक जानि।
विदा किये सबहीन के चलं महा सुखमानि॥१०॥

सवैया

जात चले रथ बाजि चढ़े, बहु बाजन बारिद से जिन बाजे।
गाजत हैं गजराजन के मन, साजन दीह अमारिन साजे॥
भूषन अंग गोपाल विभूषित, भूषन के भ्रम भूपति भाजे।
जात दिगंतनि कौं कहते, सब राम गरीब निवाज निवाजे॥११॥

दोहा

रावर राव उराव की, सुनि पुरवासी कान।
बरस गाँठि रघुनाथ कौं, बाजन लगे निसान॥१२॥

दोहा

भूषन बसन सुगंध बहु, भोजन साज सुधारि।
देसी सहिल विदेसिये, न्यौते पुर नर नारि॥१३॥

छप्पै

गह-गह बाजन बजँ सजँ, सब साज सुहाए।
मधु नौमी दिन भीर फिरैं, भूपति बितताए॥
नर नारिन शृंगार साजि, जित कित अतुराते।
इक आवें, इक जाइ झुंड झुंडनि बिहँसाते॥
गोपाल विलास विनोदमय, सकल कला पूरन सरस।
जय रामचंद्र, सब चंद्रिका, बरस गाँठि बरसानि बरस॥१४॥

रचि चारु मंडप चारु बेदी, चारु मंगलचारु हैं।
लिय चारु मोतिन चौकि पूरी, चारु मोतिन हारु हैं॥
बहु चारु गंध सुगंध परिमल, मलय जुत घनसारु हैं।
सब चारु अजिरनि नगर बगरनि, छिरकि छिरकन हारु हैं॥१५॥

तहं आपु बिधिसुत करत बिधि-मत, छंद श्रुति उच्चरत हैं।
रिषि देत हुतभुक मांह आहुति, भीर पुरजन भरत हैं॥
उत सीय मंजन कौ घनी, मिलि उबटि कुंकुम अंग हैं।
घनसार बाल उसीर सुस्मित, ढारती जल गंग हैं॥१६॥

बनि अंग सकल अँगोछि सखियन, अलक अँगुरिनि झारि हैं।
जनु चारु चंपक की कली, जनु बही जमुना बारि हैं॥
मनि रतन जगमग चारु चौकी, बीच जानकि यों लसैं।
जनु राज-श्री सुभ भूषि भूषन, सकल भूषन कौं हँसैं॥१७॥

तहं झांइ चरन सरोज नाइन, बिहँसि मृदु मुख मंद हैं।
जनु कंज पाटल निरखि कोये, चारु नहं दुति चंद हैं॥
बनि देखि एड़िन तें सुलक्षक, कहें को उपमान हैं।
लखि मनहुं राजिव कों संधाने, पंचसर दस बान हैं॥१८॥

बहु रतन जरित जराय जेहरि, घुंघरू रव राजहीं।
जनु जानि नव ग्रह गृहनि केरिस विजय बाजन बाजहीं॥
सुभ चरन भूषन भूषि के, करि अंग भूषन साज हैं।
नित हृदय जानकि राम पद, गोपाल जन सिरताज हैं॥१९॥

---

१५. बगरनि : प्रासाद, घर।

१६. बिधिसुत : नारद। हुतभुक : अग्नि। उबटि : उबटन लगाकर।

१७. अँगोछि : अँगोछा या रूमाल से पोंछकर।

१८. झांइ चरन . झावां से पैर रगड़ना। पाटल : गुलाब। कोये : सम्पूर्ण आँख का ऊपरी आवरण। नहं : नख। सुलक्षक : जावक, महावर। पंचसर : कामदेव। दस बान : दस अँगुलियां।

१९. जेहरि : पैर में पहने जाने वाला एक आभूषण।

सवैया

साजि सिंगार सिवै जुवती जन, जोवति मारग राघव जू की।
आइ गये तिहि औसर हीं बनि, कौन कहै सुषमा मुख दू की।।
बासर वारिज से बिबि आनन, राति धरैं दुति को बिधु हू की।
मोहन मूरति चाहि गोपाल, सु वारन मूरति आतम भू की।।२०।।

चूनरी अंग सुरंग लसैं किधौं कंचन सैल प्रवाल की बेलैं।
देखि छकैं छवि श्री रघुनंदन, बाल वधू सु वधूनि की मेलैं।।
घूँघट मैं लखि लोचन लोल, गोपाल अमोल कलोलनि केलैं।
अंजित अंजन चंचलता, जनु कंजन कोस मैं खंजन खेलैं।२१।।

मोहन कौं रघुनंदन के मन, जानकि आजु बनी सुषमा मैं।
खंजन से दग चंचल चारु, सु अंजित अंजन रूपक तामैं।।
हार गोपाल बड़े गज-मोतिन, कंचुकि नील कहौं उपमा मैं।
पैरत हंस फिरैं चहुघा, लखि कंचन सैल मनो जमुना मैं।।२२।।

दोहा

दुहुँन संवारि सिगारि कै, जुवती जन हरखाइ।
ल्याईं तीनहुँ मात कौ, मधुराधर मुसक्याइ।।२३।।

सोरठा

दंपति परसे पांइ, मातन के अहलाद सौं।
चूमि वदन उर लाइ, नैननि को सुख को कहै।।२४।।

---

२०. दू की : दोनों की। बासर : दिन। बारिज : कमल। विधु : चन्द्रमा। आतम भू : आत्म भू, स्वयं भू।
२१. प्रवाल : मूँगा। केलैं : क्रीड़ा।
२२. पैरत : तैरते हैं।
२३. परसे पांइ : पाँव स्पर्श किया।

चामर छंद

पूजि के गणेश गौरि, और चार कै सबै।
तीनहूं कुमार स्यौं, नृपाल आइ गै तबै॥
धांइ सीय पाइ टेकि, भूप दै सिंघासनै।
देवरै बुलाइ पास, चाहि मंद हांसनै॥२५॥

दोहा

त्रिभुवन तीनौ गुननि तैं, जिन राखै हैं सांठि।
मात दई तिन चोरि कै, बरस-गाँठि की गाँठि॥२६॥

घनाक्षर

गाँठि कै परत घुरि घुरत निसान पौरि। बाजै सब बाजि उठे मंगल विधान तैं।
वारि वारि आरती उतारती हैं बार बार। कोकिला सी सुरनि विमोहैं सुर गान तैं॥
टीकि टीकि मोती मनि मानिक पदारथ हैं। अरघ पदारविंद बंद उपमान तैं।
गरबी गरब खूटे अंधन बजार लूटे। छूटे सब सूल, फूल टूटें आसमान तैं॥२७॥

दोहा

सकल पुरन की सुंदरी, रघुकुल की बर नारि।
सजि सजि सकल सिंगार सौं, उमहि चली मिलि झारि॥२८॥

घनाक्षर

सोहि रही सुंदरी पुरंदरी सी भाँति भाँति। देहरी न नांघी, तेऊ देखती हैं सहरैं।
आवती अमोलन सौं, गावती कलोलनिसौं। सारी जरतारी छोर दामिनी सी फहरैं॥
फूलि फूलि कनक लता सी रहीं झूलि झूलि। भूलि भूलि करहि गुमान नितै गहरैं।
भूषन विभूषि अंग रतन 'गोपाल' भनि। मानौस्यों रतन रतनागर की लहरैं॥२९॥

---

२७. घुरत : बजना। खूटे : नष्ट किया। सूल : दुःख, दर्द।
२८. झारि : सब।

पाठान्तर—२९. स्यों रतन : रतन समेत (१, २)

---

२९. सहरैं : शहर।

सारी जरतारी सेत, ओढ़नी सरस ओढ़ें। चंदन की चोली पर मोतिन के हार हैं।
कुंद कलिकानि तें सुहाई केस पास घनी। घनी रस रगनि चढ़ाई घनसार हैं॥
ऐसी मधुनौमी कों नगर नवेली चलीं। कहत गोपाल अंग सुषमा अपार हैं।
कैधोंकलानिधिकीकुमारिकाकलानिधरिमंगलविलोकनकोंसाजियोसिंगारहैं।३०॥

लोचन कुरंग, रथ साजि के सुधावर धों। श्रवन तर्‌यौना हेम चाक से बनाये हैं।
भृकुटी धनुक, गुन कज्जल कटाक्ष सर साधि के। सरोस पर साहस जनाये हैं॥
केसरि सुभग आड़ मोरचा उठाए जनु। निरखि गोपाल अंग सुषमा सुहाये हैं।
एते मान पाठी बीच बीचमोतिनकेमाँगमानौ।उडगन-संगराहुमंडलकोधायेहैं॥३१॥

दोहा

छरीदार सब पौंरि के, चहुँ दिसि टारत भीर।
टोकि निछावरि करत हैं, निरखि सिया रघुबीर॥३२॥

देखि भी जुवतीनि की, रावर भरि न समाँहि।
राम भरथ नृप सुतन सौं, आए मंडप माँहि॥३३॥

सवैया

अच्छत सीस धरे सिगरे रिषि, आसिष देत हिये हरषाये।
नाचत हैं, बहु गावत हैं, बहु बाजत बाजन बृंद सुहाये॥
आनंद मोद गोपाल कला लखि, देखत देवन के मन भाये।
दान असेष बलाहक सों, नृप कंचन के बरषा बरषाये॥३४॥

---

३०. मधु नौमी : चैत मास की नौमी।
३१. हेम चाक : स्वर्ण चक्र। श्रवन तर्‌यौना : कानों का तर्‌यौना, तरकी। मोरचा : युद्ध स्थल। राहु मंडल : बाल, केशका उपमान।
३२. छरीदार : सिपाही।
३४. बलाहक : बादल।

दोहा

मन भाए पाये सबै, मानि-दानि द्विज दीन।
चारन मागध बंदिजन, पंडित गुनी प्रबीन ॥३५॥

इहि अंतर ज्योनार की, सुनि त्यारी नृपराज।
बहुराये जन बाहिरे, भीतर चलै समाज ॥३६॥

गीतिका

तब अवधि-राज समाज लै, सब राज भोर्जाहि कौ चलै।
बहु भाँति भाँतिन पाँति पाँतिन, लसैं भोजन मैं भलै॥
तहँ भरत लछन सत्रुहा, पुनि और रघुकुल के जनै।
सब पेलि जित कित धरत भाजन, हरषि है मनै ॥३७॥

सब महल-महल सुगंध मह-मह, भोग षट गावहीं।
मन जाहि भावत जौन, तौनहि लै सु चहुँ दिसि धावहीं॥
उत गावहीं बर नारि गारिनि, नाउँ लै लै आगरी।
इत जनी जूह सियाहि की, सब जनकपुर की नागरी ॥३८॥

करि के सु भोजन उठत हीं, सब रंग हूलि मचाइयो।
घनसार कुमकुम घोरि घट जल, केलि हास सुहाइयो॥
इक विकच बदन विलोकि एकन, पिचक नैननि मारहीं।
तहँ एक एकन कौं तबै, गहि कीच बीच पछारहीं ॥३९॥

सब निरखि महलनि नारि गह गह, हास कह-कह सौं हसैं।
जिन दसन दीपति निरखि दामिनि, घननि लाजनि सौं बसैं॥
बहु हास रंग विलास के, सब न्हाइ सरजू आवहीं।
तब राम लाल विनोद लखि, गोपाल जन हरषावहीं ॥४०॥

---

३५. मानि-दानि : पूज्य।
३६. त्यारी : तैयारी। बहुराये : वापस किया।
३८. षट रस : छः रस—मधुर, लवण, तिक्त, कटु, काषाय तथा अम्ल। नावँ लै : नाम लेकर।
३९. विकच : खिला हुआ, विकसित।
४०. न्हाइ : स्नान करके।

सोरठा

पहिराए नर नारि, मनि मानिक भूषन बसन।
धनपति मानी हारि, बरस-गाँठि लखि राम की ॥४१॥

दोहा

सकल विलास गोपाल भनि, निरखि सबन सुख होत।
दिन-दिन दिनकर मान श्री, राम प्रताप उदोत ॥४२॥

इति श्री राम प्रताप भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां
श्री राम बरस-गाँठि वर्णनोनाम षोडषमोध्याय: ॥१६॥

षटऋतु-वर्णन

१७

दोहा

रंगमहल सत खंड के, कलसं सात सुहात।
रतन जरित झकमक झकें, करत जलद सों बात ॥१॥

नील पीत लोहित हरित, लसं सितासित मान।
मानहुँ सुरपति बाग कों, रितुपति किय प्रस्थान ॥२॥

घनाक्षर

ऊँचे ऊँचे चामीकर महल कलस मनि। जोतिन सों घेरि जिन नीरदनि लीन्हें हैं।
छबिन सों छाजें बहु छाजें अंतरीछन में। तिन मैं छटा के बाम जात नहिं चीन्हें हैं॥
भनत गोपाल रूप औरन निरूपन कों। अद्‌भुत अवधि बिरंचि रचि कीन्हें हैं।
कैधौं कनकाचल के कनक तमाल तुंग। फूले फल रंगनि बसंत सोभ दीन्हें हैं॥३॥

दोहा

बहु सुंदर भीतर सबं, एकनि एक विचित्र।
मनहुं सदा पुर अवधि में, बसं द्वादसो मित्र ॥४॥

---

१. कलसं : कलश।
२. सितासित : श्वेत और श्याम।
३. चामीकर : सोना। छटाकं बाम : बिजली है अथवा बामाएं हैं। औरन : दूसरों को।
४. द्वादसो मित्र : बारहों सूर्य—विवस्वान, अर्यमा, पूषा, त्वष्टा, सविता, भग, धाता, विधाता, वरुण, मित्र, शुक्र, उरुक्रम।

घनाक्षर

राज राज मंदिर सु बेस बेस केते केते। (केते) चित्रसारिन में केती सुकुमारि हैं।
केतीं गिरजा सी, केती कमलासना सी। केती सोहैं हंसजा-सी, दमयंती उनहारि हैं।
केती तिन दासी, रूप रंभा मैनका सी केती। केती हैं सुकेसी भूषि भूषननि झारि हैं।
देखिदेखिअवधि-विलासीकौंविलास-भूमि। भूलीसुखसातनिबितूलीदेवनारिहैं।।५।।

दोहा

आस पास पुर अवधि कै, बन उपवन बहु भाई।
सकल पुष्प फल औषधी, का नंदन बन आइ।।६।।

छप्पै

सकल वृक्ष फल सकल, सकल फूलनि तरु फूले।
सकल कंद बल्लीनि, सकल पछ्छी अलि भूले।।
सकल धातु झकमकहि, सकल थल थल मुनि सोहैं।
सकल सर्प सिंघादि भिल्ल, गजराज बिमोहैं।।
गोपाल सकल लावन्यमय, रितु बसंत सौरभ अमल।
इमि सकल सोभमय अवधिपुर, बहु रंगनि कंचन महल।।७।।

सवैया

बैठे बसंत बिनोद बिलोकत, राम सिया सुषमा अनुरागें।
सीतल मंद सुगंध समीर, समोइ सुवास दिगंतनि लागें।।
मालति कुंद जुहीं जुत मल्लिक, मौरि रसाल रहे बन बागें।
भौन सुहागिल केलि करें, बिरहानल तें बिरही जन भागें।।८।।

---

५. गिरिजा : पार्वती। कमलासना : लक्ष्मी। हंसजा : यमुना, सूर्य की पुत्री। उनहारि : सादृश्य। रंभा : पुराणानुसार एक प्रसिद्ध अप्सरा। झारि : संपूर्ण।
६. का : क्या। नंदनवन : इन्द्र का बगीचा। आइ : है।
८. सुहागिल : सुहागनि।

राग बसंत, दीपकल छंद

खलत बसंत पुर, अवधि राम।
सुनि चली तरुनि, सजि धाम धाम॥
बहु भेरि तूर, बाजैं निसान।
डफ ढोलक ढोल, अनेक मान॥
बहु झाँझि ताल, ढोलक मृदंग।
मुख चंग बीन, बाजैं उपंग॥
सब लोग सजैं अपने समाज।
बनि भूषन बसन, अनेग ताज॥
बहु भाँति सजैं बहु, स्वांग काज।
कढ़ि चली तरुनि तजि लोक लाज॥
उत जुवति जूह, इत तरुन बाल।
लिये झेलन की, झोरी विसाल॥
सब झोरिन फेटनि, भरि गुलाल।
घनसार धूरि भरि, चलत हाल॥
सुनि रंगमहल, सियरमन जानि।
ढिकलीजु तरुनि, गहि कमल पानि॥
गुलच्याइ दुहुँनि, ल्याई लिवाइ।
पुर आनंद हुलि न, कहुँ समाइ॥
लखि भरथ लखन, तिहुँ कोपि वीर।
घेरी जु नारि संग, लै सुभीर॥
लिये छीनि छरी, लखि नाइ माथ।
ल्याई जु पकरि रघुनाथ हाथ॥
सब लै सुनारि, भुज दंड मोरि।
मारी जु जाइ, झकझोरि झोरि॥
छूट जू मूठि, भरि भरि गुलाल।
पुर अवधि लसत, सब लाल लाल॥

सब उमड़ि जानकी, जननि जाइ।
पकरी जु कुँवर, तिहुँ फेट ग्राइ॥
पुरनारि ढिकिलि, लइ छीनि कूह।
भरथे जू गही, सब जुवति जूह॥
मुख मीड़ि काजरु, नैन दीन।
बहु रूपक तैं, जु कुरूप कीन॥
इक कर्हहि रोहि, रासभ विचारि।
लखि जनक-सुता, दई सबनि गारि॥
तब राघव सबहिन, बदि अँकोर।
छाँड़ी जु डाँड़ि, तब भरथ छोर॥
पुरए जु सबनि, रघुवीर आस।
लहे भगति भीज, गोपाल दास॥
यह ध्यान हृदय, धरे जु संत।
गावें जु बिमलि, रघुबर वसंत॥९॥

दोहा

निसि वासर संतत जहाँ, परमानंद विलास।
नृत्य गीत संगीत रस, कथें कथित इतिहास॥१०॥

सोरठा

बीतत ही रितुराज, ग्रीषम राज विराजियो।
होन लगे सब साज, सीतलता महलनि महल॥११॥

---

९. उपंग : नसतरंग नामक एक बाजा। ढिकिली : निकट। गुलच्याइ : गाल में ठोकी मारकर। रोहि : चढ़ा करके ढकेल दिया। रासभ : गदहा। बदि : कहा। अँकोर : घूस। डाँड़ि : दंडित करके।
१०. संतत : सदैव। कथित : कथा कहनेवाले।

घनाक्षर

जानकी सहित राम सदन गोपाल मनि। मोहित मदन मान सुंदरता बल हैं।
आतप तपन हीं ते तपनि समित हेत। ऊरध लौं लागे जाइ जंत्रन के नल हैं॥
छूटत फुहारे घने सीरे घनसारन के। कांपैं सुकुमारी चित्र सारिन सकल हैं।
मानौ हर सिखर श्रवत गंगा थल थल। महल महल खेलैं सरजू के जल हैं॥१२॥

दोहा

सकल राज श्री भोग जुत, प्रभुता सकल प्रकास।
ललकत इंद्रादिक निरखि, अवधि पुरी सु बिलास॥१३॥

बितए ग्रीषम नीति हैं, सकल सहित सिया रघुराइ।
पावस पहुंच्यो आइ कै, सो सुख कह्यो न जाइ॥१४॥

सवैया

घोर घटा उमड़ी चहुंघा, झरपैं जल बारिद बुंद झकोरैं।
चंचल चारु चलैं चपला मिलि, नाचत हैं गिरि मोरनि भोरैं॥
सो छवि चाहि गोपाल बिमोहित, रामसिया चुनरीतन गोरैं।
मालती-सी सब फूलि जितै कित, झूलति बाल हैं लाल हिंडोरैं॥१५॥

हिंडोरना, राग मल्लार

झूलत राम चंद हिंडोर।
लै चली सिर साजि तिया, जनु दामिनी घनघोर॥
अंग गोरिन रंग कुसमित, चूनरी चुनि चारु।
हरित पीत रु नील चोलिन, परसि मुकता-हारु॥
जानकी सब बांटि जुवती, लई मिलि दुहुं कोधि।
मनहु दामिनि-पुंज मैं, घन नील चकचौंधि॥

---

१२. जंत्रन के नल : फव्वारा।
१३. ललकत : ललचना।

रतन गजरा नील पौंची, वलय बाहु विसाल।
मनहुँ मनि गन पंति खचि-खचि, रचे कनक मृनाल॥
झूमि झुलवत झवा बेनिनि, लसैं उरज उतंग।
मनहुँ हर सौं केलि मनिधर, करत स्याम भुजंग॥
रहसि रसिकिनि रसिक राघव, संग सिय बैठाइ।
सकल गोरी, जुगल जोरी, बिहँसि देहि झुलाइ॥
मचहि राघव रंग सौं भरि, कहैं को उपमान।
बिहँसि फिरि फिरि धाइ परसे ज्याइ व्योम विमान॥
देव-बधुनि विलोकि कैं कर गही कुसमित किंदु।
मारही सुकुमार अंगनि, मनहुँ तारक इंदु॥
परहि खसि-खसि फूल जित कित, गहहि जुवती झूमि।
मनहुँ बिधि सौं रुसि नखतन, तरुनि बिलसैं भूमि॥
लली बिहँसत जनक की, लखि खेल दसरथ लाल।
पुलकि अंगनि किलकि बिहँसत, निरखि जन गोपाल॥१६॥

दोहा

सागर नगर ऊँचे गड़े, सरस हिंडोरें लाल।
मानहुं कलरव कोकिला, कंठनि गावें बाल॥१७॥

सवैया

झूलत हैं नर-नारि हिंडोरनि, गावत राग मलार सुहाए।
घोर घने घन घूमत हैं, वन मोरनि मोरन सोर मचाए॥
रंग-अटानि छटानि-छटा-सम रूप घटा द्युति लेत दबाए।
जानकि राम गोपाल हँसैं, लखि औधि पुरी सुख सातनि छाए॥१८॥

---

१६. कोधि : कोध, ओर। चकचौधि : चकाचौंध। पौंची : पहुँचे का आभूषण। वलय : चूड़ी। झवा : झब्बा, गुच्छा। उरज : उरजात, उरोज। रहसि : प्रसन्न होकर। कुसुमित किंदु : पुष्पों की गेंद, कंदुक। नखतन : नक्षत्रों।
१७. सगर नगर : सम्पूर्ण नगर, राजा सगर (रामचन्द्र के पूर्वज) के नगर में।
१८. मलार : मल्हार—राग विशेष जो वर्षा ऋतु में गाया जाता है।

छप्पै

जलद नील भए सेत, मीन अहि सुक पिक घारें।
आवत दसमी विजय, बाजि गज रथनि सँवारें॥
सकल राज-श्री साज, सकल धनु बान निषंगें।
बसन बिचित्रनि नारि नरन, बहु भूषण अंगें॥
सजि साजि अवधि जन जूथ पति नृप जुहारि आनंद बढ़े।
उपवन बिहार बहु विधि करें, राम भरथ रथ पर चढ़े॥१९॥

दोहा

सात खंड प्रासाद पर, बिछे रतन परजंक।
राम सिया सोभा लखें सारद बिसद मयंक॥२०॥

रुचिरा छंद

बहु विधि करत विलास सारदी, राम सिया अभिलाष भरे।
अमल निसीथ निसाकर कर तें, सरनि कुमुद हिय बिरह भरे॥
मारुत त्रिविधि कुसुम आमोदनि, भरत उदर अलि रसिक रसे।
अरस-परस पर दंपति विहँसत, सो सुख सुषमा नैन बसे॥२१॥

सरद बिहार सकल बिधि विहरत, अब रितु आइ हेमंत भयो।
राग रंग रस हाँस सकलपुर, निसिबासर सुख सकल छयो॥
महल-महल प्रति चन्द्र जोति बहु, चन्द्र चन्द्रिका जीति लये।
निरखि चंद सब चंद्र-मुखिन कौ चंद्र चौकरी भूल गये॥२२॥

चामर छंद

सुंदरी विचित्र अंग, साजि भूषनें तबैं।
जानकी सरूप चाहि, मोहि सी रही सबैं॥
चारु हास माधुरी तरंगकानि, सी लसैं।
बूड़ि बूड़ि जात नैन, नागरीन की रसैं॥२३॥

---

१९. जुहारि : प्रणाम करके। जूथ पति : सेनापति।
२१. निसीथ : अर्द्धरात्रि। आमोदनि : सुगंधि।

रुचिरा छंद

सिसिर सरस रस रंगनि बिहरत, रंगमहल सिय राम बने।
निसि बासर प्रति केलि परस्पर, परम प्रीति-जुत प्रेम सने ॥
सगर नगर-रस रंग हासमय, नृत्य गीत संगीत घनें।
बिहँसत सकल बिलास राज जन, इंद्रभोग तिनको न गनें ॥२४॥

दोहा

भूतल भूरि विभूति सुख, रचे चरित निज आप।
गुन अनंत गोपाल भनि, त्रिभुवन राम प्रताप ॥२५॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां श्री राम षट रितु वर्णनोनाम सप्तदसोध्यायः ॥१७॥

एकादशी व्रत-कथा

१८

रुचिरा छंद

बारह मास छ रितु प्रति लीला, अवधपुरी सुख कौन कहै।
सदन-सदन सुख मदन जोगमय, बदन चारि नहि चरित लहै॥
बैठे सभा सकल रघुवंसी, राग रंग रस हास मचै।
सातहुं ते अति सुघर नायका, सातहुं भेदनि साधि नचै॥१॥

त्रोटक

इहि अंतर नारद प्रेम हिले।
रघुनाथ सभामह अइ मिले॥
महराइ सबै सुख हेत भरे।
कर जोरि प्रनाम जु राम करे॥२॥

नृप आदि करें पग बंदन हैं।
ढिग खैंचि लये रघुनंदन हैं॥
पुर देखि विलास हुलास लिये।
रघुबीर सुधा दुति नैन पिये॥३॥

दोहा

श्री रामोवाच—

मुनि सों राम बिनोद सों, बूझे सहित उछाह।
कहिये कछुक बिचारि कै, कहा कौन है चाह॥४॥

---

१. बदन चारि : चार मुखवाले ब्रह्मा। सातहुं ते अति सुघर : पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ— आँख, कान, नाक, जिह्वा, त्वचा तथा मन और बुद्धि अर्थात् सर्वांग सुन्दर। सातहुं भेदनि : संगत के सात स्वर—सा, रे, ग, म, प, ध, नी।

सोरठा

मुनिवाच—

लखे तिहूँ पुर ग्राम, सूनो येक न ठौर कहुं।
सब थल येकं राम, खभरि कहाँ की का कहौं ॥५॥

घनाक्षर

कहूँ बहु स्वादन सौं गावत गुनानुवाद, कहूँ अहलाद सुर साधत सपत हैं।
कहूँ रस रंगन हैं, प्रेमरत रंगन तें। धरि धरि ध्यान जोग तप तें तपत हैं॥
कहूँ भयभीतन तें, भाजत दिगंतन कौं। थर थर पातक के दानव कंपत हैं।
भनत गोपाल सुनो दीन के दयाल राम। तीनहुं भुवन नाम रावरो जपत हैं॥६॥

दोहा

भए बहुत हम दिनन के, तपे तपैं बहु लैंन।
राम व्याह सुख अवधि सुख, लहे नैंन सुख चैन ॥७॥

मदन छंद

जोरि कर तब भरत बिनये, सुनौ श्री मुनि-नाथ।
साजु सचरित सौं सबै रुचि, पाक कीजै हाथ॥
कहैं मुनि हम आजु नेमहि हैं, जु दसरथ लाल।
काल्हि व्रत एकादसी हम, रहत भे बहु काल ॥८॥

सुनत श्री रघुनाथ विनये, कहौ मुनि इतिहास।
कौन विधि एकादसी व्रत कहा तें सु प्रकास॥
आदि अंत रु मध्य कौ, फल कहो वनि सब सोइ।
जासु तें यह अवधि लोगन, परम मंगल होइ ॥९॥

---

५. सूनी : शून्य। खभरि : खबर, समाचार।
६. सपत : सप्तस्वर।
७. अवधि : सीमा।
८. पाक कीजै : भोजन बनाइये। नेमहि : नियम।

निसिपालिका छंद

कहत मुनिनाथ रघुनाथ सों गाथ हैं।
आदि यह अवधि के सुनहु नरनाथ हैं॥
तिन जू एकादशी देव पुर तैं लहैं।
नाम रूपमंगदै भूप व्रत को गहैं॥१०॥

यह जु व्रत भुव लोक (बड़ो) तिन तैं भए।
देवपुर अवधि के, स्वान सूकर गए॥
जौन विधि देवतनि, पाइ धारन धरैं।
तौन बिधि सुनहु सब, व्रतन पर तैं परैं॥११॥

छप्पै

कृत जुग अंत कलिंग, देस दच्छिनहिं सुघट्टन।
चंपावती सुनाम प्रगट, पुहमी पुर पट्टन॥
तहाँ सुबंस पुलस्ति, भयो मुर नाम उजागर।
दनुज राज सब दास भये, जितने बल आगर॥
तप तेज उग्र निर्भय अतिहिं, हर गिरि तट हठ माड़ियउ।
दस सहस बरष इक चरण तैं, फल दल जल जिन छाड़ियउ॥१२॥

सोरठा

महा उग्र तप ठानि, स्वांसाहार अहार करि।
मिले सदा सिव आनि, मांगु मांगु मन काम भरि॥१३॥

दोहा

ताली लागी लगनि की, हर हारे करि हेत।
चेतत चेतत चेति कै, वर मांग्यो जु अचेत॥१४॥

---

१०. रूपमंगदै : रूपमंगद राजा।

११. स्वान : कुत्ता। सूकर : सूअर।

१२. कृत युग अंत : सतयुग के अंत में। पुहमी : पृथ्वी लोक। मुर : विष्णु के हाथों मारा जाने वाला दैत्य। हर गिरि : कैलास, शिवजी का पर्वत। हठ माड़ियउ : हठपूर्वक सम्पन्न किया।

१३. ठानि : संकल्प करके, हठ करके।

१४. ताली : ध्यान, समाधि, एकाग्रचित्तता।

जो बर देत महेस हौं, तो मागौं तजि सोक।
अजर अमर करि दीजिअे, जीतन तीनहुं लोक ॥१५॥

हो हो हो हर कहि उठे, हरि हरि हरि करि ध्यान।
हम परसो कहि दें चले, करनहार कल्यान ॥१६॥

मनोहरा छंद

वर पाइ दनु गरबाइयौ।
सब परहि तेज जनाइयौ ॥
इक चित्रकेतु सु नाम कौ।
सो सचिव पूरन काम कौ ॥१७॥

इक समय मंत्रहि सोधि कै।
द्वै दूत पठये बोधि कै ॥
तुम जाइ सुरपति सौं कहौ।
बल कौन कै पदवी लहौ ॥१८॥

चामर छंद

इत जाइ इन्द्र पै, तबै सुबारता कही।
कौन कै प्रताप तें, जु आपु साहिबी लही ॥
बेगि दै चलौ, कि बेगि साज बाज साजिअे।
जुद्ध की त्रिसुद्ध ह्वै, जु गाजिअे, कि भाजिअे ॥१९॥

दोहा

हर त्रिभुवन की साहिबी, सुर कौ दीन्हें टारि।
करने होइ सु कीजिये, देखहु सोचि बिचारि ॥२०॥

---

१६. हो हो हो : एवमस्तु, ऐसा ही हो। करनहार : करनेवाले।
१९. साहिबी : स्वामित्व। त्रिसुद्ध : तीनों तरह से शुद्ध—दैहिक, दैविक और भौतिक दुखों से मुक्त।

त्रोटक

सुनि बैन सभा सब सोचि रहे।
मुख तें नहिं उतरु एक कहे॥
तब इंद्र महा अति कोप भरे।
तिन नासिक श्रोन बिहीन करे॥२१॥

सोरठा

मुरके मुर के दूत, कहै कहा बनि देखिये।
सुनत तुरत पुरहूत, करे फजीहति रावरे॥२२॥

छप्पै

उठ्यौ गाजि मुरराज, राज राजा सब साजे।
घन तें घोर निसान, जहाँ कोटिन करि बाजे॥
चले साजि चतुरंग सैन, सेनापति भारे।
गिरिवर से गजराज दए, सब पेलि मुहारे॥
उत साजि सुरपति सुरनि जुत, रन घमंड मंडिय प्रबल।
सुर असुर खसहि संग्राम महँ हरि हर हर रटत दल॥२३॥

त्रोटक

सजि इन्द्र महा सुर सन बढ़े।
रथ व्योम बिवाननि धाइ चढ़े॥
दुहँवा दनु देव गुमानन हैं।
बरषे बरषा बहु बानन हैं॥२४॥

हय कोटिन कोटि कटे निबटे।
गज झुण्डन तुंडन सुंड कटे॥
उतहूँ इतहूँ दनु देव भिरे।
सरिता भरि श्रौंन गयंद तिरे॥२५॥

---

२२. मुरके मुरके दूत : मुर के दूत मुड़कर।
२३. खसहि : खिसक जाते हैं।
२५. तुंडन : शरीर। सुंड : सूड़।

दोहा

महा भयानक रन पर्यो, निसि बासर बसु जाम।
हर बिरचि लखि थकि रहे, देवासुर संग्राम ॥२६॥

मदन छंद

तब इन्द्र आरत ह्वै कहे, अब सुनो हो गुरुदेव।
सुरन कौ सब असुर जीते, सो जु कहिअे भेव॥
तिन जु धीरज दै कहे, अति हियनि करुनापूरि।
द्रोनगिरि के सिखर ऊपर, है सजीवनि मूरि ॥२७॥

छप्पै

तब सुर गुर अकुलाइ गए, द्रोनाचल धाये।
दिपै सजीवन जोति, सकल गिरि दवसे लाये॥
करि जप जोग विधान मंत्र, पढ़ि मूरिहि लीन्हें।
देवन दया बिचारि, देव-राजहि लै दीन्हें॥
तिहि घ्राण प्राण अच्छय बपुष, रन घमंड फिरि मंडियउ।
सुर सुरकि सैन सैनाधिपति, देव दानवन खंडियउ ॥२८॥

दोहा

आखंडल दल बल सकल, सुर दल बल बिचलाइ।
अमरन-जुत अमरावती, आये कोप बुझाइ ॥२९॥

सोरठा

सुर लाजनि मुरझाइ, मुख काहू न दिखावई।
मिलै सभा सब आइ, सचिवन बोधे बोध दै ॥३०॥

---

२६. बसु जाम—आठों याम—एक मत से पृथ्वी, वायु, अंतरिक्ष, आदित्य, अग्नि, चन्द्र, नक्षत्र एवं दूसरे मत से धर, ध्रुव, सोम, विष्णु, अनल, प्रत्यूष, प्रभास आठ वसु हैं।
२७. भेव : भेद। मूरि : मूल, जड़ी।
२८. दिपै : दीप्त।

मदन छंद

चित्रकेतु विचित्रकेतु सु सचिव मंत्रनि जेसु।
सकल राज सुछंद छल बल, शुक्र पठये तेसु॥
तिन जु सोच विचारि आगम मंत्र मत ते जानि।
ल्याइ जीव संजीवनी सब, ज्यावहीं मत ठानि॥३१॥

सोरठा

फरकि उठे भुजदंड मुरके सुरन—सघात कों।
आखंडल बलवंड, खंड-खंड करि डारिहौं॥३२॥

घनाक्षर

धाये बितताये दनु जेतक जहाँ लौं भूमि। भूमि भूमि लीन्हें सब द्रोनाचल धाइ है।
भागे सुनि खभर पुरंदरी पुरंदर है। सुंदरी दरीनि दुके वृंदारक जाइ है॥
मुर के निसान फहराने अमरावती में। बाजन लगे हैं बीर बाजन के चाइ हैं।
भूले चतुराई चतुरानन कहत देखौ। हर के तमासे, कैसे हरि हौं जगाइ हैं॥३३॥

सोरठा

शेषनाग परजंक, सुख निद्रा श्रीपति तहाँ।
देवन सहित ससंक, मिले सबै पय-सिधु-तट॥३४॥

सवैया

देवा:ऊचु:

मंगल श्री हरि नाम प्रतापनि, संकट कोटिनि कोटि हरे हैं।
देवन के हित दायक ह्वै, नित दानव दापनि मारि दरे हैं॥
जे जन आरतवंत गोपाल, पुकारत पीर असेष टरे हैं।
दीनन ऊपर दीन-दयाल, कृपा कल्पद्रुम-छाँह करे हैं॥३५॥

---

३१. जेसु : जो भी, जितने भी। तेसु : तितले, वे सभी। शुक्र : शुक्राचार्य। जीव : वृहस्पति।

३३. बितताये : विस्तीर्ण होकर, फैलकर। डुके : छिप गए। दरीनि : कन्दराओं। वृंदारक : देवता। बाजन लगे हैं : लड़ने लगे हैं। बाजन : वाद्य। चतुरानन: चार मुख वाले ब्रह्मा। अमरावती : देवताओं की पुरी।

३४. पय सिंधु : क्षीर सिन्धु।

दोहा

सुर कुल संकट परिहरो, हरि हरि कहैं पुकार।
जैसे मधुसूदन कहैं, त्यौं मुख कहैं मुरारि ॥३६॥

सोरठा

सुनि आरत सुरनाथ, निकसे छीर समुद्रते।
चले सबनि के साथ, लखे पुरी चंपावती ॥३७॥

घनाक्षर

सुरन समेत संख-नाद धुनि छाए लोक। धाए सुनि दानव हैं मुरके प्रबल हैं।
माच्यौ है अरर चहुँ ओर तैं घमंड घोर। उमड़ असेष भारी पहल पहल हैं॥
बानन के छूटे केते रथ औ बिवान छूटे। गिरि तैं उतंग गिरे माते मयगल हैं।
काटे धनु चक्र मारि डारे पुर जारि बारि। राखो त्रिपुरारि कहिटेरतसकलहैं॥३८॥

दोहा

पहुँच्यौ मुर बहु रोस तैं, करि कै सोच बिचार।
चकित भयो लखि चक्रधर, बाननि कियो प्रहार ॥३९॥
सुर भागैं मुर देखतैं, दनु भागैं हरि देखि।
जुटे दुहुं संग्राम हैं, हर विधि सोचैं लेखि ॥४०॥

छप्पै

बरस सहस्रक एक, भिरे अत्रनि बहुधा हैं।
बरस सहस्रक दोइ, वृच्छ गिरि पाहन माहैं॥
बरस सहस्रक तीन, बाहु बल मुष्टिक मारे।
बरस सहस्रक चारि, एक गहि एक पछारैं॥
इहि भाँति जुद्ध बहुधा भए, हरि माया बिस्तारियउ।
छल तैं जु छलेउ बलि से बली, छलि छल तैं निस्तारियेउ ॥४१॥

---

३६. मधुसूदन : मधु नामक दैत्य को मारने वाले। मुरारि : मुर दैत्य को मारने वाले।
३७. चंपावती : मुर नामक राक्षस की नगरी।
३८. मयगल : हाथी। चक्र : सुदर्शन चक्र। त्रिपुरारि : तारकासुर के पुत्रों के बनाये तीन नगरों का नाश करनेवाले शिवजी।
३९. चक्रधर : विष्णु।
४१. अत्रनि : अस्त्रों। माहैं : में। मुष्टिक : मुट्ठी। निस्तारियउ : उद्धार किया।

सोरठा

अति श्रम तें अति स्वेद, गए बद्रिकाश्रमहिं लें।
कोपनि करें निषेद, खेदो मुर जो मुरारि को ॥४२॥
दस सहस्र परिनाम तो, तापर कोप्यौ छुद्र।
दस रुद्रन दस वर दये, हरि, हरि एकादस रुद्र ॥४३॥

छप्पै

हरि एकादस रुद्र, मिसहिं निद्रागत ठाने।
सुर आवत प्रभु जानि, मोह माया उनमाने॥
विष्णु सक्ति मुख तें, सु हृदय तें बाहिर काढ़े।
जगमग रूप निधान, कला षोडष तन बाढ़े॥
गोपाल चरित्र विचित्र अति, देखि दनुज कह-कह हँसी।
मुर मुरछि पर्‌यौ छबि चाहतें, जनमी सु एकादसी ॥४४॥

सोरठा

हरि माया चित चोर, मुरछा तें मुर जगत हीं।
चितई भौंह मरोरि, वरहिं सहित बरि भस्म ह्वै ॥४५॥

घनाक्षर

आए विधि वेदन निवेदति सहस रिचा। आए सब देव लै लै अरचा के साज हैं।
आए सजि आरती पुरंदरी पुरंदर हैं। आए जीव पाए जीव जितने समाज हैं॥
आए दिगपाल लोकपाल भुवपाल घने। आए घनपाल धराधर बहुधा जहैं।
आए सरणागत हैं आरत हरन जानि। आए हैं न एक हर पाए जिन लाज हैं॥४६॥

रुचिरा छंद

देवा:अचु:—

असरन सरन हरन दुख दंदन, जग-बंदन जगदीश हरे।
मुर मर्द्दन मधु नरक निवारन, जग कारन जग अभय करे॥
जोति रूप अनुरूप रूप बहु, बहु परमानंद विनोद भरे।
जयति जयति ब्रह्मन्य ब्रह्ममय, पारब्रह्म ब्रह्मादि परे ॥४७॥

---

४६. आये जीव : बृहस्पति आये। घनपाल : कुवेर। धराधर : शेषनाग। जहैं : जहाँ। रिचा : ऋचा (ऋग्वेद का पद्यात्मक वेद मंत्र)।

मोहन मदन, मदन मद मोचन, जुग लोचन रुचि रुचिर करे।
अपरमपार अगोचर गोचर, अव्यय अद्‌भुत रूप धरे॥
निरंकार निलेंप निरजन, नित्य पुरुष श्री विमल वरे।
जयति जयति गोपाल गोप वर, पारब्रह्म ब्रह्मादि परे॥४८॥

भुजंग प्रयात

तबै सासनै विष्नु जू आप दीन्हें।
सबै लेहु सिच्छा जु पै जाइ कीन्हे॥
कला देव देवी कलंकै नसी है।
सु एकादसी नाम एकादसी है॥४९॥

यहै जो व्रतै सो व्रती सुध्यभावै।
करै शक्ति तै भक्ति, सो मुक्ति पावै॥
तजै काम क्रोधं, रु मिथ्या न भाषै।
पर-द्रव्य—निदाहि, हिसा न राखै॥५०॥

निसा वासुदेवं भजे, गीत नादं॥
विनोदं कथा प्रेम सौं श्रोण स्वादं॥
व्रतैं भाव सौं, सु व्रती मोहि भावै।
महा पुन्य एकादसी, सुध्य भावै॥५१॥

दोहा

बहु विधि सिच्छा देत हौं, रचे सुमंगलचार।
लै आए अमरावती, अमर करे तिथि वार॥५२॥

४९. सासन : आज्ञा। विष्नु : विष्णु। नसी है : नष्ट होना।

छप्पै

सकल देव सक्रादि, सर्व, विधि, श्री हरि पूजें।
कहें जुगल कर जोरि, प्रभु न हम जानत दूजें॥
हे मुरारि त्रिपुरारि वरहि विध्वंसनकारी।
करुणामय गोपाल, सर्व विधि संकटहारी॥
इमि विनय विबुध बहुभाँति करि, व्रत धारण सब ही धरिय।
रवि-बंस राज रूपमंगद, भुव लोकहि विस्तर करिय॥५३॥

सोरठा

भरतउवाच—

बूझे भरथ बनाइ, रूपमंगद व्रत किमि लहे।
सो न कहो समुझाइ, जिहि विधि पाए भूप व्रत॥५४॥

चौबोला

रिषिरुवाच—

समै एक, रूपमंगद राजा।
गए जु मृगया, सहित समाजा॥
हने जंतु, नाना विधि जाई।
बहुरे पुर कौं हरष बढ़ाई॥५५॥

गहनमाह इक अद्भुत मान।
निरखे भुव पर सुभग बिवान॥
पुरुष एक अति सुन्दर रूप।
तिनसौ बूझे बिहंसत भूप॥५६॥

दोहा

राजा वाच—

कौन आयु, किहि दोष तें, पतन भए भुव आनि।
सो सब बरनि हम सौं कहौ, तुमहि सकत नहि जानि॥५७॥

---

५३. रूपमंगद : रुक्मांगद, एक राजा।
५५. बहुरे : लौटे।
५६. गहन : घना जंगल।

मदन छंद

गंधर्वोवाच—

हैं जु हम गंधर्व जानहु, सर्व गुननि निधान।
पंच रिषि तप करत ते, हम करे तने अभिमान॥
जात व्योम बिवान में चढ़ि, ढिकिलि तिन इतराइ।
कोपियत कै कहत हीं, पत भए भूतल आइ॥५८॥

दोहा

हम जु कहे कर जोरि तब, परी भूलि प्रभु देव।
श्रापानुग्रह कीजिअे, हैं करने निज सेव॥५९॥

सोरठा

पंचरिषि—

अवधपुरी भुव जाइ, गह्वर गरबी गहि रहौ।
परसै सो पद आइ, व्रती होइ एकादसी॥६०॥
अब लौं सुने न कान, कौन सुव्रत एकादसी।
जिहि फल एतक मान, ताहि क्यौं न दृढ़ सेइयै॥६१॥

मदन छंद

गंधर्वोवाच—

कालिह गौ व्रत बीति भूपति, करौ तुम उपकार।
कालिह को कोइ पर्‌यौ लंघनु, होइ सहर मझार॥
कहे नृप तब तनक कौतुक, नगर ढोल देवाइ।
सबै ठौरनि सबै पूरन, छुधित होइ न पाइ॥६२॥
सबै सब विधि सहर सोवे, नहिन निकस्यौ कोइ।
रजक मार्‌यो रजकिनी, निसि परी भूखी सोइ॥
कहत हीं तिहि ले गए सब, हँसी लोग सुजान।
नेक परसत चरन कै चढ़ि, चढ़े ब्योम बेवान॥६३॥

---

५८. ढिकिलि : ढकेल दिया। कोपियत : क्रोध करके। पत : गिर पड़ा।
५९. सेव : सेवा।
६१. एतक मान : इतना सम्मान।

थकित भे लखि चकित पंडित, नृपहि बूझे गाथ।
कहैं विधि-मति सों सबै, उन करें अवधि नाथ॥
विष्नु व्रत एकादसी फल, हैं सु भूप अनंत।
वासुदेवहि प्रिय सदा, यहि व्रतहि धारैं संत॥६४॥

यहै कहि अति चले आतुर, कै सु सबनि प्रनाम।
चित्ररथ के हैं सु पौत्रक, कहैं चित्रक नाम॥
सकल पुर लखि व्रतहि साधे, वासुदेव सनेह।
तासु के फल स्वान सूकर, गए स्वर्ग सदेह॥६५॥

दोहा

इहि बिधि के इतिहास तें, करं कहा करि जज्ञ।
करि आए करते रुबें, राम सदा सर्वज्ञ॥६६॥

छप्पय

श्री राम—

सुनि श्री राम विचार कहें, यह अवधि आदि व्रत।
सदा चारि फल दानि, जानि यह गहे भागवत॥
दुंदभि दीह दिवाइ, सबनि यह आयसु दीन्हे।
इतो पुन्य नहि और जज्ञ आरंभन कीन्हे॥
गोपाल सुनत निज सीख यह, सबनि नियम उदकै गहे।
यह जानि प्रथम एकादसी, राम सब पुर रहे॥६७॥

गीतिका

सुनि भरत लक्ष्मण सत्रुहा सब, विनय नारद सों करे।
यह कठिन व्रत एकादसी, विधि एक सम नहि जग भरे॥
करि बहु काम आतुर, क्रोध आतुर, छुआ आतुर, बाल हैं।
करि जाप तप व्रत नेम जितहि न, कौन तिनहि हवाल हैं॥६८॥

---

६५. चित्र रथ : एक गंधर्व का नाम। उदकै : जल।

दोहा

करं कौन विधि तं, सुनर इंद्री चपल सुभाइ।
यह कारन मुनि जू कहौ, संसय उपजौ आइ ॥६९॥

निसिपालिका छंद

सक्ति भरि भक्ति हरि भाँति नर जो करैं।
धारि सतसंग श्री राम उर मैं धरैं॥
नाम हरि विष्नु श्री कृष्ण नारायनं।
वासुदेवहिं भजै, होइ पारायनं ॥७०॥

कोटि जप, कोटि तप, कोटि मख विधि रचैं।
कोटि गौदान व्रत साधि कोटिन पचैं॥
कोटि विधि कै जु सम ऐन सबहिन धरे।
राम गोपाल गोविंद श्रीधर हरे ॥७१॥

राम चरनोदकं, नेम निहचै धरे।
राम को अर्पि कै, उदर सुख ही भरै॥
राम को नाम लै, काम करिबो करै।
राम निजु नाम की, लाज सुख ही परै ॥७२॥

रुचिरा छंद

बिहँसि मंद मधुराधर रघुवर, मुनिवर के मुख चाहि रहे।
सकल लोक रचना लखि जाने, को तुम तं अति मतहिं लहे॥
सुनि मुनि बिहँसि चले दै आसिष, सब कर जोरि प्रनाम करे।
अनुजनि सहित राम मृदु विहँसत, अति आनंद विनोद भरे ॥७३॥

दोहा

सारद नारद सेष सिव, करत सदा उर जाप।
जथा सुमति गोपाल गुनि, बरनत राम प्रताप ॥७४॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां एकादसीव्रत-कथा वर्णनोनाम अष्टादसो अध्याय: ॥१८॥

---

७१. ऐन : घर।

राम-वनागम

१९

मालिनी

जित कित पुर बामा, राम सोभा निहारैं।
अति हित जुत माता, नेह तें प्रान वारैं।
सकल तियनि श्रेणी, मैथिली मंद हासैं।
रघुपति तिरछौहैं, चाहि भौंहैं विलासैं ॥१॥

घनाक्षर

बैठे महाराजा भौंन भोजन कों दसरथ। दाहिने भरथ लैं कें राम हरषाए हैं।
बायें ओर सुंदर कुँवर दोऊ देखि-देखि। हुलसत ही मैं तीनों लोक निधि पाए हैं॥
सीता जू की परसनि बिधि सों बिलोकि सासु। हँसति हरखि महामोद उपजाए हैं।
भनत गोपाल भोग छप्पन विधान घनें। रसना रसीली ओरि अमीरस नाए हैं ॥२॥

दोहा

भाँति भाँति ज्यौंनार की रुचि वरनत हरषाइ।
राम सिया नैननि रसें, मधुराधर मुसक्याइ ॥३॥

राग सारंग मदन छंद

भोजन करत श्री रघुवीर।
संग भूपति कें सुहाये, करैं भरथ समीर॥
खेंचि कर रघुनाथ तीनहूँ, अनुज लीन्हें पास।
करहिं भोजन अधिक रुचि रुचि, रंग हास विलास॥
भोग छप्पन भाँति बहु बहु, स्वाद षट रस पाइ।
गंधवाह सुगंध मंदिर, मोद सों सरसाइ॥

विहँसि विहँसि परोसि बोलति, जनकजा तिहि बार।
वधू लछमण शत्रुघन की, रची यह ज्यौंनार॥
सुनत दसरथ राज बोलें, राम तन मुसक्याइ।
आजु की रुचि राचि रसना, स्वाद नहि कहि जाइ॥
करत अचवन सबनि आए, ड्वा पान प्रसून।
बसन भूषन भूप दीन्हें, सबनि तें तिन दून॥
कहैं कौन विलास प्रतिदिन, रूप रंग रसाल।
सबनि हिय अभिलाष पूरे, राम जन गोपाल॥४॥

दोहा

चले महल रघुनाथ तब, अतिय विलंबित मान।
करी जु सुधि परजंक की, निद्रा बस भगवान॥५॥
त्रिपद करे त्रिभुअन तबै, अब अैसे सुकुमार।
रंगमहल कौ द्वार भौ, पहुंचत कोस हजार॥६॥

घनाक्षर

झूमि-झूमि इत-उत झुकि से परत देखि। तौ लौं केलि कीन्हीं सिय चित के चयन कौं।
चंद-मुख चाहि मानो मूंदे अरविंद नैन। इंदीवर नैनी चली साजि के सयन कौं॥
पौढ़े बनि जुगुल किसोर हैं सुखोपति मैं। सख को कहै को, मन सोच भौ मयन कौं।
नवल सनेहनि विभावरी वितीत होत। जु बली जगाई राम राजिव नयनकौं॥७॥

राग बेरावर, सवाई छंद

जनक कुंवरि अलि आइ जगाई।
सलजौ ह्वै दोऊ उठि बैठे, सुंदरता तिनकी अधिकाई।
नैननि नींद भरे निसि जागे, घूमत से रस मादकताई।
अलि मानो मकरंद अघाने, कवल कोस तें निकसि न जाई॥
लटपटि पाग, पीत पट ओढ़े, बाहिर कौं निकसे रघुराई।
मनहुं मतंग केलि कंदर तें, चलत मंद गति गरब महाई॥
बलिहारी गोपाल दुहिन की, जुगल किसोर सदा सुखदाई॥८॥

---

६. त्रिपद—बावन अवतार में तीन लोकों को तीन पैर (डेग) में नापना।
७. चयन : चैन, सुख। सुखोपति : सुखदायक पलँग।

दोहा

इहि विधि करत बिलास बहु, रंग महल सिय राम।
अवधि नगर अति हरख सब मंगल धामनि धाम ॥९॥

छप्पै

इहि अंतर नृप राज—कुँवर, दोउ निकट बुलाए।
रथ भूषन पहिराइ तबहिं, ननसार पठाए॥
चले तबहिं सिर नाइ भरत, सोदर जुत सरसे।
मानि सीख सुख पाइ, चरन रघुवर के परसे॥
ततकाल भ्रात दोउ प्रात ही, कंक देस आगम करे॥
कोविद विचारि परपंच गृह, गुनि आगम विस्मय भरे॥१०॥

सोरठा

इतै अवधि सुखधाम, भोग विलास विनोद लखि।
सब रस भोगत राम, देव सभा नारद गए॥

निसिपालिका छंद

देवरिषि देखि, सब देव आनंद भरे।
इंद्र सनमान करि प्रीति बहुधा करे॥
चरित भुव लोक की आपु कहिए सबै।
कौन कैसी कहाँ, होत कारन अबै॥१२॥

गीतिका

तब कहे नारद अवधि पुर, हम राम दरसन मैं रहे।
लखि नैन के सुख नैन जानत, जात नहिं रसना कहे।
सुनि कै जु बोले तबहिं सुरपति, अग्र सोच सुधारिऐ।
अब सकल उत्तर कोसला, सुख रासि अविचल टारिऐ।।१३॥

---

१०. ननसार : ननिहाल। कंक देस : कैकय देश। परपंच : प्रपंच। कोविद : पंडित, विद्वान।

नित रहत हास विलास भूले, सुरनि सुधि बिसराइ कैं।
जिहि भाँति राघव जाहि बन, सो भेद करिअे जाइ कैं॥
बहु भाँति बाल बिहार किय, अब भूमि भार उतारहीं।
रघुनाथ दीन दयाल ह्वै, जिमि देव संकट टारहीं॥१४॥

त्रोटक

सुनि नारद आनंद मोद भरे।
अवधेसहि जाइ मिलाप करे॥
नृप कैं सु प्रनाम पुनीत भए।
करि आदर आसन भाँति दए॥१५॥

मिसुकैं मुनि भेदनि बात कहैं।
इतिहास अनेगनि प्रीति लहैं॥
अति ही हित तैं नृप चित्त गुनौ।
निज धर्म सनातन सीख सुनौ॥१६॥

सवैया

आगम भेद निवेदन कैं, मुनि भूप हिये अभिलाष बढ़ाए।
राखि मखैं, मिथिलाधिप कैं पन, राजन के मद मारि ढहाए।
बैस जुवा पुरुषारथ के, सुत तापर हैं रिषिराज पढ़ाए।
भंजि सरासन संकर राम, गोपाल दुजेस के चाप चढ़ाए॥१७॥

दोहा

आप भये नव सहस के, सुनौ सीख नृप येक।
राम जुवा, किन कीजिये, राजतिलक अभिषेक॥१८॥

पाठान्तर—१७. निवेदनि : निषेदन (१,२)

---

१८. नव सहस : नौ हजार वर्ष (राजा दशरथ की आयु दस हजार वर्ष की थी)।
जुवा : युवराज।

छप्पं

राजतिलक अभिषेक, राम लालहि किन कीजं।
बंठि रिषिन के साथ, सुफल नैननि करि लीजं।
सुनि हरषें भुवपाल, धन्य मुनि सीख तिहारे।
यहै निसा दिन सोच, हृदय में रहत हमारे॥
तिहि समय वसिष्ठहि बोलि नृप, करि प्रणपति सुभ दिन धरे।
यह चवनि अवधि जन सुनत हीं, पुलकि अंग आनंद भरे॥१९॥

उड़ियाना

अंतहपुर बैठे नृप, साजि मंत्र-शाला।
लीन्हें तहँ प्रीति सहित, बोलि रामलाला॥
बैठे ढिग लै जु कहैं, सुंदर मृदु बानी।
कालहि अभिषेक है, सु कीजै रजधानी॥२०॥

भाँति भाँति सीख सुमति, नारद मुनि दीन्हें।
मानस मम संतत जोइ, सोई विधि कीन्हें॥
ताते सिय बधुहि सहित, संजम व्रत कीजै।
सिंघासन बैठि आपु, राज तिलक दीजै॥२१॥

हम तौ बहु राजभोग, कीन्हें सुख अंगे।
अब तौ आप कीजै मिलि, बैठि रिषिन संगे॥
यह सुनि रघुनाथ सकल, देव चरित जाने।
विहँसत सिर नाइ चले, कौतुक से माने॥२२॥

निसिपालिका छंद

केकई महल पुनि, आपु नारद आए।
वंदि मुनि-चरन, कर टारि बैठक दए॥
नलिन मुख मलिन लखि, बैन हित के कहे।
चाह हम अवधि पुर और से है लहे॥२३॥

---

१९. प्रनपति : प्रणति, प्रणाम। चवनि : चारों ओर चलनेवाली चर्चा, अफवाह।
२३. कर टारि : हाथ से उठाकर। चाह : समाचार।

सकल यह राज श्री, देत नृप राम कौं।
भरथ के हेत आए जु तुम धाम कौं॥
राज औ रंक जग, आपनौ सुख चहै।
बात साची यहै, बेद बानी कहै॥२४॥

चौपैया

सुनि यौं मुनि बानी, सोकित रानी, अतिहित पीर बखानी।
कीजे कछु काजे, जिहि बिधि छाजै, नहि तुम ते कोइ ज्ञानी॥
यह जो मन लागो, जु पै सुहागो, बर प्राची उर मानी।
कछु दिन बन बासें, भरत बिलासें, फिर रघुबर रजधानी॥२५॥

सोरठा

बरस चतुर्द्दस राम, करें तपहि मिलि तपिन मैं।
भरथ भोगवें धाम, यह बर नृप सौं जाँचिजे॥२६॥

दोहा

इहि बिधि नारद सीख दै, जात भए हरषाइ।
मनहीं राखी बात सब, समय तुलानौ आइ॥२७॥

चौबोला छंद, राग सारंग

आजु सखी इक राज भवन तें, नई चाह लै आई।
कनसुइन सुभ चली चवनि है, रामहि होति रजाई॥
चहल पहल अति महल महल मैं, कहैं तरुनि हरषाई।
जीवन सुफल होहिगे सब के, भूतल सकल भलाई॥
साजत साज राज परिचारक, सुदिन आइ नजिकाई।
सकल रतन भूषन मनि मोतिन, बसन सुगंध महाई॥
रामचंद्र की सकल राजश्री, जन गोपालहि भाई।
रघुबर की रानी कहवेंहैं, जनक राज की जाई॥
नवल सनेह सिया रघुबर की, सबन मोहिनी मेली।
राज भवन में मलिन केकई, मनहीं दुखित अकेली॥

---

२५. प्राची : पुराने जबाने (जमाने) का।
२७. तुलानी : पूरा हो गया।

कहती जाइ अली इक तिन सौं, तेन भेद एह पाई।
चाहत भूप देन को प्रातहि, रामहि सकल रजाई॥
जो उनकी भौहैं असरेवैं, कहां भरथ जनमाई।
ठानि मान गोपाल भूप सौं, राज रवनि अनखाई॥२८॥

गीतिका

सुनि चाह यह सखि को कही, तिय गही निज गुर मान कों।
नृप राज आए महल में, नहि दई पानी पान कों॥
तब मंद आदर निरखि बोले, मलिन दुति मुख मंदु है।
यह कौन कारन तैं विदूषित, कहो अब प्रिय दंदु है॥२९॥
तब कही गदगद कंठ सोकित, प्रीति जो निजु है सही।
वह पाछिली बरदान पाऊं, देन जो कछु मो कही॥
नृप देव दनु संग्राम तैं, जय पाइ के आए जबैं।
सर वृष्टि लाघव के किये, वहु पीर भो अँगुठे तबैं॥३०॥
अति होत व्याकुल मेलि मुख में, सकल वेदन हौं हरी।
तब देन कछु बरदान बोले, देहु पहुँची सो घरी॥
सुनि सोचि नृप सुधि के जु कहियो, आजु औसर नाहि।
यह राज श्री रघुनाथ को, सुख देखि जाँचौ जाहिनैं॥३१॥

संखधारी छंद

रानी—

सुनी भूप बानी।
कही कोपि रानी॥
सबै बान जानी।
भले आपु दानी॥३२॥

---

२८. चाह : समाचार। कनसुइन : कानाफूसी। रजाई : राजत्व। नजिकाई : नजदीक। जाई : बेटी। असरेवैं : सेवा करना। राज रवनि : राज रमणी, रानी। अनखाई : रूठना, खीझना।

२९. दंदु : द्वंद्व।

३०. पाछिली : पिछला।

३१. जाहिनैं : जिसको।

कही हौ जु मानी।
बड़े आपु ज्ञानी॥
लखी हौं सयानी।
करौ राजधानी॥३३॥

छप्पै

राजा—

सुनि राजा अनखाइ कहँ, हम सौं सुनि रानी।
दई सीख यह कौन, कौन औसर पहिचानी॥
नास काल विपरीति रीति, कछु कहिय न आवै।
जानि परी बरदान साथ, निजु प्रान सिधावै॥
अति निर्दय हृदय कठोरमय, सदय हूँ न करुना धरी।
अब माँगि माँगि मन काम जोइ, होइ सही विधि की करी॥३४॥

सवैया

रानी—

होनिय होइ सु होइ सही अब, दीजिअं भूप वहै बरदानैं।
राम तपै तपसा तपीसन मैं, वर्ष चतुर्दस कौं परिमानैं॥
तौ लगि राजसिरी सिगरी, पुर औधि भरथ्थ की सासन ठानैं।
फेरि सबै प्रभुता रघुवीर की, या पर है कछु बात न आनैं॥३५॥

मालिनी

राजा—

सुनत दुसह बानी, बान तैं तिच्छ लागीं।
धिक मति गति तेरी, भाग श्री भोग भागी॥
यह कहि उठि राजा, और धामै सिधारे।
कहत मनहि, देखी आप प्राची हमारे।।३६॥

---

३६. तिच्छ : तीक्ष्ण।

निसिपालिका

चारिहूं जाम निसि, चारि जुग से भए।
भूप मति शिथिल गति, मानि कृत हैं लए॥
राम सिय धाम उत, नारि मंगल रचैं।
सकल पुर रंग बहु, हुलसि गावैं नचैं॥३७॥

भोरहीं राज जन, साज राजस सजैं।
घोर घन से घनैं, जोर नौबत बजैं॥
देवगन देखि मन सोचि कौतुक हँसैं।
राम परब्रह्म, रस-रंग रस ही रसैं॥३८॥

चचंरी

मंजन करि आजु जनक कुँवरि राज राजैं।
हुलसित राजीव नैन, राजतिलक काजैं॥
जोरी सुंदर उदार, वारौं रति कोटि मार। सरस रुचि रुचि सिंगार नागरि पुरनारी।
भुवनमनिगनअपार,जगमगिरहेहियनिहार।जोतिन मुख झकनिदार सारी जरतारी॥
सोभा बनि ठनित राम, विहँसि चले नृपति धाम।हुलसैं नर नगरनारि, चंद्रवदनिसारी।
जितकितमंगलविलास,गावतगोपालदास।राघवमुखनिरखिहास,मोहीसुकुमारी॥३९॥

रुचिरा

विहँसत मधुर अधर रघुनंदन, पितु पद बंदन जाइ करे।
जलज नैन तकि जलद नैन नृप, गदगद कंठनि स्वांस भरे॥
बरष चतुर्दस करहु गहन तप, बहुरि अवधपुर राज करो।
मम निजु दोष रोष छमि राघव, देव चरित सब हृदय धरो॥४०॥

---

३९. झकनिदार : चमकीली।
४०. जलज नैन : कमल के समान आँखोंवाले श्री राम। जलद नैन : आँसुओं से भरी आँखें।

निसिपालिका छंद

सीख सुनि, तात के राम पद-रज लए।
लाख अभिषेक तें हरष बन सुख भए॥
चलत रघुनाथ कै भूप आरत रटैं।
रंग रस हास को, सिंधु मानो घटैं॥४१॥

दोहा

अद्भुत रचना जिन रचें, तिन रचि रचैं चरित्र।
बरनत हित गोपाल जन, राम प्रताप विचित्र॥४२॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां श्री राम बनागम वर्णनोनाम येकोनविंसोध्यायः॥१९॥

श्रीराम-वन-गमन

२०

विदोहा

हरख सदन रघुनाथ जू, जननी सदन गए।
बंदत चरन अनंत तें, दंद बहाइ दए ॥१॥

सोभा छंद

श्री राम—

सुन्यौ रानी-बानी, नृपति बन दए, चित्त चिंता न कीजौ।
समै औरें जानौ, विधि गति, प्रभु कौ सासतें मानि लीजौ॥
करें कार्यां देखौ, भरथपुर इतें कारनें सौ बिचारौ।
बधू राखौ पासें, बहु बिधि हित दै, धारना तत्व धारौ ॥२॥

उड़ियाना

मातोवाच—

सुनि सुनि रघुनाथ गाथ, जननी बिलखानी।
कौन कुमति भूपति यह, ठौर आजु ठानी॥
पूरन अविवेकहि, अभिषेकहि करि जानी।
रामहि बनवास सकल, भरथहि रजधानी ॥३॥

जानत तिन मंद भागि, विधि गति नियरानी।
यातें विपरीत कहा, बूड़े बिनु पानी॥
मोहि न कछु अवधि चाड़, करिहौं मनमानी।
नागिनि सी सौति डसी, गरल दाइ दानी ॥४॥

---

२. रानी बानी : रानी की बात। समै : समय।
४. नियरानी : निकट। चाड़ : इच्छा।

चौबोला राग सारंग

श्रीराम—

अब के मातु विनय सुनि लीजैं ।
सिर कर जोरि कहत रघुनंदन, ऊतरु बहुरि न दीजैं ॥
मात पिता गुरु नृपति अवज्ञा, जानि बूझि क्यों कीजैं ।
जोग जज्ञ व्रत दान कोटि तें, यह पातक नहिं छीजैं ॥
जिन सिर आजु राज श्री राजत, सकल सिध्धि जय जीजैं ।
पतिव्रतनि केवलपति-रावन, और न भूलि करीजैं ॥
तन मन धन संकल्प कोटि विधि, करि सुख वास वसीजैं ।
कहि गोपाल राम जननी सों, सुकृत सुधा रस पीजैं ॥५॥

दोहा

बहु विधि मात विषाद की, को बरने दुख गाथ ।
जनक सुता महलनि लये, लछमन-जुत रघुनाथ ॥६॥

मदन छंद

जनक नंदिनी सदन आये, राम आनंद कंद ।
लजित पाछें लषन आछे, छवि सु पूरन चंद ॥
उठी विवि कर जोरि सीता, मति पुनीता प्रीति ।
विनय जुत प्रभु सों सु बूझी, राज कुल की रीति ॥७॥

जदपि श्रवननि मैं सुनि गति, हुलसि अति मति नेहु ।
कहे राघव लाल हम सों, सीख यह सुनि लेहु ॥
हमहि कानन तात दीन्हें, सार मन्त्र विचार ।
तरुन वय तप साधिअे करि तपिन संग विहार ॥८॥

आपु द्वै मह एक करिअे, धारि मन निहकाम ।
सासु सेवन को करौ, के जाहु जनक सुधाम ॥
और कछु कहनें न यापर, सार मंत्र रसाल ।
सकल मंगल जुगल जोरी, चरन रज गोपाल ॥९॥

---

५. रावन : आराधना । वसीजैं : बसिये, रहिये । ऊतरु : उत्तर ।
९. द्वै मह : दो में से एक । यापर : इसके बाद ।

मंडल छंद

सीतोवाच—

प्रभु चरनारविंद रस पीवत, रुचि न रही कछु और।
परमानंद विलास विलसतं, कहा विरह को ठौर।।
जदपि विदेह राज की जाई, कितिक मोहि तप त्रास।
पावक लपट लगत अति सीतल, मानहु मलय सुवास।।१०।।

रवि-कुल-वधू राज-कुल-मंडन, ठकुराइन भुव लोक।
अष्ट सिद्धि नव निधि सी चेरी, ज्यों घर त्यों वन ओक।।
ता तें जाऊं न रहौं राज गृह, प्रभु सनेह उर माल।
मुसक्याने राजीवनैन सुनि, लगी लगन गोपाल।।११।।

दोहा

श्री राम वाच—

बिहंसि कहे रघुनाथ जू, सुनिये लच्छन लाल।
पितु सासन भरि कीजिओ, मातन को प्रतिपाल।।१२।।

भरथ भेव लखिओ सबै, हित अनहित की रीति।
जिनहि खेलाए गोद लै, किहि विधि राखत प्रीति।।१३।।

झूलना छंद

लछमण—

अरज रघुराज सों आजु कीजे।
श्रवण दे एक चित सुनहु सारंगधर, छोड़ि सत काज सत लाख जीजे।
राम माता पिता, राम सोदर सखा, राम रसनाम, रसनानि पीजे।।
राम हित, राम वित, राम चित चातुरी, राम आधार केवल पतीजे।
राम पद पद्म, सुख सद्म पद्मालया, निमिष विश्लेष सों नेह छीजे।।
मर्थ के भेद सों अर्थ कछु नाहिनैं, स्वारथं सकल, वहि जान दीजे।।
प्रभुहि सुख सों सुखी, प्रभुहि दुख सों दुखी, दुख रु सुख हेत, किहि सों कहीजे।
सकल आनंद के कंद गोपाल प्रभु, जानकी नाथ मोहि साथ लीजे।।१४।।

---

११. ओक : घर। ता तें : इसलिए।
१४. सारंगधर : धनुर्धर। सोदर : सहोदर। पतीजै : विश्वास करना। विश्लेष : बिलगाव।

रुचिरा छंद

सुमित्रा—

लच्छन बच्छ सुनौ मम सिच्छा, तन मन पन रघुनाथ भजौ।
निद्रा छुधा त्रिषा मदहिंसा, सकल देह सुख स्वाद तजौ॥
सासन-भंग कबहुँ नै कीजौ, जनक-सुता रुख विनय धरौ।
यह सिख सकल सुमित्रा दै करि, कहि तप आगम सुफल करौ॥१५॥

मोदक छंद

राम लला जु विनै इक है अब।
लच्छन की निजु लाज तुम्हैं सब॥
जानहु सेवक भूतल हैं नित।
दोष नहीं प्रभु आनत हैं चित॥१६॥

मंडल छंद

निरखी जाइ सुमित्रा तबही, नहि कौसिल्यहि चेत।
गई बूड़ि मति सोक सिंधु में, राम लाल कै हेत॥
करि समीर मुख धोइ जगाई, खुली पलक तब नीठि।
परी मुरछि फिरि धरनि राम रटि, परे न रघुबर डीठि॥१७॥

यह सुधि पाइ राम सिय लछ्छन, गए ततछ्छन आइ।
लबे जगाइ हरषि जननी कौं, लखि लीन्ही उर लाइ॥
करि मनुहारि जानकी बिनई, अति न करौ अब नेहु।
राखि धर्म गोपाल राज श्री, समै समुझि किन लेहु॥१८॥

झूलना छंद

सुमित्रा—

जान किन देहु वन राम लालै।
जानती हौं कछू देव-गति राज-गति, कौसिला छोड़ि अब मोह जालै॥
कौन सुख केकई गोद भरि लेहिगी, दोष बिधना लिखी तासु भालै।
भरथ रघुनाथ कछु दोइ नहि कैसिहूँ, छोड़ि दै बावरी सौति-सालै॥

---

१५. सुख सदम : सुख धाम। पद्मालया : लक्ष्मी।

१६. बच्छ : वत्स। पन : प्रण। नै : नहीं।

देखि धौं करतुका कुँवर वह आइ कैं, हेत अनहेत ज्यों चालि चालै।
जानि तब लेहिगी, नेह चित देहिगी, देहु एकै दास प्रीति पालै॥
सुनत अति आतुरी, भूलि चित चातुरी, जानकी पा परी, बोधि हालै।
देखि सोकित भयी, राम करुणामयी, दीन गोपाल जन कौ दयालै॥१९॥

दोहा

बहु विधि सबन प्रबोध दै, जिहि विधि जिहि गुन गाथ।
चलै अवधि तैं अनुज जुत, सँग सीता रघुनाथ॥२०॥

द्रुमिला छंद

कटि तू न अखै धनु कंध धरैं, तन भूषन भूषित भाँति भले।
तजि भोग बिलास बिनोद जिते, रस रंगन के अनुसैन दले॥
रघुवीर बिलोकि न धीर धरैं, कहि धौं बिधना बिधि कौद न छले॥
निहकामिहि तैं मन काम सबै, तजि राम जबै बन धाम चले॥२१॥

करषा

राम कैं चलत, सब अवधि पुरजन चले। वृद्ध बालक भले, भाँति भाँतिनि कढ़े।
राखि हारे घने, रहत कोउ न कहूँ। लखन सिय राम जब, जाइ रथ पर चढ़े॥
मिलत कहुं गैल नहि, भीर जित कितठिली।उदधिजनुसातऊ उछलिछविसौं बढ़े।
देव मंगल करैं, इंद्र आनंद भरैं। नास दसकंध मुनि, बेद ब्रह्मा पढ़े॥२२॥

जाइ रघुनाथ भे, ग्रामनंदी, जबै। देखि आतुर सबै, मंत्र नूतन गढ़े।
उतरि ठाढ़े भए, रैनि विश्राम कौं, सबन सुख सोवतैं, मोह निद्रा बढ़े॥
सारथी कौं सबै, सौंपि भूषन दए। भेष तापस किए, देखि भूपति डढ़े।
जानकी राम वन धाम कौ चलत ही। नाम अभिराम गोपाल कीरतिपढ़े॥२३॥

दीपकल छंद

उत राम लखन निसि मत्र ठानि।
नर नारि नगर रहे घेरि आनि॥
मत कैं जु सारथिहि लीन बोलि।
तन भूषन बसन, विचित्र खोलि॥२४॥

---

२३. डढ़े: दग्ध।

पठए जु फेरि, नृप राज पास।
उठि चले आपु, तपसा बिलास॥
उठि प्रात लोग, सब रहिय हेरि।
कहँ भूप लए रघुनाथ फेरि॥२५॥

त्रिदोहा

पट भूषन लै सारथी, अंतहपुरहि गयो।
कौसिल्या दसरथ्थ कर, मानहुं अनल दयो॥२६॥

सवैया

देखि रहे पट भूषन भूपति, भूलि कहूँ न कछू कहि आवै।
बूड़ि गयो मन मोह-समुद्र मैं, पारन वारन थाह न पावै॥
नैननि राम सरूप रहे रमि, अंतर प्रीति वियोग न भावै।
बूझत और बनै न, सुनैं नहि मूरति वहे दरसावै॥२७॥

सोरठा

राजा—

कहन लगे नृप राइ, सुनि रानी कृत कर्म मम।
श्राप तुलायो आइ, श्रवण मातु पितु की कही॥२८॥

सवैया

ग्रीषम काल जलासय जंतुनि, साधि रहे सरघात मझारे।
सो समये भरि अंध-तनैं, जल आहत पाइ के सायक मारे॥
देखन जाइ भए तिन पास, कहे उन, "पाप करे अधिकारे।
मात पिता जल आरत हैं," सुनतैं भरि भाजन हौं पगु धारे॥२९॥

दोहा

मौनहि लै उन जलदए, तब बूझे उन बैन।
परखि कहे रे अधम तैं, कीन्हें सुत-बध अैन॥३०॥

---

२९. मझारे : मध्य। सो समये : उस समय। अंध तनैं : श्रवण कुमार।

सोरठा

लेहु नृपति अब श्राप, दंपति कहे वियोग सुत।
तुमहूं सुत-संताप, होहु जाइ के काल-बस ॥३१॥

दोहा

यह कहि राम सरूप मैं, नृपति समागम कीन्ह।
जैसे जोगी जोग तें, होत जोति लवलीन ॥३२॥

सब पुर हा हाहाकार भौ, नृपति भए गतमान।
राखे भूपति तेल मैं, कहें वसिष्ठ विधान ॥३३॥

दोधकल छंद

उत दूत गए ह्वै, भरत पास।
सुनि थकित भए, करि नेह त्रास ॥
रथ साजि बिदा ह्वै, गवन कीन्ह।
निसि लखे स्वप्न, सोभा विहीन ॥३४॥

दोहा

अति चिंता अति सोच उर, भरथ भए अति भीत।
हिलि-मिलि केकय राज सौं, लखे अवध विपरीत ॥३५॥

चले प्रात मिलि भ्रात दोउ, लखे अवधि दुति मंद।
पुरजन उडगन प्रात ज्यौं, कुहू निसा बिनु चंद ॥३६॥

घनाक्षर

भरथ वाच—

कैधौं रजधानी तजि राज श्री गई है रूसि। कैधौं कामधेनु थैन थाकी पय धार हैं।
कैधौं कल षोडस विहीन भै कला निधि है। कैधौं कमलासन कौं कमल तुषार है॥
ऐसी विधि चाहि, गति जात है कछू न कहि। सोचत बिसूरि मन मलिन अपार हैं।
देखि देखि अवध 'यहै कै और' कहि कहि। भरमत बार-बार भरथ कुमार हैं॥३७॥

दोहा

पुर सोकित अवलोकि कै, चैन न एकहु भौन।
हय गय गजिबौ को कहैं, सुक सारिक जहँ मौन ॥३८॥

रथ तें उतरे बेगि दै, सिघ पौरि दोउ भ्रात।
उठी रोइ सब मात हैं, अंतहपुर के जात ॥३९॥

छप्पं

कौसल्या—

बहु सोकित सुनि गाथ, भरत मातन मिलि ठानि।
लला तिहारे बिनहि इहां, बूड़ी राजधानी॥
नृपति भये गत-प्रान, प्रिया पाछिल वर पाई।
श्रवण मात पितु श्राप भोग, नहिं मिटी मिटाई॥
सिय सहित लखन रघुनाथ जू, पितु सासन तप बन गए।
तुम कौ जु लाज पुर अवधि की, केकइ उर सीतल भए॥४०॥

दोहा

मातु सुमित्रा कौसिला, कही भरथ सौं सोकि।
नृपति कर्म कृत कीजिऐ, गृह कृत सब अवलोकि॥४१॥

छप्पं

तबहि भरथ सब अवधि-राज-लोगहि हंकराए।
लै नृप सरजू तीर, साज बहु बिधि सजवाए॥
मुनिन सहित सुचि ह्वै, सु भूप कृत कर्महि कीन्हें।
हय गय कंचन धेनु, दान बहु विप्रन दीन्हें॥
बिस्माद सहित बिलखित कुवेर, अति हित रिषिन प्रबोध किये।
ततकाल लैन रघुनाथ कौं, चले भ्रात दोउ सोचि हिय॥४२॥

दोहा

चले कुँवर दोउ सोचते, रघुपति करन मिलाप।
अवलंबन गोपाल भनि, केवल राम—प्रताप॥४३॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल
विरचितायां श्री राम बनगमनोनाम बिसोध्याय:॥२०॥

पाठांतर ४०—लाज : लाल (१.२)

---

३९. रुसि : रुष्ट होना। लैन : स्रोत (अरबी शब्द)। बिसूरि : बिसूरण, शोक, सिसक सिसक कर रोना। भरमत : घूमना, धोखे में पड़ना।

भरत-अयोध्या-समागमन

२१

दोहा

इत बिरमत रघुनाथ सिय, लछछुन जुत हरषात ।
निरखे अति हीं रम्य थल, चित्रकूट गिरिजात ॥१॥

चर्चरी

रामचंद्र चंद्रमुखी चित्रकूट आए ।
मल्लिक मालतिय नाग केसरि करुनागुलाब,पुंज विविध मंजु नवल कुंज कुंजछाए ।
गुंजत अलिगन अभूत, मानहु बहु मदन दूत, देखतवनघन बसंत, अति अनंत आए ॥
कोकिल कल हंस मोर, सारिक चात्रिकचकोर,कोलाहलकरतसकल, आनँदउपजाए।
पीतअरुननीलधातु,अभ्रखझकमकझकात,झलकनिगिरिशृंगझहलि, झांईझहलाए॥
भल्लुक भिल्लादि भौन, सिंघन तें प्रबल कौन, बानर बाराह बाघ, गैंडहुँ अँड़ाए ।
डोलें रस रसनि मत्त, भूले मृग गन सुरत्त, मोहे बन जंतु सकल, निरखे मन भाए ॥
सुंदर अरविंद नैन, सोभा सत कोटि मैन, बोलत मुख अमिय बैन, मुनिन दरस पाए।
जोगीजनहृदयसार,जानकिवल्लभउदार,करतसुखदवनबिहार,जनगोपालगाए।।२॥

दोहा

पावन अतिहिं पयस्विनी, बहुत सु निर्मल नीर ।
सीतल मंद सुगंधमय, त्रिविधि निधान समीर ॥३॥

गहब सुहावन गहन गिरि, पैंसरनी सुखदानि ।
निरखि कामता हरषि कें, प्रभु बिरमत हित मानि ॥४॥

---

२. मल्लिक : मल्लिका, चमेली । मालतिय : मालती । नाग केसरि : एक सीधा सदाबहार पेड़ । इसके सूखे फूल औषध, मसाले और रंग बनाने के काम में आते हैं । करुना : एक वृक्ष ।

४. पैंसरनी : पयस्विनी । कामता : कामद गिरि ।

उतहिं भरत सत्रुघ्न-जुत, सोकनि बिकल सरीर।
सकल अवधि नर नारि लै, चले लैन रघुबीर ॥५॥

मदन छंद

भरथ निकसत, सहर निकसै, नारि नर अकुलाइ।
बाजि गज रथ साज राजस, भीर नहिं कहि जाइ॥
कढ़ीं तीनहुँ मात महलनि, व्याकुली एक साथ।
सबनि कैं अभिलाष बाढ़ी, दरस कौं रघुनाथ ॥६॥

चरन नागे, सीस मुकुलित, तोरि भूषन झारि।
भरथ सोदर, सहित धनु सर, दए भूतल डारि॥
देखि पुर सब भक्ति राघव, हृदय प्रीति अपार।
राज श्री सब राम कौ, सजि चले लैन अगार ॥७॥

दोहा

जित कित दुंदुभि दीह धनु, हय गय रथ चतुरंग।
चित्रकूट रघुनाथ पैं, चले जु प्रीति उमंग ॥८॥

घनाक्षर

एकैं कहैं सैन साजि धाए हैं भरथ गाजि। जै हैं कित भाजि, आजु आली रघुबीर हैं।
एकैं कहैं एक तन, एक मन एक पन। एकैं प्रीति रीति, जैसे छीर अरु नीर हैं॥
एकैं कहैं जानै कौन, राज छल भेदनि कौं। एक मन सदा कैसे बहत समीर हैं।
ऐसे सब सोचति हैं सुंदरि अवधिपुर। एकैं बिहँसाती, एकैं निपट अधीर हैं ॥९॥

रुचिरा छंद

भरथ चले रघुनाथ लैन कौं, साजि सैन अति सोच भरे।
है बिपरीति रीति सब हम कौं, लोक अलोकनि त्रास डरे॥
उनकी सकल राज श्री सोभा, उनहीं कौं सब सोभ खरे।
करि-करि ध्यान हृदय अभिअंतर, सब चरनव्रत धरनि धरे ॥१०॥

---

७. नागे : नंगा।

पाठांतर—रघुबीर : रघुनाथ (१,२)

घनाक्षर

भरथ्थ—

राम कौ बिरोध जानि, हम कौं पठाए उत। इत अभिषेक राज साज सजवाए हैं।
होत मति-मंद महा-पुरुष बिनास काल। तापस सुमंत्र आइ नारद बताए हैं॥
मोसें रघुनाथ के न किंकर भये, न ह्वै हैं। तिन सौं बिछोह करि कारन उपाए हैं।
सबहीं सुनाइ कहें, कोपनि भरथ अति। आपने ही पाप भोग भूप भरि पाए हैं॥११॥

दोहा

देव चरित्र विचित्र कौ, रचना कही न जाइ।
जोजन जोजन भरि चले, बिरमत सैन सुभाइ॥१२॥

करत त्रिसंध्या भरत हैं, करि रघुबर कौ ध्यान।
ताकी गजरिन मात कहं, कोटिन बजें निसान॥१३॥

स्रग्धरा छंद

बाजे बाजें सुहाए, जु जित कित महा, मंगलें मानि मंदे।
गावें नाना विधानें, गह गह सबहीं चित्त चिंता निकंदें॥
सोचें मोचें सकोचें अवधिपुर वधू, आरती वारि निंदें।
नाना रूपें निरूपें, भ्रमर मन करें, राम पादारविंदें॥१४॥

घनाक्षर

दुंदभी धुकारन तें दिग्गज गुमान तजें। व्याल लोक कलमलि कल ना परत है।
बेर बेर करत कुबेर हैं बिचार सोचि। दानव जहाँ लौ कोउ धीर न धरत है॥
धरि धरि ध्यान रघुबीर जू के बीर दोऊ। करुना रसानि बारि लोचन भरत हैं।
तीनहूं भुवन कोलाहल तें चकित मान। राम के भरथ जब आरती करत हैं॥१५॥

---

११. अभिषेक : विधिपूर्वक मंत्र से जल छिड़क कर राज पद का निर्वाचन। कारन : कारुण्य, दुःख। उपाए हैं : उत्पन्न किया है। किंकर : दास।

१२. जोजन : योजन—दूरी की एक नाप जो किसी के मत से दो कोस की, किसी के मत से चार कोस की और किसी के मत से आठ कोस की होती है।

१३. त्रिसंध्या : प्रातः काल, मध्याह्न और सायं—ये तीन संध्याएं हैं। गजरि : पहर पहर पर बजने वाला घंटा, चार, आठ और बारह बजने पर उतनी ही बार बार-बार बजने वाला शब्द। मात : समाना।

१४. चिंता निकंदे : चिंता का निवारण करना।

१५. कलिमल : पाप, कलुष। बारि : पानी।

सोरठा

अंतरजामी राम, भरत भक्ति पूरन लखे।
बिहँसे करुना धाम, अनख भरे लछ्छन तबे ॥१६॥

लछ्छन वाच—

सकल राज श्री साज, साजि भरथ हम पर चढ़े।
अज हुं न आई लाज, अनुज सहित मद खंडिहौं ॥१७॥

छप्पै

भरथ साजि सब सैन, गाजि आवत हम ऊपर।
करि प्रपंच घर भेद, भूप-पद पाए भू पर॥
सकल राज श्री साज, छीनि इहि ठौरे लेहुं अब।
बाननि हृदय विदारि, गरब गिरि ढाहि देहुं सब॥
यह कहि सु कोपि धनु सर खचत, कहें राम सिय तम छमहु।
अपराध उनहि कछु नाहिनैं, हित अनहित जानत हमहुं ॥१८॥

निसिपालिका छंद

श्री राम—

केकई मातुहुं, दोष कछु नाहिनें।
श्राप वर भूप कौ, श्रवन पितु आहिनैं॥
ताहि पर देव-गति की सु अब को कहै।
देह नृप कौं गए, सीख नारद बहै ॥१९॥

सोरठा

देखि लेहु अपराध, दोष बिना नहि रोपियें।
यह गति अगम अगाध, छमहु वछ्छ लछ्छ रखें ॥२०॥

---

१६. अनख : क्रोध, ईर्ष्या।
१८. तम : क्रोध। विदारि : विदीर्ण। खचत : खींचते हुए।
१९. आहिनैं : है।
२०. वछ्छ : वत्स।

छप्पै

मिले भरथ को आइ, सकल मुनि वृंद मलिन मन।
करि करि सवन प्रनाम, बंधु दोउ बंदे चरनन॥
विस्वामित्र वसिष्ट आदि, मुनि-वृंद सुहाए।
चित्रकूट श्री राम दरस कौं, ले सब आए॥
अवलोकि मात तिहुँ कंठ लगि, गिरि अश्रुनि अन्हवाइयो।
करुनानिधान करुना सहित, अनुज निरखि बिलखाइयो॥२१॥

उड़ियाना

दूरिहि तैं आवत तब, राम भरथ देखे।
दीनहु तैं दीन महा, लीन भगति लेखे॥
दौरि दुहुँनि चरन दुहुँनि, सिर धरि कर गाढ़े।
अंकनि प्रभु लाइ, बदन चूमि सोक बाढ़े॥२२॥

पूरि नैन जलज, जलद गिरि पर बरषाए।
प्रीति निरति, प्रेम परखि लछ्छन सलजाए॥
देखत सुर मुनि चरित्र, ठाने सब हाँसी।
सोक करत मोह सहित, अव्यय अविनासी॥२३॥

दोहा

अरस-परस सब ही मिले, जथा उचित बिलखाइ।
दुखिया ज्यौं दुखियै मिलै, कहि दुख कहाँ समाइ॥२४॥

मदन छंद

सकल मुनिवर निरखि, रघुवर उठे बिबि कर जोरि।
दै सु आसन, दुख बिलासन, रहे अध मुख मोरि॥
मात भ्रात समीप पुर-जन, घेरि श्री रघुवीर।
मुखन उतरु दे सकै कोइ, नैन बरषत नीर॥२५॥

कहत विधि-सुत कौसिकै मिलि, तजौ सब उर सोक।
अजर अमर भये न येकौ, जनमि कै भुव लोक॥
करौ वेद-विधान तैं, निजु पितृ-भक्ति विधान।
आइ देवन सहित दसरथ, लेंहि पिंड प्रदान॥२६॥

दोहा

सुनत तुरत रघुनाथ लै, गए पयस्विनि तीर।
बहु विधि बेद-विधान तैं, भए सुध्ध रघुवीर ।।२७।।

छप्पै

सब महरिषि मिलि, बेद-मंत्र आराधन कीन्हैं।
आए तहँ इंद्रादि देव, नृप दसरथ लीन्हैं।।
भए परम संतुष्ट, करे पूरन मन कामहि।
बरष सहश्रक आयु दए, सिच्छा-जुत रामहि ।।
कुल धर्म सहित प्रति पालियहु, प्रजा गाइ दुज दीन भुव।
गए सुरनि सहित सुर लोक कौं, सकल राज श्री धरनि धुव ।।२८।।

सोरठा

रिषिन सहित रघुराइ, रघुबसिन पावन करे।
बिनै भरथ किए आइ, अवधि पुरी पगु धारिअँ ।।२९।।

घनाक्षर

कैंतौ रघुनाथ पुर अवधि सनाथ कीजे। कैंतौ साथ लीजे और कहूनैं जु नाहिनैं।
जीवन अधार निरधार के अधार आपु। महिमा अगाध कछू मो पैं कहि जाहिनैं।।
फनि कैसे मनि, मन कामना के काम धेनु। चिंता के असेष चिंतामनि मन माहिनैं।
मीन कैसो जल हौ जू, दीन कैसे दीन बन्धु। बिरदकेलाज-काजहूजैंअवदाहिनैं ।।३०।।

दोहा

मुनिन प्रसंसा सब कर, धनि धनि भरथ सुजान।
जलज नैन सलजित भए, नहि तुम तैं कोउ आन ।।३१।।

घनाक्षर

श्री राम—

जैबे तौ लजैअे पितु सासन सकल भाँति। जैबे हीं बनत बन यामैं दोष नाहिनैं।
लीजे तुम साथ तौ अनाथ ह्वै हैं औधि-जन। जननी रहैंगी तीनौ कैसे भौन माहिनैं।।
या तैं अब कीजे काज, बचन दुहूं की लाज। रघुकुल राज तैं न राजा और आहिनैं।
कहतगोपालतातैंसुनियेभरथ लाल। लोक-लाज-काज सब काज निरवाहिनैं ।।३२।।

---

२९. बिनै : विनय।
३०. दाहिनैं : अनुकूल।
३२. माहिनैं : मैं। निरवाहिनैं : निर्वाह करना।

दोहा

पितु सासन है दुहिनि कों, करें दुहूं जब और।
तापर मम सासन टरें नहिं तुम कों कहुं ठौर ॥३३॥

दीपकल छंद

सुनि भरथ रहे मन लाज पाइ।
कर खेंचि निकट लए जान राइ॥
इन मातनि लै अब जाहु भौन।
कहि हैं जु सीख, करिहौ सु तौन ॥३४॥

सब अवधि जनन सुख दै अपार।
हम आवत तैं दए राज भार॥
सुनि भरथ जोरि कर कहत बैन।
अब सुनहु विनय राजीव नैन ॥३५॥

इन चरन—उपानह मोहि देहु।
हम हृदय परम इनकौ सनेहु॥
हँसि देत भए करुनानिधान।
सिर भूषन कीन्हें बहु-विधान ॥३६॥

रुचिरा छंद

सिय तिहुं सासन की पग लागत, उनि आसिष दै सीख दई।
लछ्छन की सब लाज तुम्हहि कौ, यह कहि कैं भरि नैन लई॥
अज्ञा भँग कबहुं मति कीजे, राम चरन चित नित रख हीं।
बन तप अवधि बिहातहि बिलसौ राज बिलासन सब सुख हीं ॥३७॥

---

३४. सीख : शिक्षा।

३६. उपानह : पनहीं, पद त्राण।

३७. अवधि : सीमा। बिहातहि : बीतते ही, समाप्त होने पर।

प्रत्युत्तर

लक्ष्मण चरन भरत के गहत, भरथ हृदय तब लाइ लए।
अब रघुबर तें अधिक हमारे, सब जननी की लाज दए॥
अज्ञा राम सीस धरि लीजौ, चित न गनौ कछु असम समै।
सेवक सदा भूलि को भाजन, प्रभु अपराध अगाध छमै॥३८॥

चर्चरी

राम रिषिन प्रनाम कै, सब सीख लै उनके भले।
भरथ अरिहा दै प्रदछिछन, अवधिपुर सब लै चले॥
चित्रकूट विचित्र रघुवर, चित्र प्रतिमा से तरैं।
देखि नीरद अंग गिरि पर, चित न इत उत को टरैं॥३९॥

प्रीति अंतहकरन की तकि, सबनि प्रभु आयसु दए।
भरथ कौं हम समहि गनियो, सुनत आनंद सब भए॥
चले लै सब भरथ सिगरे, संग राज समाज है।
सहित गुरुजन सकल पुरजन, और सब रिषि राज हैं॥४०॥

मालिनी छंद

भरथ रिषिन साथें, औधि के लोग कामैं।
सदन सब निवेदे, आपु नंदी सु ग्रामै॥
प्रति दिन पद पद्मै, पुष्प श्री-खण्ड अर्चें।
हृदि तदगति एकै, प्रीति श्रीराम चर्चें॥४१॥

---

३८. असम समै : अनुकूल और प्रतिकूल समय।
३९. अरिहा : शत्रुघ्न।
४०. समहि : समकक्ष।

पाठान्तर—४२. विविध गुरु (१) : विविध उर (१,२)

---

४१. अर्चें : अर्चना। पाँवरिन : खड़ाऊँ। गुरु : अगरु, अगरबत्ती

छप्पै

निरय नेम करि प्रात, पांवरिन पूजा धारैं।
बहु बहु मुनिन समाज, होम करि वेद उचारैं॥
सिंघासन विस्तारि, अंचि रचि गंध्र पुष्पमय।
धूप दीप नैवेद्य, विविध गुरु, ध्यान प्रीति लय॥
गोपाल प्रदच्छिन करत हीं, गह गह गह बाजन बजैं।
पुर अवधि नारि नर प्रति दिना, सध्या बंदन को सजैं।।४२॥

सोरठा

कबहूं उर सो लाइ, नैन भाल परसित करैं।
कबहूं सीस चढ़ाइ, भूषित रघुबर पावरीं ॥४३॥

घनाक्षर

कैधौं चरनारविंदहूं के करहाटक हैं। हाटक जटित मनि जोतिन निवासु है।
कैधौं तप त्रास तैं उदास ह्वै कैं आए उठि। पाए अनुरागन तैं राज श्री बिलासु हैं॥
भनत गोपाल कैधौं अवधि प्रताप छत्र। केते छत्र-धारिन कौं अविचल वासु है।
कैधौं राम-पद-रथ हूं के हैं भरथ रथ। कैधौं ईस-सीस रजनीस को प्रकासु है॥४४॥

दोहा

एहि विधि प्रतिवासर सदा, भरथ तजे सब दंद।
रामचंद्र पद पांवरी, परसत परमानंद ॥४५॥

सोरठा

एहि विधि नंदीग्राम, रहैं भरथ रमि प्रीति त।
एकै तन मन काम, जानें राम प्रताप कों ॥४६॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल
विरचितायां भरथ-अजोध्या-समागमनोनाम
एकविंसोध्यायः ॥२२॥

---

४४. करहाटक : कमल छत्र। हाटक : सोना।
४५. नंदीग्राम : अयोध्या नगरी के समीप का एक गांव जहां राम के वनवास काल में भरत ने तपस्वियों की तरह जीवन बिताया था।

श्रीराम-पंचवटी-प्रवेश

२२

छप्पै

चित्रकूट इत राम सहित, लछ्छन हरषाने।
अरध निसा तप पुन्य भूमि, मनहीं उनमाने॥
इहिअंतर सुरराज सहित, देवन जुत आए।
करि पूजा प्रणपत्य, दिसा दच्छिनहि बताए॥
अति रम्य पुलिन गोदावरी, बन बिहार बहु अनुसरहु।
चलि पंचवटी रघुनाथ जु, पर्णकुटी पावन करहु॥१॥

सोरठा

सुनि हरखे श्री राम, बिदा करे सब सुरन को।
बिहरन को बन धाम, चलें दिसा दच्छिन तबै॥२॥

चंडी छंद

बहु बहु निरखत गहन सुहाए।
मह मह मोद मरुत सरसाए॥
कहुँ बिरमत, कहुँ चलत हुलासें।
रघुबर सिय लछ्छन बनवासें॥३॥
अभिनव घन वपु गोर किसोरें।
बहु बन जीवन चित बित चोरें॥
खग मृग निरखत नैन अघावें।
भिल्लिनि भिल्ल जु भल्लुक धावें॥४॥

---

१. पंचवटी—रामायण के अनुसार दंडकारण्य अन्तर्गत नासिक के पास एक स्थान जहाँ रामचन्द्र जी वनवास में रहे थे। सीताहरण वहीं से हुआ था।

दोहा

कहुं बहु भिल्लिनि भिल्ल हैं, कहुं बहु सुंदर ग्राम।
निरखि औचको चकि रहैं, अद्‌भुत छवि सिय राम ॥५॥

घनाक्षर

कैधौं हर गौरि हैं गणेश ते विराजमान। मानुस सरूप कोऊ कहुँवै निहारे हैं।
कैधौं कोऊ राज के कुमार हैं कुमारिका तें। कैसे इन कामना कलेस जारि डारे हैं॥
कैधौं हैं त्रिसंध्या ध्यान धरि धौं हृदय देखौ। त्रिगुन गुनीतम कें कित तें सिधारे हैं।
निरखि गोपाल कहै, पुरन की बाल मोहि। ऐसे कोई बिरही न बनहीबिहारेहैं॥६॥

द्रुमिला

लखि सीस जटा, पट चीट लसें, कटि तून सरासन पानि धरें।
दुहुँ बीच लसै एक बाल वधू, तिन रूप निरूपन कौन करें॥
कित हैं इत औचक आइ भये, इन नैननि तें छिन जो न टरें।
मुरछें मुरि चंद-मुखी कहि यों, तिरछे चितवें चित लेत हरें॥७॥

घनाक्षर

कोऊ कहै कामिनी-सहाइ हेत, कामदेव। द्वै वपु धरे हैं, हर हेतहि विचारि हैं।
कोऊ कहै कीनो विधि बौधि कें इतहि राखौ। अब लौं न देखी कहूं इन अनुहारि हैं॥
कोऊ कहै तपसी धरें न धनु बान देखे। कहत गोपाल घनी उकति सँवारि हैं।
कोऊकहैवृभौदौरि,लागेछविनैनदौरि। दौरीदौरादामिनी सी आवैं जाइनारिहैं॥८॥

छप्पै

जिहि बन फूल न फूल, फूलि फलि फल न भार तरु।
जिहि बन बन बिनु विकल सकल बन विहरत बन चरु॥
जिहि बन असमन समन सम, सु मृदु मलयज पंकहु।
जिहि पुर कुपुर कुरूप रूप जिमि मदन मयंकहु॥
गोपाल राम पद परस मनि, परसि दरसि नर नारि जुहु।
जिहि थलनि दुखित कासार बिनु, कासारन का साररुहु ॥९॥

---

७. छिन : क्षण भर।

८. हर : प्रत्येक। अनुहारि : सदृश। उकति : उक्ति। सँवारि : शृंगार करके, सजाकर।

९. बन : पानी। असमन : विषम, कठोर, भयानक। समन : शमन, यमराज। परसमनि : स्पर्श मणि। कासार : तालाब। साररुहु : सरोरुह, कमल।

बहु गह्वर गह्वरन गहन गहि, रहत रयनि मह।
कर सर धनु धरि लखन जगत, प्रभु निद्रा बस जहँ॥
प्रात पुण्य व्रत नियम कै सु विधि रवि-कुल-चंदह।
अनुज परसि पनवार धरत विधि, बहु बहु कंदह॥
रुचि रुचिहिं राम अर्पन करत, विहँसि जनक नंदिनि सहित।
निसि धोस रचित किसलय सयन, कुसुम सयन जिन अहित नित॥१०॥

झूलना छंद

जानकी सहित, रघुनाथ निजु अनुज जुत। विविधि गह्वरन बहु विधि बिहारै।
जूह बहु जंतु घिरि, दरसि तिहुँ ताप तरि। रूप अद्‌भुतनि, जित कित निहारै॥
चलत अति मंद गति, सीय पद मृदुल तकि। असम कंठकनि ताकि, मग सुधारैं।
निरखि कुम्हिलात मुख, नलिन पटओटकरि।छाँहतरु तरन रविकिरनि वारै॥११॥

निरखि सिय नेह, प्रभु अमित नव जलद तन। सलजि अंचलहिं करि, पवन ढारैं।
दिगनि लक्ष्मण तकैं, मंद मंद मलयानिलैं। बहन तिहुँ विधि लगें, गहन सारैं।
निजल थल सजल तें, जलज विगसत घनें। भ्रमहिं शृंगावली, मधुनि भारैं।
भनत गोपाल, श्री राम कौतुक तकैं। सोचि सुर-राज जै जै उचारैं॥१२॥

दोहा

कहुँ बहु आश्रम मुनिन के, परसि मनोहर धाम।
कहैं सबै कर जोरि कै, करैं कृतारथ राम॥१३॥

जे त्रिभुवन को थल दए, जिहिं भरि जितने माँहि।
ते प्रभु ढूंढ़त ठौर हैं, बैठन को कहुँ नाँहि॥१४॥

---

१०. गह्वर : गुफा। रयनि : रात्रि। जगत : जागना।
१२. तन : ओर, तरफ। बहन : हवा करना। गहन : घनघोर। निजल : निर्जल।
कौतुक : खिलवाड़।
१४. जिहिं भरि जितने माँहि : जो जितना भर सकता था।

चंडी छंद

बहु बहु कानन लगत सुहाए।
मुँह मुँह सुक पिक कलरव छाए॥
कहुँ गिरि, कहुँ विषम बहुधा हैं।
कहुँ पुर निरखत छवि अवगाहैं॥१५॥

जित कित नर बहु नारि निहारैं।
तन मन धन तिन ऊपर वारैं॥
निकट तरुनि मिलि बात अरुझैं॥
मिलि हित चित जानकि सौं बूझैं॥१६॥

द्रुमिला

घन सुंदर स्यामल गौर किसोर, कहौ तुम सौं किन सौं हित हैं।
तजतैं न भई करुणा गुरु लोगन, जीवत जे घिग ते नित हैं॥
कहि यौं रजनी सति भाव हमैं, किन आजु बसो रजनी इत हैं।
कहती मिलि इंदु-मुखी पुर की, हमहूँ चलिहैं चलि हौ जित हैं॥१७॥

सीतोवाच—

नव नील कलेवर वल्लभ हैं, अलि गौर किसोर सु देवर हैं।
अवधेश नरेस के नंदन द्वै, पितु सासन तें जु तजे घर हैं॥
सुनि यौं अरविंद-मुखी सिगरी, बिहँसे भरि हीं करुना रस हैं।
मिलि कै बिछुरैं छिनहीं भरि मैं, भरि नैननि नीरज नीर रहैं॥१८॥

मदन छंद

चलत इहि विधि प्रात प्रतिदिन, विविध वन गिरि गाहि।
नींद भूषन प्यास की रुचि, कामना सब दाहि॥
एक दिन इक दनुज दीरघ, नाम अधम बिराध।
लै चल्यो हरि जानकी धरि, कंध कटि अपराध॥१९॥

पाठान्तर—१५. कहुं विसम : न कौंहि विसम (१.२)

---

१६. तरुनि : तरुणियाँ।
१८. सासन : आज्ञा। सिगरी : सम्पूर्ण, सभी। हीं : हृदय।
१९. गाहि : अवगाहि, घुस करके। बिराध : एक राक्षस जिसे दंडकारण्य में राम ने मारा था।

ताकि औचक ताहि राघव, हनें उर में बाँन।
पर्‌यौ टूटि पहार सौं, चढ़ि गयो देव विवान॥
निरखि संकित सीय सलजित, परसि रघुबर पाइ।
चाहि करबर चकित लछ्छन, रहे सीस नवाइ॥२०॥

दोहा

भगति विरोधी आदि कौ, हुतौ जु अधम बिराध।
नैकहि में सुर पुर दये, रघुबर चरित अगाध॥२१॥

सवैया

जात चले अवलोकत कानन, तीनिहुं तीनि सरूपनि बाढ़ें।
मानहुं देवधुनी घन दामिनि, सोभ विरंचि विलोइ के काढ़ें॥
कै मकरध्वज साथ लिये, कमला कमलापति हैं तप गाढ़ें।
सीतल छाँह गोपाल मनौं, हरनौ द्रुम डार गहे कर ठाढ़ें॥२२॥

चंचरी छंद

नाँधि मेकल राम लक्ष्मण, पुलिन मेकल-नंदिनी।
मंद गति अति चलित श्रम त, मध्य श्री जगनंदिनी॥
सुमन सौरभ मोद बहु बहु, त्रिविध मारुत सो बहैं।
मत्त मधुव्रत पुंज गुंजत, लता कुंजन लहलहैं॥२३॥

तबहि रेवा उतरि तीनहुं, राम टेक सुथारि हैं।
राम गिरि पर राम राजत, रहैं मासक चारि हैं॥
कठिन काल कराल ग्रीषम, छाँह सीतल पाय कैं।
फूल फल दल कंद बहु बहु, करहिं भोजन भाइ कैं॥२४॥

---

२०. करबर : कोलाहल। पाँइ : पाँव, पैर।

२२. देवधुनी : गंगा। विलोइ : मथकर। कमला : लक्ष्मी। कमलापति : विष्णु। मकरध्वज : लक्ष्मण के लिए प्रयुक्त—कामदेव।

२३. नाँघि : पार करके। मेकल : मेखल, अमरकंटक पर्वत। मेकल-नंदिनी : नर्मदा। मोद : सुगंध। मधुव्रत : भ्रमर।

२४. रेवा : नर्मदा नदी। राम टेक : राम टेक नामक पहाड़ी। मासक : एक मास, महीना। पाय कैं : पाकर।

मंद गंध सुगंध सीतल, मरुत मोद रसाल हैं।
राम गिरि पर राम राजत, निरखि जन गोपाल हैं॥
जानि आगम तबहिं बरषा, चले उठि हरषाइ कैं।
जानि औचक गए तीनों, दनुज उदर समाइ कैं॥२५॥

छप्पै

कंदर जिमि विस्तार, मृदुल-पथ कोमल पाए।
राम अनुज सिय सहित, उदर तिहिं जाइ समाए।
अंधकार आगे जु जनक-तनया लखि बूझैं।
पथ न होइ कहुं और, कहा इत आइ अरूझैं॥
रघुनाथ लखें अंतहकरन यह जानो सब धुंध हैं।
निकस्यो जु फारि दनु उदर कौं, पायो मुकति कबंध हैं॥२६॥

दोहा

चढ़ि बिवान चलतें तबैं, लछन बूझैं बात।
को तुम आहु, कहां हुतें, कहो कहां अब जात॥२७॥

छप्पै

यक्षोवाच—

जक्ष सुवक्षक नाम, मोहि जानं सब कोई।
सुरपति कैं अपराध, हनें उनि सीस, ढुंसोई॥
पर्‌यो टूटि घर आइ, रिषि जु देवल कैं आगें।
उठि उठि कहतें तिन, सु उठ्यो करुना अनुरागें॥
त्रेता जु राम अवतार मनि, पठि उदर तुव फारिहैं।
इह कारन तें रघुनाथ जू, लीन्हें मोहि उबारि हैं॥२८॥

---

२६. अरुझैं : उलझना। धुंध : कोहरा, धुआं। कबंध : एक राक्षस, जिसके सिर और जांघों को इन्द्र ने (ललकारने पर) अपने वज्र से उसके पेट में घुसा दिया था। त्रेतायुग में श्री राम ने उसका उद्धार किया था।

२८. उनि : उन्होंने (इन्द्र)। देवल : देवल ऋषि, वह जो देवताओं की पूजा करके जीविका निर्वाह करे, पंडा।

दोहा

करि अस्तुति अहलाद सों, सुर पुर गयो कबंध।
ऐसे प्रभु के नाम कों, क्यों भूलत मति अंध॥२९॥

तोटक छंद

मुनि राम चले मन मोद भरें।
मुनि अत्रिहि जाइ प्रनाम करें॥
उठि कैं मुनि आश्रम माँहि लये।
अरचा चरचा बहु भाँति छये॥३०॥

अनुस्वीयहि की सिय पाइ परी।
तिहि आसिष दै, बहु प्रीति करी।
फल फूल जथाविधि सों सु किये।
सिय राम समर्पन कै सु लिये॥३१॥

सवैया

काँपत अंग तुचा तुचकैं, जनु व्याध कै आधि कबाय चढ़ी है।
सारद-इंदु कैं अंसुनि अंसुक कै, नख तें सिख तें सु मढ़ी है॥
कैं मन काम कला सिगरी, पचि होम हुतासन जोति कढ़ी है।
सेत सरोरुह लोम मनो, तप पारद कीरति फूटि कढ़ी है॥३२॥

गीतिका

श्री राम—

मुनि आपु हैं चिरकाल के, हम अज्ञ राजकुमार हैं।
हम दुहिनि की कछु सीख पावहिं करें अग्र विचार हैं॥
तब प्रिया-जुत रिषि अत्रि बोलें, सुनो श्री रघुनाथ जू।
त्रयलोक तारन सकल कारन, चरित तुम्हरे हाथ जू॥३३॥

---

३१. अनुस्वीयहि : अनुसूया—जिसमें असूया भाव न हो।

३२. तुचा : त्वचा। तुचकैं : सिकुड़ना। व्याध : शारीरिक रोग। आधि : विपत्ति। कबाय : कुर्ता। सारद : शरद ऋतु के। अंसुनि : किरण। अंसुक : रेशमी वस्त्र। सेत : स्वेत। सिरोरुह : केश। मनो तप पारद : तपस्या रूपी पारे से।

चंचरी

आप पुरुष अनादि अव्यय, सर्बमय सर्बज्ञ हो।
तुम्हि पूरन ब्रह्म, ब्रह्मादिकनि पालन जज्ञ हो।।
धारि नर बपु, दरस दीन्हें, जिहि सु हित तप धारिबे।।
रामदेव दयानिधे, अब देव-काज सुधारिबे।।३४।।

दोहा

आश्रम जाइ अगस्ति के, मत लीजे ठहराइ।
निरखि रम्य थल कीजिबे, पर्ण—कुटी रघुराइ।।३५।।

निसिपालिका छंद

अनसूयोवाच—

राम पद—पद्म सुख—सद्म चित राखियो।
राम सासन कहूँ नेक मति नाखियो।।
राम मति, राम गति, राम पति, कामु हैं।
राम सेवन करो, सुफल तप धामु हैं।।३६।।

सोरठा

करि प्रनाम सिय राम, लषन सहित आगम करे।
मिले अगस्ति के धाम, अए धाइ मुनि आगे हीं।।३७।।
पद बंदत सिय राम, करि अस्तुति आसिष दए।
सुफल फलो मन काम, दै आसन अर्घादि विधि।।३८।।

द्रुमिला

अगस्ति—

सब कलप असेषन के कृत राम, कृतारथ कोटिन आइ करे।
करुनामय सों कहुन 'ब कहा, अभिअंतर तीनहुँ ताप हरे।
परिपूरन आदि अनंत गोपाल, कृपा कलपद्रुम फूलि फरे।
तुमहीं मिलि बे कहँ राघव जू, तप साधि अनेग समाधि धरे।।३९।।

---

३६. नाखियो : उल्लंघन करना, लाँघना।
३९. 'ब : अब।

उड़ियाना

श्री राम वाच—

सुंदर बदनारविंद मंद बिहसि बोले।
पूरन तप पुण्य आप, हम तौ सिसु भोले॥
भाषे सब राज चरित जिहि बिधि बन लीन्हें।
दीजें सिख, होइ जौन चाहत चल कीन्हें॥४०॥

दोहा

लक्षन वाच—

कहे जु लछ्छन लछ्छ सब, मुनि सों सोचि बिचारि।
राम सहित हम लै चलें, बन को राज-कुमारि॥४१॥

सवैया

कोमल मंजुल कंजनि तें, पद नाघि घनें गिरि हैं श्रम पाए।
देखहु यौं रितु ग्रीषम ए, अति तापर पावस हूं नजिकाए॥
होइ जहां कहूं पुन्य नदी तट, रम्य महा द्रुम छांह सुहाए।
यों सुनि बैन गोपाल कहें मुनि, दै सब को बल, मांगन आए॥४२॥

घनाक्षर

अगस्त वाच—

दीन्हें कहा जानि पाकसासन सुनासिर कों। सुरन कों सारे सुर लोक बाँटि डारे हो।
जेते दनु पाल भुव पालन गोपाल कहि। भूतल के मेंड़ मरजादिक संवारे हो॥
कूरम बाराह सेष नागन बिभाग बलि। दानव अनेगनके गरबनि गारे हो।
कहिबे कहां तें और राघव तिहारे ठौर। दै के सब ठौर, ठौर मांगन सिधारे हो॥४३॥

---

४०. भाषे : बोले। राज चरित : राजनीति।
४२. नजिकाइ : नजदीक।
४३. पाक सासन : इन्द्र का पुत्र, इन्द्र। सुनासिर : सुनासीर, इन्द्र।

सवैया

कोमल राम, सुधा मधुराधर, मंद मनोहर हास लसे हैं।
कंध धरें धनु बंध दुवो, कटि कैं तट दिव्य निषंग कसे हैं।।
नैंन बिसाल रसाल से सारस, नेह गोपाल के ही बिलसे हैं।
चाहि महा मुनि मोहि रहें मन, रूप सरोवर धाइ धसे हैं।।४४।।

करखा

अगस्ति वाच–

पुन्य गोदावरी सरित, सरितनि महा। सुफल तप-भूमि, तरु फलनि फलि फलि रहैं।
पुलिन बहु पुंज रुचि कुंज कुसमित लता। जदपि अति मंजु, तन ताप तीनहुं दहै।।
जीव जल जे पियें, जीव जल जे रहैं। सुगति ऊरध लहैं, आपु अध गति व्रहैं।
सकल अघ हरनी, सकलसुभ करनी। सकल अद्‌भुत कला, रीति कासौं कहैं।।४५।।

परसि पय पातकी, तजत मल गात की। सवत सुख सात की, सुरनि सम सरि करैं।
पवन के परत तें, परत भव पार नर। दरस तें दिव्य तन स्वान सूकर धरैं।।
प्रात प्रति काल तजि, देव धुनि देव गन। करहिं मज्जन जलें, अमित आनंद भरैं।
अनत गोपाल बहु, रम्य थल आनि कें। जानकी राम तें मुनिन संकट हरैं।।४६।।

द्रुमिला

जँह काम न, क्रोध न, लोभ न, मोह न, द्रोहन की सब औंधि खुटी।
जहँ नींद न, भूख न, प्यास न, त्रास न, हास बिलासन साध छुटी।।
जहँ भक्ति गोपाल सनातन चारिहुं, चारिहुं मुक्ति समाज जुटी।
रमिये रघुनंदन जू रचि कें, इक पंचवटी तट पर्नकुटी।।४७।।

सोरठा

रघुवर भये हुलास, पंचवटी अवलोकि कें।
तजि बैकुंठ विलास, पर्नकुटी रुचि सौं रचैं।।४८।।

---

४४. सारस : कमल। चाहि : देखकर।
४६. सरि : सदृश। देव धुनि : देवताओं की नदी गंगा।
४७. खुटी : खंडित हो गई, समाप्त हो गई। साध : इच्छा। चारिहुं मुक्ति : सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य और सायुज्य।

ता पाछे कछु दूर, लच्छन इक साला रचे।
राम सजीवन मूरि, पहरू निसि धुन सर धरें ॥४९॥

सवैया

देत अहार चराचर जीवन, सो अनुजेत कवौं सुधि लीन्हें।
कारज अग्र सुधारन हेतहि हेरि हिये नहि सासन दीन्हें॥
है अति अद्भुत राम-कथा, सब जे गति देव अदेवन चीन्हें।
नासन इन्द्र के सत्रुहि कौं, दस इन्द्रिन कौं जिन निग्रह कीन्हें ॥५०॥

दोहा

पंचवटी तट रुचि हिये, पर्नकुटी रचि आप।
निसि बासर लछ्छन हिये, सुमिरत राम प्रताप ॥५१॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल
विरचितायां श्री राम पंचवटी प्रवेसोनाम
द्वितिविंसोध्यायः ॥२२॥

---

४९. पहरू : पहरेदार।

सीता-हरण

२३

दोहा

इहि अंतर मय-नंदिनी, सोवत ते परजंक।
चौंकि परी बूझत निरखि, दस मुख लै भरि अंक॥ १॥

घनाक्षर

मंदोदरी—

सोवत हुतीअँ, अघ लागे से पलक नैन। पाछिली पहर निसि, भूलि अवसान की।
वारिधि अगाध पाटे, असम सिलानि जोरि। कारे पीरे भूरे भूरि वानर निधान की॥
देवी कोऊ दानवी कि मानवी सी उपवन। भानवी सी भासमान मानौंतेजभानकी।
कहतिअसंकासौं,ससकितमयंक-मुखी। लंकानाथ गाथ सुनो लंकाहोतआनकी॥२॥

दोहा

रावन—

सुनि रावन प्रज्वलित भो, जोरति बात सँवारि।
को तिहुँ पुर त्रिपुरारि पर, सुनि तू नारि गँवारि॥ ३॥
स्वान कथा उलटी सबै, यामैं और न बात।
केवल हर परताप तैं, हारे दस दिगपाल॥ ४॥
पंचवटी इत राम जू, सिय जुत करत विहार।
पुलिन रम्य गोदावरी, गहगह गहन अपार॥ ५॥

---

१. मय-नंदिनी : मंदोदरी।

२. अवसान : होशहवास, चेत। असम : अश्म, पत्थर। भूरि : बहुत। भानवी : भानु की पुत्री, जमुना। असंका : आशंका। आन की : दूसरे की।

३. जोरति बात : मन गढ़न्त। त्रिपुरारि पर : शंकर से बढ़कर।

चञ्चरी

सोहे द्रुम दल निकेत, जानकि रघुवर समेत। गाये जिन नेत नेत, बेदन बहुघाए।
पुलकित अनुराग रंग, रूप जलधि रस तरंग। रंजित रघुनाथमनसिकौतुक उपगाए॥
सारिकसुकपिकनिहेरि,लीन्हेंसबथलहिघेरि।मुहुमुहकलरवनिमनहुँ,गावनमिलिआये
माचेंचहुँओरसोर,नाचेंमिलिमुदितमोर।चंद-बदनतकिचकोर, नैननि टक लाये॥६॥

फूलेबहुकुसुमडार,भ्रमतभ्रमरगिनअपार। मनहुभ्रमतविरहभार, विरहीअकुलाए।
भूरित थल सुमन धूरि, जित कित सब नैन पूरि। लै लै बहुवा सुगंध, गंधवाह घाए॥
माचीसुरपुरनिहूलि,देव-बधुनिसुधिबिसूलि। फूलि फूलिफूलनि के, बरषा बरषाए।
मोहि खग मृग समाज, देव सहित देवराज। राजतगोपालराम,जानकिहरषाए॥७॥

दोहा

प्रतिवासर कौतुक यहै, बरनि कहै प्रतिहास।
कहि न सकै सेषादि सिव, सीता राम बिलास॥ ८॥

द्रुमिला

दनु चाहि घने सुख पंचवटी, दससीसहि सीस नवाइ कहे।
सब औधि पुरी विपरीत कथा, बन राम जू राज भरथ्थ लहे॥
लघु सोदर, सुंदरि साथ वहै, जिहि हेत सबै पचि लोग रहे।
तिन मारि बिराध कबंधहि कौं, नहि जानत धौं कित कौं उमहे॥ ९॥

मदन छंद

सुनत रावन अनख मानें, कोप करि तिहि बेर।
नैन सैननिहीं सु दूतनि, चाहि दीन्हें ढेर॥
का गरीब बिराध तें, बिनु सीस को जु कबंध।
का सु मिथिला की पली, सुधि मोहि दीन्हे अंध॥१०॥

---

६. द्रुमदल निकेत : पत्तों की कुटी। जिन : जिनके। ये : इनको। टक लाए : टकटकी लगाना, ध्यानमग्न।

१०. गरीब : बेचारा। सुधि : समाचार।

दोहा

ऊपर आगि बलाइ भो, भीतर भये अचेत।
कह्यौ सुपुनखा सों मतं, बैठिसु तासु निकेत ॥११॥

किरीट छंद

रावन—

धारि सरूप सिधारि तहाँ, तिन मोहि, करौ मन हाथ तिहू अब।
जो करिहैं तुम संग्रह को, कुल विग्रह निग्रह मेटि धरौं सब।
जो तजिहैं कछु दोष लगाइ, तो नारि हरौं, हठि मारि करौं दव॥
साथ सिया मोहि देखन की, कछु दोष लगाइ कछू करिये तब ॥१२॥

नाराच छंद

चली निसाचरी जु सीख मनि के तहाँ तबै।
सुगंध बाहु अंग की, सु पंथ पाइ के जबै॥
किये सिंगार हार हीर, हेम भूषनै भली।
लखी हुलास मंद हास तें, बिलास की थली ॥१३॥

सवैया

देखि छकी सिय राम सरूपहि, तद्यपि जोवन रूप सुहाई।
बैठि येकंत नवीन कला गहि, बीन महा विरहा सुर गाई॥
बंक बिलोकनि ही अवलोकनि, सैननि जानकी पास बोलाई।
हेम सरोज कली सी उरोजनि, खोलति अंचल चंचलताई ॥१४॥

दोहा

छिन गावै, छिन उठि चलै, छिनहि बजावै बीन।
छिन छिन छबि औरै करै, जोबन रूप नवीन ॥१५॥

सोरठा

अंतरजामी राम, बूझै अंतहकरन की।
हौ किहि कुल, किहि धाम, बूझत सिया सनेह सौं ॥१६॥

---

१२. सिधारि : जाइये। विग्रह : लड़ाई।
१४. येकंत : एकांत। विरहासुर गाई : विरह के स्वर में गाया।

सवैया

सुपंनखा—

हौं भगिनि निजु रावन की, उनि मोहि वृथा बन मारि निकारी।
है अवलंब कहूं न रती, दिन क्यों भरिहौं यह बेस नवारी॥
है तप मोहि कहूँ करने अब, ढूंढति हौं तपसी व्रतधारी।
कै यह देह हुतासन मैं, दहियों कहि नैननि ही जल ढारी॥१७॥

सीतोवाच—

यों सुनि सीय भरी करुना, करुनामय सौं हँसि बैन उचारी।
आइ भजी बन मैं हम कों, अब जाइ कहाँ यह बेस नवारी॥
गावति, बीन बजाइ रिझावति, है सु प्रवीन कला अधिकारी।
आरत आइ गही सरनागत, क्यों तजियै इहि सी वर नारी॥१८॥

निसिपालिका छंद

जानकी-गाथ रघुनाथ सुनि कै हँसे।
दसन दुति करक जिमि, कोस सारस बसे॥
रीति अनरीति की प्रीति सम क्यों चलै।
हेत अनहेत को हेत कै दिन फलै॥१९॥

सोरठा

राम—

मन एकै तन दोइ, तीजे कौ कछु ठौर नहिं।
क्यों तुम को सुख होत, उहाँ जाहु वहु सुख जहाँ॥२०॥

---

१७. नवारी : निवारण करके, रोक करके, संयम करके।
१८. भजी : भजन किया।
१९. करक : बिजली। सारस : कमल।
२०. उहाँ : वहाँ।

द्रुमिला

सुपंनखा—

तुम्हरे दुख ही दुख मोहि घनो, तुम्हरे सुख ही सुख लाख लहौं।
तुम्हरे तप ही तप हौंहु तपौं, तुम्हरे जप तें जप जोग गहौं॥
तुम्हरे गति ही गति, प्रान पती, पति राखहु मो, पनु लै निबहौं।
अब जाहुं कहाँ रघुनंदन जू, यह रूप बिलोकत पास रहौं॥२१॥

दोहा

श्री राम—

तू कामातुर कामिनी, हम निहकामी जानि।
जहां निरादर देखि सो, मान-भंग की खानि॥२२॥

घनाक्षर

जाकी तू पठाई, सो तौ आपनी नठाई। (इत) करति डिठाई, भूलि पीछे पछताइहै।
आगम करति उतपात की अगार ही तें। ह्वं है पात पातकी, न पातक नसाइहै॥
आसुरी कला तें सब नासु री महत होत। हेत अनहेत सब बूझि ठहराइहै।
जैहै, तौ न जैहै पति, रैहै तौ न रैहै पति। तेरिअं कुमति सिर तेरिअं बिसाइहै।॥२३॥

संखधारी छंद

सुनी राम बानी।
त्रसी जातुधानी॥
रही सोचि जी मैं।
धरी हौं न धी मैं॥२४॥
इतै आइ भूली।
उतै बात फूली॥
दुहूं ओर गाढ़ी।
कहै बात ठाढ़ी॥२५॥

---

२१. पति राखहु : प्रतिष्ठा रखिये।
२३. नठाई : नष्ट कर दिया। अगार : आगे। पातकी : पापी।
२४. जातु धानी : राक्षसी। धी : बुद्धि।
२५. गाढ़ी : कठिन।

सवैया

हौं निकसी कुलकानि सबै तजि, जाउं कहां, तुम सें नहि कोई।
सूझत मोहि न और कछू, अब होनियै होइ, सु होई रहोई॥
वारि धरि तुम ऊपर जोबन, जीवन प्रान तुम्हें मम दोई।
जानति हौं तुमहीं रस लै, सब तीनहुं लोक करे धरि छोई॥२६॥

लीलावती छंद

सीता—

सुनि कै तिहि बानी, सिय मुसक्यानी, यह बन मैं प्रभु सुखदानी।
कछु इहि रुचि कीजै, समय पतीजै तन मन की गति, पहिचानी॥
बहु बनि बनवासैं, विरह विलासैं, मृदु मुख हासैं, पिक बानी।
अलि बीन बजावैं कल सुर गावें, विपिन रसावैं मनमानी॥२७॥

सरभ छंद

श्री राम—

सुनि रघुनंदन प्रिय रुचि करितं।
इहि गति अति मति अद्‌भुत चरितं॥
हम तप बल, इहि तपमय मदनं।
यह रस सद मद, हम मद कदनं॥२८॥

सीता—

कही सिया सुनि बाल, है देवर अति रूप निधि।
लोचन बाहु बिसाल, जाइ गरे पर उनहि कै॥२९॥

---

२६. छोई : गन्ने की वह गड़ेरी जिसका रस खींच लिया जाता है, खोई।
२७. पतीजै : विश्वास कीजिये। बहु बनि : बहुत बन ठनकर। रसावैं : रसमय करना।
२८. सद : सद्यः, ताजा।
२९. गरे पर : गले पड़ना।

सवैया

यों सुनि बात, गई चलि तच्छण, लच्छण लच्छन अच्छन हेरी।
कै परदच्छिन, जोरि रही कर, बात विनै जुत जोरि घनेरी॥
और नहीं अवलंब तुम्हें बिनु, मोहि सरूप भई तुम चेरी।
आइ परी जु गरें अबहीं, अब नैक सु बाँह गहौ किन मेरी ॥३०॥

लक्षन वाच--

लच्छन रूप विचच्छनता तकि, तच्छन लच्छन लच्छ लहे हैं।
हैं दृढ़ कच्छ की रच्छ न जा कहँ, भच्छन हूँ रुचि मारि दहे हैं॥
एतेहु पै रघुनाथ के किंकर, कंपत त्रासनि, दूरि रहे हैं।
बाँह कहा गहि कै करि हौं, जिहि बाँहहि केतक घो न गहे हैं॥३१॥

सोरठा

सुनि मुरकी मुख मोरि, ए अति कठिन कठोर हैं।
चली तिनूका टौरि, उनही फेरि रिझाइ हौं ॥३२॥

रुचिरा छंद

आवत निकट बहुरि लखि राघव, सर लाघव तिहि नाक हरी।
मानहु बदन रही नहिं नासा, परम आसुरी रूप धरी॥
विकट दंत विकराल बदन करि, झपट करति सिय जियहिं डरी।
भभकत करत-छिछ यों जित कित, झिरत कुसुम जनु बारिद री॥३३॥

सोरठा

हँसे देव हरषाइ, लखि कौतुक रघुवीर को।
टारी बड़ी बलाइ, गई निसानी लंक को॥३४॥

पाठान्तर—३०-अब ही : बरही (१,२)

---

३०. अच्छन : आँखों से। हेरी : देखा। प्रदच्छिन : प्रदक्षिणा।
३२. तिनूका टौरि : उन (राम) के स्थान पर।
३३. छिछ : धारा, फुहारा, छींटा।
३४. बलाइ-विपत्ति।

छप्पै

तबहि सुपुनखा अनखि कोपि, व्याकुल ह्वै धाई।
खरदूषन त्रिसिराहि रोइ, सब कथा सुनाई॥
अवधि-राज-सुत दोई, संग एक सुंदरि लीन्हें।
हौं आवति तुम पास, दसा अैसी उन कीन्हें।
—सुनि सकल साज दल बक प्रबल, पहुँचि गए चहुँ ओर हैं।
—लच्छन विलोकि तच्छन तिनहि, कीन्हें धनु टकोर हैं॥३५॥

दुमिला

ढिकि लै दनु दीह कराल बड़े, थल पंचवटी तट आइ अरे।
करि पाहन वृच्छनि वृष्टि घने, सर लच्छ से लच्छन मारि दरे॥
सर सैल असेष त्रिसूल छुटे, रन रंगनि दानव जोरि करें।
तब राघव के सर लाघव तैं, जितहीं कित दानव जूझि परें॥३६॥

रुचिरा छंद

देखि थकित खरदूषन त्रिसिरा, राम सरूप निहारि रहे।
है नर सुरनि सिरोमनि कोऊ, कछु कारन तै बन उमहे॥
तीनहुं लोक भौंह जिहि जोवत, तृण समान करि तेहि निदरे।
नाक सुपुनखा को मति जानहु, नाक दसानन काटि धरें॥३७॥

दोहा

जीति न जाइँ, अजीतए, जीते इन्हैं न कोई।
आए उमड़ि सहाइ कौं, भजे फजीहति होइ॥३८॥

---

३६. ढिकि : ढुकि, छिपकर।
३७. खरदूषन : खरदूषण, खर और दूषण नामक राक्षस जो रावण के भाई थे।
त्रिसिरा : रावण का भाई।

छप्पै

प्रबल बीर तिहुँ कोपि, सकल सस्त्रनि रन जुट्टेव।
भुज-दंडन बलवंड, उमड़ि पौरुष बल खुट्टेव॥
बिहँसि राम गति दैन, तिनहि ऊपर सर छंडिय।
खरदूषन त्रिसिराहि तृसिर सर मारि विहंडिय॥
–उबरे जु, भज्जि घर सल्लि हिय, कहेउ रोइ सब समर गति।
–दनु-नास सकल सुनि श्रवण महँ, किय निस्मय लंकाधिपति॥३९॥

दोहा

खरदूषन त्रिसिरादि दनु, करे तपी खयकार।
पंचवटी में रमि रचैं, बहु रस रंग विहार॥४०॥

सवैया

रावन सोभ सिंघासन ऊपर, देव अदेव, सभा सब कोई।
आइ भई तिहि औसर ही, तिहि देखि हँसै दुख दाह न सोई॥
आवति ती मग मैं, निहकारन, नाकहि काटि करी दिल जोई।
संग लिये सुकुमारि महा, इक पंचवटी बन सोदर दोई॥४१॥

रावन—

रावन कोपि कहे तिहि सौं, जग जीवहिगी कितनी दिन ठाई।
जो मरती तिन ऊपर तु, तब तो लहती तिहुँ लोक भलाई॥
हौं अब लौं उँहि ठौर उन्हें हनतो, हठि जो निजु बैर बढ़ाई।
आव घटाइ, कटाइ के नाकहि, लंकहि फूलि फजीहति ल्याई॥४२॥

---

३९ सल्लि : पीड़ा।
४०. खयकार : नष्ट करना।
४१. ती : थी। दिल जोई : जो कुछ अच्छा लगा, संतोष।
४२. ठाई : स्थायी। आव : आयु।

छप्पै

यों कहि कै दसग्रीव, कोपि परतिज्ञहि धारे।
का तपसी अज्ञान, हमहिं जग लाजहिं मारे॥
करौं फजीहति मारि, रहै जुग जुगनि निसानी॥
हरि ल्याऊँ तिन नारि, जु पै उन कानि न मानी।
=गुनि सोचि गयो मारीच पहँ पहिय सकल कारन तिन्हिं।
=सुनि सोचि प्रबल उतपात कहँ, लंकाधिप कारन मन्हिं॥४३॥

झूलना

मारीच—

कहत मारीच इक सीख रावन सुनौ। भूलि नहिं राम सौं रारि कीजै।
देह मानुस धरे, ध्यान तिहुँ पुर करै। हरहुँ के पर, सु तिन दरस लीजै॥
सोभ अद्भुत लखै, निरखि कौसिक मखै। ताड़िका सहित सुत सात मारे।
राम लच्छन दुवौ, मारि दानव घने। कौन कारन इतै मोहि टारे॥४४॥

झूलना छंद

आपु जानत सबै, ईस-धनु जनकपुर। तोरि तिनु सौं सु जय माल धारे।
व्याहि सिय मंडपै, चलत मग रोक तैं। गर्व भृगु-नंद के गिरि तें उतारे॥
मारि खरदूषनैं सहित त्रिसिरादि दनु। जानि सी परति गति और ठाटे।
अमित अपराध तैं छमित प्रभु जानिये। नाक पति लाज तैं नाक काटे॥४५॥

रीति कौ छोड़ि, विपरीति कीजै न कछु। होत विपरीति तैं नास सारे।
सीख मेरी करौ, दुसह भाव न धरौ। कर्म सहसान के गति निनारे॥
सुनत दसमुख रुठ्यो, पाठ सठ सब पढ्यौ। कौन तपसीन के गरब भुल्यो।
जानि तोहि न पर्‌यो, विपुल भुज दंड बल। को न तिहुँ लोक संकनि वितूल्यौ॥४६॥

---

४३. कानि : मर्यादा।
४४. हरहुं के पर : शिव से भी बड़े श्रेष्ठ।
४५. तिनु सौं : तिनके के समान। ठाटे : घटित होना।
४६. निनारे : न्यारे, अलग। वितूल्यौ : घबराया, व्याकुल हुआ।

सवैया

मूढ़ न जानत गूढ़ कथा, कछु भेष गहे तपसी तप खोटे।
ग्यान कथैं खल भोटक से, सब खाइ पचाइ भये अति मोटे ॥
मोहन रूप छलैं किन जाइ, न तौ परिहौ इतहीं धर लोटे।
कौन कहै तिनकी महिमा, जिन लाज हरी दोउ राज के ढोटे ॥४७॥

छप्पै

मुनि मारीच विचारि, फेरि नहि उत्तर दीन्हौं।
चल्यौ मुक्ति पद लेन, रोस मन मैं नहि कीन्हौं ॥
अचरज रूप विचारि, कनक-मृग ह्वै सिर धार्यौ।
चरत चरत पुनि जाइ, पचवटि बनहि विहार्यौ ॥
छिन धावत कूदत चौकरनि, जिमि सावज लीला करिय।
थल करत प्रदच्छिन छवि लखत, राम रूप उर महँ धरिय ॥४८॥

त्रोटक

श्री राम—

गुनि आगम राघव सीय मतैं।
हम दानव बंस समूल हतैं ॥
तिहि नासिक बैरहि लंकपती।
हरि लै तुम कौ गहि भेष जती ॥४९॥

तिहितें तुम पावक माहि रहो।
बिनु सासन श्राप न देन कहो ॥
प्रतिबिंबु प्रकास सरूपहि लै।
जिहि तैं जग में जुग नाम चलै ॥५०॥

तुम लछ्छन बछ्छ छमा धरिहौ।
मिसु कै रिस कै थल तैं टरिहौ ॥
इहि भाँति मतौ करि भेदन हैं।
दनु रावन के कुल छेदन हैं ॥५१॥

पाठान्तर-४७—भोटक, फोकट (१,२)

---

४७. भोटक : पत्थर की बड़ी चट्टान। ढोटे : बालक।

यह सासन राम दये हित कै।
सिय जोति धरी अनलै चित कै॥
तबहीं वह आइ कुरंग भयो।
तिहि ऊपर जानकी चित्त गयो॥५२॥

करखा

चाहि तिहि जानकी, राम सौं मानकी। मोहि यह हेम मृग, मारि दीजै अबै।
भूमि आसन सुचै, डासि हाटक तुचै। साध इहि विधि रुचै, सुफल कीजै सबै॥
सुनत रघुवर उठे, बान धनु गहि रुठे। पैंड़ ही पेंड़ पर, पैंड़ ताके परे।
होत कहुँ लोप ते, प्रगट प्रति कोप तैं। लखन सिय निकट तैं नेक नाहिन टरे॥५३॥

हनत मृग सायकै, रछ्छ लछ्छन रह्यो। चौंकि सुनि जानकी, चित विचारी।
जाहु चलि देवरन, लेहु सुधि वेगि प्रभु। मृग न वह होइ, दनु देह धारी॥
सुनत चित चकित मति, अतिहि रामानुजो। जानि कारन जियैं, एककहुत न बनै।
कठिनदुहुँदिसिअबै,काजकरनै सबै। यौंसुगुनिसकलविधित्रसितलछ्छनमनै॥५४॥

दोहा

देव-साखि दै देहरी, लछ्छन करि सु विचार।
जो नांघै धनु-रेख मम, भस्म होइ इहि बार॥५५॥

यह कहि तहं लछ्छन चले, लखे ततछ्छन जाइ।
तजे सिया हम अनख तें, पर्नकुटी रघुराइ॥५६॥

छप्पै

जटित भस्म सर्बांग, माल रुद्राक्ष हृदय धरि।
अति संकित चित चपल, रटत हर हर सनेह करि॥
पर्णकुटी नजिकाइ, आइ भयो सनमुख ठाढ़ो।
दै आसिख बहु भांति, चितै चहुँ दिसि भय गाढ़ो॥
=कहि छुधित उदर भिक्षारथी, देहु बेगि आगम करौं।
—तुम तें न और रघुकुल-बधू, बोलि स्वस्ति पातक हरौं॥५७॥

---

५२. अनलं : अग्नि में।
५३. सुचै : पवित्र। हाटक : सोना। तुचै : त्वचा। पैंड़। कदम। पेंड़ : पैंडा, रास्ता।
५७. आगम करौं : व्यवस्था करना। स्वस्ति : कल्याण।

निसिपालिका छंद

राम-रामा सु गुनि, राम सासन हिये।
विषम विश्लेष रघुनाथ विरहा जिये॥
होनियँ होइ, सो होइ आपैं रहै।
है न तपसी, ये छल-भेद बातैं कहै॥५८॥

सवैया

सीता—

आपु महातम पुन्य तपी, इत आजु बसौ, न कहौ कछु आनैं।
आइ करे थल पावन हो, रुचि पाक रचौ फल मूल विधानैं।
भ्रात गए अबहीं मृगया दोऊ, आवत ही विधि सौं पहिचानैं।
दान दया हित आदर ला मन, भाव न भाव सबैं करि जानैं॥५९॥

रावन—

जानि परी हम को सिगरी, अब जात चल्यो, न कहूं छिन रैहौं।
दान विधान कहा करनैं, थिति है न कहूँ, किहि लैं गथ देहौं॥
जो जिय नेक दसा न भई सिय, हौं जु छुधारत और न कैहौं।
आवहिगें कब धौं मृगया करि, देखि कहा उनकौं भरि लैहौं॥६०॥

मालिनी

सुनि विप्र-मत सीता, राम गीता विचारी।
चरित विषम लागी, सेष रेखैं निहारी॥
अघ मुख रुख दे तैं, ऊरधै लै सिधायो।
चरन कमल बंद्यौ, मुक्ति कंधै चढ़ायो॥६१॥

---

५८. राम रामा : सीता। विश्लेष : अलगाव।
५९. आनैं : दूसरी बात।
६१. सेप : लक्ष्मण। रेखैं : लक्ष्मण के द्वारा खींची गई रेखा।

दंडक छंद

कैधौं घन नील चढ़ी धाई है मुकति लंक। मूरति कनक पंक रुचिर रची सी जान।
कैधौं देव-नंदिनी किरात हरि लीन्हे जात। कैधौंकाम-सुंदरीलैसँवरचल्यौनिदान।।
कैधौं रुसि राज श्री चली है लैन राजश्री कौ। नीलमनिस्यंदनमैंसोभकीसबैविधान।
कैधौं तम राज अंक राजत मयंक जैसे। तैसे दसकंध कंधजानकी विराजमान।।६२।।

करषा

जानकी चरन परि, कंध दस कंध धरि। जात आतुर चल्यौ, लंक संकनि भर्यौ।
मनहु घन नील मधि, चौंधि चपलाहि कौ। हंस कैं बधिक जनुबिचरिहुसिनिहर्यौ।।
होत उतपात सिय गात अति कंप कंपै। राम उर जप जपै, भयनि भारी भरी।
चाहिचहुँकंतपिय, परत नहि दृष्ट कहुँ। हृदय व्याकुल भई, जानि परबसपरी।।६३।।

जात उत है चल्यौ, तिमिर मिलि आतुरै। देखि खगनाथ दनुनाथ लीन्हें जबैं।
यह जु रघुनाथ की बाम मम मात कौं। चोरि लै जात कहि मारि फेर्यो तबै।।
विकट नख वज्र मुख चोंच घायनि घनौ। घायलै करि सु फुरि फिरहि ऊपर परैं।
फारि उर बच्छबहु, श्रोणजितकितझरैं। मनहुझिरनानिगिरिनीलझरझरझरैं।।६४।।

झूलना छंद

कबहुँ मंडल फिरैं, फहरि घिरि घिरि घिरैं, थकित करि अमित श्रम सहित धावैं।
चकित रावन भयो, त्रसित उतपात तकि, लेहु इहि खगहि गहि, करि उपावैं।।
छुभित खग अति भयो, जुद्ध बहु विधि ठयो, ग्रीव श्रोनित जु तैं, बहु अहार्यौ।
सिथिल तन होत बहु, भारतें पकरिकरि, कुलिस सम मुष्टिकै, सिर प्रहार्यौ।।६५।।

दोहा

काटि पक्ष, सिर घाय करि, चल्यो वितत लंकेस।
करि रोदन करि जानकी, मोहित भर्यो खगेस।।६६।।

---

६२. रुसि : रुष्ट होना। संवर : एक दैत्य।
६४. खगनाथ : जटायु। घायलै : घायल।
६५. अहार्यौ : आहार।
६६. घाय : घाव। वितत : विशाल, विस्तृत।

झूलना छंद

चारि चहुँ ओर, चित चकित अति जनकजा। चिह्न कछु हेत तैं अध निहारी।
जानि नर वेष, मनि चरन नुपुरहि लै। सोध प्रभु दैन उत्तरिहि डारी।
लै सु मरकट निकट, चरन भूषन तबै। धाइ सुग्रीव कौ तुरत दीन्हें।
देखि हनुमंत जमवंत आगम गुने। राज श्री आजु प्रस्थान कीन्हें ॥६७॥

चंचरी छंद

मारि कै जु जटायु रावन, सीय लंकहि लै गयो।
राखियो मधु वनहि लै, तब बोलि कै त्रिजटी लयो।
सौंपि दनुजी विकट सहसनि, सीख दै बहुधा सबै।
मनहि करि सु प्रनाम सीतहि, गयो महलनि मैं तबै ॥६८॥

सोरठा

रावन—

सुनि मंदोदरि नारि, हरि लै आयो जानकी।
नहि तिय तिहि अनुहारि, मधुवन त्रिजटी सौंपियो ॥६९॥

दोहा

मंदोदरी—

कही तबहि मंदोदरी, एक न सीख धरे।
बहुँसा—बहुँसी बादि ही, सहसा कर्म करे ॥७०॥
तिनहि लाज कहि जानकी, जिन तोर्‌यौ हर चाप।
संकट में परतछ्छ हैं, रछ्छक राम—प्रताप ॥७१॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल
विरचितायां सीता हरनौनाम त्रिविसोध्यायः ॥२३॥

---

६७. अध : नीचे। उत्तरिहि : उत्तरीय।
७०. बहुँसा बहुँसी : बाद-विवाद।

श्रीराम-पंपा-दर्शन

२४

भुजंगप्रयात

इतै मारि माया मृगै राम ल्याए।
"गहौ जानकी जानकी" कै बुलाए॥
"लगै वच्छ श्री - हीन - सी पर्नसाला।
कहौ, है कि नाही, लखौ सीय बाला"॥ १॥

लक्ष्मन वाच—

न हैं मात सीता, सुनौ नाथ बानी।
करी और तें और सी जातुधानी॥
हरी काहु लै बीच, यामै न जानौ।
चरित्रै विरंची, विचित्रैं बखानौ॥ २॥

सवैया

श्री राम—

देखत सूनिय पर्नकुटी, रघुवीर अधीर हिये अकुलानैं।
भूलि गए भ्रम भीतनि तें गति, और की और कहै बिततानैं॥
कै तप त्रास दरीनि दरी कहुं, कै कटु बोल मनै उनमानैं।
जानत हौं कि हर्‌यो दनु है कोइ कै कहि पंचटी यह आनैं॥ ३॥

---

१. गहौ : लो, पकडो। वच्छ : वत्स (लक्ष्मण)।
२. जातुधानी : राक्षसी (सूर्पनखा)।
३. सूनिय : शून्य। बिततनै : विकल। कै : अथवा। आनैं : अन्य।

छप्पै

लक्ष्मन वाच—

महा मोह मादक, समस्त जीवन जग मोहैं।
तुम हौ पुरुष पुरान, तुम्हहि सब कारन सोहैं॥
भावी भूत रु वर्तमान, आपुहि विख्याता।
हम जु महा मति अग्य, प्रभू सरबग्य सुग्याता॥
अब सोचि अग कारज करहु, धरि उर धीर विचारु हैं।
संसा वियोग संसार मैं, धरि लीन्हें दुख भारु हैं॥ ४॥

विदोहा

नर लीला रघुनाथ अति, सोचत सोध चले।
जिनहूं जीते जगत ये, तिनहीं विरह दले॥ ५॥

सोरठा

अनुज धरैं धनु हाथ, सावधान दनु छंद तैं।
करत बोध रघुनाथ, व्याकुल विरह वियोग वस॥ ६॥

द्रुमिला

अति तीय सिरोमनि सीय वियोगनि, आतुर श्री रति रंग रसैं।
नहि भावत भोजन द्योस विभावरि, भूले से डोलत ज्यौं डरसैं॥
बिलपैं पलहीं पल, लोल बिलोकनि, बोल अमोलनि कौं तरसैं।
नव नीरज लोचन सोचन सौं, नित ही नव नीरद से बरसैं॥ ७॥

वन हीं वन व्याकुल राम फिरैं, मुरझाइ गिरैं कहूं भूतल मैं।
लखि बूझत ताल तमाल लता, तकि हौं कब हेम लता दल मैं॥
अहो जानत हौ मृगनैंनि, कहो मृग, हौं न बचौं अब तैं बल मैं।
कहि टेरत 'जानकी' जानकी-नाथ, कहाँ तजि साथ गई पल मैं॥ ८॥

पाठान्तर—७. अतितीय, मतिसीय (१,२)

---

४. संसा : संशय।
५. सोध : खोजना।
६. छंद : छल।
७. विभावरी : रात।

करषा

देव नारी कहैं, देखु री देखु गति। जानकी-विरह रघुनाथ विरहै भरे।
चलत कहुँ मंद गति, होत कहुँ मंद मति। चंद के करत रवि-करन पटतर करे।
तिमिरपति तोष करि, इंदु मद मान दरि। उड गगन लै जु सब, सूर मंडल घरे।
कै जु ससि रूसि, पय-सिंधु-पय-पान करि। मुकत गगन मुख छींट जित कित परे ॥९॥

दोहा

अनुज सहित आगे चले, अति विरहित रघुनाथ।
लखे गीध गिरि सौं पर्‌यो, गावत रघुवर गाथ ॥१०॥

बूझे लक्षन गीध सौं, भए क्यों जु अंगभंग।
चोंच, चरन, विनु पक्ष के, श्रोनितमय सब अंग ॥११॥

छप्पै

गीधउवाच—

प्रभु मो नाम जटायु, भ्रात संपाति सु जानहु।
मम जननी सम सीय, हर्‌यो रावन पहिचानहु ॥
पौरुष भरि किय युद्ध, छंद दनु ते बल हार्‌यो।
लै जु गयो वह लंक, मोहि प्रभु आइ उधार्‌यो ॥
- कहि जीव-जोति तिहि की जु कढ़ि, राम रूप महँ लीन हुव।
- रघुनाथ लिये उर लाइ कै, कलपनि पद कैवल्य ध्रुव ॥१२॥

चामर छंद

देइ दाह गीध को, चले जु और काननै।
सोध लेन जानकीहि, सोच कोटिधा मनै ॥
वेगि सोध ज्यों लहै, करी जु बच्छ कारनै।
लंक बंक पंक कै, सु लंकनाथ मारनै ॥१३॥

पाठान्तर—११. अंग भंग, अन भंग (१,२)

---

९. करन : किरणें। तिमिरपति : सूर्य। उड : तारे।

१२. कलपनि : कल्प कल्प के लिए। कैवल्य : आत्मा की सत्व, रज और तम रूप त्रिगुणों और उनके समस्त विकारों से निर्लिप्तता, मोक्ष। ध्रुव : ध्रुव, सुनिश्चित।

१३. देइ दाह : दाह संस्कार। धामनै : दौड़ना। बच्छ : वत्स (लक्ष्मण)।

उड़ियाना

आगे रघुनाथ एक, सरस ताल देखे।
विहरैं जहँ चक्रवाक, तिनमें अनलेखे॥
बूझैं तिनसों जु सोध, सुनतैं अनखाने।
"पूछे हम पच्छिन सों, ऐसे मरदाने ? ॥१४॥

ऐसे धनु बान धरे, देखत के लोने।
राखि न गई तरुनि एक, ठानो किन मौने॥
लछ्छन-मुख राम तकैं, कौतुक इक कीन्हें।
जोरी निसि तुम बिछोह, कोपि श्राप दीन्हें॥१५॥

दोहा

अति विरहित रघुनाथ जू, लखे और बन जाइ।
पल्लो सौर बसैं तहाँ, बूझत तिन अकुलाइ॥१६॥

छप्पै

सुन्दर रूप विलोकि, सौर सौरी तहँ आए।
घिरि लीन्हे चहुँ ओर, चकित चित लखैं चवाए॥
तिहि थल सौरी नारि, एक चरननि लपटानी।
विनय करी कर जोरि, दीन मुख बोलत बानी॥
–प्रभु नेक कुटी पावन करहु, इह वन दुर्लभ दरस दिय।
–अति भाव प्रीति जुत राम लखि, तिन थल निसि विश्राम लिय॥१७॥

रुचिरा छंद

चरन पखारि, दुहुँनि चरनोदक ले, मुख सिरहिं चढ़ाइ भली।
किसलय सयन तुरत रचि तरुनी, फल मूलनि बन खंड चली॥
अति मीठे मुख लगे स्वाद जे, ते दोननि भरि तोरि धरी।
छुधित जानि तिय आतुर तबहीं, रघुबर आगे आनि धरी॥१८॥

---

१६. पल्ली : अंचल, क्षेत्र विशेष, कुटी। सौर : शबर, एक जंगली जाति।
१७. सौर सौरी : शबर और शबरी (शबर जाति की श्रवणा नाम तपस्वी और तपस्विनी) चवाए : चौंवाना, दिग्भ्रांत।

सवैया

लछ्छन के मुख राम तके, तब लछ्छन लछ्छ रखैं मुसक्यानैं।
देखहु प्रेम प्रतीति की रीति, प्रतापु सबैं, निजु आपु लुभानैं॥
सौरहि की मुख सेज हुते फल, भावहिं श्री भगवान सवानैं।
देवन के मन खेद भये लखि, बेद कहाँ इन भेदनि जानैं॥१९॥

दोहा

जे मुख के कन-सेष कौ, सेषादिक ललचात।
सो मुख सौरी बेर कौ, अति रुचि स्वाद अघात॥२०॥

सोरठा

अस्तुति विविधि विधान, करी जु सबरी बाम तब।
लही अभय बरदान, कही राम सों हेत यह।२१॥

पंपा सरहिं निहारि रीछमूक पगु धारिअैं।
हनू आदि कपि चारि, साथ रहत सुग्रीव के॥२२॥

गीतिका

सुनि हेत श्री रघुनाथ जू, उठि प्रात मारग हैं गहे।
तन विरह, सीय वियोग आरत, लखन लखि तब हैं कहे।
अब धीर धरि, रघुबीर हो, कछु अग्र काज विचारिअैं।
धनु बान पानि सम्हारि गहि, कहुँ हहरि हिय मति हारिअैं॥२३॥

---

१९. सेष : बचा हुआ, अवशिष्ट, उच्छिष्ट। सवानैं : अधिक।
२२. रीछमूक : ऋष्यमूक, दक्षिण भारत का एक पर्वत।

घनाक्षर

प्रत्युत्तर

"कौन हौं ?" 'अनुज हौं तौं', 'नाम कौन ?' 'लछ्छन हौं।'
'हैं जु हम कौन ? तजे कौन से भवन हैं।"
"अग्रज हमारे राम, अवधि तजे हैं धाम।"
"कौन हेत पाइ ?" "मतपितु सासन तवन हैं॥"
"आए हैं कहाँ ते?" "पर्णसाला तजि पंचवटी।"
"जात कित" "हेरन कौ" "जानकी जवन हैं।"
"जानकी हैं कौन भाई ?" "जानकी, जनक जाई।"
जानकी रटत हा हा जानकी रवन हैं॥२४॥

दोहा

लखन—

ईहि बन इहि विधि विकलता, इहि औसरहिं अधीर।
अब समुझौ निजु अपुनपौ, आदि पुरुष रघुबीर॥२५॥

है भृगु पति की मति हरी, रघुपति शोष न एक।
समुझाये समुझौ अबै, तुम हो एक अनेक॥२६॥

बहु विधि करत प्रबोध प्रभु, बिरमत चलत सुभाय।
सिय की सुषमा सब लखें, पंपा सरवर जाय॥२७॥

घनाक्षर

जहाँ सुक सारिका, बखानें कोक कारिकानि। कोकिला कलानि सुर छूटें पंच सरसे।
कमल मुखीन कैधौं मोहें कमलाकर हैं। भूले रस भौंर मधुराधर के परसे॥
नाचत बधाई मोर मोरनी गोपाल कहि। लोचन चकोर चंद आनन को तरसे।
सीता अनुकम्पा पाइ, फूलि रही चंपा बन। काम कैसे धाम राम पंपा जाइ दरसे॥२८॥

---

२४. तवन : तो। जवन : जो।
२८. पंच सर से : कामदेव के बाण से। कमलाकर : तालाब।

मालिनी

विरह विहित भावे, राम पंपा निहारे।
चहुँ दिसि सिय सोभा, नैन मैं सोचि हारे॥
विकच कमल वृंदे, भृंग लीलानि भूले।
कित मुख द्रिग सोभा, सिय के आइ फूले॥२९॥

छप्पै

श्री राम—

सुक सारिक पिक बक विचित्र, हँसादि भृंग गण।
सारस मोर चकोर सकल, वन जीव जंतु कण॥
नाग लता पुन्नाग, नाग केसरि नारंगण।
चंपक विद्रुम बिंबु, करक बहु केतकि अंगण॥
=गोपाल राम अवलोकि थल, सकल रूप छवि सवन महँ।
=जनु देन हमहिं सुधि जानकी, दै जु गई पंपाहि कहँ॥३०॥

झूलना छंद

राम बिरहातुरे, निरखि पंपा सरे। सोभ सीतामयी, चित बिचारें।
ललित लहलह लता, चरन किसलय किधौं। हंस गति पाइ पहसर विहारें।
अंग दुति चंपकन, नैन एनीन गन। चपन खंजनन लहि, गरब ठानें।
विकच अरविंद मुख, चारु मकरंदमय। रूप रोलंब अवलंब मानें॥३१॥

अधर अनुराग रुचि, बिंबु बंधुक लहे। दसन से करक कित, गहन सोहे।
सीख सुर कोकिलन, विपिन ऊधम करें। करनि के करभ कर जानु मोहे॥
अंग अनुराग मिलि, मरुत परिमल बहें। त्रिविध गति पाइ अति, महक मातें।
जानकी रूप सब, लूटि पंपा लई। मोहि रघुवरि रुचि, रंग राते॥३२॥

३०- पुन्नाग : श्वेत कमल, सुलतान चंपा। नाग केसरि : एक सीधा सदा बहार पेड़। चम्पक : चम्पा, एक प्रकार का मीठा केला। करक : कचनार, मौलिश्री, करील का पेड़।

३१- एनीन : हिरणियाँ। रोलंब : भ्रमर।

३२. बिंबु : बिम्बा फल। दसन : दाँत। करक : बिजली। बंधुक : गुल दुपहरिया, पुष्प विशेष जो दोपहर में खिलता है।

सोरठा

बिनए लछ्छन जानि, इहि सर प्रभु मंजन करौ।
नित्य नेम निजु ठानि, लखिअें कानन और कहूँ ॥३३॥

सवैया

मंजन कौं कटिलौं जल मैं, लखि कंजन मंजुल नैन लुभाने।
बारि बलूलन के उफने, लगि मारुत मंद दिगंत सिघाने॥
झार लगी चलि ऊरध लौं, जितहीं कित व्योम बिवान भगाने।
यों रघुनंदन के बिरहैं, बन-नंदन के तरु लौं मुरझाने ॥३४॥

बिदोहा

अति बिरहित बिह्वल महा, रघुबर होत भए।
लक्षन लछ्छ बिलोकतें, सिच्छा जुत बिनए ॥३५॥

किरीट छंद

लक्ष्मण—

सोच तबै न करे रघुनायक, सायक लै मृग साथ लगे जब।
जानि सकै दनु-छंद रतीक न, भूलि भरे भ्रम भीत महा अब॥
यादि करौं प्रभुता अपनी निजु, कौतुक कौन कहां न करे कब।
देखहु धौं मोहि सासन दै इक, तीनहुँ लोकनि मारि करौं दब ॥३६॥

छप्पै

लक्षन धनु टंकोरि, कोपि परतिज्ञहि धारिय।
उथल पुथल तिहुँ लोक, करहुँ निज भुज बल भारिय।
इन्द्र चंद्र सेषादि रुद्र, वर मारि बिहंडउँ।
दनुज मनुज कोटीस, कीट-सम एक न छंडउँ॥
-यह जौ न करहुँ सिय हेत लगि, तौ रबि-बंस लजाइहौं।
-केवल प्रताप रघुनाथ को, जानकि राम मिलाइहौं ॥३७॥

---

३४. बारि बलूलन : पानी के बुलबुले। झार : ज्वाला। बन नंदन : इन्द्र का वन।
३६. छंद : छल। दब : आता, राख।

दोहा

कितक बात के कारने, करत हिये प्रभु ताप।
रीछमूक पग धारिए, सब गति जानत आप ॥३८॥

सोरठा

विकच जलज मुख मंद, बिहँसि चले, लछ्छन-तर्न।
कछु हरषित रघुनंद, रीछमूक पर्वत चले ॥३९॥

दोहा

कोटिन संकट जात कटि, कोटिन खल दल दाप।
संतत जन गोपाल कौं, दाहिन राम प्रताप ॥४०॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां श्री राम पंपा दर्सनोनाम चतुर्विसोध्याय: ॥२४॥

---

३९. तर्न : ओर।

बालि-बध सुग्रीव-राज्य-वर्णन

(२५)

सोभा छंद

चले आगे आगे, रघुवर घने चित्त चितानि भीने।
कहे बच्छें लछ्छें, बहु श्रम छुधा अंग आभूत कीने॥
भले भूले माया, भ्रमित भ्रमतें भच्छ कौं भाषि दीन्हे।
लसे दोऊ सोभा, तरु तर रसें स्निग्ध छाया नवीने॥१॥

दोहा

छुधा सहित रघुनाथ कौं, तिहि तरु तर बैठाइ।
आपु गए फल मूल कौं, निरखे उपवन जाइ॥२॥

दुमिला

करि मंजन लच्छन तच्छन ही, भरि दोनहि पक्व रसाल फलें।
तिहि औसर अंजनि कौ सुकुमार कहे, तुम तोरत कौन बलें॥
अब देहु न डारि, भलौ जु चहौ, इहि ठौरन काहू की जोर चलें।
इक तौ दुख दाहनि डाहि रहै, तिहि ऊपर तें अब नोन मलें॥३॥

छप्पै

सुनि हाँकि हनुमान, इतें लछ्छन अनखाने।
भिरे भुजा बल जोर, जंग जालिम दुहु ठाने॥
गिरत परत तरफरत, लरत बहु बहु बल अंगह।
उथल पथल थल होत, जुरे जुद्धहि बजरंगह॥
=गोपाल परस्पर जानि बल, हनुव कहें तुम कौन महँ।
—रघुवंस राज दसरथ तनें, राम नाम लछ्छन हमहँ॥४॥

---

१. बच्छें : बत्स। लछ्छें : लक्ष्मण।
२. दोनहि : दोना। नोन मलें : नमक मलना।

दीपकल

सुनि सलजि गए हनुमान धीर।
अपराध अगाधहि छमहु बीर॥
अब हैं जु कहाँ रघुनाथ राइ।
हम कौं जु दरस, परसैं जु पाइ॥५॥

सुनि चले लखन, तिन लै जु संग।
फल स्वाद सकल जुत बहु सुरंग॥
तुम नाम कहा, किन कहहु सोहि।
सुत पवन, हनू सब कहत मोहि॥ ६॥

सोरठा

गए लखन लै साथ, माथ धरे रघुनाथ पद।
लए खैंचि प्रभु हाथ, बैठाए निज निकट ही॥ ७॥
दै हनु कौं फल पाँच, और राम अर्पन करें।
बूझे लछ्छन साँच, कहो आप कित रहत हो॥ ८॥

सवैया

हनू—

हैं हम बानर पाँच सुनौ, मिलि रीछहि मूकहि जीव बचाए।
बालि बली हरि बाल-वधू, लघु सोदर सुग्रिव मारि चलाए॥
रावन लंकहि जात लिये सिय, जानि सके न कहे सलजाए।
डारि गई अध कौं तकि के, तिनके बनरा पट भूषन पाए॥ ९॥

दोहा

हैं दुचिते बहु भाँति तें, बालि बली डर खाइ।
न तौ काज करते सबै, सुनौ विनय रघुराइ॥१०॥

---

९. रीछहि मूकहि : ऋष्यमूक। अध : नीचे।

सवैया

श्री राम—

राम कहैं, हनुमान सुनो, छिन मैं हम राजसिरी रचि देहैं।
बालि गरीब कहा कहनैं, जब सुग्रिव कौं अपनौ करि लेहैं॥
ल्यावहु बेगि उन्हें इहि ठौरहिं, और जु हैं कहने सोइ कैहैं।
या महँ बीच न एक गुनो, कहुं सीय जबै हम देखन पैहैं।११॥

मदन छंद

राम सासन पाइ, गे सुग्रीव पै हनुमान।
कहे सकल विधान, जानहु राम श्री भगवान॥
धन्य धन्य प्रताप प्राची, भए तुमहि सहाइ।
चलहु बेगि, न बार लावहु, दरस कौं रघुराइ॥१२॥
सुनत रामहि, जाम विहँसे, नील नल हरषंत।
चरन भूषन उत्तरी जुत, लें चले हनुमंत॥
जाइ रघुवर चरन परसत, कहे उठि कपिराज।
जामवंत कहे तबै, अब भए पूरन काज॥१३॥

दोहा

पंच प्रदच्छिन प्रभुहि दै, बंदे लछ्छन पाइ।
बैठाए रघुनाथ तिन, कहि भूपति कपिराइ॥१४॥

छप्पै

जब सुग्रीवहि आनि, हनू पायन तर पारे।
कहे राम, कपिराज, राज सब भये तिहारे॥
मारि बालि बलवंड, सोच तुम मारि मिटैहैं।
तुम समान नहिं आन, जु पै सीता हम पैहैं॥
-यह सुनतहिं सिय उत्तरिय-जुत, पद-भूषन आगे धरिय।
-उर लाइ परम करुनानि प्रभु, नैन वारि बारिद करिय॥१५॥

---

११. बीच : अंतर।
१३. जाम : जामवंत। उत्तरी : उत्तरीय।

सवैया

श्री राम—

केलि कला रस-रंगनि-संगनि, अंगनि अंग लही सुख सातें।
लाज-लता, श्रम-सीकर बीजनु, काल-कला-रस-रंगनि मातें॥
मंजुल कंज सिया मुख मंडन, तें ही तजी, कै तजी उन हातें।
बूझत हैं विरहातुर राघव, उत्तर देत न उत्तरिका तें॥१६॥

दोहा

चीन्हहु लच्छनु वच्छ ए भूषण सिया कि हैं न।
उत्तर देति न उत्तरी, सुधि आई है दैन॥१७॥

जितने भूषन जानकी, मो पह चीन्हि न जाइ।
चीन्हत हौं इक नूपुरै, प्रतिदिन बंदत पाइ॥१८॥

सोरठा

देतहि लच्छन हाथ, उन जु चढ़ाए माथ लै।
रघुवर भए सनाथ, हनू गाथ लगे कहन॥१९॥

छप्पै

हनू—

रघुवर, बालि प्रचंड, कौन तिनसौं रन मंडै।
सुर नर नागर दैत, सबन मद मारि बिहंडै॥
महा प्रबल, प्रभु जानि, सात दिग सात ताल तरु।
एकहि सर, इकबार बेधि करि, पारहि जो फरु॥
—इहि भाँति कठिन तिहं प्रान थल, करि विचार कारन करहु।
—नातरु अगाध सुख साघ सब, पूरन परतिज्ञ न धरहु॥२०॥

---

१६. श्रम सीकर : पसीना। बीजनु : पंखा उत्तरिका : उत्तरीय।
२०. बिहंडै : खण्ड-खण्ड कर देना। फरु : फाड़ डाले। तिह : उसका (बालिका) कारन करहु : उपाय करिये।

दोहा

राम—

बालि और सुग्रीव दोउ, सोदर भे किहि भाँति।
कहो हनू ए कौन के, भए सु बानर जाति ॥२१॥

मदन छंद

हनू—

जच्छ नाम सुबीर्ज की, गुनि कन्यका सुकुमारि।
पाइ देवल की जु श्रापहि, गहिय गहन उजारि ॥
कुंड तहँ द्वै दिव्य मैं, वह न्हात अद्भुत मान।
एक मैं वह होति बानरि, एक रूप निधान ॥२२॥

एक बासर मोहि तिहिं छवि, सुरति सुरपति ठानि।
कहे मोसम सुतहि लहि है, यह सुनिहचैं जानि ॥
बालि नाम जु होइ तिहिको, प्रबल अति भुव लोक।
रहे तुव कन्यत्व सब दिन, करहिं जैं जिय सोक ॥२३॥

जनी सुत वह समय पाइ, सु जानिये इहि भेव।
बहुत बासरो गए, सुन्दरि, मिले तिहि रवि देव ॥
भोग करि तिहिं भानु, सासन दे गए सुख पाइ।
नाम तिहि सुग्रीव जानहु, हेत यह रघुराइ ॥२४॥

रुचिरा छंद

प्रबल बालि सुरराज हुतें अति, अबल ताहि सुग्रीव भयो।
जानि पंच कन्यनि मैं तारा, मोहि रूप तिहि छीनि लयो ॥
सरन राखि कोइ सके न इनहिन, सरम गए, नहिं सरन लह्यो ॥
जानि अभय थिति, त्रसित प्रान तें, रीछमूक मैं आइ रह्यो ।२५॥

---

२१. सोदर : सहोदर।

२२. सुबीर्ज : सुवीर्य नाम का एक यक्ष।

२३. कन्यत्व : कुमारीत्व। जैं : जिन, मत।

२५. पंचकन्यनि : पंच कन्या—पुराणानुसार अहल्या, द्रौपदी, कुंती, तारा और मंदोदरी ये पांच स्त्रियाँ। विवाह आदि करने पर भी, इनका कौमार्य अखंडित माना जाता है।

छप्पै

तारा रूप लुभाइ, बालि सुग्रीव बिडार्‌यौ।
भिर्‌यौ जु बार हजार, प्रबल बल तें बल हार्‌यौ॥
जिहि पौरुष के रोष, को न दिगपाल ससंकिय।
कांख दाबि लंकाधिपत्ति, बहुधा बिपत्ति दिय॥
=तिहि त्रास त्रसित सोदर अतिहि, इहि थल प्रान उबारियउ।
=यह जानहु श्री रघुनाथ जू, अब प्रभु सरन सम्हारियउ॥२६॥

दोहा

राम—

महिमंडल पल एक मैं, बालि बलवंत।
यह गिरि निर्भय क्यों भयो, कहो हेत अनुमंत॥२७॥

रुचिरा छंद

हनू—

दुर्वासा इक समय पाइ करि, उहि पर्वत तप आइ ठए।
पालि सकल बन जंतु प्रीति तें, तिनहि तपोबल अभय दए॥
वासर एक बालि तिहि थल के, सावज खेलहि मारि लए।
लखि अपराध क्रोध तें आतुर, रिषि तबही तिन श्राप दए॥२८॥

दोहा

रिषि—

येह गिरि कबहूं बलि जौ, जंतुन तकि हो पाप।
मम श्रापानल ज्वाल मैं, भस्म होहुगे आप॥२९॥

रहे जानि सुग्रीव यह, रीछमूक में जाइ।
जीव उबारे आजु लौं, लहैं दरस रघुराइ॥३०॥

---

२८. दुर्वासा : एक मुनि जो शंकर के अंश से उत्पन्न अनुसूया और अत्रि के पुत्र थे। ये अत्यन्त क्रोधी थे।

तोमर

श्रीराम—

सुनि हँसे श्री भगवान।
तुम कहे गाथ प्रमान।
चलि देखिये वह ताल।
किहि भाँति कठिन कराल ॥३१॥

उठि चले सुनत ठिकाम।
ले गए लक्षण राम ॥
तकि दीह तरवर सात।
धनु बान धरि विहसात ॥३२॥

झूलना छंद

देखि तरु साथ, रघुनाथ धनु हाथ लै। सेष परिवेश पर, चरन धारे।
मसक के कसक तैं, सेष सूधे भए। एक ही सरुहि तरु सात मारे॥
बान के चलत, अध लोक हल बल मचो। आई तुनीर ही, सर समायो।
उमड़ि घनघोर धुनि, जलद सम, जलज श्रम। रोस भरि बालि बलवंड धायो॥३३॥

करखा

देखि रघुनाथ छबि, अमित तन रूप रबि। दै सु चित चरन सुग्रीव, ग्रीवहि गह्यौ।
भिरत गजराज मद मत्त सावकहि ज्यौं। कै जु कछु जाल नहि कोप, दाहन दह्यो॥
मारतैं मीड़ि अति विकल सुग्रीव लखि। बालि के हृदय रघुनाथ सायक हने।
निरखिधनुबानकर,मोहिकहिकहिउठ्यो। बिनहिअपराधवध,कौनवेदनिभने॥३४॥

मदन छंद

श्रीराम—

जानि के अति प्रबल तुम को, हनें उर मैं बान।
निबल ह्वै सुग्रीव, मेरो गह्यो सरन निदान॥
होइ होनी ह्वै रहै सब, रची विधि को जौन।
मानिअैं भवितव्य अैसी, दोष कहिअैं कौन॥३५॥

---

३२. ठिकाम : निकाम स्थान।

३३. सेष : साँप। परिवेश : साँप की कुंडली। मसक : दबाव। सेस सूधे भये : साँप सीधा हो गया।

३४. ग्रीवहि : ग्रीवा, गर्दन। मीड़ि : मसकना, मर्दना।

करखा

बालि—

आपु समरथ्थ, सब अर्थ करि लेहुगे। हौं जु कछु टहल पहुंच्यो न, रघुवर सुनौ।
रंग कौ अंक लै लंक लीबे चहो। लंकपति सहित धरतो जु पद तर, गुनौ।।
है जु रघुराज कौं लाज अंगदहि की। संग दै सुअन प्रभु के सु जानहु अबै।
निरखि नव नील छवि,जोति मिलि हीगयो।धन्यहनुमान कहिविरद,बानैसबै।।३६।।

दोहा

परे चरन पर पांचऊ, करत बालि जयकार।
धन्य धन्य रघुनाथ हो, परिपूरन अवतार।।३७।।

सोरठा

सरनागत कौ लाज, बालि हते हम दोष बिन।
ह्वै अंगद जुवराज, राज देहु सुग्रीव कहं।।३८।।
अंगद कहे सुनाइ, पितु सासन भरि पालिहौं।
सुनो विनय रघुराइ, सेवा, करि कछु मांगिहौं।।३९।।

मनोहरा

हनु कहै हेत विचारिअै।
पुर माहि प्रभु पगु धारिअै।।
अभिषेक रघुवर कीजिअै।
इन राज तिलकहि दीजिअै।।४०।।

सुनि चले सहित समाज हैं।
सब करे पूरन काज हैं।।
रचि सकल विधिमत सीख हैं।
दिय राज तिलक सुग्रीव हैं।।४१।।

---

३७. पांचऊ : पांचों—सुग्रीव, हनुमान, जामवंत, नल तथा नील।
४१. सीख : सीमा।

निसिपालिका

सीस कर जोरि कै विनय पांचो करे॥
धन्य रघुनाथ, सरनारथी प्रन धरे।
हम जु निज दास हैं, आस पद रज किये।
रूप मकरंद अभिराम, लोचन पिये॥४२॥

दुमिला

सब राज नए, सब साज नए, सब काज नए, उनए घन हैं।
सब रीति नए, सब प्रीति नए, सब नीति नए, दुख ए जन हैं॥
तिहिं तैं एह गाथ सुनौ रघुनाथ, सनाथ अबै इक से मन हैं।
चित हाथ करौ, हित दै सब कौ, सु यहै बन बानर के गण हैं॥४३॥

सोरठा

चारि मास प्रभु गारि, बरषा गहिर गभीर अति।
निद्रा छुधा निवारि, सिय वियोग दुख को सहैं॥४४॥
यहै विनै, रघुनाथ, रीछमूक पशु धारिअं।
बन जीवन के साथ, जग जीवन लीला करैं॥४५॥

लक्ष्मन—

यह जनि जानहु जीव, चाड़ सर्‌यौ दुख बीसर्‌यौ।
सुनि राजा सुग्रीव, बालि हतें सोइ बान यह॥४६॥

चामर छंद

राम जू तबैं वहै जु बान डारि कै दए।
राखिअं ध्व चीन्ह कें, सु प्राण बालि को लए॥
लेंहि जो उठाइ याहि, ताहि सांच जानिए।
बात छोलि कै कहैं कहा, सनेह मानिए॥४७॥

पाठान्तर—४४ सहैं : कहैं (१,२)

---

४६. चाड़ : विपत्ति। सर्‌यौ : काम पूरा होना।
४७. डारि कै दए : धरती पर फेंक दिया। जानि : जानकर। मानि : मानकर

दौरि कै हनू तब, उठाइ बान कौं लिए।
जानकी समान हौं जु लेहु राम मो दिए॥
दाहि लंक पंक कें, जु रंक रावनैं दरौं।
दास येक राम कौ, जु आस कौन की करौं॥४८॥

सोरठा

अंगद कहे सुनाइ, पीछे हनू न छोड़िहौं।
रघुबर मोहि सहाइ, का रावन दस सीस कौं॥४९॥
कहें जाम सलजाइ, भये बहुत हम दिनन के।
हृदय चरन रघुराइ, पौरुष भरि हारौं नहीं॥५०॥
बहुत कही नहि जाइ, कहें तबै नल नील हैं।
नहि दूजे रघुराइ, एक आस विस्वास तें॥५१॥

सवैया

सुग्रीव—

और कहा कहिये बहुतै, पति जात सबै पति राखि लिये की।
हैं जु सदा मति मंद महा प्रभु, भाँति छमावत भूलि भयेकी॥
है करनै टहलैं निहकेवल, जानत हौ सब रीति नये की।
दीन दयाल गोपाल कृपा निधि, लाज सबै निजु राज दये की॥५२॥

सोरठा

सुनि हरषे रघुनाथ, स्वासन करि सबहीन के।
ले लक्षन प्रभु साथ, रीछमूक पर्वत चले॥५३॥
त्रिभुवन ताप विषाद, तैं आपु सहे संताप।
अबगति गति गोपाल भनि, राजत राम प्रताप॥५४॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल
विरचितायांबालि बद्ध सुग्रीव राज्य वर्णनोनाम
पंचविसोध्याय: ॥२५॥

---

५०. जाम : जामवंत। पौरुष भरि : पुरुषार्थ भर।
५३. स्वासन : आश्वासन, सोखना।

हनुमान-संपाति-संवाद

(२६)

सोरठा

हरि गुनि लक्षन राम, रीछमूक पर्वत लखे।
महा विषम वन धाम, निसि वासर जानि न परे ॥ १ ॥

द्रुमिला

झुमटे नव नील निकुंज लता, उमड़े नव नील घटा घन हैं।
कहुं जानि परे निसि द्योस जहां न, जनावत सो जुगुनू गन हैं ॥
चहुं ओरनि पौन झकोरनि तें, विरहानल तेज उठे तन हैं।
टरिहैं कहि लक्षन क्यों दिन ये, जहँ एक नहीं अवलंबन हैं ॥ २ ॥

घनाक्षर

पाटी नील मेघ मध्य, सीपज बलाका पाँति। दामिनी दमक द्युति दसन सुहाती है।
सोहैं हिय हार जलधार धुरवाँनि कैसे। सारी जरतारी जोतिरिंगन की राती है ॥
मंद मंद धुनि कटि किंकिन निसीथ नाद। अति उनमाद इतराती रंग माती है।
जानिकैंवियोगमहाविरही बिहार हेत। वारवधू ऐसी राति आवती रु जाती है ॥३॥

चामर छंद

देखि देखि रूप राम रीछमूक की कहैं।
कौन भाँति मास चारि आस धारि कै रहैं ॥
है कवौ जहाँ न नेक चंद सूर को उदै।
कै जु मोहि तामसी लई सु है विधुंतुदै ॥ ४ ॥

---

१. हरि गुनि : विचार करके।

३. पाटी : माँग के दोनों ओर सजाकर बैठाया जाने वाला बाल। सीपज : मोती। बलाका पाँति : बगुलों की पंक्ति। धुरवा : बादल। रु : और।

४. तामसी : क्रोध। विधुंतुदै : राहु।

नाराच

घटा सु नील पाटिअे, छटाकि जोति दंत की।
घरी कहूं तजै न ग्रीव, काम केलि कंत की ॥
श्रवै कबंध स्वेद से, उरोज शृंग-भूधरे।
कुहू निसाहि कोकिला, कुहू कुहू कुहू करे ॥ ५ ॥

सोरठा

हम मानी सब हारि, रीछमूक जब ही बसे।
अैसी निसा छिनारि, भरि जोबन ना रति समै ॥६॥

घनाक्षर

अब तो सुहाई, रितु सरद जुन्हाई आई। सुधियौ न पाई, सुधि लागी हैं सनेह की।
अवधि अवधि आई, अवधि नसाई बात। तप की नसाई बात, बन औ न गेह की ॥
आप काज लाज तजि कीजै चलि काज साज। बानर समाज जिन्हेलाजयौंनदेहकी।
लागे पथ करत मनोरथ के रथ पर। कहिअे सुधारि कहा विधि अवरेहू की ॥७॥

दोहा

लखें किंकिधा जाइ कै, राम बिरह के दाहु।
अब तुम लक्षन वच्छ किन, चलि कै तिन पै जाहु ॥ ८ ॥

सवैया

राम रहें रमि ग्राम नदी तट, लक्षन लच्छ लखैं सब ही को।
जाइ भये तिहि पौरि तबै चलि, देखि हँसैं करि बानर कीको ॥
नीठि कै जाइ जनावत ही, सुनि कोपनि बात कह्यौ अरबी को।
आए हैं फूलि, फजीहति लैं करि, बालि के बैरहि जानत फीको ॥ ९ ॥

---

५. कबंध : बादल।

६. छिनारि : स्त्री के लिए गाली विशेष पुंश्चली।

८. सरद जुन्हाई : शरद की चांदनी रात। अवरेह : रेखा। सुधियौ : समाचार भी।

९. कीकौ : किलकारी। नीठि : मुश्किल से। अरबी : अड़नेवाली, हठवाली। आए हैं फूलि : क्रोध करके आए हैं।

सोरठा

परी श्रवन झनकार, झपटि चले भीतर बली।
कोपानल के झार, झपटि केस पटके नृपहि ॥१०॥

छप्पै

हलबल गलबल होत, सभा ठिलि भीतर आए।
जोरि जुगुल कर सीस, राम अनुजे समुझाए॥
लै सुग्रीवहि पकरि, राम पायन तर पारे।
बालि बैर किन लेहु, नारि जिन लाज बिसारे॥
=अति असित चाहि, कंपित अधर, कहि न जात प्रभु राज मद।
=निजु स्वार्थ, धर्म गुरु धर्म कहँ, गर्व सकल धरि करत रद ॥११॥

त्रोटक

सुनि श्री रघुनंदन मंद हँसे।
जनु भोर सरोरुह से बिगसे॥
हनु अंगद राम तबै विनये।
अपराध अगाध छमौ इन ये॥१२॥
प्रभु सासन तें सब सोध करैं।
तिहि लोक गमैं, जिहि काज सरैं॥
हम चारिहु लंक-दिसाहि गमैं।
सब बानर दीप दिगंत भ्रमैं॥१३॥

रुचिरा

राम—

हनू जाम सुग्रीव अंगदहि, श्री रघुवर हरषाइ कहे।
करने कहा है, सु अब कीजै, अवधि आस विस्वास रहे॥
है करतूति काहि कितनी भरि, अब लगि हमहि न जानि परे।
अति मीठे बातनि के मेवनि, कहौ कौन के उदर भरे॥१४॥

---

१०. श्रवन झनकार : कान में आवाज।
११. ठिलि : ठेलपेलकर।
१२. इन ये : इनके इन अपराधों को क्षमा करें।

मदन छंद

जोरि कर कपिराज अंगद हनू बोले बैन।
हैं जु किंकर चरन रज के सुनो राजिवनैन॥
सोधि तिहुंपुर थल जिते सब जन जिते जिहि ठौर।
ल्याइहैं हम जनकजा कहिऐं न प्रभु कछु और॥१५॥

उड़ियाना

यह सुनि रघुनाथ हाथ बान डारि दीन्हें।
अब तें नहि विक्रमता काछें भरि चीन्हें॥
होइ जु कोइ बल-निधान, लै उठाइ बानें।
जानत सुधि हेत चिन्ह देंहि तिहि निदानें॥१६॥

सुनि गुनि सब सोचि रहे, उत्तर नहि आयो।
अजनि-सुत लै उठाइ, रामहि सिर नायो॥
धनि धनि सब बदत, कहैं राघव मुख बानी।
सुनिये इनके सु हेत, आधिक जिन ठानी॥१७॥

छप्पै

सुग्रीव—

जनी अंजनी न दिन छुधित अति आरिहि ठाने।
बहकावति बहु भांति, बोध नहि नेकहु माने॥
कही अनखि तब मात सीष कछु सिखे तबहि इन।
बहु बहु रंग सुरंग गहन, फल तूंढ़ि खाहु किन॥
=सुनि सोधि सकल बन हारि तब, मन माफिक एक न मिल्यौ।
—अरुनोदय अवलोकि कैं, कूदि हनू दिनमनि गिल्यौ॥१८॥

---

१५. जनकजा : जनकी जन्मी (जानकी)।

१६. काछें भरि चीन्हे : अब विक्रमता कहीं नहीं है, विक्रमता का केवल चिह्न भर है —जांघिया, कच्छ।

१७ आधिक : मानसिक चिंता, आधि।

१८. जनी : जन्म। जदिन : जिस दिन। बहकावति : बहकाना, भुलावा देना। माफिक : अनुकूल। दिन मनि : सूर्य। गिल्यौ : निगलना।

वासर ते निसि होत, तबहि ब्रह्मा अकुलाने।
मिले आइ तिहि ठौर, सकल सुर अचरज माने॥
गिलत गिल्यौ, उगले न, खेल बहु विधि करि हारे।
पवनात्मज सिसु अबध, हृदय हर तेज बिचारे॥
=सिव सहित सिवा बनि नृत्य रचि, मनहि मोहि कौतुक बरनि।
=लखि हँसत हनू कह कह तबहि, किय मंगल आतप तरनि॥१९॥

सवैया

बाल समै इक औसर कूदि, दसौ दिसि खेलहि खेल उजारे।
ब्योम बिवान बिलोकि भगे सब, लेत फलाँगनि ते भय मारे॥
बैठि सुरेस के गोद बिनोदनि, भूषन अंगनि मारि बिदारे।
देव सभा लखि भेव कहैं, यह कौतुक बानर तैं अब हारे।२०॥

छप्पै

हने हनू के चिबुक बज्र, बज्रीस रोस करि।
मुरछि परे महिमाहि, रहे सुर सोचि मनहि धरि॥
जानि सुवन गत प्रान, जगत-प्रान सु अति क्रोधिय।
सकल लोक हत हेत, महा मारुत अवरोधिय॥
=ब्रह्मादि देव ब्याकुल सकल, तिथि थल सब आगम करिय।
=बहु दुर्घट कर्म विचारि करि, हरि हर उर करुणा धरिय॥२१॥

ब्रह्म तेज दिय ब्रह्म, विश्नु निजु विश्नु तेज दिय।
रूप तेज दिय रुद्र, चंद्र रवि तेज तुल्य किय॥
नव ग्रह तेज नक्षत्र तेज, इन्द्रादि देव सब।
वेद मंत्र गुनि गन समस्त, जोगीस जोग तब॥
बसु सेष सुमेर कुबेर बल, बरुन सिंधु सनकादि ध्रुव।
हरषाइ सबन मारुत तनय, हनुअ अंग बजरंग हुव॥२२॥

---

१९. सिवा : पार्वती।
२१. बज्रीस : इन्द्र। गत प्रान : मरा हुआ। जगत प्रान : वायु।
२२. नवग्रह-सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु ये नवग्रह।
बजरंग : बज्र के समान दृढ़ शरीर वाला (हनुमान)।

सोरठा

सुनि हरखे रघुनाथ, धन्य हनु बजरंग वर।
दए मुद्रिका हाथ, माथ नाइ लिय पवन सुत ॥२३॥

छप्पै

वंदि चरन रघुनाथ, चले कपि सोध चहुं दिसि।
कितिक गए रवि लोक, कितिक दिवि लोक ठानि रिषि ॥
बहुतक लोकालोक, उदै अस्ताचल हेरैं।
बहुतक चढ़े सुमेर, जानकी कहि कहि टेरैं ॥
—बहु भाँति घने ढूढ़त फिरत, फिरि आवत, फिरि जात हैं।
—नल नील जाम अंगद बली, हनुव साथ हरषात हैं ॥२४॥

दोहा

चले पांचऊ सग संग, सीस नाइ भगवान ॥
हनू मुखहि करि करि मुद्रिका, चलो लंक प्रस्थान ॥२५॥

श्री रघुवर सुमिरत हिये, चले पांचऊ वीर।
मनहु चले दससीस कौं दसरथ सुत के तीर ॥२६॥

करखा

सीय के खभरि, हनुमान अंगद चले। जाम नल नील नभ, धरनि सोधन करे।
हारि सागर तटै, देखि विस्तर बटै। बास निसि करि कथा, राम जस अनुसरे।
अवधि अवतार सुख, बरनि मख भंगि धनु। ब्याहि जनकात्मजा, गर्ब भृगुपति दरे।
पंचवटिऔ जु थल, हरन सीताहि तैं। बालि बध, गीध कौं तारि सुरपुर धरे।२७॥

सोरठा

सुनत जटाइव नास, अश्रुपात संपाति किय।
करें सु बेन प्रकास, धन्य अनुज जग जस लह्यौ ॥२८॥

---

२७. सीय के खभरि : सीताजी की खबर लेने के लिए।

२८. संपाति : संपाती—एक गीध जो अरुण का जेष्ठ पुत्र और जटायु का बड़ा भाई था।

प्लवंगम छंद

बूझि उठे हनुमान, कहौ तुम कौन हौ।
हौं जु गीध संपाति सुनौ विधि तौन हौ॥
सोदर तौ सु जटायु लग्यौ प्रभु काम है।
आपु कहौ किहि काज चले कित धाम है॥२९॥

मदन छंद

राम के हम दास हैं हनुमान अंगद नाम।
नील नल जुत, जाति बानर रीछ हैं इक जाम॥
अवधि राजकुमार, सासन तें करे बनवास।
पंचवटिअं अनुज दंपति करत तेअु बिलास॥३०॥
देव दनु मनु मैं जु कौन, हरी त्रिया तिन प्रान।
तिन्हिं सोधन चले पांचहुँ, यह सु हेत निदान॥
आपु क्यों बिनु पच्छ तें अब भये हौ जु सपच्छ।
सो न कहिअे हेत हम सों, सकलभेव प्रतच्छ॥३१॥

दोहा

संपाति—

हौं देखत चिरकाल कों, इनके अमित चरित्र।
लखे जु तीनि रमायनं, चौथें मिलं जु मित्र॥३२॥

छप्पै

होड़ी-होड़ा भ्रात उड़े, उड मंडल माहें।
भ्रमत भ्रमत भए जाइ भानु-मंडल अवगाहें॥
लाग्यो जरन जटायु, किरनि तन तेज ज्वाल जब।
हौं लीन्हों करि छांह, गए बरि पच्छ सकल तब॥
उतर्यो जु नीठि तिहि सहित भुव, वह आयौ प्रभु काज हैं।
अब मोहि भयौ दुख सुख सुनत, लाज धरत रघुराज हैं॥३३॥

---

३१. सोधन : खोजना।
३३. होड़ी होड़ा : प्रतिस्पर्धा। उड : नक्षत्र।

दुमिला

अब कौन कहाँ उनकी गति कौं, मति है जु कछू रचनै बनयो।
जिहि हारि घने तप बारि रहैं, नहिं पार लहैं कोइ पार गयो।।
तिहिं तें अब और जवाल सबै, हरि नाम गोपाल रसाल लयो।
सुनि राम-कथा परतच्छ अबै, जु अपच्छ हुतैं सुसपच्छ भयो।।३४।।

सोरठा

हौं देखत गढ़ लंक, सीता गहन असोक तर।
दस मुख चढ़्यो कलंक, पंक प्रनासन राम हैं।।३५।।

गीतिका

सुनि गाथ सब खगनाथ की, रघुनाथ के निज काज कौं।
कहि हेत पौरुष आपने, भरि लए धरि सिर लाज कौं।
तब सबन सौं हनुमान यों कहि, गहे नाम जहाज कौं।
अवलम्ब जानकि चरन उत, इत लाज श्री रघुराज कौं।।३६।।

सोरठा

संका करे जु दूरि, लंका सीता सुनि हनू।
करौं दनुज धरि धूरि, केवल राम प्रताप ते।।३७।।

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां हनू संपाति संवाद षटविंसोध्याय:।।२६।।

---

३४. रचनै बनायो : रचना को बनाया। जवाल : झगड़ा, परेशानी।
३५. प्रनासन : विशेष रूप से नष्ट करना।

हनुमान-सीता-दर्शन

२७

सवैया

हनु—

एक बरैं बपु सात उजागर, संग्रह सार असार करे हैं।
दाबि लये दिसि चारि धरा मिति, भूरि बिभूतिहि लोभ भरे हैं।।
जा बित हेत गोपाल भनें, करि देव अदेव खड़े झगरे हैं।
जद्दपि संपतिवान, तऊ बड़वानल के उर दाह धरे हैं।।१।।

लीला छंद

सागर बिस्तर देखि, सबै मन सोच कहैं।
जानकि राघव दैन, यहै हम नेम गहैं।।
जाम कहौ किहि भाँतिनि स्वामित काज सरैं।
पाँचहु मैं बल बीर, सो बारिध पार परैं।।२।।

छप्पै

कहै जाम अब राम काम, तन जो यह आवैं।
बहुत दिनन के भये, जिए जग को न हँसावैं।।
काय वृद्ध बारिधि अगाध, अघ पौरुष जानो।
निरखि सलोम सरीर, हसे सुनतैं हनुमानो।
तब सोचि नील नल कहि उठे, हम सुग्रीव संगति फले।
करिये जु कौन बल जलहि सो, इत करनै कारज भले।।३।।

---

२. बिस्तर : बिस्तार। सरैं : करैं।

३. सलोम : रोम सहित।

दोहा

अंगद कहैं जु कूदि कैं, जाइ सकौं दधि पार।
तेज रहै नहिं तन हनू, फिरि आवन की बार ॥४॥

कहैं हनू दिन पाँच पर, चारिहु लीजहु चाहु।
हौं कूदत हौं सागरैं, तुम जु इतै ठहराहु ॥५॥

छप्पै

बंदि चरन श्री राम चंद्र, चरणारविंद हिय।
लंक दिसा उनमानि, जानकी पदहिं ध्यान किय॥
रवि अस्ताचल जात, गात कसि बलहिं सम्हार्यौ।
झपटि चढ़े गिरि शृंग उग्र सुच्छम बपु धार्यौ।
मुख तें जु काढ़ि कहिं मुद्रिकहिं, हौं बाहन निसा हनें॥
बिस्तरहिं वारि निस्तारनें, है दुस्तर अवगाहनें ॥६॥

घनाक्षर

झपट्यौ विचारि पन्नगारि सौं सम्हारि करि। दसहूं दिसानि निसि भारी अंधकारभौ।
कधौं तम रासि, कै विनास कौ सुदरसन। हरि सौं चल्योई रूसि, तेज बल भार भौ॥
भनत गोपाल उहि पार अवलंबन कौं। सीता चरनारविंद जीवन अधार भौ।
जौ लौं मन राघव कौ जानकी पैं जाइ। तौ लौं हनुमान कूदि पारावार पार भौ।।७॥

सोरठा

हनु नाघत मैनाक, परसि चरन पायन भयो।
गयो श्राप मिटि बाँक, तजे बैर सब नाक पति ॥८॥

---

६. उनमानि : अनुमान।
७. पन्नगारि : गरुड़।
८. पायन : पावन, पवित्र। नाक-पति : इन्द्र।

करखा

कूदियो सिंधु हनुमान, उनमानि करि। कै जु रघुबीर की बात लंकहि चल्यौ।
तिमिर निसि तोष तें, तेज बल रोस तें। गगन मग रोकतें, दनुज दलबल दल्यौ।
बार लाग्यौ न, हरि चक्र सौं पार भौ। सक्रहित दर्प सक्रारि नासन मनौ।
रोकि रही मारगे, उग्र ग्रामैस्वरी। जात कित, कौन हो, निदरि, कारज भनौ ॥९॥

चामर छंद

भौंर भेष कै हनू, चले जु सोच तें जबै।
चीन्हि लंक ईस्वरी, गही जु मारगे तबै॥
कौन हो, चले कहाँ, जु आजु कौन काजु है।
हौं हुती कुबेर की, लई जु लंक-राजु है ॥१०॥

मो जु नाम है हनू, चल्यौ जु राम काम कौं।
रोकती सु कौन है, कहै न आप नाम कौं॥
हौं जु ग्राम देविअे, कही विरंचि की सुनौ।
मुक्ति हाथ रावरी, सु जुक्ति अेसिअे गुनौ ॥११॥

दोहा

जानौ जदपि अबद्ध हौ, तदपि न करिए संक।
मोहि हते बिनु राम जू, कैसिहु लहे न लंक ॥१२॥

मनही सोचि विचारि कै, हरष सोक उपजाइ।
स्वामि काम हित सुंदरी, छवत परी मुरझाइ ॥१३॥

यह अपराध अगाध किय, चकित भये तकि आप।
मृतक दहे बिनु जाहु जो, हनू तुमहि नहि पाप ॥१४॥

---

९. तोष : सतोष। रोकतें : रोकने वाले। बार : विलम्ब। हरिचक्र : सुदर्शन चक्र। सक्र : इन्द्र। सक्रारि : रावण। ग्रामैस्वरी : लंकिनी।

१०. भौंर भेष : भ्रमर-वेश।

मदन छंद

गई तरि लंकेश्वरी इत, हनू किय सु विचार।
कौन विधि करि जानकी, अब लहौं सुधि इहि बार।
अर्ध निसि भरि, भ्रमर भेषहि, करे लंक प्रवेस।
जोति जगमग सदन ते, नहि कुहू की परवेस ॥१५॥

विजय छंद

लसत जलधि-मधि कनक कँवल जनु। बिकच रहत निसि, बिनहि तरनि भर।
सकल रतन जुत, हाटक रतन छवि। कवि कर हाटक न सकत बरनि बर॥
केसरि तरुनि गन बिविध सुगंध तन। भरि भरि रस मकरंदनि झरनि झर।
पूरनि पयोधि निधि सेष-परवेष-सम। अद्‌भुत लंक किधौं पंकज धरनि पर ॥१६॥

सकल महल प्रतिबिंबित जलधि जल। जलचर चपल सु थिर न रहत है।
बहु बहु रंगनि तें, तरल तरंगनि तें। अमित उमंगनि तें, चकित चलत हैं॥
भनत गोपाल, लखि सुंदरी पुरंदरी-सी। हँसि हँसि रसि रसि कौतुक कहत हैं।
लरत सफर मिलि, मकर मकर हिलि। कच्छपनि उछलि, तिमिगिल गहत हैं ॥१७॥

छप्पै

सत जोजन द्वै जाम मध्य, पहुँचे हनु लंका।
जानकि पद अभिलाष, और जिय रही न संका॥
भ्रमर रूप पुर भ्रमत, भ्रमन मन एक न ठानिय॥
सकल लोक रचना-समस्त, रावन रजधानिय॥
=दनु प्रबल निसीथहि नींद बस, घरकहि गज गिरि दरनि जनु।
=विकराल बदन रद विकट बहु, श्रवत परे श्रम स्वेद तनु ॥१८॥

---

१५. कुहू : अमावस्या।
१६. कनक कवल : सोने का कमल। विकच : विकसित रहना। तरनि : सूर्य। कवि : शुक्राचार्य। सेष परवेश : शेष नाग की कुण्डली।
१७. तिमिगल : एक बहुत बड़ी मछली।
१८. भ्रमन : भ्रमण। भ्रमन : भ्रम का बहुवचन। दरनि : गुफा, कंदरा।

दोहा

सदन सदन पुर जनन की, सकल लंक सुधि लेत।
भ्रमत भ्रमत मिलि कै हनू, दनुजी दनुज समेत ॥१९॥
कहुं सोवैं, कहुं जागहीं, कहुं माचे रस केलि।
कहुं गावैं, नाचैं कहूं, मुरि एकनि इक ठेलि ॥२०॥

मदन छंद

सकल मंदिर सुंदरी सब, चले देखत झारि।
चित्र सारिन मैं घनी रति, सची सी उनहारि॥
रतन भूषन सौं खचीं, रचि परी सजि शृंगार।
उरज पीनन परसु लरके लपटि मोतिन हार ॥२१॥
लखे आगे रंग सालहिं, जहाँ रंग विहार।
सकल गंध सुगंध परिमल, भ्रमत भ्रमर अपार॥
जुवति जूह जहाँ करैं, बहु भाँति रंगनि केलि।
नाचतीं बहु गावतीं, इक कंध, इक भुज मेलि ॥२२॥

मेघस्फूर्जिता छंद

कहूं राजें बाजी, विविध विधि सौं जात हैं ना बखाने।
कहूं गाजें माते, दुरद घनसे विंध से सोभ माने॥
लखें आगें औरें, दनु बल बली नींद बाढ़े निसंके।
वृथा आयो देखौ, कहि कहि हनू जानकी है न लंके ॥२३॥

छप्पै

दस जोजन गढ़ जानि, लंक विस्तार बखाने।
तामहु सकल बनाव, कुंभ कर्नादिक थाने॥
आप आपने पुरनि, मेघनादादि कुमारे।
पुत्र मित्र परिवार, सदन सब आप विहारे॥
=प्रासाद हेम मनि जाल बहु, जाइ, कलस जलदनि लसैं।
=फहराँहि विविधि तिनमे धजा, जनु बहु दामिनी घन बसे ॥२४॥

---

२१. सची : शची—इन्द्राणी जो पुलोमा की कन्या थी।
२४. थाने : स्थान।

दोहा

थल थल पुर प्रति सदन लखि, छिन छिन करत बिराम।
बहु बिचित्र निरखे हनू, लंकापति सुख-धाम ॥२५॥

करखा

मनिन की जोति, चहुँ कोति जगमगि रही। रंग रंगनि लसे, रंग साला घनी।
सकलसुख राजश्री, भौंन भौंननि जिते। जातनाहिन कही, बनक जिहि विधिबनी ॥
नाग नग कन्यकनि, रूप अतुलित जहाँ। सु दरी विविध शृ गार अंगनि किये।
रतन पलकानि,तलरतनभूषनखची। मोहि निसि ही रही, मधुर मादक पिये ॥२६॥

मदन छंद

राज-लोगनि के घने पुर, हनू लखि हरषात।
होइगी अनुहारि किहि बिधि, जानकी मम मात ॥
रहत सोचि बिचारि चहुँ दिसि, कहत कछु पछिताइ।
सकल रावन के सु अंतह पुरहिं, पहुँचे जाइ ॥२७॥

घनाक्षर

पैठ्यो लंक पट्टन मैं, प्रबल हठी लौ ठेलि। देख्यो ठौर ठौर मैं न जनक कुमारिकें।
चीन्हि न सकत, चंद-मुख तें चकित चित। सु दरी पुरंदरी समान, चित्रसारिकें ॥
पीन पीन उरज नवीन बेन बीननि की। चाहि न सकत बीर सीता भ्रम कारिकें।
कहतगोपाल, दससीसभुजबीसदेखि।होतोईसआयस,तौडारतो उखारि कें ॥२८॥

उड़ियाना

अंतहपुर रावन के जाइ हनुव देखे।
तीनहुँ पुर राजश्रीहि सोभ सकल लेखे ॥
सोवें पलकाहि, रतन भूषन तन भूषे।
जिनकी उपमानि सकल उपमा कवि दूखे ॥२९॥

---

२६. कोति : ओर। नाग नग : गजमुक्ता।
२८. आयस : आज्ञा।

महर महर बहु सुगंध महल महल आवै।
भौंरनि की भीरनि, कोइ सोवन नहिं पावै॥
ढारैं बहु चौंरिनि गहि बीजनु सुकुमारी।
तिन की सम कौन कहूँ, विधिना अवतारी॥३०॥

दोहा

अंतहपुर लंकेस को, निरखत हैं हनुमान।
एक एक ते आगरी, सिगरी रूप - निधान॥३१॥
नगी किन्नरी आसुरी, सुरी पन्नगी जौन।
रावन भोग बिलासिनी, गनै कहा लगि कौन॥३२॥

घनाक्षर

सोवत निसंक लंक नायक सहेलिनि सों। सोभित सकल मानो मूरति कनक की।
सदन जराय, अंग-भूषन जराय पुनि। पलका जराय, मनि मानिक बनक की॥
रूप कैसी मंजरी, बसंत रितु बौड़ि रही। मंजु मंजु मंजरी, ज्यों मंजुल तनक की।
ऐसीमृग-नैनीमोंनिहारिरह्योसाखामृग।जाने मयनंदिनीको नंदिनीजनककी॥३३॥
सोवत निसंक लंक-नायक विलास थल। सात परिवेष मध्य, रूप को निधान है।
संग मय-नंदिनी के, रगनि सों रस बस। सिथिल भयोई जिनि मोहि पचबान है॥
अधर अधर लागे, निरखि कपीस कहै। जनक-किसोरी लाज बोरी कुल भान है।
अबहीकढ़ोरिमारों,ईसलौंमगजफारों। सोचें,मनकांपें,कोपि वीर हनुमान है॥३४॥

मालिनी

भ्रमर भ्रमर स्वासा, नासिका गंध पायो।
धिक धिक मम ज्ञानं, मात को दोष लायो॥
यह जू मैं सुता है, रूप धारे अनेके।
नित दस मुख भोगें, आसहीं आपु एकै॥३५॥

३०- महर महर : मेंह मेंह। चौंरनि : चौर। बीजनु : पंखा।
३१. आगरी : एक से एक बढ़कर।
३२- नगी : पहाड़ी स्त्री, नगीना। किन्नरी : किन्नर जाति की स्त्री।
३३- बौड़ि : कली। तनक : शरीर। साखामृग : बंदर।
३४- कढ़ोरि : घसीट कर।

दोहा

नहि सासन रघुनाथ कौ, ताते हतौं न आजु।
का जानौ किहि समय मैं, प्रभु करि हौं निजु काजु ॥३६॥

उड़ियाना

यह कहि कपिराइ धाइ और महल देखे।
सोवैं दनुजी अनेग रूपनि अवलेखे॥
चाहि तिनहि कूदि ग्राम दूरि महल जानी।
बिस्तर तिहि माँह तहाँ विकट जातुधानी ॥३७॥

दीरघ अति दंत नयन नासा पद बाढ़े।
घरके सब घन समान, गिरि से कुच ठाढ़े॥
छूटे लट बट बरोह, फैले चहुँ ओरें।
देखत सब लंक हनू, जागे भ्रम भोरें। ३८॥

घनाक्षर

फेरि चित्रसारिन में सुंदरी विचित्र चाहि। चित्र के समान चित चित्र हीसोआयोहै।
बल को निधान, वीर बाहु महा हनुमान। हेरत फिरत काहू नैक ना डरायो है॥
घर घर नगर बगर बन बाग बाग। ढूँढ़त फिरत महा मन पछितायो है।
आसपासआसुरीअनेगदुखदानीमध्य। सोकितअसोकतरसीताचिन्हपायो है ॥३९॥

सोरठा

भोर होत हनुमान, सोधत मधुबन बाटिका।
निरखे सिया निदान, तरु असोक तर सोक जुत ॥४०॥

---

३६. का जानौं : क्या जानूँ।
३८. लट बट बरोह : बट के बरोह के समान लटें।

द्रुमिला

अवलोकि दसा सिय की हनुमान, भरे दृग नीर, कहै अति हैं।
करिके पद पंकज में मन लीन, कहै इनकी गति ही गति हैं॥
इमि सोचि विचारि छपे तरु साखहि, घेरि रही दनुजी जति हैं।
जिय जानि सभै, कहने सब हैं अब राखि लए पति श्री पति हैं॥४१॥

करखा

राम विरहाकुले, सीय विरहाकुली। मलिन मानस महा, चीर चिकटी तनै।
जदपि मति भारती, भूलि सुधि आरती। नैन जल जलद, नख परन बरखत घनै॥
सीस मनि ससि कला, सीस उरगनि घरे। पीठि रहीठहरिकछु, हलत चलत न बनै।
समुझिनहिसकतरवि, इंदुवासरनिसा। खगनकलरवनसुर, सहससरसमगनै॥४२॥

जीभ रघुवीर रघुवीर रटिबो करै। नील छवि नैन धरि ध्यान जलजाननैं।
तकत जग-प्रान-सुत प्रान आरत भई। गनति जुग चारि सम इगनि दिन निमिषनैं॥
काय मनकामना प्रीति अभिराम छवि। राम पद पद्म मकरंद मादक मनैं।
भार हरिबै रसा, सकल कौतुक जुतैं। रचत बहुरंग गोपाल लीला भनैं॥४३॥

त्रोटक

लखि सीय दसा हनुमान हिये।
मन ही मन कोटि प्रनाम किये॥
चहुँ ओर घनी दनुजीनि गटी।
ढिग बैठि प्रबोधत है त्रिजटी॥४४॥

पाठांतर-४१ जति : दति (१,२)

---

४१ जति : यत्र, जहाँ।

४२. चिकटी : मैला। तनै : शरीर पर। उरगनि : नाग (वेणी, केश)।

४३. जलजाननैं : कमलमुख। जगप्रानसुत : हनुमान। निमिषनैं : निमिष को। मनै : मन में। रसा : पृथ्वी।

४४. गटी : झुंड, समूह।

अति छीन मलीन दसा सिगरी।
अंग अंगनि राम-वियोग भरी॥
अवलोकि हनू गहि मौन रहे।
रघुनाथ संदेस न जात कहे॥४५॥

विदोहा

रघुवर चरन प्रताप तें, उद्दिम सुफल भयो।
सीता दरसन तें सबै, दुख संताप गयो॥४६॥

दोहा

अब जु यहै अभिलाष हिय, सुमिरत आठहु जाम।
अवधि बिहारैं जाइ जब, रंग महल सिय राम॥४७॥

कहा दसानन, लंक का, का दनु दलबल दाप।
सदा दाहिने चाहिये, केवल राम प्रताप॥४८॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल बिरचितायां हनुमान सीता दरसनो नाम सप्तविंसोध्याय: ॥२७॥

---

४६. उद्दिम : उद्यम, परिश्रम।

हनुमान-सीता-संवाद

२८

दोहा

इहि अंतर रावन उतै, सजि राजस अतिमाम[1]।
कहत मंत्र यहई करौ, तजै सिया ज्यौं राम ॥१॥

दीपकल छंद

दिन येक दसासन सजि समाज।
मधुवनहि चल्यौ सिय दरस काज॥
सुनि राज लोग नाना विधान।
चाए जु गुनी गुन करत गान ॥२॥
सुर साधि सप्त जिहि जौन अंग।
बीनादि मधुर बाजैं मृदंग॥
पट विविध अंग भूषन अपार।
जनु उमहि चले तिहुं पुर सिगार ॥३॥
मिलि करहि कुलाहल सुख विलास।
मह-मह सुगंध महकै सुवास॥
जब रावर ते निकसैं नरेस।
बाजै निसान बहु बेस बेस ॥४॥
बनि भाँति भाँति रनिवास भारि।
निकसी जु संग नृप सुखद कारि॥
छबि लागि रही कछु कहि न जाइ।
मिलि चलहि मंद गति मन सुभाइ ॥५॥

---

१. अतिमाम : येह्तिमाम, व्यवस्था।

चौबोला

सब मन भावन, विहसत रावन, मधुबन बनक बनायो।
रस उपजावन, सियहि रिझावन, काम केलि सरसायो॥
विरह जगावन, करत उपावन, जुगति सकल बनवायो।
मनहि रमावन, करत अपावन, चाहत सुकृत डगायो॥६॥

मधुबन सकल राज श्री सोभा, बनक बनक बनवायो।
ठौर ठौर प्रति राग रंग रस, सरस रसनि सरसायो॥
सुमन वितान सुगंध मोदमय, मदन केलि उपजायो।
गुनि रघुवर विश्लेष भेद हित, चाहत विरह जगायो॥७॥

चामर छंद

अंग अंग सुन्दरी, विचित्र भूषनें करी।
नील पीत रंग रंग, रूप रंग किन्नरी॥
संग संग भूप के, सबै सुबेस हैं किये।
कै जु चंचलाहि पुंज, नील मेघ हैं लिये॥८॥

सेत पीत लाल स्याम, नील मेघडंबरें।
जत्र कत्र छत्र हैं, विचित्र सोभ अंबरें॥
ऐसियै समाज साजि, लंकनाथजौ हँसै।
बाम अंग सुंदरी, सुमंद-ओदरी लसै॥९॥

दोहा

सकल भाँति सोभा रचै, चित बित चोरन येह।
ज्यौं भूले सिय हृदय तें, रघुवर बाल—सनेह॥१०॥

रावन सकल समाज सौं, मधुबन लखै सुबेस।
ज्यौं नंदन बन केलि सौं, सुरपति करत प्रबेस॥११॥

छप्पै

मधुवन बाहु अतिमाम सहित, लंकाधिप आयो।
साखामृग साखाहि लागि, देखत गरबायो॥
मय नंदिनी हिय लागु, और सब सुंदरि नेरी।
जनु ठकुराइन मलिन जानि, चेरिनि सब घेरी॥
कर जोरि कहत भयो दूरि तैं, यह विधि रची विधान की।
अब मो पर सकल सु दृष्टि की, करहु वृष्टि किन जानकी॥१२॥

झूलना

होत अतिमाम, लंकेस आयो तबै। सिकिलि सिय अंग अध मुख निहारै।
घेरि सुन्दर लई, संग मंदोदरी। सीख दीबै कछू, मन बिचारै॥
कहत रावन सुनो, और नाहिन गुनो। राज सब साज लै, राज कीजै।
जिनहि नहि ठौर कहूँ, ठौर तुमही कहा। संग तपसीन के रूप छीजै॥१३॥

जोग उन दृढ़ गहैं, भोग सब तजि द्ये। आपुपन कों गहैं क्यों बिराजै।
हौं जु सेवक सदा, सेव करिबौ करौं, कृपहिं उर धारि, उरवारि लीजै॥
वे जु जोगी जती, हैं जु बहु बहु मती। तिनहि तन कौ रती, मदन जानौ।
आजु तें राम कों नाम तजि जानकी। हौं जु सरनारथी, विनय मानौ॥१४॥

सोरठा

उठि अंतहपुर सीय, पाइ धारिऔं सोच तजि।
मो सिख दीजै सीय, कै पाऊँ कुछ अवधि करि॥१५॥

त्रोटक

सुनि सोकित सीय असोक तरैं।
नव नीरज नैननि नीर ढरैं॥
उर कंपि अधोमुख दृष्टि किये।
रघुबीर वियोग न मात हिये॥१६॥

---

१२. नेरी : निकट। ठकुराइन : स्वामिनी। किन : क्यों नहीं।
१३. सिकिलि : सिकुड़न।
१४. रती : छवि।
१६. मात : समाना।

करखा

बैन दससीस की, सीय गुनि सुनि कही। इतिक आधिक कहा कहतमगजहि भर्यो।
भूलि सब कृत गयो, अजहुँ लाज न भयो। जोति रवि के कहूँ जोतिरिंगन कर्यो।।
कलपतरु समहि क्यौं होत मोचै सुन्यो। रंक कहि क्यौं जु सुर राजसमसरि करैं।
परन के परन तें परन पर राम हैं। अमित कौतुकनि जुत, भेष तापस धरैं।।१७।।

बिमुख तिनके न सुख, लहत सरषप भर्यौ। तमहितम भावतै, अधम अघ थल थए।
विषय रस दंद तें, ज्ञान गुण मंद तें। त्रिविध फर फंद तें, किंतिक नाहिंन गए।।
दीन दुख हरन को, चरन मम हृदय थिति। और नहिं ठौर, जौ कहहु कछु जो चितै।
राम मम प्रान हैं, राम प्रानहिं बसैं। राम बासर निसा, नाम गाऊँ नितै।।१८।।

सोरठा

मम कोपानल ज्वाल, हव्य सकल परिवार दनु।
होमत लंक नृपाल, मख रक्षक रघुबीर तकि।।१९।।

त्रोटक

सुनि रावन आरत कोप भर्यो।
सिय बैन हुतासन झार जर्यो।।
मिसु कै निजु लोगनि रुठि कह्यौ।
अब लौं सब सोचि छमाहि गह्यौ।।२०।।

इहि हेत तपीन उबारत हौं।
निहचै उनको गहि मारत हौं।।
यह बोलि सु कोपनि खंग गह्यौ।
मय नंदिनि बीच परी सु कह्यौ।।२१।।

---

१७. मोचै : सेमर, सहिजन, केला, नील का पौधा। पर : श्रेष्ठ। परनके : श्रेष्ठतम, सर्वश्रेष्ठ।

१८. सरषप : सर्षप, विष।

१९. हव्य : आहुति। होमत : आहुति देना।

२१. खंग : तलवार।

दोहा

चारि भेद सौं सोच मन, हौं हरि हौं निजु हाथ।
मास पाख की अवधि कौं, आतुर होहु न नाथ ॥२२॥

बहुत भाँति दस कंध कौं, लै बहुरी परमोधि।
हँसति चली मंदोदरी, गुनि आगम मति सोधि ॥२३॥

पद्धटिका

बिलखित बैन कहै बैदेही।
हा हा रघुबर बाल-सनेही ॥
हा हा चाप बिभंजनकारी।
हा भृगु-नंदन गरब प्रहारी ॥२४॥

हा लच्छन बच्छहु सुधि भूले।
कै रघुनाथ बियोग बितूले ॥
यह कहि नैन नलिन जल ढारैं।
को बिनु राम दुसह दुख टारैं ॥२५॥

दोहा

त्रिजटी—

अति आरत अवलोकि कै, तृजटी कही बुझाइ।
लखी सपन अवकास ही, मिलि हैं तुम रघुराइ ॥२६॥

---

२२. चारि भेद : साम, दाम, दंड, भेद।
२३. परमोधि : प्रबोधित करके, समझाकर।
२५. बच्छहु : वत्स भी। बितूले : विकल हो गये।
२६. अवकास ही : शीघ्र ही।

छप्पै

सकल लंक दल बल बिधंसि, दस कंध निधन करि।
तिलक बिभीषन सारि, नारि मयनंदिनि दुख हरि॥
चढ़ि पुष्पक सैनाधिपत्ति, पुर अवधि सिधारे।
त्रिभुवन जय धुनि होत, असित सुर नर मुनि तारे॥
=तजि सोक जनक नंदिनि हृदय, स्वपन अफल मम नहि न गनि।
=निसि-तिमिर-सोच मोचन करिय, रामचंद्र अवतार मनि॥२७॥

दोहा

रंचक रुख तें रुचि कहो, लंक दसानन नास।
अब कछु दिन में बिलसिहौं, पूरन अवधि बिलास॥२८॥

त्रोटक

सुनि जानकि राम चरित्र सबै।
कछु धीरज अंग धरी सु तबै॥
हनुमान महा मद मोद भरे।
मन ही मन कोटि प्रनाम करे॥२९॥

सवैया

सीता—
हेरि चहूं दिसि ही भरि सीय कही, इत की सुधि क्यों प्रभु पै है॥
जो लहिहैं पग भूषन उत्तरि, गीध दसा लखि जी पछितै है॥
है कुसली धनु बान जु पै कर, देवर बैर भले विधि लैहै।
लंक कहा उनको यह बंक, सु लंक-पती धरि धूरि मिलैहै॥३०॥

सोरठा

है न उन्हें अवलंब, एकौ बीर सहाइकै।
यह चित सोच कदंब, जगदम्बा पति-चित चित॥३१॥

---

२७. सारि : सम्पन्न करके।
३०. जो लहि हैं : जब पा जायेंगे। उत्तरि : उत्तरीय।
३१. कदंब : रोमांचित, समूह।

महिजा-चित हित-देन, जगत-प्रान-सुत समय तकि।
चकित भई कहि बैन, परि चौंकि तकि चिन्ह सी ॥३२॥

पद्धटिका

चहुं दिसि निरखि चकित चितमाहीं।
अचरज अमित कहि न गति जाहीं॥
बहु बहु हिय अभिलाषन सीता।
मुहु मुहु गावत रघुबर गीता ॥३३।

दोहा

पाइ लगी सिय मुद्रिकै, तच्छन लई उठाइ।
दूती विरह वियोग की, मिलि मानौं यह आइ ॥३४॥
राम नाम लखि मुद्रिकै, बूझत सिय अकुलात।
प्रभु त्यागी, की तूं तजी, कहि अचरज की बात ॥३५॥
हौं बिछुरी परबस परी, तूं बिछुरी किमि साथ।
कै आई दूती हमैं, मिलवन कौं रघुनाथ ॥३६॥

सवैया

कै रघुनंदन को लहि सासन, सोक हुतासन आइ जगाई।
कौन सुभांति तरी जल दुस्तर, कौन कहाँ अवलंब न पाई॥
दै कर पल्लव की पदवी, तजि राज-सिरी प्रभु तो अपनाई।
लक्षन सायक अग्र किधौं चढ़ि, जानि अपच्छ सवच्छ ह्वै आई ॥३७॥

सोरठा

कबहुं हृदय लगाइ, कबहूं नैननि पर धरै।
तूं किन दरस कराइ, रही नैन अभिलाष भरि॥३८॥
सोचति बारहि बार, निरखि निरखि सिय मुद्रिकहि।
को लायो तिहि बार, तजि प्रभु को बन क्यों तरी॥३९॥

---

३२. महिजा : भूमिजा, सीता। जगत-प्रान-सुत : हनुमान।
३७. सासन : आज्ञा।
३९. बार : समुद्र के इस पार। बन : पानी।

त्रोटक

सुनि सोक हनू करुनानि भरे।
कर जोरि प्रदच्छिन पाँइ परे॥
गहि सूछम रूपक बानर हैं।
ढिग बैठि बिनै कर आगर हैं॥४०॥

सीता वचन—

कहि को तुम हो, नहि चीन्हि परे।
दनुराज किधौं कपि रूप धरे॥
मम सोक कुसान के ज्वाल जरे।
परसे सलभा खल क्यों उबरे॥४१॥

चामर छंद

हनू—

राम दूत, पौन-पूत, नाम मो हनूकहै।
सीय सोध, दन बोध, सासनें सदा रहै॥
मोहि मात जानि तात, सीख बारता सुनो।
चिन्ह देहु, दास जानि, और सी न जी गुनो॥४२॥

सोरठा

सीता—

है अति गति विपरीत, देखी सुनी न कान कहुँ।
नर बानर की प्रीति, भई न निबही आजु भरि॥४३॥

जिहि बिधि बाढ़ी प्रीति, पृथक पृथक करि सब कही।
श्री रघुबर की रीति, अकथ कथा कहि को सके॥४४॥

---

४१. सलभा : शलभ, पतिंगा।
४३. निबही : निर्वाह।

गीतिका

सीता—

पथ-पाथ दुर्गम, विषम विस्तर दुर्ग स्वर्ग प्रमान हैं।
दनु बृंद कोटिन कोटि कौ, अज ईस के बरदान हैं॥
जित ठानि संगर सुर पुरंदर, हारि किय भय प्रीति हैं।
कहि तुमहि से कपि साथ लै, रघुबीर समरहि जीतिहैं॥४५॥

द्रुमिला

सुनि बैन सिया हनुमान तबैं, बलवान महा बपु दीह धरे।
दिवि लोकहितैं सिर धारि तबैं, बिदिसानि दिसा भुज हैं पसरे॥
मुख दंत कराल, कराल नखै करि, दीरघ नैननि जानि लरे।
अतिकाय, महा बल पूरन हैं, रवि के परिबेष लँगूर करें॥४६॥

छप्पै

अद्भुत रूप दिखाइ, रूप सूछम कपि धारे।
चरन बंदि कर जोरि, राम अस्तुति उच्चारे॥
हरषि सिया बैठाइ, निकट अति आनंद मानी।
है समर्थ करिहै जु काज, बुधि बल पहिचानी॥
=अब धरहु धीर कछु दिन जननि, हरन पीर रघुबर सकल।
=यह का अब मोहि दस बदन खल, का दनु दल भुज बल प्रबल॥४७॥

---

४५. पाथ : पानी। स्वर्ग : उच्च प्राकारां तक।

रूपक छंद

हनुमंत—

विचारि मात जानकी, कृपा कृपा-निधान की।
न होइ आन आन की, यहै जु धीरजै धरौ॥
कहा जु रंक रावनौं, भयौ सबै भयावनौ।
सु दीन तैं दयावनौ, खरारि जान जी खरौ॥
भयौ सु तौ प्रचंड है, बली सु बाहु-दंद है।
रच्यौ बड़ो वितंड है, तिन्है न मात जी डरं॥
छिनै न बेर छंडि है, दसौ जु सीस खंडि है।
अबै त्रिलोक मंडिहै, तिन्है सनेह ही करौ॥४८॥

दोहा

अनिल अनल जल प्रबल दल, खल दुष्टन की दाप।
संकट मैं सब ठौर ही, रच्छक राम प्रताप॥४९॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां हनूमान सीता संवादोनाम अष्टविंसोध्यायः॥२८॥

---

४८. आन : शपथ, मर्यादा। आन की : दूसरे जन की। दयावनौ : दया का पात्र।

हनुमान-युद्ध लंका-दाह

२९

हनू—

सोरठा

परसि चरण-जलजात, भयो कोटि संतुष्ट हौं।
अधिक छुधातुर मात, वनचर चर्वनिका चहौं ॥१॥

सीता फल तौ पांच, सीता सो हनु को दए।
चरण बंदि, कहि सांच, अति रुचि सौं अर्पन करें ॥२॥

ए फल किहि थल मात, कही जु मधुवन बाग है।
तहाँ न कोई जात, रखवारे दनु सहस दस ॥३॥

करखा

सुनत कँ मान, हनुमान मधुबन तकैं। मधुर बहु बिपिन के स्वाद रसना रसैं।
मोद परिमलनि भरि, भ्रमहि भृंगावली। कूदि इत उतनि तरु ओर आगे धसैं॥
करत उतपात, फल खात सब सूंति करि। खैंचि जरमूर तैं जलधि डारे घनें।
चाहि अचरज सबैं, दनुज धाए तबैं। मारि मरकट अबैं दलित किय मधुवनें॥४॥

कूह करि जूह दनु, घेरि चहुँ दिसि लिए। जानि लघु जीव पाषान मारैं भले।
मटकि इत तैं उतैं, चटकि पटके घने। सटकि चल तैं सु कढ़ु राइ धरनी तलैं॥
हारि रखवर जे, भागि जित कित चले। धाइ दरबार सब, ते पुकारत खरे।
आइ कपि एक, फल खाइ तरु झारि सब। सुनहु रे असुर बहु, असुर नीके दरे॥५॥

---

१. चर्वनिका : चबैना।

२. सीता फल : शरीफा।

४. जर मूर : जड़ मूर।

५. कूह : चिग्घाड़। नीके : भलीभाँति। कढ़ु राइ : घसीटकर।

धाइ जित कित परे, ठिकिलि कौतुक भरे। कुँवर नृप अगुसरे, अच्छ अच्छनलखे।
चकित चितहीं भयो, कितहि मधुवन गयो। अटक मरकट न कहुं संकचितमैंरखे॥
सकल भट भीर दनु, हाँकि बानन हने नै। कहूं एक नहि लोम तन के भरे।
भनत गोपाल, हनुमान बजरंग वर। जानकी-नाथ उर ध्यान धारन धरे॥६॥

घनाक्षर

कूदत फलांग लैं लैं, साखामृग साखा बिनु। चंचल ज्यौं पारद कहूँ न अटकतु हैं।
निपटे निकट, आये सुभट चिकट। भूमि भुंडनि भपटि, कैंधौं रंग मटकतु हैं॥
एकन लपेटि कै लंगूरहि सौं गहि गहि। दसहूं दिसानि बीर फूल फटकतु हैं।
केते मीड़ि भीड़ि धरि पांय कीन्हें धूरधानी। केते करि रोस कै रसाहिपटकतुहैं॥७॥

दोहा

मारत हीं दानव घने, मार्‍यौ अरर अपार।
हौं ल्यावतु हौं बांधि, कहि, धायो अछ्छ कुमार॥८॥

सवैया

बानर एक, अनेक हने, कहि, बान हने उर भाल भले हैं।
कूदि अचानक ही हनुमंत भंवावत भागि अनेग चले हैं॥
धाइ कहैं दसकंधर सौं, धरि पांयन अच्छ कुमार मले हैं।
हूलि उठी सब लंक थली, कहि, लंक-दलैं कपि येक दले हैं॥९॥

दोहा

बहु विधि जुद्ध विसुद्ध ह्वै, जूझ्यौ अच्छ कुमार।
मारत एक सहस्र दनु, मार्‍यौ अरर अपार॥१०॥
सुनि रावन कोपनि भर्‍यो, उठ्यो बान धनु साधि।
कालदंड तब यों कह्यो, मैं ल्यावत हौं बांधि॥११॥

---

६. लोम : रोम। अच्छ : अक्षय कुमार।
७. पारद : पारा। रंग मटकतु है : आनन्द से मटकरना। फटकतु : पछोरता है। धूरिधानी : धूल की ढेरी, ध्वंस। रसाहि : पृथ्वी पर।
८. अरर : भीड़।
९. भाल : भाला। भँवावत : घुमाते हुए। दलैं : सेना। दले : दलित कर दिया।
११. कालदंड : यमराज का दंड। भजि : भागना।

उड़ियाना

तौ लौं उत कूदि हनु, सिय के पग लागे।
जानकि हिय संकि, कही कौन कुमति जागे॥
एकै तुम, लंक सकल, कैसे भजि जैहो।
कौन भाँति खेम कुसल, जाइ खामरि देहो॥१२॥

हनू वाच–

पावक-रघुबर-प्रताप, दानव तृन जानौ।
कौनहुँ मोहि संक नाहिं, मात सत्य मानौ॥
तौ लौं उर अरर पार्‌यौ, हाके दनु भारे।
कूदे हनुमान झपटि, कूटि पीटि डारे॥१३॥

मनोहरा छंद

तब कालदंड उमंडियो।
जिहि बली प्रबल बिहंडियो॥
सत सहस दानव जोर हैं।
झपटे जु करि घनघोर हैं॥१४॥

चहुँ ओर लीन्हें घेरि कै।
अवसान गौर न हेरि कै॥
जहँ गिरे दानव लच्छ हैं।
कपि नचै चढ़ि उर अच्छ हैं॥१५॥

दोहा

संक न रंचक लोम भरि, महा बंक हनुमान।
कूदि कूदि हलकारहीं, करि करि रघुबर ध्यान॥१६॥

---

१५. अवसान : होश, चेतना : गौ। चला गया।
१६. हलकारहीं : ललकारना।

प्लवंगम छंद

झपटे दानव वीर बली, बर जोर हैं।
घेरि उठे घन ड्ंदुहि, ज्यौं चहुं ओर हैं॥
मारत बाननि झोरि, करे सर लच्छ हैं।
कोपि कहैं गहि लेहु, हते इन अच्छ हैं॥१७॥

रुचिरा छंद

सकल लंक दल बल गल गज्जिय, दनु सज्जित बलवान बड़े।
बरषत सूल सेर सर कोटिन, हनू सैल सम चरन गड़े॥
निरखि सिला जोजन भरि की इक, उसकि कपि जू कर ओट करें।
दानव सकल डिकलि तिहि हारें, सो तिहितर हनु दाबि धरें॥१८॥

चौबोला

मंडल कालदंड रन रंग।
हनुवै हन्यौ महा बल अंग॥
मुष्टिक एक हने सिर माँहि।
धर पर सीस हुतौ जनु नाँहि॥१९॥
गिरयो धरनि धर भूधर मान।
मारे दनु हनु कीट समान॥
माच्यौ लंक महा हाहूत।
प्रगट्यो काल रुद्र अवधूत॥२०॥

भुजंग प्रयात

हते काल दंडादि दै दैत भारे।
बचे एक नाही जुटे जे मुहारे।
हनू रंग-लीला हँसी देखि काली।
रटैं जंबुमाली कपाली कपाली॥२१॥

---

१८. गल गज्जिय : गला फाड़कर गर्जना करनेवाली। उसकि : उखाड़ कर।
२०. भूधर मान : पहाड़ के समान। हाहूत : हा हा कार।
२१. जुटे जे मुहारे : जो सामने आये। जंबुमाली : शृंगालों का समूह। कपाली : कापालिक। कपाली : शिव, सिर।

हनु हाल हेरे, गयो चेत ता है।
चढ़े कूदि कंधे हने मुष्टिका है॥
लखें जुद्ध लंका, रटें दीन बानी।
कहा भौ, कहा भौ कहैं जातुधानी॥२२॥

दोहा

इहि विधि अगनित दानवन, किए हनू संघार।
गज बकत्र धायो तबं, मार्च्यौ अरर अपार॥२३॥

छप्पै

विकट दंत, विकराल भाल, सिंदूरहि भूरित।
गदा गुरज कर सैल, लै जु पहुँच्यौ रिस पूरित॥
हन्यौ हाँकि हनु कौ जु, झर्‌यौ तन रोम न एकहुँ।
मारें चहुँ दिसि घेरि, अत्र सब दनुज अनेकहुँ॥
कपि कोपि, मारि असुरनि करनि, करनि करेज बिदारियेउ।
चहुँ ओर झपटि पटकैं झटकि, बहुचरननि मलि डारियेउ॥२४॥

त्रोटक

विरच्यो हनिवंत महा रन मैं।
जनु केहरि कुंजर के गन मैं॥
इत ते उत कूदि कला झटकै।
गज ऊपर लै गज कौं पटकै॥२५॥

तजि कुंजर—वक्त्र सरोस भयो।
हनुवै बहु अत्र प्रहार कर्‌यो॥
हनियो कपि कुंजर एक मुखै।
रद सुंड विहीन घट्यौ परुषै॥२६॥

---

२२. चेत : चेतना। ता : उसका। कहा भौ कहा भौ : क्या हुआ, क्या हुआ।
२३. गज बकत्र : हाथी के समान मुखवाला राक्षस विशेष। बकत्र : वक्त्र, मुख।
२४ अत्र : अस्त्र। करन : हाथ से। करेज : कलेजा।
२६. परुषै : पौरुष।

उत लात हनैं, न परै धरनी।
गिरि फूटि गिर्‌यौ जनु हैं धरनी॥
धरकै धन सौं, रन भूमि भवै।
मुख नैनन श्रौनन श्रोन श्रवै॥२७॥

दोहा

चलत सेन अगनित हनू, बहुतक गए पराइ।
प्रलय कियो कपि लंक कौ, कहे भूप सौं जाइ॥२८॥

स्त्रग्धरा छंद

रावन—

घेरौ, घेरौ सबेरौ, दनुज-पति कहै, मर्कटै मारि डारौ।
मारौ, मारौ जुझारौ, विकट भट, घने बाग तें रे निकारौ॥
लंका बंका निसंका, निसि दिन सदा दाहिनैं जाहि संभौ।
खंडौ, खंडौ, विहंडौ, असुर सुर बली, बाटिका भी अचंभौ॥२९॥

दोहा

सुनि सासन दससीस कौ, इन्द्रजीत बलबंड।
हौं लावत हौं बाँधि कै, का बानर परचंड॥३०॥

नाराच

चले जु इन्द्रजीत, सीस नाइ भूप कौं तबै।
सु भट्ट वीर वीर संग, संगरै सजै सबै॥
गिरे गयंद वृंद, ज्यौं कलिंद विध गंध सें।
भिरे कबंध सों कबंध, श्रोन भू कबंध सें॥३१॥

---

२९. दाहिनैं जाहि संभौ : शिव जो जिसके दाहिने हों अर्थात् शिव की कृपा जिस पर है।

३१. कलिंद विध गंध : कलिंद पर्वत, विंध्यपर्वत तथा गंधमादन पर्वत। कबंध : रुंड, धड़। कबंध सें : जल से।

दीपकल छंद

करि कोप उठ्यो तब इन्द्रजीत।
बहु समर समूहनि कौ अभीत॥
रथ बैठि सस्त्र बहुवा सुधारि।
रन भूमि लख्यो भयभीत कारि॥३२॥
गजराज गिरे गिरिवर समान।
कपि कोप लये तिन पटकि प्रान॥
दनु सुभट कोटि फर फरहि खेत।
धरके जु घनै घाएल अचेत॥३३॥
थल श्रोन पूर, नहि कहुँ समाहि।
रथ चलत चक्र धँसि धरनि जाहि॥
संग्राम भूमि सक्रारि हेरि।
हांके हनूहि हलकारि टेरि॥३४॥

दोहा

हांकत ही हनुमंत के, इन्द्रजीत रनधीर।
झपटत ही बाननि हने, लोभ न झर्यो सरीर॥३५॥

झूलना छंद

गाजि हनुमान, बलवान घमसान को। देखि दल प्रबल, रन मै हुँकारे।
दनुज दल बल प्रबल, बहु मल्ल मर्दन करे। चरन गहि केतिकी, महि पछारे॥
भुजनि भुज दंड भरि, झपटि लंगूर धरि। दिगनि दिग मनहुं बदि, बलहि डारे॥
चाहि कपि बंक सब, लंक हलकंपमय। संक भरि भूरि भय भीत भारे॥३६॥
वीर उतपात कै होत हाहूत मचि। सोचि दल दनुज हर हर उचारें।
गैल मिलत न कहूं, गलिन बहु बल ठिले। सरन कोटीन कहि कहि पुकारें॥
कोपि घननाद, लखि साजि स्यंदन चढ़्यौ। ठिकिलि सब सैन सस्त्रन प्रहारें।
झपटि हनुमान गोपाल रघुबीर रटि। गजन गज, रथन सौं रथ्थ मारें॥३७॥

---

३४. पूर : प्रवाह, धारा। सक्रारि : मेघनाद, इन्द्रजीत।
३६. बदि : ललकार करके। डारे : गिरा दिया। हलकंप : आतंक।
३७. गैल : रास्ता, गली।

चामर छंद

देखि इंद्रजीत सो अजीत वीर है नयो।
लंक में कलंक बीज लंकनाथ है बयो॥
हाँकि स्यंदने तवै, हनूहि कौ हँकारियो।
अंग अंग बान सौक साधि साधि मारियो॥३८॥

कूदि कै धजाहि बैठि, दाबि रथ्थ है दियो।
मारि सारथी तवै, रथी विरथ्थ है कियो॥
लाज खाइ, कै उपाइ, ब्रह्म-फांसि लै हरैं।
ब्रह्म रुद्र साखि दै, सु मेलियौ हनु गरैं॥३९॥

विचित्रपद

प्रभु कारज अग्र सुधारन कौं हनुमंत बली।
बहुधा दनु कीट समान दलै रन रंग थली॥
अति दीन दसा सहि बंधन वीर सरीर भले।
सब लै गुन ही गुन बाँधि कढ़ोरत द्वार चले॥४०॥

भुजंग प्रयात

चलै बाँधि द्वार कौ दीन कैसे।
हने सूल सेलैं, लगे फूल जैसे॥
जिते जातु घानैं तकी जातुधानी।
हनैं मूसलैं सो बनै ना बखानी॥४१॥

बजे बाजनैं जीति कै पौरि लंकैं।
दसग्रीव फूलै तजै चित्त संकैं॥
सबै पुत्र मंत्री नृपैं सीस नाए।
कहैं मर्कटैं मारतैं बाँधि लाए॥४२॥

---

३८. हँकारियो : ललकारा। सौक : एक सौ।
३९. हरैं : शीघ्रता से। मेलियौ : मिलाना, गले में डाल दिया।
४१. सूल : त्रिशूल। मूसलैं : मुसल।
४२. पौरि : द्वार।

चामर छंद

जाइ इंद्रजीत सीस भूप को नवाइयो।
अच्छ के सु सत्रु कौं प्रतच्छ बाँधि लाइयो॥
रीझि मेघनाद कौं नरेस दै लखै प्रभा।
खैंचि बानरै सु बीच राखियो सबै सभा॥४३॥

बुझियो जु लंकनाथ, "कौन है, किते चल्यौ।"
"पौन पूत, हौं हनू, जु पूत रावरो दल्यौ॥"
"कौन काज, कौन के कहै, जु लंक आइयौ।"
"राम चंद्र दूत, सीय काज हौं सिधाइयौ" ॥४४॥

घनाक्षर

रावन—

इंद्र तें बलिंद्र, महा रुद्र है ते रुद्र रूप। छुद्र रूप, छल कौं निवास उनमानिये।
काहू को चलै न जोर, ठान्यौ तिहि ठौर खोर। जान्यो करि तुच्छ लक, चित्र पहिचानिये॥
हेरे कौन कानन दसानन कौं आइ करि। कीन्हौं उतपात जातुधानी जातुधानिये।
वारिधि सकान, बड़वानल तें तेजवान। वायु तें सहसमान बानर बखानिये॥४५॥

झूलना छंद

देखि हनुमंत को, प्रबल बलवंत गुनि। कंत मंदोदरी, वच उचार्‌यौ।
ल्याइ मो निकट इत, प्रकट मर्कट किये। निदरि जिन अच्छ, परतच्छ मार्‌यौ॥
लंक तिनुके गनै, दनुज दल मलि घनैं। कौन बल उमड़ि, मधुवन उजार्‌यौ।
ताहि पर सिद्धि कै, ल्याइ सौं हटकिये। लाज उपजी न कहु, कहि विकार्‌यौ॥४६॥

रिसनि सब सौं रुठ्यौ, खग्गा गहि कै उठ्यौ। खंडिहौं अबहि, कहि भीर टार्‌यौ।
बीस भुज दंड सौं, कीस अविक कियो। ईस बल गर्व किहि को न गार्‌यौ॥
सुनत मारुत तनय, बिहँसि उत्तरु दिये। विषय करि पान, घट अमिय ढार्‌यौ।
सकल परिवार को होत सोपान तें। दै न गति ऊरवै, चहत तार्‌यौ॥४७॥

---

४५. धीर : युद्ध।
४७. विषय : विष।

घनाक्षर

हनू—

काहे को गाल बजावत इतेक मान। सासन जो होतो, तो न आवनै विचारतो।
होती जो न इत तिहुँलोक की भवानी। ना तो सारीराजधानीधूरिधानीकरिजारतो।।
कहा सुरपाल लोकपाल दिगपाल कहा। जीति के अजीत भयो, सोई बेर धारतो।।
प्रभुता कितेक ताकी, प्रभुता जतावै जौन। तौन सब प्रभुताकी मगजउतारतो।।४८।।

मतंगरूपक छंद

लख्यौ जु बैन बान सौं हल्यौ मनौ कृपान सौं। जग्यौ हिये कृसान सौं बखान नेक ना परे।
रटें जु लेहु लेहु रे, बचै न कोस देहु रे। करौ जु सीख येहु रे बचै न जीवतै दरे।।
हनें जु सेस सूल हैं, लगे मनौ सु फूल हैं। परी जु लंक हूल है जहाँ तहाँ घरी घरे।
झर्यौ न एक लोम है, थके उपाइ जो महे।कर्यो रे जारिहोमहै,नऔरमारतेमरे।।४९।।

भुजंगप्रयात

थके जातुधानी, थकी जातुधानी।
थके लंकवासी, बनै ना बखानी।।
मरै क्योंहु नाहीं, सबै मारि हारे।
दसग्रीव सो हेरि ही में विचारे।।५०।।

लख्यो ना परै कौन है रूपधारी।
महा काल कौं काल सौं कामचारी।।
झरे सस्त्र सारे, झर्यो रोम नाहीं।
दसो मैं न कोई अहै तीनि माहीं।।५१।।

न है संक याको, बड़ो बीर बंका।
करैंगे कहा याहि कौं कोटि लंका।।
यहै संकि कै बूझि यो बात ठायो।
कह्यो, कौन रे, कौन के है पठायो।।५२।।

पाठान्तर—४९. कृपान : कृसान (१, ५) जारि होम : जारि जाम (१, २)

---

५०. हेरि : ढूँढकर। ही : हृदय।

५१. कामचारी : स्वेच्छाचारी। दसो मैं : दसों दिग्पालों में, तीनि माहीं : ब्रह्मा, विष्णु और महेश में।

सोरठा

कहै हनू सुनि बैन, जानि सु अंतहकरन की।
तोहि न कबहू चैन, कहा जियो चिर काल मरि।।५३।।

मदन छंद

हनू—

एक चित्त सुनि दनुज, मारुत-नंद हौं हनुमान।
नाथ श्री रघुनाथ हैं, मम मात खोजन काम।।
छुधारत फल चारि चाखत, घिरे दानव आइ।
आप देह सबैहि दुर्लभ, मरे मारत धाइ।।५४।।

अच्छ हौं नहि अच्छ देख्यो, मर्‌यो संकित सोइ।
सीय सोधन लंक आये, होइ जो कछु होइ।।
कोटि कोटिन कीस किंकर, हौं जु सब ते दीन।
जलद सुंदर जलज-चरननि रहत मो मन लीन।।५५।।

मारि दनुजन पर्‌यौ बंधन, चढ़यौ मोहि कलंक।
कहि मुख दरसाइ हौं धिक मरत हौ यह लंक।।
सहे कौन असेष सस्त्रनि, पीर व्यापत देह।
कहत हौं निज मरन, मारहु, तज्यौ सकल सनेह।।५६।।

दसन दसमुख दाबि अधरन, करि सुलोचन लाल।
रोस करि उसकारि भुज अति, भयो काल कराल।।
निपट मर्कट निलज भट रे, पटकि डारहु हाल।
मेद गूदरु गलकि सोनित, खैंचि डारहु खाल।।५७।।

---

५५. अच्छ : अक्षय कुमार। नहि अच्छ देख्यो : आँख से नहीं देखा।

५६. उसकारि भुज : बाँह चढ़ाकर। मेद : पेट। गूद : मांस, गूदा। गलकि : निगल करके।

पौरि जिहिं इंद्रादि सेवत, सकल मो भ्रुव भंग।
ताहि बानर निदरि बोलत, बलकि बल ते अंग॥
कौन राम, कहा सु लच्छन, कहा तिन परसंग।
देखि हौं रन रंग तिनकौं जदिन ठानहुं जंग॥५८॥

सोरठा

विभीषन—

कहें विभीषन टेरि इंद्रजीत सौं परस्पर।
सबहिन के मुख हेरि, सहसा दूत न मारिए॥५९॥

सवैया

मारत एक दयावन दूतहि, सैन समूहन जात सिरानें।
लोक अलोकन मैं अपहास, बड़े नरनाहन कौन बखानें॥
राजस रीति निषेद करैं, सब काज सरैं, कोइ भेद न जानें।
देखहु चारि बिचारि सबै, सुनि लंकपती मनहीं मुसक्यानें॥६०॥

दीनहु ते अति दीन दयावन, देखत रावन साजु मगायो।
पूछ पसारि परे सुख नींदहि, लोगु कहै इहि आयु घटायो॥
तेलरु तूल दुकूल जहाँ लगि, मोमनि धूपनि सूत कसायो।
दानव पूर लंगूर लपेटत, लंक न टाट कौ टूक बचायो॥६१॥

भुजंगप्रयात

कसैं डोर सौं जोर सौं जोरि केते।
जहाँ जौन जाके हुतै भौन जेते॥
दए आगि दानौं, घनौ धम छायो।
तबै सो हनू पूछ कौं लै भँवायो॥६२॥

---

५८. पौरि : देहरी, द्वार। निदरि बोलत : तिरस्कारपूर्वक बात करना। परसंग : प्रसंग। जदिन : जिस दिन।

६०. दयावन : दया का पात्र। चारि बिचारि : भलीभाँति विचार लीजिये।

६१. टूक : टुकड़ा।

६२. भँवायो : घुमाया।

डढ़े डाढ़ियौ मूंछ बैठे समाज।
भजें मीड़तें भीत भारी समाजं॥
इतें ते उतें कूदतें डाह डाढ़्यौ।
लगं ज्वाल माला महा रोर बाढ़्यौ॥६३॥

दोहा

विधि परत्यजहि तें बधे, ब्रह्म फांसि हनुमंत।
नेक अंग के कसत हीं, टूट्यो जनु बिष-तंत॥६४॥

छप्पै

पटकि पूंछ, भुव झटकि झुंड, दनु ऊपर झार्‌यौ।
मरे किंतिक अध बरे परे, चिहुरत दिसि चार्‌यौ॥
पुलकि अंग आभूत, विकट विधि बंधन छूटे।
भागि चल्यौ दसकंध, गवं गिरिवर सें फूटे॥
–बैठे जु कूदि प्रासाद पर, बरन लग्यो लंका सकल।
–हाहूत मचिय उतपात तें, हलकंपित दनु थलनि थल॥६५॥

मालिनि

महल महल ठाढ़ीं, कांपती राज रानी।
लपट निपट ज्वाला, काल माला बखानी॥
असित अरुन पीतं, धूम की जीति छाई।
मनहुं सहित सोभा, लंक नाकं सिधाई॥६६॥

दोहा

जहां तहां आरत रटे, छटे लपट कराल।
मुरझानी रानी घनी, मनहुं मालती माल॥६७॥

---

६३. डढ़े : दग्ध हो गई। डाढ़ियो : दाढ़ी। भजे : भगे। मीड़तें : कुचलते हुए। रोर : कोलाहल।
६४. बिष : मृणाल। तंत : डोरा।
६५. अध बरे : आधा जले हुए। आभूत : प्राणी।
६६. नाकं : स्वर्ग।

लंक हनु दाह तें, कुह अवगाह तें। जुह जुवतीन जल रटत जित कित फिरें।
झपटि इत तें उतें, छोड़ि करुणाहि तें। पूछ आलात सम ज्वाल चहुँ दिसि घिरें ॥
कोपि रावन तबै मंत्र पावक जपै। समित बसु होत, हनु भाल लंगुर घसें।
उठत ब्रह्मंड तें, तेज ब्रह्माग्नि तब। पिघिलि हाटक अटा फुटिजितकितखसे ॥६८॥

बाजि गजराजगनचिहरिजितकितभजे। सिहरिव्याकुलितबिनुवारिबिलखितगिरे।
धूम धुंधुरित कहुं. सूझि नहिं परत कछु। धरनि आकास लगि, ज्वालमाला घिरें॥
गिरत प्रासाद बहु, घसकि जंबूनदन। जटित मनि लाल जरि, उचटि बारिधि जल।
जरत सबलंकलखि,देवसुंदरिकहें। जानकी-नाथ-तनप्रबलबिरलबिरहान लों।६९॥

उड़ियाना

देखें सब लंक-दहन, देव देव नारी।
कौतुक बहु हेरि हँसें, दें दें करतारी ॥
राजस सब साज समिध, जीव जातुधानें।
होता हनुमान, मनहुँ, दनुज-जज्ञ ठानें ॥७०॥

छूटें लपटें कराल, धूमन मैं कैसे।
चंचल चपलानि मिलें नील मेघ जैसे ॥
काँपहि हाटक अटानि, सुन्दरि सुधि भूली।
कैधौं सर पावक मैं, हेम नलिन फूली ॥७१॥

पाठान्तर—६८. बसु होत, समित बहु होत (१)।

---

६८. कुह : कोलाहल। आलात : जलती हुई लकड़ी, लुक। आलात चक्र : जलते हुए लुक को घुमाने से बनने वाला मंडल। बसु : रत्न। समित : समाप्त किया हुआ। पिघिलि : पिघलकर।

६९. सिहर : काँप कर। जंबूनदन : सोना। उचटि : उछल कर, चटक कर, छिटक कर।

७१. हाटक : सोना। सर : तालाब।

केती बिततानी जरे सारी जरतारी।
केधौं सब नाचति हैं जातवेद नारी॥
व्याकुल विह्वलित बाल केती बिततानी।
मानहु सह-गवन होत सकल त्रिपुर रानी॥७२॥

दीपति दिग दिगनि होत, तेज तिमिर नासैं।
मानहु रवि द्वादस मिलि, मंडल परगासैं॥
बोले सब सुर समाज, हनुव लेत लाहैं।
सीता रघुवीर बिरह-दाह लंक दाहैं॥७३॥

करखा

बात दस दिसनि के, पाइ औसर तबै। मित्र सुत हेत आघात बल सौ बहैं।
सस्त्र साला जिते, बस्त्र साला किते। गंध सालानि के गंध परिमल दहैं॥
रत्न सालानि के रत्न भूषन घने। जत्र बहुधानि करि जातुधानिन धरें।
मनिन सालानि के फैलि मनि गन रहैं। मनहु उडगन सबै भूमि सेवन करें॥७४॥

दोहा

महल महल सब हेम दहि, लखे विभीषन धाम।
राखि लए सरणागतं, सुने श्रवण जब राम॥७५॥

अर्चन बंदन दासता, सेवा सुमिरन सक्ति।
लखं विभूषन धाम मैं, रघुवर केवल भक्ति॥७६॥

सवैया

संकट कोटि कहा तिनको, जिनको रघुनाथ सदा अनुकूलें।
भूरि भयानक भूमि जहाँ, बहु दुर्घट घाट अटव्यनि भूलें॥
आरति-नासन राम गोपाल, सु जे जन प्रेम हिंडोरनि झूलें।
पावक लंक-सरोवर मैं जनु पंकज-भौन विभीषन फूलें॥७७॥

---

७२. जातवेद : अग्नि। बिततानी : व्याकुल होना। सहगवन : सती होना।
७३. लाहैं : लाभ।
७४. बात : हवा।
७७. अटव्यनि : अटवी, जंगल।
७७. समित : शांत।

दोहा

रची मंत्र मंदोदरी, और मंत्र नहिं कोइ।
एकै सीता सत्य तें समित होइ तौ होइ ॥७८॥

स्रग्धरा छंद

साला सालानि बाला, बिह्वलित महा ज्वाल कीलानि ज्वालैं।
टेरें रुद्रैं समुद्रं करि करि करुना, रच्छिए रच्छपालैं॥
भूली सोभा सिंगारैं, बिथुरित कच तें आरती ह्वै पुकारैं।
हा हा सीता, पुनीता, सरन तव, कृपा कोटि संकष्ट टारैं॥७९॥

मालिनी

सीता—

निरखि दहन—लंका, संकि सीता बखानी।
पसु सिसु निहपापैं, दोष का जातुधानी॥
यह मोहि अपराधैं, देन कौ ह्यां सिधानैं।
अवध न वध जानैं, आधिकैं कीस ठानैं॥८०॥

दोहा

सिय करुना हिय होत ही, सलजि हनू गहि संक।
मात न जानो मृतक तिय, मो कहं देति कलंक॥८१॥

रुचिरा

दाहि लंक, सीय-संक सोच करि, कूदि हनू पय सिंधु परे।
कच्छप मगर मच्छ सर्पादिक, पूछ बूझत जल जंतु जरे॥
सूदक लंक छोड़ि करि तबहीं, चरन जानकी जाइ गहे।
अब अपराध छमहु मो जननी, यह कहि कै कर जोरि रहे॥८२॥

---

७९. कीलानि : लोहे की कीलों को। ज्वालैं : जला रही है। बिथुरित : अस्त-व्यस्त। आरती ह्वै : आर्त होकर।

८०. सिधानैं : आया है। आधिक : आधि, मानसिक कष्ट।

८१. मृतक तिय : लंकिनी।

८२. सूदक : मृत्यु के कारण अशौच।

हनू--

मोहि कछु दोष नहि मात मानी सही।
लंक देवीहि यों बात ब्रह्मा कही॥
सीय सुधि लैन, हनिवंत जब आइ हैं।
तोहि गति दें रघुनाथ हरषाइ॥८३॥

दोहा

यह पूरब विधि की कही, अ-वध कियो नहिं जात।
ताते लंका-दहन किय, सुनौ विनय मम मात॥८४॥

दें आसिष सिय यह कही, दलौ सकल दनु दाप।
संकट मैं सब दिन तुम्हें, रच्छक राम—प्रताप॥८५॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूडामनि गोपाल विरचितायां हनुमान जुद्ध लंका दाहवर्णनोनाम उनत्रिसोध्याय:॥२९॥

राम-पयान सागर-दर्शन

३०

रुचिरा

बंदि सीय चरनारविंद कर जोरि विनय हनुमान करे।
रहत न बन मोहि पल आधक, हूँ रघुनाथ वियोग भरे॥
सीख देहु कछु, देहु चीन्ह इक, ज्यों प्रतीति प्रभु जियहि लहैं।
हौं टहलु सब टहल करन कौं, जो अपनो गुनि लाज गहैं॥ १॥

दोहा

सीता—

साखामृग, साखा लगे, सुनत हते सब गाथ।
सोई सब कहनं तुम्हें, सनमुख श्री रघुनाथ॥ २॥

बिस्तर सोक-समुद्र में, बिरहा-विषम तरंग।
करिया कोपकपीट बिनु, बूड़त सकल प्रसंग॥ ३॥

महा नील मनि जोति अति, चटकि रही कच चारु।
सो दीन्हीं हनिवंत कर, जनु मन को पति हारु॥ ४॥

पाठान्तर—३-विषम : विषय (१,२)
४-चटकि : चिकटि (१,२)

---

१. अपनैं गुनि : अपना समझ करके।
२. साखामृग : बंदर। साखा लगे : शाखा पर चढ़कर।
३. बिस्तर : विस्तृत। कोपकपीट : पतवार।
४. पतिहारु : प्रतिहार, राजा-रानी के साथ रहने वाला परमविश्वस्त राजकर्मचारी। चटकि रही : चमक रही।

छप्पं

चरन बंदि, सिय बोधि, मनहिं सुख मेलि, सिधाने।
गोपद-मान समुद्र नाँघि, निजु मिले ठिकाने॥
कहँ धन्य जमबंत, संत हनुमंत राम सर।
बेधि सकल संताप, सोक चिंता असेष हर॥
=हरि नाम हरन संकट निपट, प्रगट कला पारस-परस।
=पनपंज प्रतिज्ञहि पालि कै, प्रभु सासन राखेउ सरस॥ ५॥

दोहा

अंगद—

कै रघुबर, कै लच्छुन, कै जु बली हनुमान।
इनसों करै गुमान सो, त्रिभुवन बाहेर जान॥ ६॥

जिन बल प्रबल प्रताप कौं, निरखें नैननि हाल।
दस जोजन गिरि कूदतें, गयो पैठि पाताल॥ ७॥

परमानंद विनोद तें, पहुंचे रघुबर पास।
हनु चरन-रजमाल धरि, प्रभु पुजए सब आस॥ ८॥

सवैया

नील महा मनि जोति हनू, मुख तें जब राघव के कर दीन्हें।
मानहुं राज सिरी सब रंकहि आइ मिली, हिय सीतल कीन्हें॥
नासि गई जनु सोच-निसा, अरुनोदय ज्यों अरविंद नवीनें।
बूझि उठे अति आरति तें, करुणामय जू करुना रस भीनें॥ ९॥

सोरठा

कच बिच तुमहि दुराइ, राखी तुमकों जानकी।
सो प्रगटी कित आइ, कहौ जु अंतहकरन की॥१०॥

---

५. राम-सर : राम रूपी सरोवर। बेधि सकल संताप : संपूर्ण दुःख को विद्ध करके। असेस : संपूर्ण। सासन : आज्ञा। सरस : मधुर।

९. राज सिरी : राजश्री। आरति : आर्ति, दुःख।

मोदक छंद

कौन दसा सिय की जु कहो मनि।
जानत हौ सब हाल तुम्है बनि॥
बोलत हौ न कछू कससंकहि।
नील भए रवि-बंस कलंकहि॥११॥
हौं तिनके हित साधत हौं तप।
द्योस निसा सिय नाप जपौं जप॥
यों कहि बूझत हैं पल ही पल।
पंकज लोचन पूरि रहे जल॥१२॥

दोहा

अति सुंदर, अति जोतिमय, अति चितवित के चोर।
लहे न कोमलता मनि, अंतहकरन कठोर॥१३॥

छप्पै

हनू—

दस सहस्र दनुजीनि-मध्य, सिय सोहति कैसी।
परी हंसिनी फंद, राहु-मंडल मैं जैसी॥
कैधौं कुहू निसीथ माहि, दीपक दुति मंदहू।
किधौं नील घन-मध्य, चंद्रिका-हीन सु चंदहू॥
=अघ मुखहि अश्रु अवली दगनि, कवल-कोस मकरंद जिमि।
=श्री राम हृदय जिमि जानकी, जानकि उर श्री राम तिमि॥१४॥

दोहा

राम हृदय रसना रसे, राम नैन अभिराम।
निसि बासर बिश्लेषता, तन वियोग तप धाम॥१५॥

छप्पै

राम हनू प्रत्युत्तर—

लै मनि हृदय लगाइ, "कहौ हनुमान सीय गति।"
"है प्रभु एक निदान सदा तुम चरन लीन मति॥"
"लखे लंक किमि बंक ? किमि सु रावन रजधानी ?"
"रहे सदा मम संग, सदा निजु अंतरजामी॥"
="बरनौ बकौन करि गौन कछु, करि बानर लीला सबे।
="रखवार दीन मारत लखें, मेघनाद बाँध्यौ तबे॥१६॥"

सोरठा

यही जु पातक एक, नारि हती प्रभु हेत करि।
कही लंक करि टेक, चलत बेर मोहि डाहियहु ॥१७॥
हौं करिबे किहि जोग, जो कछु कियो सु प्रभु कियो।
ममता मानत लोग, प्रभुहीं की प्रभुता सबै ॥१८॥

झूलना छंद

साथ रघुनाथ जन कौं सदाई।
लाख दुरघटना मैं, निपट संकटन मैं, होत है प्रगट आपुहि सहाई।
विभ्रम वन-खंड मैं त्रास परचंड मैं, राखि भुज दंड तर लेत आई॥
काल-मुख डाढ़ते, बार नहि काढ़ते, गाढ़ मैं गाढ़ ही गहत धाई।
जोर बरजोर तें, राज डर चोर तें, अनल जल औौर तें कुसलताई॥
देव दानवन तें, दुष्ट मानवन तें, बार बंक नहीं बानि पाई।
तीनिहूँ लोक मैं, सोक तिहि नाहिनै, दाहि नै रामराई ॥१९॥

द्रुमिला

कहि कौन करै समता तिहुँ लोक, धर्यौ जिन धीरज सौ धन है।
मति की गति है गुरुता सब तें, मकु मेरु टरैं न टरै पन है॥
बहु संकट दुर्घट घाट अटव्यन, दाहन कौ जु हुतासन है।
रघुनाथ कहे कपिनाथ सुनो, हनुमान सु मो मन कौ मन है ॥२०॥

दोहा

जाम कहे श्री राम सौं यह न आन की आन।
संकट कोटिन हरन कौं, हैं प्रभु कै रघुनाथ ॥२१॥

सवैया

अंगद--

नाँघि के सिंधु, उजारि कै लंक, निसा मयनंदिनि आदि निहारे।
दै मुदरी, सिय की सुधि लै, फल खाइ सबै, तरु वारिधि डारे॥
मारि कै अच्छ, सहे तन बंधन, भाल कै आगि सबै पुर जारे।
जानि कहा करुणा हनुमान, सु भौन विभीषण ही के उबारे ॥२२॥

---

१९. बार : विलंब। डाढ़ : जबड़ा।
२१. जाम : जामवंत।

द्रुमिला

सुनि लच्छन लाल, तुम्हें सिख जानकी, आसिष द मुख यों जु कही।
मन हाथ सदा रघुनाथहि को, निज हाथ लिए रहिहै नित ही॥
अब मो कहं आस भुजा बल की अति, और कछू कहने न रही।
कर जोरि प्रनामहि कै करतें, तब लौं भरि नैननि नीर बही॥२३॥

छप्पै

लक्ष्मण—

जिहि कारन तप साधि, ईस वर अभय मानि लिय।
जिहि कारन सुर पत्ति जित्ति, सुर नरन हद्द किय॥
जिहि कारन तिहुं लोक सोधि, कहुं सोध न पाइय।
जिहि कारन ठहराइ चरन, सिय सरन समाइय॥
वह जानत सिव सनकादि गति, जान मुक्ति कंघह धरिय।
अपहास द्रोह विध्वंस कै, रावन प्रभु पावन करिय॥२४॥

पद्धटिका

हनू—

यह सुनि हनू मंद मुसक्याने।
पलप अनादि हृदय पहिचाने॥
बंदि चरन दुहुं, बचन उचारे।
अब सब कारज सुफल हमारे॥२५॥

रुचिरा

जिहि गति लख्यो सीय रघुनायक, तिहि गति मो पह कहि न परे।
जिहि तन तपन अनल ते अधिक, परसि पवन के लाल जरे॥
या तें बेगि पयान कीजिए, निमिष एक युग कोटि टरे।
दारुन प्रबल दाव दुखदायक, प्रभु बिनु को संताप हरे॥२६॥

---

२४. ईस वर : शिव का वर।
२६. निमिष : पलक मारने भर का समय, क्षण।

सोरठा

श्रीराम—

सुनत तुरत रघुबीर, सासन दिय सुग्रीव कों।
सज्जि सकल भट भीर, अबहि करहु प्रस्थान किन।।२७।।

रुचिरा छंद

सुनि सुग्रीव जोरि कर बिनए, हौं रघुवर को मोल लयो।
तापर लाज हनू अंगद को, भागि दुहूँ दिसि उदय भयो।।
तन मन धन सब करे निछावर, कछु बाकी कहने न रही।
करिहौं काज सीस के भर सौं, सासन भरि सब बात सही।।२८।।

मदन छंद

साजि कपि दल रीछ आवत, कौन है अब संक।
कितिक रावन रंक है, अरु बंक कौन सुलंक।।
मारि जारि उजारि आए, एक ही हनिवंत।
चलहि कोटिन कोटि जादिग, प्रबल बल बलवंत।।२९।।
याहि ते कपि रिच्छ जूथनि, कीजिए सनमान।
देहु सासन हाथ मन करि, दीजिए करपान।।
मोहि रज ते करे भूधर, सकल पुरए आस।
करौं लंकहि धूरधानी, तौ जु प्रभु को दास।।३०।।

सोरठा

यह कहि के कपिनाथ, बिदा किए सबहीन के।
लै अंगद हनु साथ, गए तुरत ज्यौंनार कौं।।३१।।

भोजन के, दरबार भलें बिधि बैठि, सभा भट बोलि पठाए।
आइ गए सजि जूथनि जूथनि, दूरि दिगंतनि के सुधि पाए।
भीर ठिली जित ही कित तें, कहुँ माहि नहीं, सिगरे बन छाए।
गाजत ही जिनके चहुँ ओर, कहें घन पावस के घहराए।।३२।।

---

२८. सीस के भरसो : शिरोधार्य।
३०. कर पान : हाथ में पान की बीड़ा दें।
३२. माहि : समाना।

दिदोहा

राघव सासन पाइ कै, सबही हरष भए।
और दिसा बिदिसानि कौं, बानर दूत गए ॥३३॥

सवैया

भूधर भूतल ऊपर के, जितने भरि कानन पुंज सुहाए।
जौन जहाँ गिरि कंदर बंदर, कोटिन कोटि सुने उठि धाए॥
आवत जूह समाति जमाति न, कौन गने कोइ अंत न पाए।
मडि अखंडल-मंडल कौं, दिवि-मंडल तें कपि-मंडल छाए ॥३४॥

छप्पै

लोकालोकन के, सुजितिक अस्ताचल के हैं।
विंध्याचल द्रोणाद्रि, कीस हेमांचल जे हैं॥
स्याम पीत आरक्त, नील नीरद सम सुंदर।
दिवि-मंडल रवि लोप, संकु लखि होत पुरंदर॥
-दिसि विदिसि दाबि कवि दल चलत, हद बेहद जिन दाबि लिय।
-फल फूल मूल दल भाखि सबै, नंदन-वन उद्यान किय ॥३५॥

झूलना छंद

ईस-गिरि अग्र के कीस कोटिन चले। सकल सुम्मेर के सुनत धाए।
अचल उत्तर जिते, विकट मर्कट तिते । सुभट उद्भट सब, चटपटाए॥
उदय गिरि दरिन के, चंद्र गिरि ह्रिन के। भद्रगिरि के सु बहु भांति भाए।
चपलि मलयाद्रि के, अर्थ खर्बन चले। नील धवलाद्रि के कपि सुहाए ॥३६॥

उमड़ि जित कितहि के घुमड़ि घन से घिरे। घोर उतपात अति करत आए।
सबनि सुग्रीव हनुमान अंगद मिले। परसपर सबनि सब सीस नाए॥
लच्छ कोटिन जहाँ, जुथ सेनाधिपति। माथ रघुनाथ पद हैं नवाए।
निरखि गोपाल श्री राम सोभा सबै. हरषि बलिमुखनि मुख सुजस गाए ॥३७॥

---

३५. अद्रि : पर्वत।
३६. चटपटाए : जल्दी आये।
३७. बलिमुख : बानर।

करखा

राम के काम कौ जाम के दल भले। सकल गिरि दरिन तें, मनहु गिरिवर चले।
नील घन से घने, पील कोटिन हने। झुंड झुंडनि बने, कुंड भूधर हले॥
बिकट कटकटित, मुख दंत मयमंत से। अन्त नहिं बलन बहु जंतु बन के दले।
निरखि गोपाल रघुवीर सोभा हँसे। करज कर बज्र नख भीर भल्लुक भले॥३८॥

दोहा

सकल प्रबल बन जंतु जे, खग मृगक महिषादि।
राम काम कौ सब चले, कोपित बादाबादि॥३९॥

छप्पै

जामवंत सुग्रीव हनु, अंगद नल नीलैं।
बैठे मंत्र बिचारि, एक एकनि मतिसीलैं॥
सोधि नषत तिथि वार, साधि सब सिद्धि महूरति।
पूरन सकल प्रताप, राम जहँ मंगल—मूरति॥
=गोपाल परम परब्रह्म लखि, ब्रह्मादिक बिचरत समय।
=सुभ किय पयान दसमी विजय, सज्जि सयन दसरथ तनय॥४०॥

दोहा

तरनि अस्त बंदन विकियेउ, करि अरचाघनु बान।
त्रिभुवन संकट हरन कौं, कीन्हें राम पयान॥४१॥

छप्पै

हनुव कंध श्री राम लसत, सोभा कहि कैसे।
अरुन उदय गिरि अग्र, स्याम घन संजुत जैसे॥
लच्छन अंगद पृष्ठि, सुतौ उपमा पहिचानहु।
मध्या भूधर नील ओट चंद्रोदय मानहु॥
=कवि पुंज प्रबल रन रिच्छ गजि, गिरि गहबरनि बिहंडि धरि।
=भुव मंडल अरु नभ मंडलह, चलत चमू चहुँ चक्क भरि॥४२॥

---

३८. पील : हाथी।
४०. मतिसीलैं : बुद्धिमान। सयन : सेना।
४१. अरचा : अर्चना।
४२. चमू : सेना। चक्क : चक्र।

उड़ियाना

देखि प्रबल सैन देव, जै जै बिरदावै।
केते कपिराज कपिन, ऊपर चढ़ि धावैं॥
पूरित अब ऊरव भरि, भूरि सुभट भारे।
लाल नील पीत हरित, सेत बदन कारे॥४३॥
दंत बिकट, मुख कराल, करज कुलिस कैसे।
कूदें नभ ते फलांग, मारुत भट जैसे॥
सूझि न कछु परत, सैन समुद एकधा है।
अंग न कहुँ संक, लंक पंक करन चाहे॥४४॥

छप्पै

प्रबल सैन असरार चलत, दस दसनि दाबि जिन।
अब ऊरव भरि पूरि, सूझि नहि परत रैन दिन॥
अंध धुंध धुंधुरित, धूरि पूरित पयोधि पय।
कमल कोस अलि निबसि, चक्क चक्की बियोग भय॥
अवलोकि गगन उडगन उदय, जानि कुहू ससि नास जिय।
उच्छलि समुद्र गुनि रुद्र कहि, लंकहि राम पयान किय॥४५॥

बिदोहा

सकल दिसा बिदिसानि के, कपि दल बल उमहे।
बिकट रूप भट समर को, सोभ न जात कहे॥४६॥

छप्पै

करत बिजय रघुनाथ, लंक हलकंपनि हहलत।
जल थल, थल जल, जलधि धिज्ज बिनु, जहँ तहँ थहलत॥
लचकि सेस फन सहस, मचकि महि कोल कमठ उर।
पूरि गगन घर धूरि, भूरि भूरित बिमान सुर॥
गज्जत कपीस घन-घोर धुनि, धरनि गगन हलकंप अति।
गोपाल भनक आदंक सुनि, हर हर रटि लंकाधिपति॥४७॥

---

४४. करज : अँगुली। एकधा : एकत्र।
४५. असरार : निरंतर। चक्क चक्की : चक्रवाक चक्रवाकी।
४७. कोल : बाराह, सुअर। कमठ : कछुआ। आदंक : आतंक।

सवैया

दावि दिसा विदिसा बहुधा, अध ऊरध सेन महा बल धाए।
जानि परै न निसा दिन, मानहु सूर विधुंतुद लीलि पचाए॥
ओर न छोर असंख असंखनि, कौन कहै कोइ अंत न पाए।
सागर तीर, घचाघच भीर, विलोकि हसे रघुवीर, सुहाए॥४८॥

दोहा

इहि विधि सेन समूह सजि, निसि दिन करत पयान।
पहुंचे पारावार तट, रघुवर किये मेलान॥४९॥

चौबोला

सागर तीर तीर प्रति भीर।
देखि देखि सोचैं रघुबीर॥
अंगद हनू जाम मतिवंत।
करैं बिनै सुनिये भगवंत॥५०॥

यह जलनिधि है अगम अपार।
प्रभु सबही के सिरजनहार॥
आजु हमहि करनै निजु काज।
बैठि मंत्र रचि कै रघुराज॥५१॥

दोहा

पारावार अपार का, का लंकाधिप दाप।
अटक कटक कौ कौन है, प्रगटत राम प्रताप॥५२॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां श्री राम पयान सागर दर्सनोनाम त्रिंसोध्याय: ॥३०॥

---

४८. विधुंतुद : राहु।

विभीषण-विषाद

३१

रुचिरा छंद

उत जल सागर, इत कपि सागर, गुन सागर रघुवीर बनें।
तीर तीर भरि भीर मात नहिं, जूथ जूथ भट कौन गनें॥
अलत वितल सु सुतल थल संकित, रंक लंकपति संक सनें।
जाप करत सुरराज साज सजि, राम प्रताप गोपाल भनें॥१॥

छप्पै

वासर होत वितीत आरती संध्यहि साजें।
हनू आदि कपि-पुंज कोप भर सौं गलगाजें॥
किधौं प्रलय घनघोर, कटक अंदोर जोर धुनि।
रहिय शब्द नभ पूरि, पुहुमि हलकंप लंक सुनि।
उच्छलित वारि वारिधि सकल, खलभलंत भय वारिचर।
गोपाल भनत अदक इमि, थरहरंत दानव निकर॥२॥

भुजंगप्रयात

उठ्यो सैन संवूह मैं कूह भारी।
गयो लंक मैं लंक आदंककारी॥
परी चौंकि मंदोदरी कंपमानो।
लखो आगमैं देव है जो विधानै॥३॥

महा सैन जोधा गज बानराली।
गन्यो ना परै काल चालै कुचाली॥
जमै जानि कै सो सबै मंत्र कीजै।
न तौ जानकी जानि कै जानि दीजै॥४॥

---

४. बानराली : बंदरों का समूह।

रुचिरा छंद

मंदोदरी—

मर्कट एक, कटक सब लंका मारि जारि बन चूर कर्‌यो।
अब तो कोटि कोटि सेनापति, सीतापति पद नेम धर्‌यो॥
ताते पुत्र सहोदर मंत्रिन बूझि, अगोचर मंत्र लह्यो।
करि अभिमान ज्ञान बिनु राजा गाफिल ह्वै अब तो न रह्यो॥५॥

सोरठा

मिले सभापति आइ, सीस नाइ दससीस कौं।
बिनै करे बहुधाइ, पार सिंधु सेना प्रबल॥६॥

रुचिरा छंद

रावन—

रावन कहे विचारि सबन सौं, कहौ जौन जिहि जानि परै।
पारावार पार सब सेना, इत मेरौ नहि टेक टरै॥
यातें सोचि सार मत भाषौ, जातें मन नहि और भरें।
सोई सखा सहोदर मंत्री, मोहित जो करतूति करें॥७॥

करखा

जोरि कर सचिव, चित चोरी कह्यिो तबै। कौन प्रभु तें सुमति, निगम आगम गुने।
जीति लीन्हें सबै, देव नर नाग पुर। राज विद्यानि मैं निपुन जाने सुने॥
सार सब मंत्र पर, आपु रघ्छन कहें। समन सब समय, बिधि चरित अद्‌भुत सने।
है जु कछु और सी, बात उतपात की। दें जु सिय राम कौं, है जु औसर घने॥८॥

निसिपालिका

प्रसस्त—

राज-गति, देवगति, विषम अति जानिये।
समय बहुवानि गुनि, हेत पहिचानिये॥
एक पर एक तें भूप, जुग जुग भये।
आधि के कर्म करि, नास भावे गए॥९॥

५- गाफिल : अचेत, असावधान।

८- चित चोरि : चित्त को संकुचित करके। राज बिधानि : राजनीति। समन : शान्ति।

आपु चिरकाल भरि, भोग जितने करे।
जीति तिहुं लोक, सुर असुर गर्बन हरे॥
है जु अब सर्वथा, बात यह आछिअै।
नाचिअै नाचि सोइ, काछ जोइ काछिअै॥१०॥

त्रोटक

महोदर—

सुनि बात महोदर कोपि कहै।
सब मंत्रिन के बहु मंत्र लहै।
करनै न हुती, सु करी नृप है।
करिअै भरि सो करनी निबहै॥११॥

यह सोच कहा, करिबे सु करी।
अब तो सिर ऊपर आइ परी॥
मति है जु यहै, नृपराज महा।
पति सोइ जिये जग माँहि कहा॥१२॥

निसिपालिका

मेघनाद—

मेघ सौ नाद करि मेघनादौ कहै।
आदि अरु अंत मधि मंत्र भूषण लहै॥
देव रिषि छंद विधि की जु गति है महा।
तिनहि परपंच कौ दनुज जानै कहा॥१३॥

हैं जु विपरीति गति, जे न कबहूं भए।
एक मर्कट, घने दनुज दल बल हए॥
आजु रघुनाथ-सम नहिन तिहुं पुर भरे।
जनक पुर ईस-कोदंड खंडन करे॥१४॥

---

१०. आछिअै : अच्छी।

मकराच्छ वाच—

लाल करि अच्छ मकराच्छ बोले तबै।
बात परवान की क्योंन भाषै अबै॥
खाइ भंडार सब देस मति सौं मथे।
जुद्ध कै बेर कौ ज्ञान निर्गुन कथे॥१५॥

सवैया

मेघनाद—

छांड़त बात अबै चढ़ि राजस, काज परें जब लाज परैगो।
बूझन कौ महिमा तिहि औसर, जो कोइ सार समुद्र तरैगो॥
आजु महा सुख भूपहि दै करि, कालि जु पै पनतै न टरैगो।
जा दिन राम धरें धनु लच्छन, ता दिन को धनु हाथ धरैगो॥१६॥

सोरठा

समै पाइ वर काम, सुनासीर से बस करे।
इन्द्रजीत लहि नाम, अब जु राम लच्छन टिके॥१७॥

दोहा

नारांतक वाच—

नारंतक बोले तबै, जदपि यहै परवान।
राज मंत्र राजान के, होत अनेग विधान॥१८॥

छप्पै

सहसा कर्म अनेग करत जे, राज न जानै।
होत और तैं और, समुझि पाछे पछताने॥
करि आधिक अभिमान, गर्ब तैं सर्बस हारे।
हठ ठाने सठ भाव, भेव नहि एक विचारे॥
—करि क्रोध विरोध बड़ेन सौं, लघु सु कौन पदवी लहै।
—गजराज जुरै मृगराज सौं, प्रान-हानि आपुहि सहै॥१९॥

---

१५. परवान : प्रमाण।
१७. सुनासीर : इन्द्र।

दोहा

वृकोदर—

सुनत वृकोदर यों कहे, है अति बात अगाध।
करि आधिक नाहक मरे, नहि रामै अपराध ॥२०॥

निसिपालिका

राम सौं जीति संग्राम, सिय ल्यायते।
कौन मुख लै जु रघुनाथ, इत आवते॥
चोर करिकै, जु अब छोर नहि छँड़िहैं।
लंक करि पंक, दनु-गर्व-मद खंडिहैं ॥२१॥
होत मति मंद सरवज्ञ ज्ञाता महा।
रीति तिनकी जु विपरीत, कहिये कहा॥
होइ नृप सिष्य गुरु तात सज्जन भले।
इनहि के दोष तें, अफल संगति फले ॥२२॥

घनाक्षर

मालिवंत—

काहे को हौ करत विचार, अविचार करि। और न विचार अब, अैसिए विचारिअै।
देखिअै कितेक नर बानर हैं बलवान। करि उनमान करनें सु करि डारिअै॥
स्वामित सहेत पंज पालि पखान हेत। किम्मति अनेग ठानि, हिम्मत न हारिअै।
आए चढ़ि राम, अब सोचें घनधाम कौन। मगज समेत आजु मारिअै कै मारिअै॥२३॥

दोहा

मंदोदरी—

लोचन अंतह करन कै, जिनके दिव्य प्रकास।
सूझत हैं तिनको सबै, उत्पति अस्थिर नास ॥२४॥

छप्पै

बहु विरोध, बहु क्रोध, लोभ बहु, कबहुं न किज्जे।
बहु विषाद, बहु स्वाद, वाद बहु, चित्त न दिज्जे॥
बहु अधर्म, बहु धर्म, कर्म बहु, कबहुं न धारिय।
बहु अनर्थ, बहु अर्थ हेत, सत्या नहि हारिय।
—गोपाल कहत बहु मंत्र मति, बहु विचित्र संसार पर।
—बहु गर्व सर्व दुख मूल है, बहु आधिक उत्पात नर।।२५॥

सवैया

विभीषन—

ठानि सुमंत्र अगोचर ठीक, गुने मतिवंतन के मत लीजै।
आधिक तीनि महा सद तें, मति - मूढ़न कें मत सर्वस छीजै॥
भूलहु जैं नर बानर देखि, विचारि भली, न भली चित दीजै।
भूपति ह्वै तजि नीति सबै, बहके कबहूं विपरीत न कीजै॥२६॥

घनाक्षर

राजा—

कीन्ही विपरीत हम, नीति में निपुन तुम। चाहत हौ चारि, हम चारि न चहत हैं।
तीनिहूं भुवन देव दनुज मनुज नाग। दिति औ अदिति ही की मतिअै रहत हैं॥
तातें कौन मैं हौं, कहौ हाल किन आपने ही। कहिबे के नातें सब सोदर कहत हैं।
दुष्टन की नष्ट गति, जानिये सुभावन तें। सुरन की चालि कहूं असुरें गहत हैं॥२७॥

सोरठा

जिहि कुल जिहि आचार, चलि आए, सोई चलै।
ते तजि मूढ़ गंवार, औरन को मति देत हैं॥२८॥

छप्पै

दान जज्ञ व्रत नियम, जजन जापन तप साधन।
छमा दया संतोष, ब्रह्म - विद्या आराधन॥
निराश्रय निष्काम, जोग-अभ्यास अहिंसहि।
ए भोगी सत लोक, लोक निजु सकल सुरनि कहि॥
=पर द्रोह द्रव्य, पर नारि रत, अति निर्दय खल चातुरिय।
=छल-बलहि धूत पाखंडता, आडंबर मत आसुरिय॥२९॥

---

२६. छीजै : नष्ट होता है। जैं : मत, जिन, नहीं।

२७. चारि : चारों वेदों की रीति, सुरों के आचार-विचार। दिति : कश्यप ऋषि की एक स्त्री जो दक्ष प्रजापति की कन्या और दैत्यों की माता थी। अदिति : दक्ष प्रजापति की कन्या और कश्यप की पत्नी जो देवताओं की माता थी।

दोहा

निराचार आचार बहु, बहु विवाद बहु स्वाद।
ए सब लच्छन आसुरी, करत मूढ़ बकवाद ।।३०।।

छप्पै

इक प्रभु, दूजे भ्रात, बात कछु कही न भावै।
जो कहिये तौ हानि, कहे बिनु रही न आवै।।
भाभी भूत रु वर्त्तमान, गति आपुहि जानौ।
अब सिर ऊपर पर्‌यो, समुझि समयो पहिचानौ।।
=करि सुहृद भेद, सिय दै जु पुनि, करनै होइ सु किज्जिये।
=कछु दूषन पर भूषन किये, बनि न बड़प्पन छिज्जिये ।।३१।।

चंचरी

मंदोदरी—

मेघनादहि सौं कही, तब मंत्र गुनि मंदोदरी।
कहे कारन दिव्य देवर, सो न प्रभु चित में धरी।
इन्द्रजीत अनेग विधि तें भूप सौं जु बिनै करी।
सुनत कोपनि तें जुगरज्यो, गजन पर जनु केहरी ।।३२।।

दोहा

विभीषन—

कहनै होइ सो सब कहौ, हमै न करने क्रोध।
इक प्रभु, दूजे बंधु हौ, क्यों करि आइ विरोध ।।३३।।

नास जानि दस कंध के, भयो मोह अधिकाइ।
अब कै सिय लै देहु, कहि, परे विभीषन पांइ ।।३४।।

सोरठा

परत विभीषन पांइ, मार्‌यो लात लिलार मैं।
सब रहे पछिताइ, बंधु विरोध विकार गुनि ।।३५।।

---

२९. जजन : यज्ञ करना।

सवैया

नीठि उठ्यौ, करि कोप रुठ्यो, उर पीठि दै, आपनें धाम सिधायो।
पंच लखें बिपरीति सबै चित, रावन अंत-दसा नियरायो॥
ता छिन हीं फरके कुच उन्नत, मै-तनया तन आनि जनायो।
जाइ बिभीषन कोपि कह्यो, धिक तू जननी, जग मो जनमायो॥३६॥

दोहा

कह्यो जु जननी, सुत सुनौ, धरौ न दुख जिय एक।
जानहु चरन प्रहार जे, भौ लंका अभिषेक॥३७॥
गयौ पंच मैं पति सबै, तिहि दुख तजि हौं प्रान।
देति जरे पर नोन है, धिक तेरी पहिचान॥३८॥

मदन

माता—

सुनहु सुत इतिहास प्राची, देव चरित विचार।
मिलें नारद सदन मैं, सिख दए मोहि अपार॥
सोधि आगम निगम मंत्रनि, कहें कारन लंक।
सकल सोकित लोक होतहि, सुरनि मानी संक॥३९॥

छप्पै

नारद—

चतुर व्यूह अवतार, धरनि रघुवर जब धरिहैं।
रावनादि दनु नास कै, जु सुर संकट हरिहैं॥
इहि कारन ब्रह्मादि देव, आगम पहिचानें।
लंक बिभीषन भूप, यहै सब मत ठहरानें॥
जिहि भक्ति जोग अंतहकरन, अंस चारिहुन छाजिहैं।
तिहि अच्छय आदि रु अंत भरि, प्रभुता सकल विराजिहैं॥४०॥

दोहा

यह सब नारद की कही, होइ न कबहूं हानि।
राम चरन सेवन करौ, कलपतरोवर मानि॥४१॥

उलहि उठ्यो प्रति लोम सुनि, भक्ति बीज अंकूर।
उमगि चले लोचन जुगल, प्रेम सिंधु भरि पूर ॥४२॥

त्रोटक

सुनि सोच विभीषन दूरि करे।
करुनामय राघव ध्यान धरे॥
करिकै जननी—पद बंदन हैं।
सरनागत को रघुनंदन हैं॥४३॥

दोहा

अरध निसा आगम करे, पंच मित्र मिलि आप।
आरत हरन अनाथ के एकै राम प्रताप॥४४॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां विभीषन-विषाद-वर्णनोनाम इकत्रिसोध्यायः ॥३१॥

विभीषण-मिलन

३२

सोरठा

जाति नास दनु-वंस, जात गगन मग सोच भरि।
जनु छीलर तजि हंस, मानसरोवर कौ उड़्यौ ॥१॥

घनाक्षर

विभीषन—

सकल विभूति कोस मंदिर दै इंदिरा कौ। इंदु कौ सुधारि, अरविंदन कौ वासु हैं।
काम कौ सरूप, कामिनीन कौ हरन मन। मन की चपलता कौ विपुल विलासु हैं॥
उदित उदारता की तीनहूँ भुवन भरि। भनत गोपाल प्रीति जुगनि प्रकासु हैं।
ऐसे दानि जानि, सरनागतिगह्योई आनि। रामचरनारविंद अभय निवासु हैं॥२॥

सोरठा

आवत आगम जानि, राम कहैं हनुमान सौं।
कहा विभीषन आनि, आवतु है किहि हेत करि॥३॥

घनाक्षर

ध्रुव कं सौ धरनि धर्‍योई जिन धारना तें। परम अधीन जैसे निपट अनाथ है।
जैसे प्रहलाद चित राम चरनारविंद। ऐसे करि लीन्हें जिन तन मन हाथ हैं॥
सोचत असेष जात, सीख बल मात गात। गात न अमात प्रेम गाइ गुन गाथ है।
बार बार नाइ माथ, कहत विभीषन यौं। सकल अनाथन के नाथ रघुनाथ हैं॥४॥

---

१. छीलर : छोटा गड्ढा।
२. इंदिरा : लक्ष्मी।
४. ध्रुव कं सौ : ध्रुव के समान धारणा।

छप्पै

जल सागर कहँ नांघि, निरखि कपि सागर कंप्यौ।
थकित भयो अति शिथिल, तिमिर चित चिंता झंप्यौ॥
गयो भूलि अवसान, काहि कहि कौन जनावै।
अपरमपार असूझ सैन, कोइ पार न पावै॥
लखि दनुज दीह बानर घने, घेरि तिनहि हनु सौं कहे।
हम जानत लंक जसूस है आवत औचक ही गहे॥५॥

चामर

घेरि कै विभीषनै सु राज—चौतरे लए।
भूप को नवाइ सीस, भीतवंत है भए॥
कौन हो, कहो सु बेगि, देखिवै कहा चले।
छोड़ने हमैं न दैत्य, छंद कोटिधा छले॥६॥

दोहा

विभीषनोवाच—

रावन कौ निज अनुज हौं, कहे विभीषन नाम।
आयौ अति आरत भयौ, सरनागत श्री राम॥७॥

झूलना छंद

सुनत सुग्रीव सव, सोचि कारज मनहि। जाइ रघुराई सौं, कहि जनाए।
कौन कारन कहा, जानि कछु परत नहि। द्वार लंकेस के, अनुज आए॥
राम लच्छन सुने, हनुव अंगद गुने। नील नल जाम कपि गन सु ठाढ़े।
कहि न कोई सकत, मुख तकत आयसु सबै। बानराली घने, रोस बाढ़े॥८॥

निसिपालिका

श्री राम—

राम तकि जाम कौ, बैन बोले तबै।
बूझिये हेत कौं, पंच बैठे सबै॥

---

५. नांघि : लाँघकर। कपि सागर : कपियों का समुद्र। जसूस : जासूस। अवसान : चेत। दीह : दीर्घ। औचक : अचानक।

६. चौतरे : चत्वर, चौतरा। कोटिधा : करोड़ों प्रकार से।

चारिहूँ मंत्र गुनि, येक निरबाहिये।
सोधि तंत्रन कहौं, जौन बिधि चाहिये। ९॥

सवैया

जाम—

है बिपरीति की रीति सुनौ, सब ही अब ये कस नेह नयो है।
जूह जुरे बन जंतु जिते, नर बानर रिच्छनि मंत्र ठयो है॥
या पर लंकहि पंक मिलावन, रावन नास को नेमु लयो है।
चाहत राघव सीय लयो, इहि ऊपर दानव आइ भयो है॥१०॥

उड़ियाना

सुग्रीव वाच—

एक सदन, पंच बदन, कौन बृषभ देखैं।
कोविद सठ संत धूत, संगति मुख लेखैं॥
कीजे गुनि, लीजे सुनि, कारन सब जैसी।
भूलै मति, कौन उकति, कौन जुगति कैसी॥११॥

सोरठा

तब बोले हँसि नील, हम न याहि अब छोड़िहैं।
करि शत्रुन की सील कौन, कुसल काके भए॥१२॥

दोहा

सुनौ मंत्र की बात नल जु कहैं सबहीन सौं।
घर ज्रु घनेरे जात, घर भेदी के भेद तें॥१३॥

---

९. तंत्रनि : उक्ति।
१०. कस : कैसे।
११. पंच बदन : पाँच तरह के लोग। बृषभ : न्याय, धर्म। कोविद : विद्वान। उकति : उक्ति।
१३. सबहीन : सभी।

सवैया

अंगद—

है घर-भेदि उठी निहचें, अब बोधि यहै अपनो करि लीजें।
है कछु भागि दसा इहि की, रसना जिहि राम रसायन पीजें॥
जाति कुजाति कहा करनें, निजु स्वामित काज सरें सोइ कीजें।
कैसेहुँ आइ भजें कोइ आतुर, आरत कौं सरनागत दीजें॥१४॥

रुचिरा छंद

हनू—

जाति पाँति कुल ज्ञाति भाँति कुछ, ऊँच नीच नहि जानि परें।
पंडित महा मूढ़ गुन ज्ञाता, सुपच दुजातिन होड़ करें॥
राम प्रताप प्रसाद लेस की, ब्रह्महु पैं नहि जानि परें।
सूकर स्वान जीव कीटादिक, नेंक कृपा भुज चारि धरें॥१५॥

घनाक्षर

विभीषन—

तब ना बिचारे खंभ फारतें उदर दनु। तब ना बिचारे कछु बारन उबारतें।
तब ना बिचारें वलि राज कौ पताल देत। तब ना बिचारे वृकासुर हर जारतें॥
तब ना बिचारे देत ध्रुव को अटल पद। तब ना बिचारे इन्द्र हेत मुर मारतें।
आरत पुकारतें उबारे अविचारन तें। अबसौं बिचार कहामोहीकौविचारतें॥१६॥

सोरठा

श्रीराम—

सासन दीन्हे राम, जाम हनू सुग्रीव कौं।
बूझौ सब परिनाम, तब ल्यावहु सनमुख इतें॥१७॥

---

१४. उठी : उत्पन्न हुई।
१५. लेस : जरा सा, रंच। भुज चारि : ब्रह्मा।
१६. दनु : हिरण्य कश्यप। बारन : हाथी। ध्रुव : ध्रुव। वृकासुर : वृत्रासुर—पुराणानुसार त्वष्टा का पुत्र एक असुर जिसे इन्द्र ने मारा था। इसी को मारने के लिए दधीचि ऋषि की हड्डियों का वज्र बना था। मुर : एक राक्षस का नाम।

जामौवाच—

करहु सौंह तुम एक, जाइ बिभीषन सौं कहौ।
कौ कहि मरे अनेक, तब रघुवर सनमुख चलौ॥१८॥

त्रोटक

सुनि पंच, बिभीषन लै सु तबै।
करि मंजन सिंधु, दै सीख सबै॥
जल अंजुलि लै रवि सौं बिनयौ।
रघुनायक सौं कछु द्रोह भयौ॥१९॥

यह पातक कौं निजु सौंह करौं।
कलि गौ दुज भूप सरीर धरौं॥
लखि मानि सबै परतीति भए।
तिन लै तबहीं प्रभु पास गए॥२०॥

बिभीषनौवाच—

जय श्री रघुनाथ अनाथ पते।
पति राखहु मो, निज भक्ति मते॥
मत सार सुधा तव प्रेम रसैं॥
रस मादक चित्त बिलास जसैं॥२१॥

जस-सिंधु-सुधा मन-मीन सुभो।
मति प्रेम बियोगनि आरत भो॥
सरनागत लाज गहौ पन कौ।
अपनो करि लेहु बिभीषन कौ॥२२॥

---

१८. सौंह : शपथ।
१९. साखि : साक्षी।
२०. कलि : कलियुग। गौ : गाय। दुज : ब्राह्मण।
२१. जसैं : जैसे।

सवैया

हौं अपराध अगाध भर्यौ प्रभु, क्यौं उतरौं भव-वारिधि पारौ।
मात न, तात न, भ्रात न, ज्ञात न, क्यौं उबरौ, न कोई रखवारौ॥
जाऊँ कहाँ, न कँहू कोई सूझत, हौं गुनहौ गुनहीन विचारौ।
राम कृपा विनु आरत टेरत, को सरनागत राखनहारौ॥२३॥

निसिपालिका

जयति श्री राम श्री राम रच्छा करौ।
सोक संताप को दाप दारुन हरौ॥
हौं जु मति-मंद प्रभु की जु गति कौं लहौं।
दीन अति, हीन पति, कौन को ह्वै रहौं॥२४॥

हौं न कहुं ठौर, तिहुं लोक दोषी महा।
चरन सरनारथी और बरनौं कहा॥
त्रास दस ग्रीव तें राखि, संकट हरौ।
लेहु करि आपनो, जानि खोटो खरो॥२५॥

दोहा

आव आव लंकेस कहि, रघुवर लए बोलाइ।
सरन सरन रटि रचन गहि, प्रेम न हृदय समाइ॥२६॥

छप्पै

सलजि नैन तन पुलकि, पंच परदच्छिन कीन्हें।
गद गद कंठ गुनानुवाद, मुख अस्तुति कीन्हें॥
उमगि हृदय अहलाद, चरन लच्छन के परसे।
रहौ न एकहु साध, सकल सुख वारिधि बरसे॥
—अवलोकि सवन सनमान करि, मिले विहँसि सुग्रीव तिन।
—कलि बाम्हन गाइ नृपाल के, करैं सौंह प्रभु कठिन इन॥२७॥

---

२३. ज्ञात : जाति। गुनही : अपराधी।

दोहा

लछन बूझे जाम सों, करें सौंह इन जौन।
कलि के तीनों पातकी, तिन की गति कहि कौन ।।२८।।

निसिपालिका

जाम—

चाल कलिकाल की, लाल लच्छन सुनो।
होंहि स्वाध्याय तें हीन द्विज कुल गुनो ॥
सुपच कर्मादि करि द्रव्य अर्जित करें।
वनिक वैस्यादि कुल कं सु उदरै भरैं ।।२९।।
तदपि कहुं राज संसर्ग प्रभुता बढ़े।
धूत - विद्यानि सठ पाठ पाखंड पढ़ैं ॥
ब्रह्म विद्वेष करि, क्रोध नाहिन छमैं।
हृदय निर्दय महा, नरक पथ को गमैं ।।३०।।
राज कुल की सुकृत कहत एक न बनैं।
वंस विपरीत तें अंस जात न गनैं ॥
सत्य सौचादि तजि नीच संगति रचैं।
कोटिधा धनहि को छंद करि करि पचैं ।।३१।।
सकल अविचार तें राज श्री हत मतें।
दीन दुख देन कौं हीन न्याय न रतें ॥
अफल कुल तें न कछु सुफल एकहु फलैं।
जात अल्पायु ह्वै निरय पथ कौं चलैं ।।३२।।

दोहा

धेनु अभच्छहि भच्छि कं, देंहि चौगुनी छीर।
देव पितर संतुष्ट कौं, धरि कं भ्रष्ट सरीर ।।३३।।

---

३०. धूत विद्या : धूर्त विद्या ।
३२. निरय : नरक ।

सवैया

लक्ष्मण—

श्री रघुनाथ अनाथ के नाथ, सनाथ कै होत, सबै पद छाजै।
कौन कहौं तिन भाँति दसा, बल नैकहु होत कृपा जिहि काजै॥
जौ न गोपाल गहैं जन कौ पन, तौ निहचै बिरदावलि लाजै।
जौ लगि राम कथा धरनी पर, तौ लगी राज बिभीषन राजै॥३४॥

दोहा

राज बिभीषन कौ दये, दलिबै रावन दाप।
दीनन प्रति दिन दाहिने, केवल राम प्रताप॥३५॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल
विरचितायां विभीषन मिलनौनाम द्वित्रिसौध्याय:॥३२॥

---

३५. दाहिने : अनुकूल।

समुद्र-बंधन श्रीलंका-दर्शन

३२

सोरठा

राज काज के काज, राज-सभा सुग्रीव रचि।
लीन्हें सकल समाज, बूझन लगे विभीषनें॥१॥

द्रुमिला

सुग्रीव—

सब भार तुम्हें अब स्वामित की, करनें सु कही, मिलि कें जु करें।
अति दुस्तर बिस्तर सिन्धु अगाधहि, चाहि न काहु की चित्त भरें॥
तिहि ते यह दुर्घट, घाट न बाट कुठाट सबें जल पाट धरें।
लखि सागर ते कपि सागर आगर, क्यों पय सागर पार परें॥२॥

छप्पै

सुनत बिभीषन श्रवन, हनू अंगद मुख हेरें।
यह कारन करबें, सु चलौ रघुबर के नेरें॥
तबहिं जाइ सिर नाइ, सबनि बिधि आइ जनाए।
करुनामय यह सुनौ, सेन जल-निधि अटकाए॥
=सुनि कोपि, राम धनु बान धरि, कहत बरुन मद खंडिहौं।
=अध लोक जलधि करि आजु हौं, धरनि जलधि पर मंडिहौं॥३॥

---

२. चाहि : देखकर। दुर्घट : बुरा घाट। पाट : बिस्तार।
३. अटकाए : रोकना। बरुन : वरुण देव।

रुचिरा

साधि अगिन सर छाड़त रघुवर, बरन सकल कीलाल लगे।
कच्छप मगर जीव मच्छादिक, भूधर से भहराइ भगे॥
अघ अघवरे, वारि बिनु व्याकुल, बितत सिंधु कर जोरि कहे।
अपने कृत आपुहि प्रभु मेटत, यापर कछु कहने न रहे॥४॥

दोहा

श्रीराम—

है जद्दपि जब ऐसिअै, तद्दपि करने काज।
लंक पंक करने हमैं, लै सब सैन समाज॥५॥

छप्पय

तबहीं बरुन कुबेर उदधि, प्रभु-दरसहि आए।
करि परिदच्छिन, बंदि चरन, मुख अस्तुति गाए॥
जय अनंत भगवंत, करन कारन करुनाकर।
पार ब्रह्म ब्रह्मन्य, ब्रह्म ब्रह्मादि देव पर॥
गोपाल धरनि उध्धरन प्रभु, भृगु-पति-गति खंडन करन।
हरदाप हरन, हर चाप हर, श्री रघुवर हर बर हरन॥६॥

त्रोटक

सुनि अस्तुति, राम कृपाल भए।
तुम आइ भले, सुचि हौं जु लए॥
हम बानर भल्लुक, सैन सजै।
तुम्हरे सम कोई न लोल छजै॥७॥

दुमिला

कुबेर—

कर जोरि कुबेर बिनै जु करै, प्रभु काहि भजौं विषया फँसिकै।
निसि वासर सोचनि सूकि रह्यौ, सरनागत आइ गह्यौ रसिकै॥
अब है सब लाज गरीब निवाजहि, आयसु एक लहौं हँसि कै।
यह लंक बिना अति रंक भयो, तउ संकत हौं अलका बसि कै॥८॥

---

४. बरना : जलना। कीलाल : पानी। बितत : बिस्तृत।
६. पर : श्रेष्ठ।
८. रसिकै : भक्ति भाव मैं लीन होकर।

सवैया

श्रीराम—

राम कहें अब कौन कहै, गति जानि न जाइ कछू विधना ए।
हैं सनबंधहि तें सिगरी मति, जानत जान सुजान दसा ए॥
और सबै पलटैं, कबहूं पलटै न कृपा मम, वेदन गाए।
संकहि कौ जु निसंक रह्यो, पहिलें यह लंक विभीषन पाए॥९॥

दोहा

समुद्र—

विनय किये कर जोरि दधि, यह सुनिये प्रभु हेत।
सिला सलिल उतराहि सब, ह्वं बांधे नल सेत॥१०॥

अंगद सुनत समुद्र सौं, बूझि उठे यह हेत।
किहि कारन नल के छुये, असम तिरे जल सेत॥११॥

द्रुमिला

समुद्र वाच—

सुनि एक समै मुनि अत्रि इहां, नित अर्चन सालिगराम करें।
अति बानर बालक चंचलता, नल वारि सिलाहि दुराइ धरें।
नित के करतें रिषि कोप कहे छियतें तुव पाहन वारि तरें।
वह श्राप असीस भयो अब है, करिबंधन वारिधि पार परें॥१२॥

दोहा

सुनि हरषे रघुनाथ हैं, हनू उठे हलकारि।
विदा किये तिनकों तबै गए अस्तुति उच्चारि॥१३॥

---

१०. छुवें : छूकर। सेत : सेतु, पुल।

११. असम : अश्म, पत्थर।

१२. अत्रि : अनेक वेद मंत्रों के द्रष्टा ब्रह्मा के मानस पुत्र और एक प्रजापति। दुराइ : छिपाकर।

छप्पै

सेत बंध आरम्भ, संभु अस्थापित कीन्हें।
करि अर्चन रघुवीर, दुवौ कपि सासन दीन्हें॥
सुनत चले सब सैन, हनू अंगद हरषाने।
तकें दिसा बिदिसानि, दीह गिरिवर हहलाने॥
–कर मसकि पहार बिदारि करि, धरि धरि कंधनि धावहीं।
–गहि जोजन चारि सिलानि, सिर लै साखामृग आवहीं॥१४॥

गीतिका

नल परसि पानि सिलानि जोरत, सोर सागर माचियो।
गहि एक धावत, एक ल्यावत, सक कौतुक राचियो॥
लखि राम लच्छन हंसत बैठे, बानरालिन के बलै।
बहु जूह जूह निकूह मावत, सिंधु के उछलै जलै॥१५॥

घनाक्षर

केते गिरि जाहि गिरि चरन प्रहारन तें। बानर सिलानि लै लै नल परसावहीं।
झुंडनि उमड़ि हलकारि किलकारि दीह। भूधर धरा के कंध धरि धरि धावहीं॥
माची हैं चहल चहूं ओर घनघोर जोर। जलधि हलोर सोर लंका संका पावहीं।
कपिन के लाघव बिलोकि हंसे राघव जू। जलधितरंग कैसे केते जाहि आवहीं॥१६॥

विदोहा

उथल पथल जल जलधि के, जलचर अचल नए।
सेत-बंध नल पोत रचि, रघुवर कीर भए॥१७॥

घनाक्षर

धरनी के केते धराधरन सुधारि जोरि। जोजन सु चारि भरि नींव चकरायो है।
पाथर पर पाथरन पाटिकैं सुधारे पैंड़। धवल सरूप धौलागिरि तैं बँधायो है॥
ताके सुभ शृंग पर राघव विराजमान। मानौ फनि-फन पर नील-मनि भायो है।
कैधौं सेष नाग सेत-बंध भेष सिंधु पर। लीलन दनुज कोपि लंका परधायोहैं॥१८॥

---

१७. कीर : मल्लाह, केवट।
१८. पैंड़ : रास्ता। फ़नि : सांप। फन : सांप का फन।

रुचिरा छंद

धवला गिरि तें सेत बाँधियो, जोजन चौवालीस बढ़्यौ।
तिहि पर राम अनुज सौं बैठे, सैलहि मनो सरूप चढ़्यौ॥
उछलत सिंधु वारि, बारिध तें सुर विवान जल जाइ भरें।
झलकोरनि दिग्गज जल बूड़त मानहु जल क्रीड़ाहि करें॥१९॥

करखा

सुनत उतपात धुनि, हृदय लंकेस गुनि। जलधि जल माँह कपि, कौन कारन करे।
कहत सुक सारनै, लेहु सुधि जाइ किन। कौन विधि नाँधि कपि, सिंधु पारहि परे।
सुनत सासन चले, दनुज सैकन भले। देखि अचरज कला, सोच मन मन भरें।
धाइ सिर नाइ सब कहत दससीस सौं। पाथ पर पात सें सैल पाहन तरें॥२०॥

द्रुमिला

रावन—

सुनि चौंकि पर्यौ तब लंकपती अति, आधिक जौ उन कर्म करे।
तुम जाइ सबै दनु रोकहु रे, कछु चेटक ते गिरि वारि तरे॥
उत राम कहा पुनि लच्छन, बानर काजु—बिभीषन बैर धरे।
तब तें सुख जानहु रे तिनकौं, जब तें नहि बाननि पेट भरे॥२१॥

दोहा

अचरज एते मान कौ देखहु विधि सनबंध।
बांधत बंध कबंध पर, कहा जानिये अंध॥२२॥

डारहु बंधन फेरि कै, सिला न जोरन देहु।
मारहु बनचर बोरि बन, बनियहई सिख लेहु॥२३॥

---

२०. सैकन : सौ + एक + न = सैकड़ों। पाथ : पानी।
२१. चेटक : जादू।
२२. कबंध : पानी। कहा जानिये : क्या समझकर।
२३. बन : पानी।

घनाक्षर

बाँधत जलधि, जल उछलि अकास लागे। भीजत बिवान देव, जित कित ताजहीं।
भारे भारे उन्नत पहारन के जोरे पाँति। केते भाँति भाँति कपि-पुंज छवि छाजहीं॥
देखि देखि अचरज, भूले अवसान दनु। साहस कै पटकि सिलानि भय भाजहीं।
फूलि फूलि गगन फलाँग लै लै जितकित। विकट चहूँघा बीर मरकट गाजहीं॥२४॥

दोहा

कपि दल लैन सिलानि कौं, गए जब सब जोरि।
जातुधान बंधान कौं गए, सर्ब तब फोरि॥२५॥

रुचिरा छंद

बानर दौरि राम सौं बिनये, दनुज घने उतपात करें।
बंधन-सिला फटकि सब डारे, नहि येकौ कहुँ संक धरें।
रघुवर सुनत हनुहि दिय सासन, असुर निघन करि सेत रचौ।
कहें बिभीषन तबहि तुरतहीं, यह एकै मत सार सचौ॥२६॥

सोरठा

बिभीषन—

अस्थापन सिव सिलनि प्रति, अर्चित करहु बनाइ।
इष्टदेव हर सबन के, असुर चलै परि पाइ॥२७॥

छप्पै

सुनत बिभीषन सीख, सिलनि प्रति सिवहि अर्चि करि।
फिरि आवत कपि इतहि, उतहि दनु पहुँचि गए भरि॥
निरखि ईस, सब सीस नाइ, दस सीसहि भाषिय।
सुनत खेद चित होत, भेद घर-भेदनि नाखिय॥
=संकर प्रवाहि सैनाधिपति, बाँधि सेत हिय हरषहीं।
=श्री राम निरखि संध्या समय, सुमनस सुमनहि बरषहीं॥२८॥

---

२४. चहूँघा: चारों ओर।
२८. सुमनस: देवता।

छप्पै

धवलाचल ते सेतबंध आगे बिस्तारे।
छप्पन जोजन बाँधि, रिछ्छ कपि दल हलकारे॥
पहुँचे जाइ सु बेल शृंग, अति ऊरध बाढ़े।
तिहि चढ़ि निरखत लंक, राम लच्छन दोउ ठाढ़े॥
– बानर गगज्जि हुँकार करि, कुदि भए उहि पार तब।
– लखि प्रबल सैन आतंक अति, थल थल दनु थरहर्रहिं सब॥२९॥

चौबोला

अंगद हनु सहित श्री राम।
गिरि सुबेल निरखें अभिराम॥
जोजन बीस अचल बिस्तार।
द्वादस जोजन ऊच पहार॥३०॥

तामह बाघ सिंघ गरजंत।
मृग भल्लुक बानर बलवंत॥
सुक सारिक कोकिल कल सोर।
नृत्तहिं चहुँ दिसि मोरनि मोर॥३१॥

रुचिरा

कुसुमित लता ललित बहु लह लह, मह मह मोद सुगंध मई।
निरखि राम रवनीक सकल थल, सिय बियोग तन बिरह मई॥
चढ़ि तिहि सिखर लंक अवलोकत, जोजन भरि तहँ ते सु गुनी।
हरष सोक भरि सोचत रघुबर, कहत दुसह गति आइ बनी॥

चामर छंद

बाँधि सेत बंध, सैन नाँधि पार हैं भए।
तीर तीर सिंधु भीर कीस, हर्ष है ठए॥
ठौर ठौर गाजि बीर, लेहु लेहु कै किए।
लंक संक मानि सर्व, गर्व हारि गौ हिए॥३२॥

---

३०. सुबेल : एक पर्वत।

दोहा

उतरत सेना सेत लखि, राम लखन हरखंत।
कपि-पति दनुपति रिच्छ-पति, ढिग अंगद हनुमंत ॥३४॥

गिरि गह्वर भरि, सेत भरि, अध ऊरध भरि भीर।
गनि न जाइ बहु काल ज्यों, सागर तौलत नीर ॥३५॥

राम कुसासन पर लसैं, लखन हनू दुहुं ओर।
संध्या बंदन के समै, तिहुं पुर माच्यो सोर ॥३६॥

झूलना छंद

करत संध्या समै सकल मिलि पारषत। आरती जोति श्री राम राजैं।
निरखि नवनील घन स्याम सुंदर महा। हरषि चहुं ओर कपि-पुंज गाजैं॥
जोर घनघोर धुनि सोर दस दिसि मचैं। तुरत सुर राज सुर सहित आए।
मिलत नहि गैल कहुं भीर कपि गन ठिलें। देव सब नीठि करि दरस पाए।।३७॥

वेद-धुनि करत ब्रह्मादि सुर मुनि मिलैं। इंद्र मनि थार आरति उतारें।
सबनि सनमानि करि, राम लच्छन हनू। परस्पर देव अस्तुति उचारें॥
कोटि कंदर्प छबि, विपुल रघुबंस रवि। बदन अरविंद मृदु हंसनि सोहैं।
दरसि गोपाल जन देव जे जे रटैं। रूप मादक पिये नैन मोहैं ॥३८॥

दीपकल छंद

देवा:ऊचु:—

जय राम चंद्र करुना – निधान।
प्रभु तुमहि रचे नाना विधान॥
गति अगम अगोचर कहि न जाइ।
निजु आदि अंत आपुहि सहाइ॥३९॥

तिहुं लोक सोक संताप दाप।
भुव त्रसितमान दनु प्रबल पाप॥
यह सुनहु श्रवन दै सकल गाथ।
अब रावन पावन करहु नाथ॥४०॥

---

३४. सेत : पुल। कपिपति : सुग्रीव। दनुपति : विभीषण।
३७. पारषत : पार्षद। नीठि : कठिनाई से।

सवैया

कौन कहै महिमा प्रभु की मुख, संकट कोटिन के क्रुत टारे।
आदि न अंत अनादि अगोचर, आरतवंतनि के रखवारे॥
हैं रचना तिहुं लोक जितै भरि, ते करुना करि पालन हारे।
जानत काज अकाज कछू नहि, श्री रघुराजहिं लाज हमारे॥४१॥

विदोहा

श्री राम—

राम विनय सुनि सरन की, सब ही हरषि कहे।
तुम संकट ते हौं दुखी, कारन दुसह सहे॥४२॥

द्रुमिला

कछु चाह न मोहिं कहूं न, जबै जन घ्यान करैं तहँ धाइ परौं।
निजु केवल भक्ति सनातन कै बस, भक्त कहै सु करोई करौं॥
सरनागत आरतवंत गोपाल, पुकारत संकट कोटि हरौं।
रघुराज कहैं सुरराज सुनौ, तुम हेत सरूप कहाँ न धरौं॥४३॥

सोरठा

करि अस्तुति सुरराज, सुरन सहित सुर पुर गए।
जाने पूरन काज, रामचंद्र चिता-हरन॥४४॥

दोहा

कहा जु संकट कोटिकौ, कहा जु खल दल दाप।
सुमिरत जन गोपाल हैं त्रिभुवन राम प्रताप॥४५॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां समुद्र-बंधन श्री लंका दर्सनोनाम त्रयत्रिसोध्याय:॥३३॥

राम-मंत्र-लंका-सज्जनिका

३४

रुचिरा छंद

निसि अवकाश आरती मंगल करत, सकल कपि पुंज गजैं।
गद गद प्रेम पुलकि प्रति लोमनि, मन क्रम बच रघुनाथ भजैं॥
सुग्रीव हनु विभीषन अंगद, सनमुख सब सासनहि चहैं।
निमिष नैन विश्लेष न भावत, सेवत सब भ्रू-भंग रहैं॥१॥

भुजंग प्रयात

उतै लंक मंदोदरी संक मानी।
कहै भैंचकी सी, सुनौ देव बानी॥
लगै भौंन भौ, भीति नींदौ न आवै।
निसा आजु की खान सी मोहि घावै॥२॥

करौ सोध याकौ, रहौ जै असोचै।
महाकाल के काल कौ कौन मोचै॥
यहै देव छंदै, छल्यौ को न जानौं।
सियै देहु रामै, सिरै मंत्र ठानौं॥३॥

सवैया

रावन—

कोपि दसानन बैन कहै यह, लंकहि आइ कहा भरि पैहै।
जोरि अडंबर बंदर सैननि, आखिर हारि हिये पछितैहै॥
देखहु आइ बनी अब अैसियै, जो कुलवंतहि जानि बचैहै।
चाहत सीय लयो रघुनाथ, तौ मोहि विभीषन कौ धरि दैहै॥४॥

---

१. गजैं : गर्जना करते हैं। विश्लेष : बिलगाव, वियोग।
२. भैंचकी : भौचक्की। जै : जिन, मत, नहीं।
३. मोचै : मुक्त किया। सिरै : सिर में, दिमाग में।

दोहा

देखि दसा दरबार कौ, राज चौतरादार।
दनुपति कौं दनु सहस लै, संकित, कियो जुहार ॥५॥

झूलना छंद

जोरि कर चौतरादार, दस सीस कौं। नाइकैं सीस अति ही सकानौ।
कहत नहिं बनत, मुख अधर कंपत। कथा, रीति विपरीति सब नाथ जानौ॥
देव गति परम परपंच कारन सबै। घोर उतपात घर पैंडि माच्यौ।
राम सैंनान कहुँ मात अध ऊरधैं। नाच सुर असुर कुल कौन नाच्यौ॥६॥
इन्द्र ब्रह्मादि रवि चंद्र गंधर्व मुनि। जष्छ किन्नर जिते पष्छ रघुबर गहैं।
आपु जग मंडि जस, खंडि तिहुँ लोकमद। तेजु सब प्रबल अति आजु औसर लहैं॥
हौ जु सर्वज्ञ, हम अज्ञ जानैं कहा। लंक कौ संक संताप सब टारिए।
कहत गोपाल पति, पैंज श्री राम भजि। कै जु सजि सैन सैनाहि संघारिए॥७॥

चंचरी

देव-गति सब जानि रावन, भेष गुनि सब सौं कहै।
जे न सालिम समर, ते धिक, काजु बहु प्रभुता लहै॥
ठानि संगर, सुनि पुरंदर, आइ पाइन मो परे।
टहल कौ सब सुरन सौंपि, आपु पदवी पचि मरे॥८॥

चंचरीक

वेद पारग कौ विरंची, जीव कहि तिथि वार हैं।
पाक पावक, जलहि वारिद, समन पहरुदार हैं॥
बीन कौ जु प्रवीन नारद, नाद किन्नर गान हैं।
मैनकादिक सात नृत्तहि, रचहि रंग विधान हैं॥९॥

---

५. चौतरादार : द्वारपाल। जुहार : प्रणाम।
६. भेंडि : द्वार बंद कर।
८. भेव : भेद। सालिम : स्वस्थ, दृढ़। संगर : संग्राम।
९. मैनकादिक : मेनका इत्यादि सात अप्सराएं। समन : यमराज।

छत्र कौं जु नक्षत्र नायक, ज्ञान कौं जु गणेश हैं।
छरित बारह मास, बासर, अमल जोति दिनेस हैं॥
यौं जु देव समाज सेवहि, सौंपि राखै माम कौं।
लाज नहि सुर-राज कौं, अब मिल्यौ कायर राम कौं॥१०॥

घनाक्षर

लाज कौं गँवाइ काज चाहत निलज जेते। ते ते सब जानिये निपट ओछे मति के।
लाग्यौ ना मिटत क्यौं हूं कालिमा कलंक अंक। संकनि के मारे चलैं मारग अगति के॥
साहस विहीन सतहीन दीन दिन दिन। जीवन जे चाहत फजीहति सौं अति के।
राखन निसानी एक चाहत जुगनि जुग। सुरनि ज्यौं इंद्र बंदीवान लंकापति के॥११॥

दोहा

ऐसे निलज कहा गए, कहा रहे इक संग।
काजहि करे अकाज जे, का कायर मति-भंग॥१२॥

चौबोला

आजु निसा-बासर भरि मैं, जो देव सेव नहिं आवैं।
तौ वह इन्द्र बहुरि इन्द्रासन, सपनेहूँ नहिं पावैं॥
पहिल कोप भारौं तिन ऊपर, सुर पुर सकल उजारौं।
फिरि पीछे रन मंडि राम सौं, कपि दल बल संघारौं॥१३॥

का सुग्रीव, कहा हनु अंगद, रिच्छ तुच्छ गनि, मारौं।
का बानर-सेनापति सिगरे, गाल विभीषण फारौं॥
यह न करौं तो सपत ईस की, विपति तिहूं पुर पारौं।
सुर नर नाग जच्छ दै देखहु, सब को मगज उतारौं॥१४॥

---

१०. नक्षत्र नायक : चन्द्रमा। माम कौं : मुझ को।
११. बंदीवान : कैदी।
१४. दै : सुर से लेकर जच्छ तक।

सवैया

मंदोदरी—

कोप दसानन को सुनि के, मयनंदिनि भाँति अनेग जनाई।
देखहु यौं सब को मत लै करि, पदवी जिन राज बढ़ाई॥
एक तैं एक महा बलवान, ता पर हैं हर के बरदाई।
गज्जि के सज्जित लंक करौ, यह सीय कै काल-वधू घर आई॥१५॥

चौबोला

तिहि पल सकल सभापति जितने, मिलें आइ जित राजैं।
सीस नाइ, संकित, कोइ लज्जित, कोइ गज्जित रन काजैं॥
एक कहैं प्रभु की मन भाई, एक कहैं अनखौहैं।
इक सेवत हैं सासन जित कित, इक सेवत हैं मौहैं॥१६॥

दोहा

कहै दसानन सबन सौं, करहु सु मंत्र प्रयोग।
राम सैन संघार कौ, जो कारन जिहिं जोग॥१७॥

छप्पै

मंत्री—

जे न सुने हम श्रवन, लखे सो सकल नैन भरि।
असम लगे उतरान, श्रवत नभ कबहुँ श्रोन झरि॥
वासर बहु गोमायु, बैठि महलनि मैं बोलैं।
गह्वर के निसिचरन, चित्रसारिन मैं डोलैं॥
=यह कारन कौन न जानिये, अचरज गति बनत न कहत॥
=बिनु बात हलहि तरुवर सकल, बहत बात पात न हलत॥१८॥

मालिनी

सकल असुभ लंका, चाहि संका ससंकै।
कहि नहि कछु आवै, है कहा भाल अंकै॥
सुमति समित सोचै औधि सी है तुलानी॥
सियहि जिय न चीन्हे, भूलि देहाभिमानी॥१९॥

---

१५. कै : अथवा।
१८. असम : पहाड़, पत्थर। गोमायु : गीदड़। गह्वर : वन। बात : हवा।
१९. चाहि : देखकर। भाल अंकै : भाग्य लिपि। समित : एकत्रित।

सवैया

प्रसस्त—

जौ लगि सूरज चन्द्र उदै, नभ तौलगि, राज किये नहि कोई।
जाहि जितौ करनं सु करौ जग, आवत जात थकं नहि सोई॥
या महँ सार असार विचारहि, है वरनो करनी भरि होई।
कोटि करौ ममता, समता तजि आखिर बात रहै थिर दोई॥२०॥

मदन छंद

मेघनाद—

मेघनाद कहे तबै, अब सुनहु श्री नृपराज।
लात मारि बिभीषनै, सब किये काज अकाज॥
आजु स्वामित हेत कौ, तिन सम न कोइ यह लंक।
जानि कारन सके एक न, भए परम निसंक॥२१॥

दोष विनु, दै दोष तिन सब, रोष तें गरवाइ।
छोभ तें हित छोड़ि कै, उन मिले रामहि जाइ।
आदि अंत निषेद जितने, भेद भाँति अपार।
प्रगटि तिनसौं सकल कारन, करहि सब खैकार॥२२॥

कोटि भाँतिन करहु कारन, लहै एक न आजु।
मरन के सब ठाट ठाटे, ठाटि हठ निहकाजु॥
विषम काल कराल महिमा, कौन जानन जोग।
सीय सार्थाहि जीव त्यागहु, और है न प्रयोग॥२३॥

चामर छंद

मालिवंत—

मालिवंत राखनं कहै अनेगधा तबै।
कौन को करै, विचार बात घालि कै तबै॥
एक ना किए विवेक, है अनेक आधि कै।
आसुरी चरित्र क विचित्रतानि साधि कै॥२४॥

---

२४. मालिवंत : माल्यवंत—एक राक्षस जो सुकेश का पुत्र था। अनेकधा : अनेक प्रकार से।

राम हैं न मानुसै, न नारि जानि जानकी।
तीनि लोक लोचहीं, कृपा कृपा-निधान की॥
काहु को न द्रोह के, न काहुवै वृथा हतै।
सीय देहु सार मंत्र, है समस्त के मतै॥२५॥

दोहा

रावन—

बूझत जो कछु कारनै, सो बूझत नहिं कोइ।
रोग कछू, ओषद कछू, क्यों रोगी निक होइ॥२६॥
सियहू दिए न छोड़ि है, यह जानत हौं चित्त।
ताते और न दूसरो, सत्त बराबरि मित्त॥२७॥

छप्पै

रे रे दानव मूढ़, गुढ़ मंत्रहि का जानो।
जीवन को चिरकाल, काल एक न पहिचानो॥
भावत भोग विलास आस विसवास धाम धन।
अंत धंध सनबंध, अंत आरत अति तन मन॥
= मम कोप—हुतासन, हवन-दनु, रचिय समर-मख बाहु-बल।
= यह हेत हर्‌यो हठि जानकी, न्योति बुलायो राम-दल॥२८॥

दोहा

महोदर—

जामै जो करतव्यता, तितनी करै गो सोइ।
आगे गढ़ सज्जित करो, पीछे होइ सोहोइ॥२९॥

छप्पै

होनी होइ सु होइ और अब मंत्र न ठानहु।
सज्जि लंक गढ़ गज्जि, सूर बीरन पहिचानहु॥
जिहि लायक जो होइ, ताहि तिहि ठौरहि राखहु।
खल कातर स्वामित विहीन तजि, दीनन भाखहु॥

---

२५. मानुषै : मनुष्य। लोच हीं : ललचते हैं, अभिलाषा करते हैं।
२६. ओषद : औषधि। निक : स्वस्थ, नीरोग।

=गज बाजि साजि धनु बान रथ, त्रान अभेद निखंग सर।
=सब सावधान निसि दिन रहहु, सुमिर हिये जय जयति हर।।३०।।

पद्धटिका

यह सुनि सूर बीर गलगाजे।
कायर मुकि दिगंतनि भाजे।।
ठोंकि भुजाबल बीर मुछारे।
साजत रथनि धनुर्धर भारे।।३१।।

बाजन गह—गह लगे निसाने।
गढ़ पर घने धजा फहराने।
सासन सबन दसानन दीन्हें।
साज सकल लंक—दल कीन्हें।।३२।।

छप्पं

चारि पौंरि लंकाहि, कोट सज्जित सब कीन्हें।
पूरब पौंरि प्रसस्त, पान रावन तब दीन्हें।।
महा महोदर बीर बीर, गुनि, दच्छिन राखे।
पच्छिम प्रबल बलिष्ट, इन्द्रजीतहि अभिलाषे।।
=दसकंध आपु उत्तर गहिय, छवि अनेग जिहि छज्जियेउ।
=इमि सज्जि सकल गल गज्जिदनु, वज्जन चहुँदिसि वज्जियेउ।।३३।।

झूलना छंद

साजि गढ़ लंक, तजि संक, दनु बंक। सब प्रबल बलवंत, भट भीर गाजैं।
उमड़ि अति जोड़ त, गजत बहु सोर तें। घोर चहुँ ओर तें, नीसान बाजैं।।
रंग रंगें घने, धजनि गुरजैं बने। चंचला-पुंज जनु पुर बिहारैं।
सोभ कहत न बनें, जोम सबके मनें। हरषि दस सीस, चहुँ दिसि निहारैं।।३४।।

---

३१. मुछारे : मूँछवाले।
३४. गुरजें : बुर्ज। जोम : उत्साह। चंचला : विद्युत।

छप्पै

सकल सूर सावंत, सेन बलवीर धीर मति।
सकल पुत्र परिवार, सकल 'मंत्री' विचित्र अति॥
सकल दैत्य-पति साजि, सकल दिग दिग दीपनि जोइ।
पहुँचि गए सब आइ रहेउ नहि कहुँ एकउ कोइ॥
=विकराल रूप कोटिन प्रबल, सकल सेन गल गज्जियेउ।
=सब ठौर ठौर लंकाधिपति, लंक प्रबल बल सज्जियेउ॥३५॥

उड़ियाना

साजस करि लंक सकल, द्वार चारि भारे।
बाजैं निसि बासर बहु, बाजन अधिकारे॥
रावन गढ़ बाहिर कढ़ि, सब सौं मुख भाषे।
धीर प्रबल बीर सकल, ठौर ठौर राखें॥३६॥

असम कोट, सार कोट, ताम्र कोट आगे।
तार कोट, कनक कोट, नीरद सौं लागे॥
जोजन इक इक सु कोट, अंतर अवगाहें।
बिस्तर तिन मधि समस्त, दानव बहुधा हैं॥३७॥

जोजन दस भरि प्रमान, लंक कोट सोहैं।
तिन मैं दनु भौन सकल, भांति मनहि मोहैं॥
देखि सकल नगर, दनुज-नाथ महल आए।
राम सेन मैं जसूस, देखिबे पठाए॥३८॥

दोहा

राम कटक अवलोकनें, मयनंदिनी लै संग।
सात खण्ड प्रासाद पर बाढ़्यौ बपुष उतंग॥३९॥

---

३६. साजस : सज्जित करके। राखें : रखवाली।

३७. असम कोट : पत्थर का किला। सार कोट : लोहे का किला। ताम्र कोट : तांबे का किला। तार कोट : चांदी और पीतल से मिश्रित धातु का बना हुआ किला।

३९. वपुष : शरीर।

छप्पै

सात खंड प्रासाद सुभ्र, अभ्रहि मिलि भ्राजत।
घन सरूप भूखन विचित्र, दुति दामिनि छाजत॥
सिर सुमेर दस शृंग नैन ससि मंडल मानहु।
बदन दीह विस्तारि, दंत कुलिसहुं जम जानहु॥
=भुज दंड प्रबल दिसि विदिसि भरि, बपु माया अधिकारियउ।
=इमि रावन धरनि अकास लगि, रूप भयानक धारियउ॥४०॥

घनाक्षर

देखि देखि रावन भयावन स्वरूप सैन। संकन तें केते भूलें (निजु) अवसान हैं।
एकै रोस बाढ़े, एकै बलकत ठाढ़े। ठाढ़े एकै हंसे वीर, बाहु-बल कै निधान हैं॥
केते कहैं केतिक करैंगो दनु छंदनि कौं। छोड़िहैं न दाबादार कैसि हूं निदान हैं।
केते कपि, केते भाँति, करत कुलाहल हैं। हरषत केते हेरि राम धनु बान हैं॥४१॥

दोहा

श्रीराम—

निरखि कहे रघुबीर हैं, अद्भुत अंग अनूप।
कहा बिभीषन कौन यह महा भयानक रूप॥४२॥

सोरठा

विभीषन—

यह रावन रघुबीर, माया बपु काया बली।
समर-सूर मति धीर, त्रिभुवन जिन सोकित कियेउ॥४३॥

छप्पै

यहै रूप तिहु लोक, सोक-संताप मचायो।
यहै रूप ब्रह्मादि इंद्र, बहु नाच नचायो॥
यहै रूप रन मंडि, सकल बलवंडन दंडिय।
यहै रूप अलकादिपति, मद मारि विहंडिय॥
यह रूप प्रबल रावन लखहु, हद वेहद जिन इक्क किय।
राजीव नैन विहसंत मुनि, राजिव कर धनु बान लिय॥४४॥

---

४०. अभ्रहि : बादल। कुलिसहि : वज्र।
४१. निदान : अंत :

जटा मुकुट अभिराम, स्याम घन सुंदर सोहैं।
कटि निषंग धनु बान, पानि, पंकज-छवि को हैं॥
सरद विकच अरविंद बदन, मृदु हास मनोहर।
कहत सुनौ सब गाथ, निरखि रघुनाथ परसपर॥
—मम कोप-अनल प्रज्वलित हौं, तृन भू-धर सम जाहि जरि।
—यह रावन उरपावन हमहि, परम अपावन रूप धरि॥४५॥

निरखि राम सर एक, हरषि तिहि पर पटतारे।
दस सिर के दस मुकुट, दसौं दिसि बलि से डारे॥
लागत भयो अचेत, चेति भय भीतर भाग्यौ।
महा मोह के नींद, मनहु सोवत तें जाग्यौ॥
—अवलोकि कहत मंदोदरी, भरी संक, विहवलित अति।
—बचिहौ न नाथ रघुनाथ सौं, अजहुँ सीय लै मिलहु पति॥४६॥

दोहा

राम न दसरथ-सुत गुनौ, हरि दस हैं अवतार।
दसौ मुकुट जैं जानिये, दस सिर करे प्रहार॥४७॥

सोरठा

रावन वाच—

जद्दपि वे जगदीस, धरत दसौ अवतार हैं।
हौं रावन दससीस, जीवत राम न परिहरौं॥४८॥
इहि अंतर वे दूत, आइ कहे दनुनाथ सौं।
सैंन महा आकूत, गनपति गिरा न गनि सकैं॥४९॥

मंदोदरी—

कौन कुसल काके भयो, तपे त्रिविधि जिन पाप।
कहा हाल तिनके सुनें, जिन बल राम प्रताप॥५०॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां राम-मंत्र लंका गढ़-सज्जनिका वर्णनोनाम चतुस्त्रिंसोध्यायः॥३४॥

---

४७ जैं : मत।
४९. आकूत : जिनकी कोई गणना न हो।

अंगद-रावण-संवाद

३५

छप्पै

रामचंद्र चरणारविंद, वंदन सब कीन्हें।
हनूमान सुग्रीव आदि, प्रभुता प्रभु चीन्हे॥
सैल-सिला तल-सिन्धु, कमल दल से उतराते।
नांघि कटक कीटादि, वीर मरकट मद-माते॥
=गोपाल भनत मनसिज मनहुँ, धरि द्वै बपु धनु सर धरे।
=राजीवनैन कपि—सैन महँ, अति सुन्दर सोभा भरे॥१॥

निसिपालिका

श्रीराम—

राम करुनामई चाहि, सब सो कहे।
जदपि दनु तापित तप, बैर भावहि गहे॥
तदपि पौलस्त्य-कुल, हतहुँ लखि रोष ते।
डरत हौं एक ही, ब्रह्म—बिघोस ते॥२॥

देहु सिख एक सब, हौं जु तोनैं करौं।
सीय परिहरहु मकु, यहि न जीवहि हरौं॥
कै 'ब' कोइ जाइ तिहि, सुमति समुझावई।
करहि आधिकहि, तौ दोष नहि आवई॥३॥

---

२. बिघोस : बिद्‌धेष, शव। ब्रह्म-बिघोस : ब्रह्म हत्या।
३. मकु : भले ही। आधिक : आधा।

दोहा

जामवंत—

जाम कहे तब राम सों, यह न काम कोइ आहि।
हनूमान तब के गए, अब के अंगद जाहि ॥४॥

सवैया

राम—

राम कहैं तकि कैं मुख कौ, सुनि अंगद जाइ तिन्है सिख दीजै।
जो भजिहैं सिय लै हमकौं, तब तें तिहि को अतिमामन छीजै॥
लंक दियो है विभीषन को हम, और कहैं सु सबै भरि कीजै।
जद्यपि है अपराध कियो हम, तद्यपि मारि कलंक न लीजै ॥५॥

सोरठा

सुनि अंगद हरषंत, देखन लंक, न संक चित।
दये सीख हनुमंत, सासन भरि सब कीजिएहु ॥६॥

छप्पै

बंदि चरन रघुनाथ, छोड़ि अंगद मन-संका।
दौरि बीर ततकाल, कूदि देख्यौ तब लंका॥
बैठे दानव देव जक्ष राक्षस मुनि भारे।
सभा मध्य दसमथ्थ मान जिन सबके मारे।
=गोपाल भनत सुत बालि को, निदरि निपट मन मैं तहां।
=गुनि तुच्छ उछलि बैठ्यो सम्हरि, सिंहासन रावण जहां ॥७॥

रावण—

लखि अंगद की चपलता, लंकाविपति उर खाइ।
बूझन लाग्यो कोपि के, को बानर तैं आइ ॥८॥

---

५. अतिमाम : इहतिमाम, व्यवस्था।

छप्पै

रे रे बानर, निकट आइ बैठ्यो, कहि कोरे।
डारो सुभट कढोरि, बाग इनहीं सब तोरे॥
अैसो ठीठ वसीठ नीठ हम देखन पाये।
सुनत सभा में कूदि, बैठते घने दबाये॥
दसमथ्थ समथ्थ अकथ्थ गुनि, करि कौतुक कह कह हस्यौ।
नृपराज सभाहि सुमंत्र कौं, राजदूत आयो अस्यौ॥९॥

घनाक्षर

प्रत्युत्तर—

'कौन है रे बानर, कहाँ ते आयो, कौन काज। राजन-समाज बीच लाज नहि आयोहै।
'दूत रघुनाथ को सनाथ, सुनि गाथ आइ। माथ दसनाइ लै अनाथ-नाथ आयो है॥
'कौन को है जायो जौन बाँधि लरकायो। चौंकि बूझत बतायोकहाँऊरधबतायो है।
रावन के आछे सरलाघव-बेवान बैठि। बालि बलवंड नभ-मंडल सिधायो है॥१०॥

रावणोवाच—

काहे को अनाथ सौं अकारथ गयो ई मारु। टारु हरि भाँति दै कै सुमति विचारतौ।
हो तो बलवंड, तौ बिहंड तौ अनेक मारि। दीन तपसीन सों का एते मानहार तौ॥
कहत गोपाल कौन कीन्हें करतूति वीर। समर सरीर एक धीर नहि धारतौ।
जीति महि-मंडल, अजीतकरिदेतौताहि। जोपैबालिकहूमेरोसरनसम्हारतौ॥११॥

अंगदोवाच—

कौन जोतिरिंगन करैगो मारतंड-सम। कठीरव कंठ लागि जंबुक रुठायो है।
केतक पपीलिका धरैगो लोकालोक टारि। कुंजर को भार खर कौन सो चलायोहै॥
कहत गोपाल, अैसे काहे को करत हौंस। थोरे बित एतौ मूढ़ अधिक जनायो है।
काके बल बोलत निसंक ऐसो लंकपति। सरिता-उदर कहूं सागर समायो है॥१२॥

पाठान्तर-९—सब तोरे (२), सब टोरे : सब तोरे (१.२)

---

९. कढोरि : घसीटकर। अस्यौ : है।

१०. लरकायो : लटकाया।

१२. जोतिरिंगन : जुगनू। कठीरव : सिंह। मतवाला : हाथी। जंबुक : गीदड़। लोकालोक : पुराणानुसार एक पर्वत का नाम जो सात समुद्रों और द्वीपों को चारों ओर से घेरे हुए हैं।

बिदोहा

रावण—

एकं अचरज हम लखे, प्रगटे रीति नए।
नर ते नागरतानि तें, वानर बीर भए ॥१३॥

घनाक्षर

बल तौ प्रबल ससि सेखर को बरदान। ताहि के गुमान मान मार्यो सुरराजकौं।
संकन के मारे सब सरण हमारे आइ। सेवत चरन, लंका सिरताज कौं॥
जीति दिगपाल नर-पालन अनेग भाँति। भनत गोपाल भारी शोभन समाज कौं।
एते मानतासौंआइ निदरि सभामें बैठि। बानरबतावतुहैवातेंस्वाम-काजकौं॥१४॥

अंगदोवाच—

राम कौप्रताप सब काम कौ कमप-तरु। राम कौ प्रताप सदा संकर को जाप हैं।
राम कौप्रताप तीनों लोक के अभय दानि। रामकौ प्रताप जग-जोति आपे आप है॥
राम को प्रताप महा मंगल गोपाल भनि। राम को प्रताप हरे खल-दल-दाप हैं।
कहाँ प्रभुताई कौ प्रताप करि मान्यौ मूढ़। जबलौंनजान्योरामनामकोप्रतापहै॥१५॥

बिदोहा

रावण—

तिन सौं बलक्यौ बीर नहि, जिन मार्यो तुव बाप।
राखि सके नहि जानकी, ऐसो राम प्रताप॥१६॥

जथा

काहे को बनाइ ऐसी बात कहै वानर रे। बाप को बधाइ, आप आयो है देवानी को।
ऐसी रजपूती सरमैती को सपूत कौन। क्यौंन कहै बात दाबि लायक सयानी को॥
भाई के लिकासे भेप कीन्हें हैं दिगंबर कौं। कौन बैर नासा बिनुकीन्हेंजातुधानीको।
रारिउनठान्योमोहिनेकहूनआन्योमन। जान्योनहींरावनसेमहाअभिमानीकौं॥१७॥

---

१४. स्वाम : स्वामी।

१६. बलक्यौ : बलकलाना।

१७. देवानी : मंत्रित्व। सरमैती : सरमाना। सयानी : चतुराई। भाई के निकासे : भरत के निकाले हुए। रारि : झगड़ा।

विदोहा

अंगद—

हौंस न राखौ बँसिये, वँ दिन बीति गए।
हरन तिहारे सीस दस, सीता हरन दए ॥१८॥

जथा

पूरन प्रताप रघुनाथ को सनाथ सुनि। निपट अनाथ तूँ सनाथहि विसाइयो है।
छार ते पहार जिन्हें करत न लागै बार। करत पहार छार तासौं अँड़ धारयो है॥
सुनी दससीस बगसीस पाइ ईश जू की। कहत गोपाल क्यौं न सुमति सम्हारयो है।
गंजन-गुमान सौं रे ठानतु है मान कहा। महाअभिमानिन को मान जिन मारयो है॥१९॥

रावण—

बातन वीर न हूजिये, बिनु जीते संग्राम।
अब कोमल कर देखिहौं, धनुक धरेंगे राम ॥२०॥

जथा

वँ तो महाराज के कुमार सुकुमार महा। महा महा दानव मुहारे कैसे परिहैं।
कोमल गोपाल मुख लोचन अरुन करि। कौरि करमोसौं धनु बान कैसे धरिहैं॥
देवन को देव, सो तो सोवत हमारी पौरि। तासों करि बैर, कहा लंका आइ करिहैं।
बानर बटोरे साथ, आये कहाँ रघुनाथ। ता दिन कहाँ ते ल्याये जानकी हौं हरिहैं॥२१॥

विदोहा

अंगद—

लंका गहन सुहावनो, सावज दनुज भयो।
राम अहेरी धनुक धरि, सीता अनल दयो ॥२२॥

जथा

शीतल सुखद सुखदाइन को कामधेनु। बैरिन को सोई हवि-वाहन बखानिये।
दीनन को कलपलता सी रहि फूलि। भूलि भूलि जानैं सोई भक्ष पहिचानिये॥
पूरन सकति जातें सकति असेष होत। सेवत गोपाल तीनों लोक पद मानिये।
जन को अमर, अरिगन को दहन करै। सीता को सरूप-सुधा, पावक सो जानिये॥२३॥

---

१९. अँड़ : शत्रुता, अकड़।
२१. मुहारे : मुँहड़ा, सामने। कौरे : कोमल।
२२. गहन : वन। सावज : शिकार। अहेरी : शिकारी।
२३. हवि-वाहन : अग्नि। जन : सेवक, दास।

दोहा

रावण—

अंगद जानो तबहि तें, भए राम मति-भंग।
सीता ऐसी सुन्दरी लै, निकसे बन संग ॥२४॥

स्रग्धरा छंद

सीता ऐसी वधू लै, विपिन रघुपति कौन कामै सिधाये।
जासौं तासौं विरोधै करि करि, घने वीर नोखे कहाये ॥
केते केते न भंजे असुर सुर, बली इंद्र से बाज खाए।
लंका संका न का हूँ, कहि कहि बिहँस्यौ, जानकी लैन आए ॥२५॥

विदोहा

अंगद—

राम हरन दिय जानकी, रावण आयु घटी।
सूपंनखा रस कौं गई, क्यौं जु भई नकटी ॥२६॥

द्रुमिला

अति सुंदर राज कुमार गोपाल, सु पालि मखै दनुजी दपटी।
जिन रंगहि तें धनु भंग किये, तुम हूं तजि लाजहि मारि लटी ॥
रघुनाथ सनाथ अनाथनि को, तिन हाथहि है तुव आयु घटी।
तिनसौं यह लंकहि पंक करें, जिन सूपंनखाहि करी नकटी ॥२७॥

दोहा

रावण—

सुनि कोपनि प्रज्वलित भौ, कंपत अधर सुरंग।
धिक लंकाधिक, जौन हौं, करौं मारि रन जंग ॥२८॥

---

२५. नोखे : अनोखा। बाज खाए : पराजित होना। लैन : लेने।
२६. दिय : दिया।

छप्पै

जदिन अरहुं रन बंग, जंग रामहि सहुं जुद्धहुं।
कटक अटक पुनि कौन, बीर मर्कट भट कुट्टहुं॥
रिच्छ तुच्छ बलवंत अंत अंतक करि छंडहुं।
हौं रावन दस मथ्थ, हथ्थ सुर असुर विहंडहुं॥
=करि कोप लेत हांकहु जदिन, कहि गोपाल सब थरहरहिं।
=झरि करत बान भांदव झकरि, का फक्कर टक्कर करहिं॥२९॥

विदोहा

अंगद—

रावण गरब न कीजिये, रघुवर आइ अरे।
पाहन पाहन तें बड़ो, पाहन बारि तरे॥३०॥

छप्पै

जदिन कोपि रघुनाथ, हाथ धनु बानहि लेहैं।
लंक बंक करि पंक, संक सुर मारि मिटैहैं॥
दल मलि दल चतुरंग, कौन रन रंगहि जुट्टै।
गलगज्जित जिन सैन, सैन तुव इक्क न छुट्टै॥
=गोपाल कहत सिय लै 'ब मिलि', फिरि पीछे नहि छडिहैं।
=दससीस बीस भुज दंड खल, खंड खंड करि खंडिहैं॥३१॥

रावणोवाच—

मिल्यौ विभीषण जाइ, मिलै किन कुंभकर्ण अब।
मिलै जाइ सुर-सैन, मिलैं कित असुर-सैन सब॥
मिलैं जाइ सक्रारि सहित, सब पुत्र मित्र गन।
मिलै कहा कछु होइ, होइ मकु हानि पंज पन॥
=तप तेज मिलै त्रिपुरारि मोहि, तिन प्रताप कालहि गिलौं।
=दससीस बीस भुज दंड लै, हौं रावण का कहै मिलौं॥३२॥

---

२९. कुट्टहुं : कूट दूंगा। फक्कर : साधनहीन। टक्कर : युद्ध।
३१. लै ब : लै अब।

सवैया

अंगद—

राज दये, सब साज दये, गज बाजि दये, दई लोक बड़ाई।
बाम दये, धन धाम दये, मन काम दये, भरि कै मन भाई॥
पान दये, सनमान दये, पखान दये, पन तें अधिकाई।
रावन सो न गुनौ अपनौ करि, जातहि लंक बिभीषन पाई॥३३॥

निसिपालिका

रावण—

लंक मकु जाइ, धन धाम मंदोदरी।
सीय नहि देहुँ, पन पंज पूरन धरी॥
होंहि नहि राम महि, हौं हूँ रावन बियो।
मारि सब सैन, जस आयु चाहत लियो॥३४॥

सवैया

राम उतै कपि सैन लिये, इत रावन हौं करि हौं रन नीको।
जीति सुरेस धनेस नरेसन, मारि कियो सब को मद फीको॥
राखि लियो जु बिभीषण को, सब दै प्रभुता, मोहि लालच सी को।
जादिन लात लिलार हने हम, ता दिन लंक कियो तिहि टीको॥३५॥

अंगद—

छोड़ि अजौं हठ को सठ, दैव कुठाट की ठाट कहा सुधरैगो।
जानत आदि न अंतर की गति, है करतार कहा न करैगो॥
है अपराध अगाध विनास न, जो सिय लै प्रभु पाइ परैगो।
ना तर तोहि अभागि लगी, बिनु आगि सबै जर मूर जरैगो॥३६॥

दोहा

रावण—

रे बानर मतिमंद तू, करै पराक्रम कौन।
त्यौं त्यौं बोलत निदरि कै, ज्यौं ज्यौं ठानत मौन॥३७॥

---

३३. बाम : स्त्री (मंदोदरी)।
३४. मकु : भलेही। बियो : दूसरा।
३५. सी : सीय। लिलार : सिर, ललाट।
३६. ना तर : अन्यथा। मूर : मूल।

सवैया

बोलत बोल बड़े, बिष सों मुख, मूरख बैठि सभा न डरै रे।
जा कहँ तीनहूँ लोक कपैं अति, ता कहं तू तिन सों निदरै रे॥
दूत दयावन जानि तजौं, नहि तौ फटिकैं दधि पार परै रे।
है बल जौ रघुनार्थाहि कौ, पुरुषारथ सो अब क्यों न करै रे॥३८॥

दोहा

कूदि सभा तें ठोंकि भुज, अंगद रोपे पाइ।
चरन चलै भुज बीस सों, सिय छोड़ी रघुराइ॥३९॥

छप्पै

करि रघुवर कौ ध्यान, हृदै अंगद हरषाने।
ठानि प्रतिज्ञा राम, चरन रोपत प्रभु जाने॥
बिश्नु तेज बलवंत, मंत तन में परगासे।
मानहुँ कोट सुमेर भार, भूतल पद भासे॥
=गोपाल अनुग्रह वृद्धि जय, बालि नंद आनंद भरे।
=कौतुक अकथ्य दस मथ्थ गुनि, समरथ्थनि आयसु करे॥४०॥

दोहा

रावण—

नर बानर दनु-भक्ष सब, ते हांकत पद रोपि।
देखौ देखौ सुभट रे, पटकि डारियै कोपि॥४१॥

छप्पै

सकल लंक दल बल प्रचंड, कोपनि तें झपटे।
कोटिन मानहुँ रक्तपात, गज पायन लपटे॥
बहुतक डारे मीड़ि, बहुत दिसि विदिसनि फटके।
उठत भयो हाहूत, हृदय रावन के खटके॥
=हर हर उचारि दरबर तबहि, उठेउ रोस करि धाइ है।
=बजरंग अंग अंगद बली, रहेउ रोपि इक पाइ है॥४२॥

---

३८. तिन : तृण। दयावन : दया का पात्र। फटिकैं : घुमाकर फेंकना :
३९. चरन चलै : पाँव हिलना।
४२. रक्तपात : रक्तपर्ण, पिंडाल, सुथनी नामक कंद। दरबर : दल बल।

सवैया

देखि दसा दसमथ्थ समथ्थन, मथ्थ धुनैं मनहीं बिलखाने।
बानर बीर बड़ो बलवंड, बड़े बलवंडन के बल भाने॥
ठोकि उठ्यो करि कोप भुजा हठि, ठेलि सबै मदही गरबाने।
धाइ गहे जब पाँइ दसानन, अंगद चाहि तबै मुसक्याने॥४३॥

अंगद राम प्रताप हृदै गुनि, फूलि महा बल अंग कस्यो है।
रावण रोसनि सों पकर्‍यो पग टारत ही मन सोचि त्रस्यो है॥
हारि थक्यो करि के पुरुषारथ, बालि कुमार बिलोकि हस्यो है।
मानहु ऊरध ते अध कों, इक हू करि कोटि सुमेर धस्यो है॥४४॥

दोहा

अंगद—

राम कटक के कीट को, चरन न सक्यो चलाइ।
तिहुं पुर तें तिनु करि गनो, गाल बजाइ बजाइ॥४५॥

चंद्रमनि छंद

साजि रावण उठ्यो, कोप करि के रुठ्यो। कठिन हठ सों हठ्यो ठोंकि भुज दंड है।
प्रबल बल सों गह्यो, मसकि पग कपि रह्यो। हहरि हिय में लह्यो, परचंड है॥
कोटि पौरुष करं, चरन नेक न टरे। टूरि भूषन परें, सोचि चित दंड है।
भनत गोपाल सिय राम परताप तें। दाप दनु को दल्यो, बालि बलवंड है॥४६॥

सोरठा

झटकि मुकुट इकसीस, जाइ तुलान्यो गगन मग।
देख्यो जात कपीस, धायो कोपि प्रसस्त तब॥४७॥

मदन छंद

जात देख्यो गगन मग, लै मुकुट अंगद बीर।
धाइ रोक्यो, जाइ आगे, रन प्रसस्त सधीर॥
भिरे भाँति अनेग दोऊ, करहिं युद्ध अपार।
परसपर बजरंग मुष्टिक, करहिं कोप प्रहार॥४८॥

---

४३. समथ्थन : समर्थ। मथ्थ : माथा। भाने : खंडित किया। गरबाने : गर्वित हुए।
४४. कस्यो : कस लिया।
४५. कटक : सेना। कीट : कीड़ा। तिनु : तिनका।

महा भुज बल दंड मंडित, गगन मंडल जुद्ध।
हने मुष्टिक एक अंगद, सीस करि तिहि क्रुद्ध॥
गयौ फाटि पहार सौ सिर, पर्‍यौ लंका द्वार।
मारि बीर प्रसस्त हरषत, चले बालि कुमार॥४९॥

सोरठा

जाइ चरन रघुनंद, अंगद परसे हरषि के।
मनहु मधुप मकरंद, पीवतु नेक अघात नहि॥५०॥

सवैया

रावन के सिर को लखि भूषण, राम कछू मन ही मुसक्याने।
लक्षण के फरके भुज दंड, हनू रन रंग समै पहिचाने॥
लै मुकुटै सुभ सोभ विभीषण, लंक किधौं अभिषेकहि जवाने॥
अंगद कारन कौन कहौ, दसकंध कहा रस रोष बखाने॥५१॥

दोहा

अंगद—

अंतरजामी नाथ सौं, कहौं कहा बल आप।
जब सुमिरौं तब साथ हो, रक्षक राम प्रताप॥५२॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां अंगद-रावन संवाद-वर्णनोनाम पंचत्रिसोध्याय: ॥३५॥

का-युद्ध

२६

छप्पै

सासन भरि सब सीख देत, हित एक न मान्यौ।
ज्यौं पस्राग पय पान करत, सब गरल बखान्यौ ॥
तबहि कोपि, पद रोपि, राम परतिग्यहि धार्‌यौ।
सकल दनुज दल सहित, लंकापति पाय न टार्‌यौ ॥
=अब करहु जौन करि आवई, इहि पर नहि कहने रहिय।
=तब निरखि हनू अंगद मुखहि, राम विभीषन सों कहिय ॥१॥

रुचिरा छंद

श्री राम—

सुग्रीव हनू जाम अंगद सों, राघव बन प्रबोधि कहे।
बूझहु अबहि विभीषन सों, सब कारण कछु कहि बेन रहे ॥
करिबे जौन बेगि किन कीजे, जहाँ जौन तहँ तौन अबै।
करि राजस साजस सब लंका, तजि संका जिय असुर सबै ॥२॥

दोहा

सुग्रीव—

कहौ विभीषन मंत्र अब जो कछु करने होइ।
लंका सज्जन काहि को, सैना साजहु सोइ ॥३॥

छप्पै

विभीषण—

कहे विभीषण अबहि, सैन साजस करि लीजै।
जहाँ जौन बलवान, तहाँ तिहि सौं रन कीजै ॥

चारि द्वार लंकाहि, चारि अवरोध न धारो।
चारि भाग निज चमु, चारि बलवीर विचारो॥
=अति सावधान सब ठौर पर, दनु दल बल कपि खंडिहै।
=माया असेष काया बली, प्रबल महा रन मंडिहै॥४॥

त्रोटक

सुनि राम विभीषण बैन तबै।
दल चारिहुं द्वारहिं साज तबै॥
कपि जूथ जितै कित आइ गये।
लहि सासन जुद्धहि मोद भये॥५॥

रुचिरा छंद

पूरब मालिवंत बलवंतहि, जामवंत दल जोर करे।
दक्षिन महा महोदर ऊपर, अंगद सैन सरोस भरे॥
पश्चिम मेघनाद पर जालिम, हनुमान कै सैन छजे।
उत्तर राम लषन रावण पर, ज्यौं गज पर मृगराज गजें॥६॥

चामर छंद

चारि भाग सैन कै, सु चारि द्वार कौ चढ़े।
कोपि कोपि वीर धीर रोस सौ बढ़े॥
भूरि भू अकास लंक, घेरि घेरि सौ गजै।
द्वार द्वार दीह दीह, भाँति दुदुभी बजै॥७॥

घनाक्षर

केसरी कुमुद कुंत कुंतल कपिल भद्र। वीर बलभद्र भद्रसेखर सु जानिये।
प्रबल प्रबाहु, बल बाहु, वायु बाहु। महाघोष, घनघोष, चंद्रमनि उनमानिये॥
सील औ सुसील सैन सुमति सुखेन नील। नल औ गवाक्ष गंध मर्दन प्रमानिये।
सुग्रिव समीप हनू अंगद सुमंत धीर। सेनापति कोटि कोटि बानर बखानिये॥८॥

चामर छंद

कोटि कोटि जूथ-नाथ, जुद्ध को जहाँ जुरे।
पीत नील स्याम सेत, धूम रंग घुंघरे॥
दीह देह, दीह दंत, घोर घोष सों घुरे।
लै फलाँग अंतरिक्ष, कै निसान लंगुरे॥९॥

हैं महा महा बली, सरोस सों गजें।
देखि देखि वीर सेन, देव दुंदुभी बजें॥
वायु बेगवान यों छुटें अकाश ज्यों छटा।
रंग रंग बानरें, कि सारदी लसें घटा॥१०॥

छप्पै

दस जोजन विस्तार, कोट लंका चहुँ फेरा।
प्रबल सैन चहुँ ओर कीस लीन्हें करि घेरा॥
उठति धूलि हाहूत होत, हलकंप अदंकनि।
मात न कहुँ अदोल, दुर्ग-थरसल्लित सकनि॥
=थल उथल पथल थल थल महल, छीलर झल जनु जेठ जल।
=दनु निकरि निकरि रन रंग कहे, सज्जहि थल गज्जहि सकल॥११॥

दोहा

चढ़ी महल मंदोदरी, देखि धरत नहि धीर।
लंक कटक त्रिन विपिन सम, हैं पावक रघुवीर॥१२॥

---

९ फलाँग : कूद छलांग।

११. कीस : बंदर। अंदोल : थोर। निकरि निकरि : निकल-निकलकर। झख : मछली। छीलर : गड्ढा।

छप्पै

पश्चिम दिसि सक्रारि, तहाँ हनुमान धंसाये।
तरु गिरि पाहन कीस, मारि दनु बुंद खसाये।।
सेल सूल असरार बान, दानव पटतारे।
मर्कट बिकट सुभट्ट, गिरे बहु बीर मुहारे।।
—खलभलित हनू दल लसल हुव, मचिव जुद्ध हाहूत तहँ।
—करि कोप पवन सुत उठत हीं, कहि सारथि घननाद कहँ।।१३।।

झूलना छंद

सारथी—

काल के काल सौं, लाल मुख ज्वाल सौं। रूप बिकराल सौं, कोपि धायो।
एक कर श्रृंग उत्तंग, तरु एक कर। पुछ आकास लौं, लै लमायो।।
दंत कट कटत, रट रटत रघुबीर गुन। चहत संग्राम जय पत्र पायो।
चेत घननाद करि, हेत कहि देत हौं। हाँकि हुंकार, हनुमान आयो।।१४।।

सवैया

मेघनाद—

मोहि कहाँ भय देतु है कायर, सायर मैं कपि सैन सिराऊँ।
बाँधि के छोड़ि दियो मृत जानि, सु तौ अब अंगनि अंग चिराऊँ।।
बेधि के बाननि, पान सो बौंड़र बायु के मंडल माँह फिराऊँ।
सौंहि करौं जु दसानन को, हनुमानहि जौ नहि मारि गिराऊँ।।१५।।

यौं कहि के गहि के धनु बान, खच्यो बिरच्यो बल सौं भरि मार्‌यो।
झेलत हीं कपि सैलहि मैं सर सोघि सिलाहि समेत बिदार्‌यो।।
चारिक चारि दियो भुज ही भुज, पाँचक हूँ हिय माँह प्रहार्‌यो।।
घूमि के भूमि गिर्‌यो हनुमान, हस्यो फिरि के घननाद हंकार्‌यो।।१६।।

---

१३. सक्रारि : मेघनाद। असरार : निरंतर। पटतारे : मारकर समतल कर दिया।
१४. लमायो : लम्बायमान किया।
१५. सायर : सागर, समग्र। सिराऊँ : समाप्त कर दूँ। बौंडर : बवंडर।

द्रुमिला

झपट्यो उठि के बलवीर हनू, अरु सैन समूह तहाँ अटक्यौ।
हनि दांतनि लातनि मारि घने, गहि दैत्य दिसा विदिसा फटक्यौ॥
हलकारि तबै मघवाजित को, रथ खैंचि घुमाइ धरा पटक्यौ।
कसिकै मुठिकाहि प्रहारत हीं, तजि सांस अलोपित ह्वै सटक्यौ॥१७॥

त्रोटक

भट एकन एक उठाइ परे।
दनु वीर बलीमुख खेत लरे॥
नख दंतन दैंत विदारत हैं।
गहि के गज सों गज मारत हैं॥१८॥

सब के तन श्रोन प्रवाह बहै।
जनु कानन पावक ज्वाल दहै॥
रन भूमि भयंकर भाँति बने।
फरकै कर घायन घूमि घने॥१९॥

दोहा

भगे सबै महराइ दनु, गहे कोट के द्वार।
जात भयो रन छोड़ि के, मेघनाद तिहि बार॥२०॥

उड़ियाना

पूरब दिसि रीछन को, सैन सकल धायो।
मालिवंत ऊपर सजि, जामवंत आयो॥
दै दै सब कीक, दनुज बान विषम मारे।
भूधर-सम भ्रू पर, गहि भल्लुक कर पारे॥२१॥

---

१७. मघवाजित : इन्द्र। सटक्यौ : भग गया।
१८. बलीमुख : बलिमुख, बंदर। दैंत : दैत्य।
१९. फर : युद्ध।

जागे सब रीछ, तबहि बाइ बदन दीन्हें।
धाइ धरत जौन, तौन देत दनुज चीन्हें।।
मरि मारि फारि फारि, खेंचि डारि अंतें।
लेत प्रान जातुधान, चाबि चगल दंतें।।२२।।

दोहा

रीछन के रन जोर तें, मच्यौ घोर घमसान।
घायन परे अचेत दनु, गए भूलि अवसान।२३।।

प्लवंगम

मालिवंत बलवंत महा रन मंडियो।
कोपनि बान अचूक, असेषनि छंडियो।।
घूमि गिरे रन रीछ, भयंकर भूरि हैं।
जाम उठे रन रंगहि को, रिस भूरि हैं।।२४।।

झूलना छंद

राम के काम को जाम आपे उठे। मारि मैगलन के, झुण्ड झारे।
बाइ विकराल मुख धाई दनु जूथ पर। पकरि पग केतको, महि पछारे।।
रक्षनि के रथन पर, रथ्थ पटके घने। घोर चहुँ ओर भव, सोर मारे।।
भागि भय थरहरें, श्रोन झर झर झरें। लेत फर फर फरें, दैत्य फारे।।२५।।

चामर छंद

जामवंत मालिवंत को, अचेत है कियो।
अंग अंग को विदारि, गर्व गारि के हियो।।
भागियो अचेत ह्वै, विलोकि के भयंकरे।
संकि रंक सौ चल्यौ, करै जु कौन संगरे।।२६।।

दोहा

जामवंत बलवंत सों, जुरै कौन रन खेत।
महा भयानक भेष लखि, भागे दनुज अचेत।।२७।।

---

२२. बाइ बदन : मुँह खोल दिया। चीन्हें : चिन्ह। अंतें : आँत, अन्यत्र।
२४. भूरि : बहुत। जाम : जामवंत।
२५. मैगलन : मतवाला हाथी।

रुचिरा छंद

दछिन प्रबल महोदर ऊपर, अंगद सैन समूह चढ़े।
बीर महा समरत्थ रथ्थ पति, जोरावर बहु दैत्य कढ़े॥
मच्यो अरर चहुँ ओर जोर सों, जुरा जुरी सों जोर परे।
जोधा सकल सिमिटि बहु बानन, सैन बनौकन चोट करे॥२८॥

छप्पै

दै किलकारी कोपि उठे, बानर चहुँ ओरे।
तरु गिरि पाहन वृष्टि, जलद जनु झमकि झकोरे।
गिरे दनुज गज जूह, भिरे दुहुँ ओर महाबल।
पर भूमि भभकंत श्रोन, सद मद्द समर थल॥
=अवलोकि महोदर अंगदहि, अंग अंग कोपनि जरेउ।
=जलधर समान बलगजिज के, बान वृष्टि ऊपर करेउ॥२९॥

दोहा

देखि महा बल दानवहि, अंगद परे उठाइ।
झपटि करे खयकार हैं, पटके घने भँवाइ॥३०॥

घनाक्षर

अंगद उठाइ परे दानव के सैन पर। पकरि पकरि केते पुहुमी पछारे हैं।
केते मीड़ि पायन सों, कीन्हे धूरि धानी वर। केते गज बाजि रथ्थ रथ्थनसों मारे हैं।
हाँकि के महोदर को कीन्हों है विरथ्थ मारि। नखन बिरारि उर घाय करि डारे हैं।
भाग्यो अब मरयो उठि, छांड़न चिहारकरि। सोरह सहस्रबीरदानवसँघारे हैं॥३१॥

दोहा

दानव दलि तिहुं ओर तें, बिचलि गहे गढ़ जोर।
ढिकिल्यो दल कपि रीछ को, फैलि उठ्यो चहुं ओर॥३२॥

सवैया

घेरि लये कपि पुंज चहूँ दिसि, देखि दसा दनु हैं भहराने।
पीत हरे सित नील भयावन, फैलि कहूँ न रहें ठहराने॥
कोटिन भल्लुक भीर ठिले, लखि लंक समाज हिये हहराने।
भूधर से सब सैन गर्जे, जनु पावस घोर घटा घहराने॥३३॥

---

२८. जोरावर : शक्तिशाली। बनौकन : बनौकस, बनोक बंदर।

वसंत तिलक छंद

श्री रामचंद्र जुत लक्ष्मन, कोपि भारे।
सेना समूह सजि उत्तर, पाइ धारे॥
दे दं सु कीक बलवंत, अनेक धाये।
लंकेस रोस भट भीरन, हैं धँसाये॥३४॥

भुजंगप्रयात

जबै लंक चौहूँ दिसा जुद्ध माच्यो।
दसग्रीव को सासने पाइ साच्यो॥
भरे रोस जोधा, सजे सस्त्र बानै।
कसै कोप तें, संगरै अंगत्रानै॥३५॥

रथैं दिव्य नाना, खचे अस्व जौनै।
मनौ जीति लेते, कहा बेगि पौनै॥
गजैं मत्त दंती, बलैं जोम बाढ़े।
भिरैं बारुणी सैल तें, तुंग ठाढ़े॥३६॥

घने घुंघुरू घंटिका नाद बाजै।
निसीथै मनौ पावसै मेघ गाजै॥
कसे भाँति केते, लसैं हैं अमारी।
चढ़े भीर भारी, घने कामचारी॥३७॥

नाराच

जहाँ तहाँ महारथी, महा सरोस सौं गजैं।
सदीह दुंदुभीन स्यौं, समस्त बाजनै बजैं॥
कढ़्यो सु लंकधीस, साजि गाजि द्वार उत्तरैं।
अनेग घोर सोर भौ, दुहूं, सु ओर संगरैं॥३८॥

---

३५. अंगत्रानैं : कवच।
३६. बारुणी : मद।
३७. अमारी : हौदा।
३८. स्यौं : सहित।

मोक्तिकदाम छंद

जुरे नर बानर दानव बीर।
भिरे इक एकन सों भट भीर॥
हनैं बहुलातन वज्र समान।
परैं खसि खेत, तजैं अवसान॥३९॥

गहैं सिर केसनि डारि कढ़ोरि।
घने झुमटैं तजि ताज मरोरि॥
करैं नख दंतन घाइ अनंत।
चढ़े बहु कंधनि कूदि तुरंत॥४०॥

छप्पै

जुरिय जुद्ध तिर सुद्ध, जलधि तट सुभट सुभट वट।
इत रघुबीर सधीर, उतहि लंकेश क्रोध भर॥
कपि दल प्रबल प्रचंड, चंड दनु दीह भयंकर।
भिरत कूह करि हूह, बदत इक इक्कन संगर॥
—मंडहि उमंड बलचंड बल, नहिं छंडहि किहुं किहुंन तन।
—तज्जहि थिरान भज्जहि भयनि, गलगज्जहि संघट्ट रन॥४१॥

त्रोटक

उमड़े कपि दानव हैं रन कौं।
गहि के अपने अपने पन कौं॥
दनु अस्त्र अनेग प्रहार करैं।
कपि कूदि अचानक जाइ धरैं॥४२॥

झुमटैं इक कौं दस बीस भलैं।
नख वज्रनि अंग विदारि चलैं॥
इक पीवत श्रोनित क्रोध भरे।
घिन मानि पमुक्कत जानि खरे॥४३॥

---

४०. डारि : डाल देना। कढ़ोरि : घसीटा। घाइ : घाव।
४१. संगर : युद्ध। थिरान : धैर्य।
४३. झुमटैं : झपटैं। घिन : घृणा। पमुक्कत : प्रमुक्कत, मुक्त करना।

इक माल किये गर अंतन के।
लपटे तिहि सों नहि भागि सकै॥
इहि भाँतिन जुद्ध बिलोकि मकै।
दस कंठ उठ्यौ करि रोस तबै॥४४॥

दोहा

बंदि चरन श्री कंठ को, उठ्यौ लंकपति आप।
जानत नेक न मंद-मति, अवगति राम प्रताप॥४५॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल
विरचितायां लंका युद्ध वर्णनोनाम षटत्रिंसोध्याय:॥३६॥

---

४४. अंतन : अंतड़ी।

लंका-युद्ध-वर्णन

३७

झूलना छंद

देखि घमसान बलवान रावण उठ्यौ। बान बहु विषम चहुं ओर मारें।
बीस भुज दंड कोदंड दस चंड सर। प्रबल बलवंड बल खंडि डारें॥
सैन थहरात भहरात कपि रीछगन। सस्त्र संपात आघात पारें।
करत संघार, जिहि बार नाहिन लगं। सार के झार सब सीस झारें॥१॥

सैन सटपटित, भट पटित भीर बहू। झपटि अंगद हनू हाँकि दीन्हें।
नील नल जाम, घन घोष कपि केसरी। सैल पाषान तरु वृष्टि कीन्हें॥
बंक निरसंक, रन लंकपति गाजि कैं। रंग सम सबन के जोर चीन्हें।
मारि दस पांच सर, सबन विह्वल कियो। घूमि जित कित परे, घाइ कीन्हें॥२॥

कितिक आकास मग जात, बाननि विधे। कितिक दधि पार, दिसि विदिस लागे।
कितिक जल माँह थल माहै कितको परे। कितिक भयभीत तें प्रान त्यागे॥
देखि दनुनाथ कौ युद्ध रघुनाथ। दोउ बान दनु हाथ लै रोस जागे।
कहत गोपाल श्री राम अभिराम छवि। जंग रन रंग हित रंग पागे॥३॥

दोहा

दानव दल ढिकिल्यौ सबै, देखि कपिन की चाल।
लच्छन सर रन खेत मैं, करी जु हाल विहाल॥४॥

---

१. घमासान : युद्ध। संपात : अस्त्र-शस्त्रों का प्रहार। सार : लोहा।
२. सटपटित : चकपकाहट। चटपटित : शीघ्र।
३. दधि : समुद्र।

घनाक्षर

लच्छ लछ्छस रच्छस कौ बेधत अपच्छ सम । छूटत सपच्छ सर लछ्छन के कर तें ।
भारी बर देवन के, गरब अदेवन के । फूटि फूटि कढ़त करेजे जोर भर तें ॥
सारथी समेत रथी, रथ सत टूक होत । लूक सौ लगत छोड़े प्रान अपडरतें ।
मुंडन कटत, (दनु)डुंड सौ गिरत । घूमि तुंडन कढ़त जहीं बानी हर हर तें ॥५॥

छप्पै

कोपि कोपि सौमित्र, अत्र जेते पटतारे ।
माया जुद्ध समेत प्रबल, दानब संघारे ॥
लंकेसहि अवलोकि, विसिष सर सहसनि मारत ।
मनहुँ सिलोचर सिखर वारि-धारानि विहारत ॥
=दस कंध अंध हँसि हँसि कहत, इनहि भुजाबल पैज लिय ।
=पसु सैन समाजहि साजिकर, समर करन की होस किय ॥६॥

दोहा

झर्‌यो न एको रोम तन, झर्‌यो सकल तुन्नीर ।
इत भुज-दंडन के बलें, सिय लैहें रघुबीर ॥७॥

छप्पै

सुनत कोपि रघुनाथ, हाथ धनु सायक लीन्हें ।
सुधा दृष्टि की वृष्टि, सैन निजु ऊपर दीन्हें ॥
उठे वीर गल गाजि, हाँक दै दै हलकारे ।
मारु मारु चहुँ ओर, शब्द आघात उचारे ॥
दुहुँ ओर जोर घमसान रन, चलत बान असरार अति ।
श्री राम संग संग्राम कौं, भिरेउ प्रबल लंकाधिपति । ८॥

---

५. रच्छस : राक्षस । अपडर : भय, शंका । लूक : जलती हुई लकड़ी, आग की लपट ।

६. अत्र : अस्त्र । विसिख : बाण । सिलोचर : सिलोच्य—एक पर्वत जो गंगा तट पर विश्वामित्र के सिद्धाश्रम से मिथिला जाते समय राम को मिला था ।

घनाक्षर

ऐसी तो लराई, राम रावण सों बनि आई। बरनि न जाई, जाके करत बखानकौं।
भारे भारे सुभट, निनारे फारि फारि डारे। परखे न जात, जातधान जातधान कौं॥
लोहू के दरेरनि तें, पूरि आई भूमि सब। सागर तें आगर तरंग के विधान कौं।
काली बची बूड़त, बिहाली भगी जोगिनीहूं। ईस अवसानभूले, संकटमसान कौं॥९॥

सवैया

रावन के सरलाघव तें, रन दानव दीह समूह सिराने।
खेत चल्यौ चहुं ओरन तें लखि चाल परें, कहि को ठहराने॥
रावन घावन तें परिपूरन सीस किरीट दसो दिसि ताने।
भागि चल्यौ महराइ तबै, तजि छत्र छपाकर छोड़ि पराने॥१०॥

घनाक्षर

रावन की सेन में भयावन सरित बेलि। श्रोनित की आवन उलेल भारी भार मैं।
कुंजर कदंब कटे कोटिन तुरंग रथी। सारथी समेत रन भूमि के अगार मैं॥
भनत गोपाल रघुबीर के प्रताप बल। मारे कपि रीछन के भागे वेसम्हार मैं।
केते पैर वार परि पार भयो पोरुष तें। केते मरे वार, केते बूड़े बीच धार मैं॥११॥

भुजंग प्रयात

भयो जुद्ध यों घोर सघट्ट भारी।
विलोके बिवानें चढ़े देव नारी॥
चहूं ओर तें श्रोन सौं भूमि छाई।
मनो लंक मैं भारती पूर आई॥१२॥
परे दीह दंती, घने सैल कैसे।
बहे जात जू हैं तुरे मंगरें से॥
चलें मच्छ से रच्छ सें पच्छ-हीने।
जहाजें जहाँ कोटिकौ रथ्थ कीने॥१३॥

---

९. मसान : श्मशान, मरघट।
१०. सिराने : समाप्त हो गए। छपाकर : चन्द्रमा।
११. उलेल : बाढ़। कदंब : समूह। अगार : आगर, घर। वार : इस पार।
१२. भारती : सरस्वती नदी जिसका रंग लाल है।
१३. तुरें : तुरंग। मगरें : मगर। मच्छ : मछली।

बने कच्छ पै सै कट चक्र जातें।
धजा ग्राहकें नक्र से फैलि रातें॥
महा दीह दानौ बहे बृच्छ से हैं।
चलें दुंदुभी कै कुलीरौ लसे हैं॥१४॥

भुजंगो बहै सेल कर्नाल केते।
उठै पूर तुंगै तरंगै समेते॥
मची मेद की कीच है मेदिनी सौं।
मिलि है नदी यों नदीनाथ ही सौं॥१५॥

दोहा

छुधित जानि बहु जीव जल, जंतु समूह बहाइ।
सरिता-पति के अनुचरन, जनु दीन्हीं भख जाइ॥१६॥

सबै सिमिटि गढ़ कौ गहे, जे बाँचे दनु बीर।
रावन अंतहपुर गयो, सोकित कोप सरीर॥१७॥

सवैया

राक्षस उवाच—

बोरि दयो वर देवन कौ, नर बानर रीछन कौ बल पूरौ।
जीति लियो तिहि लोकन कौ, जय मारि किये तिनको घर घूरौ॥
हूलि मची घर ही घर लंक, उठ्यो सब कै उर सोक मरूरौ।
हा करि-कै दनुजी बिलखैं, कर फोरि चुरी चिथुराइ कै जूरौ॥१८॥

दोहा

मंदोदरी—

सरबस मूरख परिहरैं, ज्ञानी परिहरि आध।
अजहूँ सिय लै पिय मिलौ, पूरौ जिय की साध॥१९॥

---

१४. चक्र : रथ का पहिया। धजा-ग्राहक : ध्वज-दंड। नक्र : घड़ियाल। कुलीरौ : केकड़ा।

१५. सेल : बर्छी। कर्नाल : तोप। पर : प्रवाह, धारा। मेद : मज्जा। नदी नाथ समुद्र।

१७. बाँचे : बचे।

१८. मरूरौ : मरोड़।

छप्पै

सकल लंक बरि गयेउ, बीर कोटिन रन कट्टेउ।
बंधु बिगरि घर भेद, भेद उन औरहि ठट्टेउ।
चरन बली इक दूत पठइ, सब गरब विहंडेउ।
आपु समुख कपि रीछ, प्रबल दल बल सब खंडेउ॥
—यह जसिक कोप पिय छमहु अब, बाँचे तिनहि बचाइअै।
—रघुबर प्रताप गोपाल भजि, सिय लै सरन समाइअै॥२०॥

घनाक्षर

मेघनाद—

जीवन मरनहू कौ सोचै रन माँह कौन। छत्रिय धरम धरि गाजै परचण्ड मैं।
कबहू विचलि वीर मारि विचलावै घने। तब हूँ तजै न कोप भए खंड खंड मैं॥
देखो अब रामहि सबंधु जुत बाँधि करि। कपिन संघारि करो रीछन विहंड मैं।
बेटा इंद्र जीत जाइ, तब लौं बिसारौ सोच। जौलौकुसलातबलमेरेभुजदंडमैं॥२१॥

दोहा

निज मातहि बहु बोधि कै, पितु बंदन करि हेत।
हर निसीथ सुमिरत चल्यौ, मेघनाद रन खेत॥२२॥

संजुता छंद

इत जीति कै रन खेत है।
रघुबीर बंधु समेत है॥
कपि रीछ सैन समूह की।
जय शब्द होत फतूह की॥२३॥

सब जुद्ध कै श्रम तैं थके।
नहि श्रोन की सरिता नके॥
निसि अंधकार भई महा।
तम-पुंज चहुँ दिसि छै रहा॥२४॥

---

२०. जसिक : ?
२३. फतूह : फतह का बहुवचन, विजय।
२४. नके : नाँघा, पार किया।

कोइ काहु को न पछानही।
मुख बोल तें नहि जानही॥
भट भीर बीरन हेरि कें।
रहें राम लच्छन घेरि कें॥२५॥
दोउ भूप दोऊन ओर हें।
चहुं कंत सेना जोर हें॥
नल नील अंगद जाम हैं।
हनुमंत स्वामित काम हें॥२६॥
कपि आइ एक सिल लिये।
रघुनाथ आसन को किये॥
रन खेत श्रोनित सों भरे।
सब सेंन लोथिन पें परे॥२७॥

दोहा

बिधि भावी गुन नाम दिय, रचिके मृतिका नीर।
करत मेदमय मेदनी, सही करी रघुबीर॥२८॥

सवैया

बोलत बीर मसान चहूं दिसि, देत पिचासन के गन ताली।
घूमत घायल घायन हूं, कहुं खेंचत लोथिन जंबुक जाली॥
हांकत भैरव भूत भयंकर, भूमि निसा अति ही बिकराली।
श्रोनित की घहरात नदी, रन गावति जोगिनि, नाचति काली॥२९॥

दोहा

प्रबल सेन संघारि करि, दलि डारे दनु दाप।
सुर हरषत गोपाल भनि, जै जै राम प्रताप॥३०॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल
विरचितायां लंका-युद्ध-वर्णनोनाम सप्तत्रिंसोध्याय: ॥३७॥

पाठान्तर-२७—परे : पुरे (१, २)

---

२८. बिधि : ब्रह्मा। मृतिका : मिट्टी। सही करी : चरितार्थ किया।
२९. बीर : भूत-प्रेत।

राम-नाग-फाँस-विमोचन

३८

दोहा

इहि अंतर इंद्रारि जब, अति कोपनि भहरात।
आयो समर निसीथ मैं, करन लग्यो उत्पात ॥१॥

मदन छंद

सकल सैन कपीस भल्लुक, समर तें श्रम पाइ।
नींद बस सब ह्वै रहे, रन जीति कै हरषाइ॥
अंधरकार निसीथनी तकि, सहित लच्छन राम।
मेघनाद अकेलोइ तब, हाँकियो संग्राम ॥२॥

झूलना छंद

गाजि बलवंड परचंड इन्द्रारि तब। आइ रन भूमि हलकंप मार्‌यो।
मारि सर तिच्छ हय रिच्छ कीसन करैं। जात नहिं काहु सौं बरि धार्‌यो॥
सोर चहुं ओर अति जोर दल में भयो। घोर निसि घोर ह्वै त्रास डार्‌यो।
घोस कै कोप तैं लोप कीबे चहै। गोप कहुं प्रगट ह्वै लेत मार्‌यो ॥३॥

सवैया

मारि विहाल कियो सिगरो दल, दाबि चहुं दिसि हूलि मचायो।
एकक बानन ते दस बीसक, कीस निसाचर भूमि पचायो॥
भल्लुक भीर भगे जितहीं, तित ही तिहिं सोनित कीच रचायो।
हैं कित लक्षन राम विजक्षन, ये पसु सैनन क्यों न बचायो ॥४॥

---

१. इंद्रारि : मेघनाद।
२. अकेलोई : अकेले ही।
३. गोप : गुप्त।
४. एकक : एक-एक। बीसक : बीस और एक। कीस : कीश, वानर।
सोनित : श्रोणित, रक्त।

छप्पै

कबहुँ प्रबल विकराल, ज्वाल मालनि तें जारे।
कबहुँ सैल साखीन सिला, ऊपर पटतारै॥
कबहुं घेरि घनघोर वारि—धारा बरखावें।
कबहुं महा उतपात वात आघात चलावें॥
=माया अशेष कायावली, कठिन पौरुष करै।
=हलकारि वीर रन खेत मैं, मेघनाद अैसो लरै॥५॥

दोहा

अंगदादि कपि रीछ सब, उठे बीर कर जोरि।
कहैं कोप करि नाम जू, जानन पावैं चोर॥६॥

झूलना छंद

पाइ अनुसासनै, सत्रु के नासनै। कूदि अकास लगि, पैंज धारी॥
घेरि विदिसा दिसा, तमकि निसा। लहत नहिं कंस हूं कामचारी॥
कबहुँ दनु कपिन के, लोम से लपटि करि। पकरि तिहि पाइ तहँ पटकि डारे।
काहु को लात हनि, घात मुष्टिक किहूं। कोप करि काहु को बान मारे॥७॥

घूमि अंगद परे, जाम सायर तिरे। नील नल को न कोइ सोध पावै।
पूछ हनुमान करि पास डारे तबै। काटि थाक्यो तिन्हें नहिं कटावै॥
मारि सरसात तिन, गात विह्वल कियो। बान द्वै द्वै दियो, भूप दोऊ।
कौन तिरसुद्ध हूं, जुद्ध अब तो करै। घाय विनु एक नहिं, बीर कोऊ॥८॥

दोहा

लक्षन कहि श्री राम सों, विनै जोरि दोउ हाथ।
अग्नि बान इहि मारि के, भस्म करत हौं नाथ॥९॥

पाठान्तर-८—पास डारे : फाँस डारे (१,२)

---

५. साखीन : शाखी, वृक्ष।
७. पैंज : प्रतिज्ञा।
८. सायर : सागर। पास : पाश, फाँस। भूप दोऊ : राम और लक्ष्मण।

दुमिला

श्री राम—

सुनि दीन दयाल दिये अनुसासन, लाल सुनो यह क्योन करें।
दनु एक विरुद्ध कियो हम सों, तिहि दोष चराचर जीव जरें॥
अपराध बिना सब क्यों दहिअं, जग पात्रक की कहि कोन डरें।
तिहि ते कछु और प्रयोग करो, जिहि ते खल को बल भारि हरें॥१०॥

छप्पं

तबहि कोपि लच्छन, सम्हारि तिच्छन सर लीन्हेउ।
दृष्टि अदृष्टि प्रयोग, सब्द-बेधहि गुन कीन्हेउ॥
चलत करज तजि तेज, सकल दिसि विदिसनि धावत।
लहत न दनु तन तनक, आइ तुनीर समावत॥
=मन करत वीर विस्मय निपट पुष्ट जानि न परत।
=गोपाल राम पद वंदि के, फिरि फिरि धनु सायक धरत॥११॥

दोहा

हाँकत इंद्रीजीत कों, इन्द्रजीत रन खेत।
तुमहि जुद्ध के जोग गुनि विधि रचियो मो हेत॥१२॥

उड़ियाना

सब्द बेध बान सुनत, लछन तब मारे।
ह्वे अलोप मेघनाद, निष्फल करि डारे॥
बोलत कछु जानत नहि, विद्या धनु के रे।
काके बल बलकि वीर, लंका गढ़ घेरे॥१३॥

जातें तजि नारि टारि दीन्हें दोउ भाई।
सो तो सब जानि परी, चित की चतुराई॥
काके मत मानि, इहां लाज ते अरुझे।
नाम इंद्रजीत, कहूं नाहिन तुम बूझे॥१४॥

---

११. करज : अँगुली।
१३. सब्द बेध बान : केवल शब्द से दिशा का ज्ञान करके उस पर निशाना लगाना।
१४. टार दीन्हे : टल गए।

यह कहि त्रिपुरारि सुमिरि, अस्तुति चित दीन्हों।
उरग मंत्र करि प्रयोग, सत्वर जप कीन्हों।।
आसीविष संजुत तब, सायक दनु मेल्यो।
राम सहित लक्षनहिय, नाग फाँसि मेल्यो।।१५।।

बंधन प्रभु परत, सकल देवता वितूले।
नर सरूप आपुहि गहि, आपुन यों भूले।
नाभि कमल नाल विधिहि जे, सु जुगन धाँवे।
हा हा गति तिन्हहि लखहु, नागि फाँसि बाँधे।।१६।।

दोहा

इंद्रजीत रन जीति के, आयो जब निजु धाम।
बजे नगारे गह गहे, राम जीत कहि नाम।।१७।।

भुजंगप्रयात

सुन्यो राम जीतें, दसग्रीव धायो।
महा मेघ सो पुत्र ले कंठ लायो।।
मुखें चूमि, चूम्यो दुओ बाहु—दंडे।
भरोसे इन्हे हों सु जीत्यो अखंडे।।१८।।

हँसी हेरि मंदोदरी, नेह नारी।
घनी भाँति तें, आरती लै उतारी।।
करें वारन कोटिको लंकवासी।
कहें धन्य ए सर्व संकष्टनासी।।१९।।

दोहा

मेघनाद—

बंधु दवो बंधन परे, भूप थके दोउ बैन।
मन भावें सो कीजिए, हति आवो सब सेन।।२०।।

---

१५. उरग मंत्र : साँप का मंत्र। आसीविष : वह जिसके दाँतों में विष हो, साँप।
१६. धाँवे : बंद किया। वितूले : घबरा गए, चकित हो गए।
१९. वारनें : निछावर करना। हति : मारा।

सवैया

रावण—

कोपि उठैया सुनि लंकपती, इहि औसर को अब और विचारैं।
व्याधि बचे, रिन, बेरिय सेष, सु तौ सम्हरैं करें अंत बिकारैं।।
होइ सुखी सु गोपाल कहै, जब ऊगत हीं विष-बेलि उखारैं।
जीवत एक तजौ न तिन्हैं, गहि सब मारि करौ निरधारैं।।२१।।

मदन छंद

कही तब मंदोदरी, चित नाथ बूझहु रीति।
अघकार निसीथ मैं कहि हार काकी जीति।।
कबहु मंत्र विचारि कोई, रहैं गहि के मौन।
पाइ औसर के उठैं, तब करहि करनी कौन।।२२।।

कहत वेद पुराण सुरमुनि, जिनहि हरि अवतार।
कर्म सहसा जानि, तिन सौं कीजिअे न भुवार।
प्रात होतहि होइ मन मैं, करहु सो नृपराज।
परे बंधन बंधु दोऊ, खोलिहैं को आज।।२३।।

दोहा

कहे ग्रन्थ मंदोदरी, हेत महोदर पाइ।
समय निदान विचारि कैं, कहत मंत्र ठहराइ।।२४।।

त्रोटक

इहि हूलि परी दिवि लोकन मैं।
सब बूड़ि गए सुर सोकन मैं।।
दनु नासन को अवतार गहे।
तिन तौ अब बंधन नाग सहे।।२५।।

---

२१. रिन : ऋण। व्याधि : रोग। निरधारैं : निश्चित करना।
२३. भुवार : भूपाल।

सब बंदि विमोचन आस गए।
अब तौ निहचै दनु दास भए॥
यह हूलि सुने मुनि नारद है।
तप तेजन बुद्धि विसारद है॥२६॥

चलि तूरन पूरन ब्रह्म लखे।
अहि बंधन देखि खरे बिलखे॥
मुनि देखत राघव लच्छन हैं।
उमगे जल पंकज—अच्छन हैं॥२७॥

नर वेष गहे, मति भूलि गए।
रचना रचि आपु अजान भए॥
सुर—हेतहि बंधन नाग सहे।
मुनि अस्तुति अंजुलि जोरि कहे॥२८॥

विचित्र पद

जय कौशल नंदिनि-नंदन देव चयं।
जय भूतल भार उतारन कारन तत्त्व मयं॥
पर ब्रह्म परंकुल पूषन भूषन सोभ जुतं।
तिन सुकृत रक्षन दच्छ विजच्छन दिव्य नुतं॥२९॥

मुनि बृंद बिकार निवारन कारन सस्त्र धरं।
मिथिलाधिपति पन पालक घालक चाप हरं॥
जमदग्नि सुतं गति गंजन भंजन गर्व वरं।
हित भूमि सुता मन रंजित संचित प्रीति परं॥३०॥

पाठान्तर-२६—दास भए : मास गए।

---

२६. आस गए : आशा दूर हो गई। तूरन : त्वरापूर्वक, शीघ्र।
२७. अच्छन : आँखों में।
२९. कौशल नंदिनि नंदन : राम। चयं : समूह। पूषन : सूर्य। सुकृत : पुण्य। नुतं : प्रशंसित, स्तुति।
३०. घालक : नष्ट करने वाले : भूमि सुता : सीता। जमदग्नि सुतं : परशुराम :

पितु पूरन सासन पालन चालन रन्य पयं।
निजु भ्रात निरंतर भाव प्रभाव सुभाव गयं॥
बहु दुर्गम निर्गमनं गमनं रमनी सहितं।
दनुजी श्रुति नासिक नासक, त्रासक दैत्य नितं॥३१॥

त्रिसिरा खरदूषण दूषण भूषण भूमिभुजं।
सहधर्मनि धर्म धुरंधर सुंदरता मनुजं॥
वर वर्जिनि अंतरतं भरितं विरहं हृदयं।
दिवि मुक्ति जटाइव दायक, धायक भक्त भयं॥३२॥

उर बालि विदारन, तारन सुग्रिव दीन जनं।
सजि सैन्य बनेचर वृंद, निकंदन वीर रनं॥
सरणागत रक्ष विभीषण, तीषण सोक हरं।
रचि सिंधु सिलातल बंध, प्रबंध कबंध परं॥३३॥

दनु वृंद वलिष्टन नष्ट न, कष्ट न दुष्ट गनं।
प्रति लक्षन लक्ष प्रतक्ष, सुरक्षन संत जनं॥
त्रिगुणातम निर्गुन सगुन संजुत श्री हरितं।
पुरुषादि जुगादि सुरादि, सदा विषया रहितं॥३४॥

जग जीव चराचर सर्वग, सर्वद सर्व गति।
सत कर्म सनातन धर्म, सतो गुण सत्य रति॥
अवतार सिरोमनि राम, महा अभिराम मयं।
भय भंजन, रंजन भक्त, सदा सदयं हृदयं॥३५॥

३१- रन्य : अरण्य। गयं : झुंड।

३२- भूमिभुजं : राजा। वर वर्निन : सुन्दर वर्णवाली। दिवि : स्वर्ग।

३३- बनेचर : वन में चरने वाले भालू और बंदर। कबंध : पानी।

३४- लक्षन : मारा जानेवाला निशाना। सुरक्षन : सुरक्षा। लक्ष : प्रहार। त्रिगुनातम : त्रिगुणात्मक, सत्व, रज और तम गुणों से युक्त। हरितं : प्रसन्न। पुरुषादि : आदि पुरुष। जुगादि : युग पुरुष।

३५- सर्वग : सब में गमन करने वाले। सर्वद : सब कुछ देने वाले। सर्व गति : सब को गति प्रदान करने वाले।

सुर संकट विस्तर सत्वर संहर लोकपते।
करु दुकृत नासन आयु, विलासन सुकृतते ॥
इमि नाथ रिषिस्तुति तुष्टित, त्वं करुना करणं।
नित जाँचत 'माखन' भक्ति, सदा सुखदं चरणं ॥३६॥

छप्पै

पूरन पुरुष अनादि आदि, जानत सब कारन।
धरणी भार संघार करत, धरि धरि अवतारन ॥
कितिक प्रबल दनु दाप, कितिक अहि बंधन भारे।
गरुडध्वज नर रूप धारि, गुन गरुड़ बिसारे ॥
=त्रैलोक सकल खलभल मचिय, पन्नगारि प्रभु सुधि करहु।
=यह फाँसहि नाग विनास कै, आसुहि सुर संकट हरहु ॥३७॥

झूलना छंद

सुनत रघुनाथ, मुनिनाथ-मुख गाथ यह। तनक खगनाथ मुख कहत नामै।
झपट आतुर कर्‌यो, पलक पलक न पर्‌यो। तेज भरते भर्‌यो, स्वामि कामै ॥
पक्ष के घात आघात, मारुत उठ्यो। सकल दितिजात मद जात जामै।
कहत गोपाल प्रभु, मनहि पीछे तज्यो। पाँइ-पंकज भज्यो प्रथम रामै ॥३८॥

सवैया

छूटि चले चहुँ ओर विषध्धर, खेदि सबै खगनायक खाये।
कोपहि तें, प्रभु बैरहि तें, छुधितें श्रम तें, नहि एक बचाये ॥
श्री रघुबीर उठे कहि लक्षन, धन्य धरी विनता सुत जाये।
कीरति तीनहुँ लोक लहै, जिन ब्याल के बंधन काटि छुड़ाये ॥३९॥

---

३६. विस्तर : बड़ा बड़ा। सत्वर : शीघ्र : रिषिस्तुति : ऋषि की स्तुति। तुष्टित : संतुष्ट।
३७. पन्नगारि : गरुड़।
३८. स्वाम : स्वामी। दिति : कश्यप ऋषि की स्त्रियाँ दिति और अदिति। दिति के पुत्र दैत्य और अदिति के पुत्र आदित्य। जामै : जिसमें।
३९. खेदि : दौड़ा कर। विनता : कश्यप ऋषि की पत्नी, गरुड़ की माता। ब्याल : साँप।

नाराच

किये प्रनाम पन्नगारि, पाइ सीस नाइ के।
अनादि दास सर्वदा, कहौं कहा बनाइ के॥
बिसारि मोहि नाथ दीन, हौं सु दीन जानि के।
सुध्यो कियो प्रबंध व्या-व्याज चित्त आनि के॥४०॥
कला अनंत कंत श्री, जुगंत अंत को लह्यौ।
त्रिलोक पूरि है बिभूति, जात कौन पै कह्यौ॥
बिनै यहै खगेस, सर्व सैन को जगाइयो।
सुधा कपीस रिक्ष अंग सींचिकै उठाइयो॥४१॥
बिलोकि राम जू कहे, लहे बड़े सु काम को।
सु धन्य धन्य पन्नगारि, जाहु आप धाम को॥
हुवै सहर्षि पक्षिराज, पाइ सानं जहीं।
प्रनाम कोटि के, गए सुमेर-शृंग कौंतहीं॥४२॥

त्रोटक

रघुबीर तबै रिषि कौं बिनये।
अति संकट मैं सुधि आइ लये॥
मति दै करि सैन जिवाइ सबै।
दनु मारि करौं, जयकार अबै॥४३॥
रिषिराज कहै, मति फेर करौ।
सुर सोकहि सत्वर नाथ हरौ॥
दनु कारण मारण मंत्र दए।
बहु आसिष दै निज लोक गए॥४४॥
मिलि जूथनि जूथपती सिगरे।
बल तैं बउकैं बहु रोस भरे॥
रघुनंदन कै पद बंदन कै।
सिर लक्षन लालहि नाइ सबै॥४५॥

---

४२. सुमेर : सुमेरु, एक पुराणोक्त पर्वत जो सब पर्वतों का राजा और सोने का कहा गया है। कौंतही : ओर।
४४. फेर : देर।

दोहा

कटक विकट संकट कटत, उठे बीर हलकारि।
उतें दिवाकर होत ही, किये कूह किलकारि ॥४६॥

घनाक्षर

दं दे कीक भारी बनचारी हलकारि जोर। मानौ घनघोर घहरात प्रलै काल के।
बलकें अपार, बोलें रोसन ते बार बार। मार मार मार दनु कीबे पयमाल के॥
कहत गोपाल,ज्यौं ज्यौं कूदि के उछाल लेत। होत है विनोद देखि देखि सुरपाल के।
आज गढ़ लंक मारि, पंकहि मिलाइबे कौं। पारत दुहाई हाँकि दसरथ लाल के॥४७

दोहा

गाजत दल गोपाल कहि, गंजनु कौ दनु दाप।
पूरण सब के देह में, प्रगट्यौ राम प्रताप ॥४८॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां
श्री राम नाग फाँसि विमोचनोनाम अष्टत्रिसोध्याय: ॥३८॥

---

४७. पयमाल : पैर से कुचना। रौसन : क्रोध से।
४८. गंजनु : नष्ट करना।

लक्ष्मण-सक्ति-संमोहन

३९

चंद्रलीला छंद

सुनें कूह लंका, दिसंका न एको, ससंका, अदंका परें ना बखानी।
जहाँ जे तहाँ ते रटें हाह केते, कहा भौ, कहें जातुधानी॥
गहौ रे गहौ कोट कौ जोट जेते, प्रलै होत हैं आनु ही राजधानी।
दरेरा दिये छोड़ि डेरा रु घेरा, सुबेरा कुबेरा कहो कौन जानी॥१॥

दोहा

क्लीव क्रूर कायर कृपिन, बालक मद्यम नारि।
जुद्ध समै इन मत लगै, निहचै आवै हारि॥२॥
जानत खगपति बोलि सुर, काट्यो बिषधर फांस।
इन दल बल संघारि कै, करौं सबन कै नास॥३॥

सवैया

बाँधि बिहाल कियो सुत रातिहिं, हौं बांधिवै चलि बेसु जबाली।
मंत्र उठाइ घने घर हीं, घरनी घर-घालिनि है घर घाली॥
ता पर भेद बतावन को, उत दुष्ट बिभीषण है ठकचाली।
मारि तऊ सब नास करौं, चहिये इक मोहि सहाइ कपाली॥४॥

दोहा

यह कहि नृप अस्नान करि, कियो जाप हर ध्यान।
सज्जन सब सेना लगे, बज्जन लगे निसान॥५॥

---

१. जोट : जोड़ा।
२. क्लीव : नपुंसक। क्रूर : क्रूर, दयारहित।
४. जबाली : झगड़ालू। ठकचाली : ठाक चोलिया करनेवाला। कपाली : शिव।

छप्पै

प्रबल सैन दल बल प्रचंड, सज्जित समूह दनु।
अक्षय कटि तुनीर बान, मंत्रित अकट्ट धनु॥
कसि कसि कवच अभेद, रथ्थ सारथि विचित्र सब।
चढ़ि चढ़ि रथी समथ्थ, चढ़िय दसमथ्थ साजि जब॥
=मदमत्त दुरद अग्गह अमित, जात न लखि दिसि विदिसि गनि।
=बज्जत निसान अगनंत जहँ, सुर गज्जत गोपाल भनि॥६॥

नाराच

कढ़ै जु सिंह पौरि ह्वै, समूह सैन साजि कै।
समेत पुत्र पौत्र स्यौं, सु लंकनाथ गाजि के॥
अगार मत्त दंत पति, विंध्य मंघ से बने।
रथी समथ्थ सथ्थ हैं अकथ्थ पैदलौ घने॥७॥
बजैं निसान वृंद, ह्वै गजैं महा महा बली।
त्रिसुद्ध जुद्ध कौं खरे, सुरंग भूमि की थली॥
विलोकि राम जू उठे, विभीषनैं सु बूझि है॥
कहो जु कौन कौन ए जुझार, सैन जूझिहैं॥८॥

उड़ियाना

स्वर्न जटित नील मनिन विस्तर रथ राजै।
नील कवच दीह धनुक, बान विषम साजै॥
दीरघ अरुनक्ष बंक देखि तहँ जोई।
ध्वज मयूर चित्रित, प्रभु मेघनाद सोई॥९॥
स्यामल तनत्रान रथ्य, स्यामल धनुक धारी।
कुंडल मनि लोल श्रवन, सीस सल भारी॥
रुद्र अक्ष माल हृदय, कोकिल ध्वज रूरो।
सोई प्रभु धूमकेतु, समर सूर पूरो॥१०॥

---

६. अग्गह : जो पकड़ा न जा सके।
८. गजै : गर्जते हैं।
९. अरुनक्ष : लाल-लाल आंखोंवाला।
१०. तनत्रान : कवच।

स्यंदन नग लाल जाल, काल रूप तामें।
बाहु दंड अति प्रचंड, सेल सूल जामें॥
जाके ध्वज सिंह रूप, गाजे अहमेही।
सोतो खर-नंदन, मकराक्ष बज्र देही॥११॥

स्यंदन घन-घोष कनक, सर्पकेतु जाके।
काल दंड लै अखण्ड, झेलत मद छाके॥
भारी जिहि डील सलत, पील प्रबल कैसो।
सोई प्रभु मालिवंत, कालवंत जैसो॥१२॥

लागे नग रथ विचित्र, जोति जगत तारे।
गुरज सूल सावर धनु, बान पानि धारे॥
हंसराज हँसकेतु, चंचल चपलाई।
सोऊ दनु मालि औ सुमालि दोऊ भाई॥१३॥

मंडित कोदंड चंड, बाहु दंड भारी।
रत्न जटित स्यंदन तन त्रान कुंड कारी॥
माल विविध मूल जंत्र, बांध सिर जोई।
व्याघ्र केतु सौप्रता महोदरो सु वोई॥१४॥

राजें रथ हरित, नगन जरित, भाँति एकें।
चाप बान अंग त्रान, रंग हैं अनेकें॥
कीर केतु अति निसंक, रूप विविध ठानें।
सो तो सुक सारन, छल भेद सकल जानें॥१५॥

---

११. मकराक्ष : खर का पुत्र। अहमेही : घमंडी।
१२. पील : हाथी।
१३. गुरज : गदा। माली : एक राक्षस जो माल्यवान और सुमाली का भाई था।
१४. माल : माला। कुंड : लोह टोप। कारी : घातक, मर्मभेदी (फा० श०)।
केतु : पताका।
१५. कीर : तोता।

छप्पै

जिहि स्यंदन नग जटित, खंभ गज दंत चित्रमय।
अति चंचल अति बल तुरंग, दस खेंचित निर्भय।।
सोभित जहँ शार्दूल धजा, फहरात जलद लगि।
बहु सस्त्रनि संभरित जोति, चहुं कोतिन जगमगि।।
=षट चक्र तेज लिहि तरनि सम, चलत घोर घन घोष जिमि।
=गोपाल भनत ता मध्य मंह, बनि बैठ्यो लंकेस इमि।।१६।।

जलद नील सम अंग, शृंग गिरिवर दस मथ्थहँ।
मनिमय मुकुट विशाल, माल नग जोति अकथ्थहँ।।
सहस सूर सम तेज, बीस भुजदंड जोर वर।
छिति नंदन कर चँवर, छत्र लीन्हें सु छपाकर।।
=सर्वज्ञ सकल छल छंद मंह, समर सूर समरथ्थ अति।।
=गोपाल भनत रघुवर सुनहु सो, रावण लंकाधिपति।।१७।।

दोहा

लक्ष पुत्र दसमथ्थ के, नाती लक्ष सवाउ।
एक एक ते आगरे, कहौं सु केतिक नाँउ।।१८।।

दीपकल छंद

सुनि कहे हरषि दसरथ्थ-नंद।
मुख निरखि लखन-तन विहँसि मंद।।
दनु बढ़िय क्यों न यह अप्रमान।
सब नास होंहि इक बान।।१९।।

---

१६. खैंचित : खींचा जा रहा है। शार्दूल : सिंह।
१७. छिति नंदन : मंगल नामक ग्रह। छपाकर : चन्द्रमा।
१८. लक्ष सवाउ : सवा लाख।
१९. तन : ओर।

अब लेहु बोलि सब जूथ नाथ।
हलकारि उठे लै सैन साथ॥
गज झुंड सकल डारहि बिदारि।
फिरि बेधहु बाननि मारि मारि॥२०॥

दोहा

लक्षन सासन देत हीं, उठे बीर हलकारि।
लेहु लेहु के कहत हीं, अस्त्रन गहें सम्हारि॥२१॥

भुजंगप्रयात

उठे जाम कै सैन, संग्राम कामै।
कहैं राम, श्री राम, श्री राम रामै॥
पिले पील के पाँति मैं, जाइ कैसे।
घटा में घटा, बात के घात जैसे॥२२॥

किधौ कंदरी ये दरी सैल आवैं।
बसैं धाम ज्यों पेट कौ फोरि मावैं॥
कहूं चाबि कै सुंड कौ तोरि डारैं।
बिदारैं कहूं पीठि, कै कुंभ फारैं॥२३॥

कहूं पुंछ कौ काटि, केते सुपीटैं।
कहूं पांइ कौ तोरि लीन्हें घसीटैं॥
कहूं दंत कौ खैंचि कै खैंचि मारैं।
कटे झुंड बेतुंड छोडैं चिकारैं॥२४॥

---

२२. पिले : घुस गए। जाम : जामवंत।
२३. कंदरी : गुफा। मावैं : समाना। दरी : बिदीर्ण करना।
२४. चिकारैं : चिक्कार करते हैं।

सवैया

देखि सबै गज झुंड बिदारत, पैदल सस्त्रनि पैठि चलाए।
कोपनि तें इक येक लपेटि, चपेटि चरागनि सें चगलाए।।
हथ्थ कटे, बहु मथ्थ फटे लखि, रथ्थन पेलि समथ्थ घँसाए।
तिक्षन तिक्षन बाननि तें दुरभिक्ष से रिक्षन मारि खसाए।।२५।।

गंगोदक छंद

बानराली तबै, हांक दै दै सबै, कोपि धाए जबै, वीर बंकि बली।
सैन सुग्रीव लै, संग वातात्मजै, अंगदौ नील द्वै कूदि आए थली।।
सैल साखीन तें, दैत लाखीन कों, मारि माखीन से, पीटि डारे घने।
हूलि माची महा, कौन का सो कहा, होत संग्राम गोपाल, अैसो भने।।२६।।

मतंगरूपक छंद

विलोकि वीर खेत, वीर सैन में अधीर होत। तेज के तुरंग हाँकि मेघनाद आइयो।
सम्हारि कौन को कहाँ, बली बिरान आपनौ। लरे मरे परे जिते अचेत, चेतलाइयो।।
सरासनै सुतानि बान, बानरादि रिक्षकादि। मारनै लग्यौ सबै, सरोस अंगधाइयो।
बड़े बड़े महाबली, हनू सुखेन अंगदौ। सरोस मार मार के, प्रहार तें उठाइयो।।२७।।

अनंग शेखर छंद

लेहु लेहु लेहु कै, इतै उतै हलें सबै। अनेग अस्त्र सस्त्र तें, प्रहार त सु कोपि कोपि।
खंड खंड अंग भंग, ह्वै गए, तऊ उमंग। घाइलै सुघाइ, घाइ देत पाँइ रोपि रोपि।
श्रोन पूर रंध्र ह्वै, लरें कबंध्र सो कबंध। अंध धुंध सौं फिरें गिरें अनेग ठेलि ठेलि।
सातऊवरंगना, सुफूलिफूलिकैंसिगार। बारबार जातलैविहारहारमेलिमेलि।।२८।।

---

२५. चरागनि : सारस पक्षी। चगलाए : चंगुल में। खसाए : खिसका दिया। दुरभिच्छ : अकाल।
२६. वातात्मजै : हनुमान। सैल साखीन : पहाड़ के ऊपर जमे वृक्ष। माखीन : मक्खी।
२७. बिरान : पराया। तान : खींचकर।
२८. वरंगना : अप्सराएं।

छप्पै

तबहि कोपि सक्कारि, सैन लाग्यौ संघारन।
बानन संग उड़ाहि, रीछ बानर दवि पारन॥
बहु तक जलहि चभोरि, बहुत दिसि विदिसनि डार्‌यो।
बहु तक भवें अकास, बहुत औंधे मुख पार्‌यो॥
=रन देखि हनू हलकारि अति, कूदि सैल गहि कहत इमि।
=रन मंडि लरसि किन छुद्र मति, जोर परें भगि जात किमि॥२९॥

दोहा

हनू हांकि सुनि कैं कह्यौ, रन गर्वित सक्कारि।
टार देत तोहि जानि कैं, बंदीवान बिचारि॥३०॥

सवैया

कोपि तबै हनुमंत हठी, मुख माँहि लँगूर भवाइ के दीन्हों।
बंधन आवने चाड़ पर्‌यो, मति-मूढ़ महा अब जीतिहि चीन्हों॥
सौहठ आइ लरै किन मोसहुँ, चाहत राति के बंरहि लीन्हों।
यों कहि सैलकचारि तबै, रथ-चूर कै ताहि अलोपति कीन्हों॥३१॥

सुमंत छंद

फेरि रथ और चढ़ि, बीर आयो।
हाँक दै बान सत, मारि छायो॥
कोपि संग्राम दोउ, करत भारे।
एक सौ एक, नहि मरत मारे॥३२॥

देखि सौमित्र, धनु बान लीन्हे।
जाइ सक्कारि पर, चोट कीन्हे॥
पाइ समकंध, धनु दनु क्रुद्ध राच्यौ।
जुद्ध तिरसुद्ध, रन घोर माच्यो॥३३॥

---

२९. चभोर : पानी में डुबोना। भवैं : घुमाया। औंधे : नीचे मुख। लरबि : लड़ना।
३१. लँगूर : दुम। चाड़ : मतलब, गरज। सौहठ : सामने, प्रत्यक्ष। अलोपति : गायब कर दिया। कचारि : एक + चार, चार-पांच।

छप्पै

चलत बान असरार, तिक्ष लक्षन के कर तैं।
प्रबल दनुज छल छंद, सकल टारत हरबर तैं।।
हनत विषम सर निकर, वीर बीचहिं तिहिं काटत।
सबल सरोस समथ्थ, एक एकन कहँ डाटत।।
=इहि भांति परस्पर जुद्ध लखि, रथ चाल्यौ लंकेस तब।
=बहु सोर मचिय चहुँ ओर तें, हलकंपित सुर लोक सब।।३४।।

घनाक्षर

जेते बिरदैत दैत, देवता के बरदान। पाइ पाइ, रोस भरे हौंस घमसान के।
जीतिलोकपाल, सुरपाल, नरपालन को। कीन्हे हैं बिहाल, हाल जानत न आन के।।
काल ते कराल, सेल सकित त्रिसूल बान। आपे जातुधान मंत्र, मूरति निदान के।
ते ते सब तक्षन, विजक्षन समर माँहि। लक्षन सौं जुद्ध जुरें, लक्षन समान के।।३५।।

सवैया

कोपि उठे बलवंत अनंत, अनंतन दानव के दल भारें।
छूटत बान विषार जहीं, तहँ पारन के भव पारन पारें।।
जूझत कोटिन कोटि जुझारन, झारत सैननि के अधिकारे।
हांकत ही चहुँ ओर बलीमुख, नाकत नाक लौ दंत निकारे।।३६।।

रुचिरा छंद

एक ओर कपिराज विभीषन, दनु दल बल सब मारि दरैं।
एक ओर नल नील जाम मिलि, हनत अनेग, न संक धरैं।।
एकक ओर सुखेन केसरि, अंगद अति बल रोस भरें।
कूदि कूदि चहुँ ओर सैन पर, हनुवमान संघार करैं।।३७।।

पाठान्तर—३५—बिरदैत : बीर दैत्य (१,२)

---

३४. हरबर : शीघ्रता से। निकर : समूह।
३५. बिरदैत : बिरद वाले, प्रख्यात।
३६. विषार : विषैले। भव : बादल, सांसारिक कष्ट। अधिकारे : अधिकांश। नाकत : लांघ जाते हैं। बलीमुख : बंदर।

दोहा

रावन निरखि विभीषनै, एक जुद्ध बहुधाइ।
कहत भयो बहु क्रोध करि, घर भेदी ढिग पाइ ॥३८॥

छप्पै

अरे निलज मति मंद, कंद विष को तू जाग्यौ।
तनक लात कै लगत, जनम भर कौ कृत त्याग्यौ॥
मम प्रताप बल सकल, राज श्री भोगहि कीन्हें।
देव दैत्य नर नाग जक्षगन, सेवहि लीन्हें॥
गढ़ लंक लेन मिलि राम कहं, कहत नितहि घर भेद सब।
तिहि तेज तुरत संग्राम सठ, तोहि मारि घर जाउँ अब ॥३९॥

घनाक्षर

पावक प्रसाद पाइ, प्रभुता बढ़ाइ धाइ। सकति विभीषण को, रावण चलायो है।
तेज तैं सतेजमान, बल कौं निधान। गहि पूँछ सों पवन सुत, पुहुमी गिरायो है॥
सिव की सफल सक्ति, सबर सरोस करि। मार्‍यो सौंह खाइ, कपि सेन महरायो है।
राखि सरनागत, प्रतक्षवक्षलीन्हेभेलिलक्षन के अंग, घन, लूक सौं समायो है ॥४०॥

सवैया

होइ न ऐसी, भई नहि काहू सौं, कौन करैं निजु प्रान के नाखैं।
बोल बड़ेन की ज्यौं न घटै, तिहूंलोक के नायक भूप के भाखैं॥
है निजु नास के भास न जाहि, सदा जिन दीन दया अभिलाषैं।
आपनैं लाज करैं की करी, सरनागत को सरनागत राखैं ॥४१॥

दोहा

जिनकी कृपा कटाक्ष तें, कटत कोपि संताप।
तिन लीला गोपाल भनि, अवगति राय प्रताप ॥४२॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां लक्षन-सक्ति-संमोहनो नाम उनचालीसमोध्याय: ॥३९॥

---

३९. कृत : एहसान।
४०. सकति : शक्ति।
४१. नाखैं : विनाश।

हनुमान-संजीवनी-गमन कालनेमि-बंधन

४०

करषा

लगत उर सक्ति रन, मुरछि लच्छन परे। कंपत कपि सैन, हाहूत चहुँ दिसि भयौ।
संकि सुर लोक नर लोक अध लोक।थरहरित खलभलित बल सकल गिरि के गयौ।।
देखि दसकंध मति अंध रथ छोड़ि करि। धौरि भुज बीस सौं गहत बहु बल ठयौ।
घालि स्यंदन, इन्हैं लैं जु लंकहि चल्यो। करहि रन राम तब कौन सोकित भयो।।१।।

जदपि नर वेष, अवतार मनि शेष। नर अमर अति अजर, अविनास जन कीजियौ।
कोटि सुर गिरिहुं ते, गरुव तन जा कौं। ताहि सठ मद मति झेलिवे मन दयौ।।
निरखि बल-उदधि हनुमान तब उछलि कै। असुर उर माहं इक लात कोपित हयौ।
धुकत दनु राज, अहिराज गहि, वच्छ लै। अग्र रघुराज कै सोक-भूरुह वयौ।।२।।

छप्पै

निरखि अनुज उर सक्ति, सक्ति बिनु गिरे राम महि।
विगत विज्ज, कपि रिच्छ सकल, हाहूत सब्द कहि।।
असम अंग दोउ नृपति, हलत नहि चलत स्वास उर।
ईश अस्त्र अति सफल जानि, हलवलित लोक सुर।।
=कर जोरि विनय सामीर किय, अब साहहस प्रभु चित्त धरहु।
=यह सत्रु मारि, संघारि दल, मन भावैं जोइ, सोइ करहु।।३।।

---

२. हयो : मारा। अहिराज : शेष नाग के अवतार लक्ष्मण। भूरुह : पेड़।
३. विज्ज : धैर्य। सामीर : समीर का पुत्र, हनुमान।

घनाक्षर

कोपि रघुनाथ उठे, हाथ धनु बान लै कै। बेन-हहनुमान सिव पूछ सम अैठिगो।
मारे सर लाघव तें, दसहू मुकुट गिर्‌यौ। धायन सो घूमि, रथ चूर बाजी बैठिगो।
पाहन पहार वृच्छ रिच्छ कपि घालैं घेरि। भागे दनु जात रन हाटहि सो नैठिगो।
मारे रन खेत माह, धरकै अचेत केते। अध-मरे अधम अहि कोट-बिल पैठिगो॥४॥

छप्पै

तरनि अस्त ह्वै गयउ, होत अति कठिन लराई।
परत जानि नहि नेक, सैन अपनी न पराई॥
रामहि हनू बहोरि, चलहु लच्छन सुधि लीजै।
रवि उदोत नहि होंहि, तलगि कछु जतनहि कीजै॥
=सुनि सिथिल अंग प्रभु ब्याकुलित, फिरे आसुही सोक जुत।
=अवलोकि अनुज भूतल खसत, लिहेउ झपटि तब पवन सुत॥५॥

पादाकुलक छंद

निरखि अनुज, हिय बिलखित राघव॥
करि करि करुणा अति गति लाघव॥
धरि सिर गोद, सोक परिपूरन।
होत हृदय, पथ-रज सम चूरन॥६॥

हा हा भ्रात, साथ मम दायक।
नित अनुसासन पालन लायक॥
बिगलित हींसा, नित प्रति सेवक।
धीरज-उडुप उदधि-बन खेवक॥७॥

निद्रा छुधा त्रिषा मद साधक।
इंद्रीजीति मदन मद बाधक॥
मात पिता हित जलद प्रभंजन।
मम पद जल सुर सुधा सुरंजन॥८॥

---

४. नैठिगो : नष्ट हो गया, उलट गया।
५. आसु ही : शीघ्र। खसत : गिरना।
७. हींसा : हिस्सा, भाग। उडुप : नाव। बन : पानी।
८. प्रभंजन : प्रचंड वायु, आंधी, तोड़फाड़।

तिन जूझत रन दृग अवलोकत।
धृग यह जीवन मम, को रोकत ॥
रवि प्रकास इन निजु तन त्यागेहु।
चलि सठ प्रान निकसि किन आगेहु ॥९॥

दोहा

बंधु सोक के सिंधु परब्रह्म न पावत पार।
मोह जाल छिद्रन विधे, धिक धिक नर अवतार ॥१०॥

चंचला छंद

वानरादि रिछ्छादि, राम सोक देखि-देखि।
सूकि वृच्छ से समस्त, व्यर्थ पौरुषै सु लेखि ॥
काहु सौं कही न जात, बात मित्र सोचि सोचि।
संकि रक से खरे, सुगवं सर्व मोचि मोचि। ११॥

मदन छंद

जोरि कर हनुमान विनयें, सुनहु श्री भगवान।
धारि क्षत्रिय धर्म कौं, प्रभु होत का अज्ञान ॥
धाइ पूरन पीर लच्छन, करहु बूझि उपाइ।
भाँति भाँतिनि मंत्र औषध, कष्ट सब मिटि जाइ ॥१२॥

दोहा

तजहु त्रास कुल देव कौं, प्रभु विनऊँ कर जोरि।
तब गिलि कैं उगल्यौ हुतौ, अब न बहोरि बहोरि ॥१३॥

सुनत हनू के विनय कौं, साहस करि धरि धीर।
कहत कोपि पन रोपि कैं, सोक सहित रघुवीर ॥१४॥

पाठान्तर—१३. तब गिलि कैं, तब लगि कैं (२)

---

१०. खरे : खड़े।
१३. गिलि : निगलकर।

घनाक्षर

श्रीराम—

मारि मारतंड कौं, बिहंड करौं खंड खंड। दंड काल-दंड कौ प्रचंड दाप दरिहौं।
दै दै बरदान चतुरानन षडानन सें। जारौं अभिमान, प्रान हरहू कौ हरिहौं॥
'माखन' कहत राम रोस करि बार बार। लंकहि मिलाइ पंक, सागर मैं भरिहौं।
जो पैं बलताजिगाजि,लच्छनउठैंन आजु। तोपैमेटितीनौलोकप्रलैकरिडारिहौं॥१५॥

लच्छन के प्रान संग, प्रानहि चलैहौं आजु। जानकी समैहै जाइ मात-उर ईखनें।
कंदर बिकट रीछ बंदर छपाइ जाइ केले जाइ। सत्रुन के लै हैं सिर सीखनें॥
'माखन' कहत रघुबीर ह्वै अधीर अति। करत बिचार बार बार सोच तीखनैं।
और सब ही कौ ठौर ठौर बैर देखि परैं। तीनि लोकमाँहठौरयेकनबिभीषनैं॥१६॥

मालवती

तबहि बिभीषन जोरि जुगल कर, बिनय येक सुनिये रघुबीर।
बैद सुखेन रहत गढ़ भीतर, जो ल्यावैं कोई रन धीर॥
जानत मंत्र मूरि गद सब बिधि, देखत ही मेटैं सब पीर।
तौ जीवैं सौमित्र मित्र कुल, दै सासन कपि भल्लुक भीर॥१७॥

झूलना छंद

सुनत यह गाथ रघुनाथ सब सौं कहे। सुनहु हो भ्रात कपि रीछ कोई।
बिकट संकट परे, दौरि रच्छा करे। मात पितु बंधु हित, जानि सोई॥
सकल उपचार बल करहि पुरुषारथैं। ज्याइ सौमित्र कौ देइ जोई।
जाहि सों आजु, यह काज बनि आवई। सुजस तिहुँ लोक मैं, तासु होई॥१८॥

नील नल जाम सुग्रीव अंगद खरे। रीच्छ कपि सैन चहुँ ओर घेरे।
काहु कैं बदन तैं बचन एक न कढ़े। चकित चहुँ ओर टकटकन हेरे॥
तबहि कर जोरि उत्साह जुत पवन-सुत। परसि पद-पद्‌म कौ कहत टेरे।
करन सब काज सिर ताज रघुनाथ है। रहत अनुसासनैं चाह मेरे॥१९॥

---

१५. चतुरानन : ब्रह्मा। षडानन : कार्तिकेय। जो पैं : यदि। बल : शक्ति नाम का शस्त्र। तजि : त्यक्त करके। गाजि : गरज करके।

१६. ईखनैं : देखते-देखते। ईक्षण : गर्भ। तीखनैं : तीक्ष्ण, तीव्र।

१७. गद : रोग। मित्र : सूर्य।

ढूढ़ि सुर लोक, भू लोक अध लोक भरि। होइ जहँ वस्तु सो तुरत ल्याऊँ।
काल के काल, दिनकरन गहि द्वादसो। निगलि जठराग्नि में सब पचाऊँ॥
काम श्री राम हित, बित्त बाहेर करौं। दास रघुवीर को तब कहाऊँ।
देहु श्री नाथ, इक गाथ 'माखन' कहै। जन्म जन्मांत तुव भक्ति पाऊँ॥२०॥

दोहा

श्रीराम—

तुम भ्राता, तुम ही सखा, मित्र भृत्य बल सक्ति।
करत सदा चिरकाल लगि, परम भावतो भक्ति॥२१॥

उड़ियाना

कंज चरन परसि हनू, लंका गढ़ देखें।
निसि निसीथ विह्वल सब, दानव गन लेखें॥
सोक सहित, हर्ष रहित, मादक मद छाकें।
निद्रावस बेसम्हार, जुद्धनि ते थाकें॥२२॥

सोचत मन मनहि बीर, कौन सो अरुझौं।
हैं सुखेन बैद कहा, काहि बात बूझौं॥
देखत निरसंक लंक, ठौर चिन्ह पाए।
बार-बार करि बिचार, जात क्यों जगाए॥२३॥

सवैया

ठौरनि ठौर सबै सब सोवत, जाइ सुखेनहि कौन जगावै।
लेउ उखारि निकेत समेत रु पार परोसनि हूँ मन भावै॥
होइ कहूँ गद औषद मूर, इहाँ फिरि लेन कहाँ कोइ धावै।
पूरन तो पुरुषारथ 'माखन', राम कृपा सब ही बनि आवै॥२४॥

---

२०. जठराग्नि : पेट की आग।

घनाक्षर

पेलि दीन्हे पुहमी पुनर्भव प्रगट पांचो। ठेल सो उखारि धारि कंध पर लेतहीं।
नेक न डुलत कहू हलत चलत माँह। जौन जिहि भाँति, तिहि भाँति रहे ते तहीं॥
सदन सुखेन वस वासी दै अमल भरि। सहित तड़ाग बाग, डोलहि समेतहीं।
'माखन' कहत बलवंत सबैं धन्य धन्य। हनूमान ले के राम आगे धरि देतहीं॥२५॥

दोहा

देखि देखि पुरुषारथै, कहत सबै धरि धीर।
राम चंद के मन हनू, और सु वनचर वीर॥२६॥

जग्यो सैन के सोर सुनि, बढ़्यो बंधु उर संक।
चौंकि उठे मन जानि कै, गयो टूटि गढ़ लंक॥२७॥

सवैया

जागि उठ्यो सुनि सोर अचानक, देखत ही उर संक समाई।
सैन समूह प्लवंगम भल्लुक, भीर भरी चहुं ओर महाई॥
जूझि गयो दस कंध सबंधु, भई सब दानव की घटिहाई।
सोचत बंधु सुखेनहि ये, सु परी किधौं लंकहि राम दोहाई॥२८॥

मदन छंद

टेरि लोगन आपने, तब सकि कहत सुखेन।
कौन हाल लखो न हो, सब घेरियो कपि सेन॥
देखि तबहि विभीषनें, चलि दौरि नायो सीस।
चरित मोहि न बनत बूझत, कहो कौनप-ईस॥२९॥

दास दासी सहित मेरे, सहित सब बसवास।
कौन सकल उठाइ ल्यायो, रावरेई पास॥
कहत बोधि तबैं विभीषन, सुनहु मित्र सुहेत।
राम-बंधुहि सक्ति लागी, परे पुहुमि अचेत॥३०॥

---

२५. पुहमी : पृथ्वी। पुनर्भव : नाखून।
२८. प्लवंगम : बंदर। घटिहाई : विनाश।
२९. हो : हे। कौनप : कौणप, राक्षस।
३०. बसवास : घर।

ल्याइयौ तिहि हेत सोई, लंक जार्यो जौन।
और त्रास न एक करिये, करहु औषधि तौन॥
उठैं लच्छन हरषि जातें, मिटें रघुबर सोक।
पाइहौ बहु भाँति भाँतिन, सुजस तीनहु लोक॥३१॥

दोहा

सुनि सुखेन तब ही कहे, चलौ राम के पास।
चरन-कमल वंदन करौं, कहा सक्ति को त्रास॥३२॥

उड़ियाना

सुनत तुरत कोपनेस, राम पास ल्याये।
देखत चरनारविंद, दौरि सीस नाये॥
हरन सकल लोक सोक, दीन दरस दीन्हें।
सक्तिहुँ की व्याज मोहि, पावन प्रभु कीन्हे॥३३॥

सादर करि राम, वचन जात न मुख बोले।
गहभरि गद-गदित कंठ, नीठि नीठि बोले॥
ये हो दुख-नासन, दुख वेगि नास कीजे।
लच्छन को ज्याइ, जगत जीति, सुजस लीजे॥३४॥

मदन छंद

जोरि अंजुलि वैद्य विनवत, सुनहु श्री रघुराज।
अर्द्ध निसि गत खभरि कीन्हें, कठिन उपज्यो काज॥
रहति मूरि सजीवनी, गिरि मेरु में बहुधाइ।
फूल फल दल मूल सरवर, ल्यावही कोइ जाइ॥३५॥

दिपति दीप सिखहि सी, जग मगति जोति अपार।
तामसी भरि माहँ पहुँचे, मिटे सकति विकार॥
सुनत सिर धुनि तवहि रघुवर तजत भरि भरि स्वांस।
कठिन कर्महि को करे अब, अनुज के नहि आस॥३६॥

---

३३. कोपनेस : राक्षसों के स्वामी, विभीषण। व्याज : बहाना।
३६. तामसी : तमिस्रा, रात।

दोहा

विनये तब सुग्रीव सुनिये यह रघुवीर।
प्रभु सेवक हनुमान से, तबहुं होत अधीर ॥३७॥

जन हित, पन हित, पंज हित, प्रभु हित बिवि नहिं और।
लघ्धु लघ्धु गुन बढ़त बल, संकट बिकटनि ठौर ॥३८॥

पद्धटिका

करुनामय करुना अति करिकै।
कहत हनू अति, दग जल ढरिकै॥
कठिन काम यह तुम जो करहू।
तौ मोहि सोक-सिंधु उध्धरहू ॥३९॥

सोरठा

किये विनय हनुमान, पद-पंकज की सौंह करि।
प्रभु दुख दीजै जान, कितिक दूर संजीवनी ॥४०॥

जो त्रिभुवन में नाहि, तबहुं आनहुं ढूँढ़ि करि।
त्रसित महा भय माहि, रहत विभाकर सहित सुत ॥४१॥

छप्पै

वंदन करि चरनारविंद, आगम हनु कीन्हें।
उत रावन मन सोचि, राज भेदहि चित दीन्हें॥
लगी लषन उर सक्ति, हेत कपि जाइ मेरु कोइ।
मूरि सजीवन काज, हतहुं मग माँह तहाँ सोइ॥
=चलि कालनेमि गृह जाइ करि, कहिय मंत्र समुझाइ तब।
=तुम रोकि पंथ सुर सिखर कौ, आवत जातहि बधहु सब ॥४२॥

---

३८. बिवि : दूसरा।
४१. बिभाकर : सूर्य। सहित सुत : यमराज।

नाराच

कहै जु कालनेमि श्री दइत्य-राज जू सुनौ।
न भूलि गर्व आपने मनुष्य राम कौं गुनौ।।
अधर्म - मूल - राक्षसं - विनास हेत औतरैं।
तिन्है सु जीति को सकै, त्रिलोक के जिन्है डरैं।।४३।।

त्रोटक

सुनि रावन रोसनि सौं उमग्यौ।
समुझावन कौं सठ मोहि लग्यौ।।
छल भेदनि सौं मग रोकि अबै।
कपि दूत विलोकत मारि सबै।।४४।।

त्रोटक

इहि ऊपर जौ रु कछू कहिहौ।
फिरि जीवत नेक न तौ रहिहौ।।
निजु भौन यहै कहि जात भयौ।
दनु काल सुनेमिक सोच ठयौ।।४५।।

दोहा

इत रावन नहिं छोड़ि है, उत नहिं राघव-दूत।
उन कर उत्तम मरन है, इन कर निरय संजूत।।४६।।

सवैया

सोचि विचारि चल्यौ तब दानव, मारग मैं छल-भेद बनायौ।
ताल तमाल रसाल मनोहर, नीरज नीर सरोवर भायौ।।
पूरि रह्यौ फल फूलनि आश्रम, 'माखन' मोद विनोद बढ़ायौ।
आसन मारि तपी तप सौं कपि मारन कौं जप जोग लगायौ।।४७।।

---

४३. कालनेमि : रावण का मामा, एक राक्षस।
४६. निरय : नरक।

छप्पै

उछलि हनू मग गगन, लगन लागीय सुमेर हिय।
पितु सतेज करि मंद, आपु निजु तेज प्रबल किय।।
नकल संक-मद मरदि, अंग निरसंक महा बल।
रसना रघुबर नाम रटत, भये जाइ तपी-थल।।
=लखि रम्य मनोहर बाटिका, जल निर्मल गम्भीर अति।
=कछु त्रिषित छुधित बिश्राम हित, कियेउ प्रनति गुनि रिषयपति।।४८।।

दोहा

दे आसिष रिषि बूझियो कहो आपु निजु नाम।
जात निसा आतुर बड़ कौन बड़ेरो काम।।४९।।

सवैया

हनू—

रावन सीतहि चोरि लयो, तिहि ते रघुनंदन लंकहि घेरे।
सेन जुरयो कपि रीछन को, रन दानव नास गए बहुतेरे।।
सक्ति लगी उर लछन कें, तिहि हेत सबै हमहीं कह प्रेरे।
ढूँढ़त हूँ अति सोच भरे, जु मिलै कहुं मूरि सजीवन हेरे।।५०।।

दोहा

कहत तपी कपि न्हाइ कैं लेहु मंत्र इक आइ।
बेगहि मिले सजीवनी करो काम अतुराइ।।५१।।

मालवती

सुनि के हनू गए मज्जन कों, सर पैठत मकरी गहि पाँइ।
हनत लात के दिव्य देह धरि, चढ़ी बिवान कही समुझाइ।।
जच्छ सुता हों, लही श्राप मुनि, कीन्ही पाप भोग बहुधाइ।
धन्य धन्य रघुबर के किंकर, मोकहु आप उधारे आईहु।।५२।।

---

५०. प्रेरे : भेजा हुआ, प्रेषित किया।

दोहा

यह तपसी मति जानिये, छल करि करत अकाम।
तुमहि हनत चाहत दनुज, यह कहि गई सु धाम ॥५३॥

छप्पं

गये हनू मुनि पास, कहे तपसी सुभ कीजै।
लेहु दच्छिना प्रथम, मंत्र पीछे पुनि दीजै॥
डारि ग्रीव लंगूर, चूर किय पटकि पुहुमि पर।
रचना सकल समेत, गयो मिटि बाग सहित सर॥
= घर परेउ धरनि घट कोस लगि, सकल दुष्ट छल बल फलेउ।
= ततकाल वीर गद-मूरि हित, राम सुमिरि आगे चलेउ ॥५४॥

दोहा

जन पालत गोपाल भनि, गहि कर सायक चाप।
विघन कहा तिनको करे, जिन बल राम प्रताप ॥५५॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां हनू सजीवनी गमन कालनेमि बद्धनीनाम चालिसोध्याय: ॥४०॥

लक्ष्मण-सक्ति-कष्ट-विमोचन

४१

झूलना

जात अति तेज ते, बीर तच्छन चल्यौ। गगन मग माह् निरसंत ताईं।
देखियौ जाइ, जगमगित सुर सिखर कौ। सकल सुर-सदन, सुषमा सुहाईं॥
सिध्ध गंधर्व, देवादि अगनित तहाँ। नीर सुर सुरित, झर झरित भारी।
वृच्छ गुल्मादि, खगजादि उरगादि बहु। मृगज सिंघादि, निद्राधिकारी॥१॥

दिपति संजीवनी, अरुन-मुख सिखनि सम। जोति झकमकति चहुँ कोति भ्राजें।
लेहुं किहि छोड़िके, देहुं किहि डारि करि। वीर हनुमंत चित माहँ लाजें॥
धरहुं गिरि सहित लै, राम पद-पद्म तर। लेहिगे चीन्हि, गद-बंद सोई।
बंदि प्रभु कल्प-तरु, चरन 'माखन' कहे। सकल मन कामना, सिद्धि होई॥२॥

छप्पै

मसकि हनू कर करज, उसकि मह्नि ते गिरि आयो।
लियो वीर धरि कंध, चलत नहि हल्यौ हलायो॥
सकल जंतु थल थल निसंक, निद्रा बस जहँ तहँ।
उछलि महा बलवंत, जात लिये गगन पंथ महँ॥
=मन सोचि भरथ्थ कुमार कहँ, कहत जाउँ देखत तिनहिं।
=भनि 'माखन' श्री रघुवर तिनहिं, करत प्रसंसा अति जिनहिं॥३॥

---

१. खगजादि : चिड़ियां। सुर-सरित : गंगा। गुल्मादि : पौधा जो एक जड़ से कई शाखाओं में होकर निकले और उसमें पत्तियां न हों।

२. अरुन मुख : अग्नि। सिखानि : शिखा, आग की लपट। कोति : ओर। ताजें : तर्क करने लगे।

सवैया

देखि सुखोपति में विपरीत, हिये अति सोच भरथ्थ भरे हैं।
राघव सीतहि के बिछुरे, कपि सैन समूह के संग करे हैं ॥
जुद्ध जुरे गढ़ लंकहि में, रन खेतहि लच्छन जूझि परे हैं।
यों सु कथा गुरु सों कहतें, करुना जल नैननि जात ढरे हैं ॥४॥

छप्पै

कहैं प्रबोधि वसिष्ठ, स्वप्न यह झूठ न जानहु।
संकट- निग्रह - हेत, जग्य-रचना तुम ठानहु ॥
सुनतहि साजु समस्त, तुरत पुर तें मंगवाये।
लगे होम मुनि करन, सकल विधि-मत मनभाये ॥
=गहि भरथ गिलोल गुरहिं कर, मख रच्छन बैठे तबहि।
=इहि समय हनुहि दिवि मंडलह, अति अद्भुत पिक्खिय सबहि ॥५॥

घनाक्षर

कैधौं जोति रूप जातवेद दिवि लोक जात। नंदन गहन तरु दहन उपाइ कै।
कैधौं विधि पास चली वेदन निवेदनि कौ। रतन समेत दवि अंवरा बनाइ कै ॥
कैधौं कामचारी दनु धायो मख-भंग हेत। सोचि कै भरथ गुरा मारे ठहराइ कै।
'माखन' भनत भाललागत ही तिहि काल। घूमि हनुमान गिरे हा हा रघुराइ कै ॥६॥

सवाई छंद

राम-राम मुख नाम सुनत ही, व्याकुल भरथ ततच्छन धाए।
बोलत नहीं बुलावत थरहरि, नीठि नीठि तब वचन सुनाए ॥
घेरे जाइ लंक गढ़ राघव, प्रबल दनुज दल खेत खसाए ॥
लगी सक्ति लखन के हिय मैं, मोहि सजीवन हेत पठाए ॥७॥

---

४. सुखोपति : नींद, सुषुप्ति।
५. विधिमत : वेद-विधि-मत से। गिलोल : धनुष। गुरा : बिना फल का बाण।
६. जातवेद : अग्नि। अंवरा : घेरा, मंडल।
७. थर हरि : कँपकँपी।

सवैया

देखहु राति पहाति चली अब, प्रातहि लच्छन तौ तन त्यागैं।
टूटि गयो सिगरो मम पौरुष, काल कराल गुरेरहि लागैं॥
क्यौं पहुँचें तहँ जाइ सजीवनि, राघव पंथ बिलोकत आगैं।
'माखन' यौं हनुमंत कहैं, सब नासत सोक-कृसानकैं जागैं॥८॥

छप्पै

सुनि रघुवर के खभरि, अवधपुर के सब धाये।
मात गात व्याकुलित, बंधु बूझत बितताये॥
कहे हनू समुझाइ कथा जितनी सब बीती।
तिनकी सोक-समुद्र, कौन बरनै बिपरीती॥
=कहि भरथ तबहि धिक मोहि सम, मंद भागि नाहिन बियौ।
=नित द्रोह कर्म रघुनाथ सौं, हौं खलता सब दिन कियौ॥९॥

रुचिरा छंद

भरत—

मोहि हित लागि गए बन रघुवर, धन्य लखन जिन साथ दये।
धन्य धन्य कपि रीछ संग सब, करत काम अनुसासन ये॥
धिक धिक मोहि अकाम राम कौ कबहु न ग्रेको सेव ठये।
कैसेहुँ भेंट भये किहि भाँतिन, सनमुख ह्वै हौं मुखनि लये॥१०॥

मालवती

यह कहि कर सर गहे सरासन, सुनहु मित्र मम बचन प्रमान।
बैठहु आइ भार गिरि संयुत, हौं छोड़त अति प्रबिचल बान॥
जो मेरे कछु भक्ति राम की, तौ पहुँचाऊँ तुमहि ठिकान।
पूरन पंज करहि जौ रघुवर, तौ राखहुँ निजु तन में प्रान॥११॥

---

८. पहाति : प्रहाति, प्रभात के रूप में रात बदल रही है। कृसान : अग्नि।
९. खभरि : सूचना। व्याकुलित : व्याकुल। बियौ : दूसरा।
११. प्रबिचल : विशेष रूप से। पंज : प्रतिज्ञा।

छप्पै

बैठि हनू गिरि सहित, बान पर सोहत कैसे।
जज्ञ बराह सु डाढ़-अग्र, रतनाचल जैसे॥
करत कपीस विचार, पेलि तल वितल पठाऊँ।
रामानुज बल गहत, कहत प्रभु पहं पहुँचाऊँ॥
—धनु तानि श्रवन भरि आनि गुन, दौड़त जनु कीलक कील्यौ।
—कहि 'माखन' नेक न पानि तजि, सर अध ऊरध कौ पिल्यौ॥१२॥

गीतिका

हनू—
धनि धन्य दसरथ लाल तुम, रघुवीर क्यों न सराहहीं।
प्रभु जलज-पद नित रहत, अविचल-भक्ति-जल-निधि गाहही॥
रवि वंस अतुलित बल सुभावहि, कौन अस्तुति उच्चरौं।
रघुनाथ-किंकर के सु अनुचर, टहल नित चित भरि करौं॥१३॥

सवैया

भरत—
जौ तुम सें बलवंत मिले नहि, तौ गढ़ लंकहि क्यौं प्रभु घेरे।
मित्र सहोदर सेवक से, जिन संकट मेटनहार घनेरे॥
ह्वौ पन लाज निबाहन लायक, मोहि भरोस भयो अति नेरे।
मूरि सजीवनि आसुहि 'लै', करुना हरिबे करुनामय केरे॥१४॥

घनाक्षर

बोधि के भरत भ्रात, मातनि अनेग भाँति। सब के सँदेस लीन्हे, सब को प्रनाम कै।
कंध गिरि धारि, नभ चारि, दनु दाप हारि। बाप हू तें आप तेजवंत दूनौ काम कै।
'माखन' कहत रहे रवि-सुत-सुत दवि। जैसे पवि पातक विटारै बलि याम कै॥
आयेहनुमान,देखिदेखि बलवान कहैं। राम के समक्ष बान, मंत्र आठो जाम कै॥१५॥

---

१२. गुन : प्रत्यंचा। कीलक : मंत्र। पिल्यौ : बढ़ा।
१३. गाहही : थाह लेना।
१४. अति नेरे : अत्यन्त निकट। करुना : कारुण्य, दुःख, शोक।
१५. रवि सुत : सुग्रीव। रवि-सुत-सुत : हनुमान। दवि : दबाना। विटारै : टालना।

सवैया

गोद लिये सिर लछ्छन के रघुवीर-विलाप चमू सब छायो।
आइ हनू पहुंच्यो न अबै, इत चाहत प्रात प्रभाकर भायो ॥
हौं न भयो घर को वन को, करि बैर प्रिया प्रिय बंधु गंवायो।
नाहक नष्ट विभीषन गो, मोहि जानि गुरू सरनागत आयो ॥१६॥

सवैया

संकट देवन के न हरे, तौ करें दनुराजहि की सेवकाई।
सीतहि जो नहि आनि सकें, सु तौ मात के गातहि जात छपाई ॥
आइ भज्यौ कहि 'माखन' यौं, गति येक भई दुहूं की दुखदाई।
रच्छन मोहि विभीषन कौ, उठि हो उठि तच्छन लच्छन भाई ॥१७॥

दोहा

लखि रघुवर की विकलता, सकल सैन भहरात।
करि रावन सौं बैर को, त्रिभुवन उबर्‌यो जात ॥१८॥
रघुवर सोक समुद्र कों, हुतो न पारावार।
पहुंचे हनू अगस्त से, सोखत किये न वार ॥१९॥

घनाक्षर

आयौ हनुमान कंध मंदर विराजमान। देखि बलवान बल वारि वारि कै दये।
दीपति सजीवनी की जोति चहुं कोति होति। मानौ दुख दूरि कै प्रकास रवि से भये ॥
सकल समूह सैन धन्य धन्य बोलि उठे। 'माखन सु कवि' गावै कीरति नये नये।
दै के परदच्छिन पदारबिंद वंदत हीं। दौरि रघुराइ उर लाइ गाढ़े कै लये ॥२०॥

दोहा

श्रीराम—

कौन कहौं गुन बरनि के, नेत नेत कहि राम।
होत आचरज देखि सब, जे जे कीजत काम ॥२१॥

---

१६. भायो : होना। गुरू : गम्भीर, गुरु।
१७. मात : पृथ्वी।
१८. को : कौन।
१९. पारावार : आरपार। वार : विसेष।

आगे गिरि धरि जोरि कर, विनय किये हनुमंत।
सेवक सेवहिं ते लहैं, निस्तारन भगवंत ॥२२॥

छप्पै

कहैं विभीषन तबहि, मित्र अब गहर न कीजै।
सकल कष्ट संघरेउ, मूरि विधि संजुत लीजै॥
सुनि सुखेन हरषाइ, गंग जल मंजन कीन्हें।
सचरित ह्वै पढ़ि मंत्र, पानि संजीवनि लीन्हें॥
—प्रभु चरन वंदि अरविंद जुग, सक्ति छिद्र गद भरि दयेउ।
—करि नष्ट प्रबल कष्टहि तुरत, अंग-अंग सोधत भयेउ ॥२३॥

सवैया

भेटत मूरि सरीर के पीरहिं, लच्छन जागि उठे हरषाने।
पानि सरासन बान लिये, कहि रावन रे कित जात पराने॥
मारि के तोहि करौं निरबंसहि, तौ जनम्यौ रघुवंस ठिकाने।
केवल राम प्रतापहि ते कहि, 'माखन' जुद्ध कहा कोइ ठाने ॥२४॥

सवैया

भेंटत राम भुजा भरि, लच्छन पंकज-पायन के रज लीन्हें।
भूप दुवौ परसे पद हैं, सब सैन समेत महा दुख दीन्हे॥
अंगद जाम हनू नल नील, मिले सिर नाइ प्रतापहि चीन्हे।
हूलि मची जय की कहि माखन, रावन कौ जनु पावन कीन्हे ॥२५॥

सोरठा

सक्ति लगे जो सोक, मिटत मोद सौ-गुन भयौ।
बरनि न सोक त्रिलोक, रघुवर नर लीला अमित ॥२६॥

---

२३. गहर : देर।
२५. भूप दुवौ : कपिराज सुग्रीव और दनुराज विभीषण।

झूलना छंद

तब ही हनुमान कर जोरि श्री राम सौं। भरथ कौं सकल सेवा जनाये।
मात की बात, गुरु असिषा सहित सब। भाँति भाँतिन सबै कहि सुनाये।।
जदपि जगदीस, जग सर्वमय जान मनि। तदपि नर लोक की रीति भाये।
जलज लोचन भये जलद श्रुति सुनत ही। बन्य बलवीर सब खभरि ल्याये।।२७।।

सातऊ सिंधु कौ थाह मकु सुगम गति। अगम तुम बुद्धि बल धीरताये।
सहित पुरुषारथं कहन तुम गुननि कौ। सहस मुख जात नहि पार पाये।।
मारि सुर सत्रु कौ लेहु जय पत्र अब। सु कवि माखन सदा सुजस गाये।
भाव करि द्वैत, निज पेंज पन पालि कैं। करहु मन भावती भक्ति भाये।।२८।।

सोरठा

श्रीराम—

सहित सुखेन सुमेर, निज निज थल पहुँचाइअै।
प्रात न करिये फेर, सकल लंक दल बल दलन।।२९।।

दोहा

दीन जानि कैं दरस दिय, सक्ति सु व्याज सुखेन।
भयो कृतारथ कोटि हौं, निरखत राजिवनैन।।३०।।

मदन छंद

ल चले दोउ कंध धरि, हनुमंत एकहि बार।
कूदि कैं गढ़ ठौर बेद-मढ़ाइयौ सु विचार।।
उछलि लेइ उछाल ऊलट, पहुँचि मेरु ठिकान।
धरें जैसेहि तैसे ही तिहि, जौन जो उनमान।।३१।।

---

२७. श्रुति : कान।
२८. भाव करि द्वैत : जीव और ब्रह्म दोनों को दो समझकर।
३१. मढ़ाइयौ : मंडपी को भी।

आइ रघुपति पदहिं परसे, परम प्रीति उदार।
सकल कपि दल कीक दै दै, करत जय उच्चार।
प्रकट निसि यह करी करनी, सुजस लोक बिलास॥
त्रास तजि परगास कीन्हें, तरनि उदित अकास॥३२॥

दोहा

निज बल तो गोपाल भनि, मिटत त्रिविधि संताप।
संकट कोटिन हरन को, येकै राम प्रताप॥३३॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल
बिरचितायां लक्ष्मन - सक्ति - कष्ट - विमोचनोनाम
एकचालीसोध्यायः॥४१॥

मेघनाद-बध-वर्णन

४२

झूलना

होत जय जयति धुनि, राम दल माह सब। सुनत लंकेस, मन हारि मान्यौ।
अजर दोउ अमर है पुरुष पूरन कोई। बैर कीन्हों बिना भेद जान्यौ॥
कौन समरत्थ शिव-सक्ति निःफल करै। सकल परपंच यह देव ठान्यौ।
लाज गवरीस कौं, आज दस सीस की। रीछ बल कीस को को सकान्यौ॥१॥

सवैया

मंदोदरी—
जौ लगि ईस मैं सक्ति हुती, नृप तौ लगि देव अदेवन जीते।
भूलि हू काम किये जब हीं जब, पूर पर्यौ, सब के बल रीते॥
उत्पति अस्थिति नास लिखी विधि, को न पर्यौ मुख काल के भीते।
हौंस न राखहु राघव सौं कहि माखन जानहु वै दिन रीते॥२॥

चाप उठाइ नरेसन कौं मद ढाहि दई है विदेह की जाई।
ब्याह भयौ जित सौं कहि माखन, राज छुड़ाइ बनै भटकाई॥
सौ तुम आनि धरी गढ़ भीतर, बैठत ही पुर आगि लगाई।
है नृप दोष की मूल सिया यों रहीं जहं हीं सु तहीं तहँ खाई॥३॥

जादिन तें तुम बैर करे नृप, पूर परी नित है उन ही की।
जौ न लग्यौ पुरुषारथ एक हु, तौ अजहूँ न गई कछु जी की॥
सीतहि सौंपि गहौ पद-पंकज, छोड़ि परेष असेस मनी की।
आपने काजहिं लाज कहां, सरनागत तें तिहुँ लोक धनी की॥४॥

---

१. गवरीस : शिव।
२. रीते : रिक्त। भीते : डरकर।
४. परेष : आसरा।

दोहा

रावन—

सुनत दसानन बरि उठ्यो, दियो कोपि करि गारि।
तोहि छुद्र मति चाहिये, ह्वै रावन की नारि ।।५।।

घनाक्षर

चौंसठि जुगनि भरि कीन्हें राजधानी वैठि। बीस भुज दंड बल सीखि कै सयानी ह्वै।
सुर नर नाग नग जच्छ दनु रक्षा की। कन्यनि पै सासनि चलाई महारानी ह्वै।।
माखन कहत आजु देखि नर रच्छ कपि। हमही दिखावै त्रास, मंत्रकी निधानी ह्वै।
येक सरनागत विहाय वामदेवजू को। कौन के सरन जाइ मोसें अभिमानी ह्वै।।६।।

सवैया

हौं वरदान लह्यो जितनो, तितनो तिहुं लोकनि मैं अजमायो।
मानि कै हारि भजे सिगरे, कहि माखन काहु न जोम पुजायो।।
राम मिलै मन-कायन तें, मोहि तू अब चाहति पाँइ परायो।
प्रान बिहीन करौं तिहि कौ, जिन काहू अधीन की बात बतायो।।७।।

दोहा

मेघनाद—

कोपि तबै पन रोपि कहि, मेघनाद अनखाइ।
सत साहस कौं छोड़ि कै, कौन दीन ह्वै जाइ।।८।।

घनाक्षर

काहे कौ हौं करत विचार मति भूलि भूलि। मेरे भुज-दंडन के बल कौं बिसारि कै।
दीन्हें वरदान त्रिपुरारि जे त्रिकट मोहि। कौन रन रंग जुरै एतौ व्रतधारि कै।।
बारह बरस छुधा त्रिषा निद्रा काम हूँ कौ। माखन कहत साधै सुभट विचारि कै।
अंजुलि तिहारे बीच सीस जोई डारि सकै। सोई बल बीरसकैमोकौंरनमारि कै।।९।।

---

५. बरि उठ्यौ : क्रोधित हुए।

६. सयान : चतुर।

चंचला छंद

यों सुनाइ मेघनाद, जात भो सु जज्ञ काज।
स्थान को निकुंभिला, सजाइ लै समस्त साज॥
भूमिपा सहस्त्र तीन, एड़का सहस्त्र सात।
चारि लै सहस्त्र गौ, अजादि पुत्र को प्रभात॥१०॥

लै सुरा भराइ कुंभ, पूर कै सहस्त्र दोइ।
आपु हीं सु जज्ञ पाल, जज्ञकार को सु होइ॥
बैठि कै निसंक ह्वै, जपै सुमंत्र को बनाइ।
होम तौ विधान सों, करै कृसान कों उठाइ॥११॥

छप्पै

विभीषन—
समय विभीषन जानि, राम सों विनय जनाए।
मेघनाद मख करत, कवच रथ बानहि ताए॥
जब तें होइ न सिद्ध, विघन तब तें प्रभु कीजै।
नातरु होंहि विकार, सकल दल बल मह छीजै॥
—कोइ बीर सैन मह सोधियहि, इंद्रीजीत अजीत हद।
—जिहि साधन द्वादस बरस को, निद्रा तृषा अहार मद॥१२॥

दोहा

सकल सैन सोधन किये, रीछ बलीमुख बीर।
इंद्रीजीत न एक हूं, सुनि अधीर रघुबीर॥१३॥

मालती

कहि रघुनाथ गाथ यह सुनि कै, साथ कौन ऐसो बल भार।
को साधक इतने दिन सब कौ, मेघनाद को मारनहार॥
डारि दये सारंग धरनि पर, करि माखन मन सोचि विचार।
हा हा प्रान प्रिया वैदेही, भयो पराक्रम अब सब ख्वार॥१४॥

---

१०. निकुंभिला : वह स्थान विशेष जहां मेघनाथ ने यज्ञ किया था। भूमिपा : भूमिशय, जंगली कबूतर। एड़का : एण, मृग। गौ : गाय। अजादि पुत्र : बकरी के बच्चे।
१३. बलीमुख : बंदर।
१४. सारंग : धनुष। ख्वार : नष्ट।

रुचिरा छंद

सुनि सुनि हरषि हरषि तब लच्छन, पद पंकज सिर नाइ कहे।
जब ते तजै नाथ कौसल पुर, गह गह्वर वर पंथ गहे॥
बिनु सासन सब असन पान रस, साधि हृषी तन स्वाद दहे।
कहि माखन इंद्रारि बंधन कों, श्री मुख अज्ञा चहत रहे॥१५॥

द्रुमिला

वरदान दये त्रिपुरारि घने, अरु देहि जिते, तेहि हौं न डरौं।
धरि कै सत रूप सहाइ करें, तब हूं न बचै पन पंज धरौं॥
कहि माखन श्री रघुनाथ कृपा बल, पंकज-पायन सौंह करौं।
दसकंध को नंद, पुरंदर कौं रिपु, मारि कै बानन प्रान हरौं॥१६॥

छप्पै

चूमि वदन रघुनाथ, हरषि निजु हाथ माथ दिय।
महावीर वीराधि वीर, कपि रीछ बोलि लिय॥
लंकेश्वर सुग्रीव हनु, अंगद नल नीलहि।
जामवंत बलवंत, कुमुद घन घोष सुसीलहि॥
—भट भीर धीर माखन कहत, मेघनाद बल प्रबल अति।
—प्रभु सीख देइ सौमित्र संग, विदा करे बहु जूथपति॥१७॥

नाराच

चलै महा बली गजै, महा सरोस सौं भरे।
सिला विशाल, सैल वृच्छ, आप आप कौ धरे॥
लखे तबै निकुंभिलाहि, मेघनाद कौ तहां।
निसंक जज्ञ को करै, सु संक कौन को कहा॥१८॥

---

१५. गह गह : हरे भरे। गह्वर : वन। असन : भोजन। हृषी : निद्रा।
१८. गजै : गरजते हुए। निकुंभिलाहि : निकुंभ—सुंद और उपसुंद का पिता, प्रह्लाद का पुत्र और कुंभ नामक दानव का भाई। यह रावण का मंत्री था।

करे सु होम आप ही, समस्त साकला दहै।
सु बैठि वीर आसनं, सरासनं भले गहै।।
विलोकि रीछ बानरं, प्रचंड बात यों उठ्यो।
मनो समस्त सैल कौं, सु बज्रपानि है रुठ्यो।।१९।।

उड़े दिसा दिसा कपीस, पांइ ठाहरे नहीं।
महा बली सु दूरि तें, परे परे तके, तहीं।।
लखें निसंक होमि होमि, भौंह कौं मरोरि कें।
चले जु जज्ञ भंग कों, पतंग सैन जोरि कें।।२०।।

दोहा

परे दूरि तें सब तकें, चले न कछु व्यवसाइ।
उठत बात आघात के, परे कहूं ते जाइ।।२१।।

त्रोटक

हनुमान तबै पितु सौम्य करे।
उमड़े बल सौं अति रोस भरे।।
कटि मूल लंगूर लपेटि खरे।
घननादहि कूदि के जाइ धरे।।२२।।

गहि फेंकि दये, मख के थल सौं।
चढ़ि ऊपर दाबि भुजा बल सौं।।
नख दंतनि अंग बिदारत हैं।
कसि कें मुठिकानि प्रहारत हैं।।२३।।

नल नील तहीं न रहे हटके।
मख साजु दिसा बिदिसा फटके।।
सब मारि बिधंसित जज्ञ करे।
परिचारक लोगनि जाम दरे।।२४।।

---

१९. बात : आँधी। बज्रपानि : इन्द्र।
२०. पतंग : परवाना।
२१. व्यवसाय : उपाय। बात : हवा।
२२. पितु : पवन। सौम्य : शांत।
२४. हटके : रोके।

तब इंद्र-अराति सम्हार कर्‌यौ।
हनुमानहि क्रोध समेत धर्‌यौ॥
बल सौं दस मुष्टिक जोर हन्यौ।
विथक्यौ तन, विह्वल बीर गन्यौ॥२५॥

मल्ल के पसु सौं गहि मर्दन कै।
मुख सौंह करैं जु कपर्दन कै॥
लखि अंगद लातहि कूदि दये।
झटके गहि केस सरोस भये॥२६॥

दोहा

झटकत अंगद के तहाँ, भयो अलोपित बीर।
फिरि धनुक सर धरि गज्यौ, मेघनाद रनधीर॥२७॥

घनाक्षर

लाल लाल लोचन, कराल काल रूप सम। मेघनाद कोपि धनु बान धरि धायो है।
चोखे चोखे विषम नराचन सौं बेधि बेधि। जूथपति जूथन दिगंतनि पठायो है॥
लै लै सैल साखी, रीछ साखा मृग कूदि कूदि। मारैं धरि धरि आप आप मनभायोहै।
माखन कहतहाँक दै दै हलकारि। बीर लच्छन की सेना, सब लच्छन उड़ायोहै॥२८॥

भुजंग प्रयात

तबै भूप सुग्रीव लंकेस धाये।
सिलाघात केते गदा धाइ घाये॥
गिर्‌यौ भूमि कैं बीर, त्यौं ही सम्हार्‌यौ।
हनें बान द्वै द्वै, नृपै खेत पार्‌यौ॥२९॥

तबै दीह लै पर्वतै जाम मारे।
नलौ नील लै वृक्ष द्वै द्वै कचारे॥
भयो लोप, ह्वै कोप सौं फेरि धायौ।
घनै घाइ दै दै, सु जोधा खसायौ॥३०॥

---

२५. अराति : शत्रु। इंद्र-अराति : मेघनाद।
२६. कपर्दन : शिव।
२८. साखी : शाखावाले वृक्ष।

घनाक्षर

जेते सब धाये गाजि, सेनापति सैन साजि। तेते भटभीर घने घायन तें घरकें।
काहू को त्रिशूल सेल सकति बिसारबान। उल्मुक अनेगन के अंग आगि भरकें॥
माखन सुकवि हांक दै दै सुर-राज-रिपु। एकहू न आनें आंखि नीचें ऊंचें बेरकें।
नील हनुमंत नल अंगद औ जामवंत। बीर बलवंत भारे मारे खेत फरकें॥३१॥

छप्पै

उठ्यौ कोपि सौमित्र, साधि इच्छा सतिच्छ सर।
करत घोर टंकोर, दौरि मारे सु जोर भर॥
हनत परस्पर बान, एक एकनि लगि खंडत।
भरि भरि रोस अपार, मार मारहि मुख मंडत॥
=बीराधि बीर बलवान दोउ, अति प्रचंड भुज-दंड-बल।
=इक संग जंग रंगित प्रबल, भनि माखन रन रंग थल॥३२॥

घनाक्षर

लक्ष्मन—

देवनि सतायो, सेवा इंद्रहि करायो। सब कीन्हों मन भायो, जेती भाई मनकामकी।
ईस वर पायो, महा मगज भुलायो। माया विद्या अधिकायो, पढ़िआयोदनुधामकी॥
माखन कहत जान्यो, सकल अकर्म सान्यो। जुगत अनेग ठान्यो, अति अतिमामकी।
तो पें रघुवंसलाज,काजनसुधारौआज। तोहिजौनमारौंतौंदुहाईमोहिरामकी॥३३॥

मेघनादोवाच—

साँची सब बात, जेती कही तुम भाँति भाँति। देवनि अराति हों, बिलासी घनेरसकी।
जीति जीति राखें बंदिखाने लोक लोकन के। अब तो न चाह कछू चाह एक जसकी॥
माखन कहत कहें मेघनाद देखि देखि। देखत जती से तातें मोरे उर कसकी।
जौन दोउ बंधु बोरों सिंधु के कबंध। तौ दुहाई मुख पंच की, दुहाई मुखदसकी॥३४॥

---

३१. बिसार : विषैला। उल्मुख : उल्का। सुर राजरिपु : मेघनाद। फर : युद्ध।
३३. मगज : मस्तिष्क। अतिमाम : प्रबन्ध।
३४. कबंध : जल। मुख पंच : शिव। मुखदस : रावण।

द्रुमिला

सर तिच्छन तिच्छन लच्छन के, कर तें चाले सत्रु सरीर धँसें।
जनु तच्छक बच्छ सपच्छन तें, दर मंदर कंदर जानि बसें।।
लगि श्रोननि बर्महि चर्महि बेधत, श्रोन समूहनि को उबसें।
भरि माखन पूर प्रवाह मनो गिरि गौरिक की झिरिलानि लसें।।३५।।

करखा

गरजि घन घोर, करि घोर उतपात तब। बात-आघात जलधार बरषै।
कबहुँ बहु धूरि, बस,-पूत बरषन करें। हनत उलमुक सिला, सैल हरषें।।
बान संधान अति, त्रिसिष सर गूढ़ पा। सेषतन देख परिवेष परषें।
सुकवि माखन भनै, जुद्ध माया। महानंद-दससीस कौं कोपि करषें।।३६।।

छप्पै

प्रबल जुद्ध छल बल समस्त, माया विज्ञापन।
लच्छन लच्छ विधान, बान मंत्रित उत्थापन।।
छन महँ स्वप्न समान, कियेउ रघुबंस वीर जब।
हनेउ सत्रु करि क्रोध, हृदय इक गदा वज्र तब।।
= इहि घाइ अनंत सु घूमि करि, विकल अनंता पर गिरत।
= हलकारि हाँक हनुमान दिय, भनि माखन रन महँ भिरत।।३७।।

घनाक्षर

हाँक के सुनत वीर लच्छन सम्हारि उठे। मानो मृगराज गजराज पर कोपिके।
साधि कै सरासन कराल काल रूप सर। सत्रु के शरीर सेही कीन्हें पाँइ रोपिके।।
झूमत झुकत धीर धरनी धराधर सौं। बरसें असेषवान राखे तन तोपि कै।
माखन कहत बरदानिकेगुमानि। फेरि गाज्योजातुधान,घनेछायनकौंलोपिकै।।३८।।

---

३५. तच्छक : तक्षक नाग। दर : स्थान। वर्म : कवच। उबसें : उद्वासित करना। गिरि गैरिक : गेरु का पहाड़।

३७. उलमुक : अंगारा। बसु : सब में बास करने वाला। बस पूत : हनुमान। सेषतन : लक्ष्मण। परिवेष : परिस्थिति।

३७. विज्ञापन : प्रदर्शन। लच्छन : लक्ष्मण। उत्थापन : उठाना। अनंत : लक्ष्मण। अनंता : पृथ्वी।

३८. सेही : साही नामक जानवर जिसके शरीर पर कांटे होते हैं। फेरि : पुनः।

द्रुमिला

हलकारि इतै घननाद हन्यौ, सर चोट चलै उत लच्छन के।
लगि बाननि बान कटै विकटै, प्रकटै वपु वेधन तच्छन के॥
भनि माखन देव दुरे सब देखत, कंपत कामिनि जच्छन के।
भरि अच्छ निरीच्छन कै दुहुधा, जय जीति रटै निजु पच्छन के॥३९॥

रुचिरा छंद

करत जुद्ध इहि भाँति परस्पर, दिन समस्त सब विति गयो।
टारे टरत मरत नहि मारे, भरे रोस भहरात न यो।
छूटत बान विसार बज्र सम, मनहु अखंडल अचल हयो।
उचरत अमर धन्य रवि वंसी, धन्य वृषा-रिपु समर ठयो॥४०॥

सोरठा

कहे बिभीषन टेरि, सुनहु लाल लच्छन विनय।
तब सठ उठै न फरि, पितु अंजुलि जब सिर परहि॥४१॥

छप्प

अति सरोस सौमित्र, बान दस दिव्य हनेउ तब।
लगत बज्र सम जाइ कढ़ेउ अंग अंग फूटि सब॥
घुकत धरनि धरि धरकि, धीर घननाद ईस कहि।
साधि विषम सरचंड हनेउ, रघुवंस वीर गहि॥
=संध्याहि काल लंकेस कर, सीस जाइ अंजुलि परत।
=दसकंध मनहु तर्पन समय, सुत सिर सिव अर्पन करत॥४२॥

---

३९. वपु : शरीर। जच्छन : यक्ष। अच्छ : आंख।
४०. वृषा : इन्द्र। वृषा रिपु : मेघनाथ।
४२. घुकत : लड़खड़ा कर गिर पड़ा। ईस : शिव।

सवैया

जूझत ही घननादहि के, जय दुंदुभि दीरघ देव बजाये।
फूलन के बरषा बरषें मिलि, लच्छन लाल के सीस सुहाये॥
आनंद हूलि मची विबुधालय, किन्नर जच्छ विजच्छन धाये।
लै सुर राज समाजनि स्यों, भनि माखन मंगल कीरति गाये॥४३॥

छप्पै

देवा:ऊचु:—

जयति सुमित्रा-नंद, कंद सुख, रवि कुल मंडल।
प्रकट सेष अवतार, भार भुज-बल रिपु-खंडन॥
इंद्रीजीत अजीत, प्रीति, आरज-पद-सासन।
बाल जती, मति-धीर वीर संगर पवनासन॥
=रज तेज प्रबल तप तेज वर, किय सुरेस सुर पुर अभय।
=गुन बरनि कौन माखन कहत, लच्छन लच्छ अनंतमय॥४४॥

दोहा

सैन जिते घायल गिरे, सबही उठे सम्हारि।
परसे पद सौमित्र के, अस्तुति विविध उचारि॥४५॥

उड़ियाना

आवत आनंद अतिहि, सैन हरष बाढ़े।
फिरि फिरि रघुवीर तकत, अनुज मगहि ठाढ़े॥
अहनि विगत भो, समस्त रजनी मुख आई।
कौन भाँति जुद्ध होत, खभरि न कछु पाई॥४६॥

---

४३ विबुधालय : देवताओं का घर।

४४. आरज : आर्य। पवनासन : पवन खाकर जीने वाले। रज : रजपूती, क्षत्रित्व। अनंतमय : शेष नाग के अवतार।

४६. अहनि : अहः दिन। रजनी-मुख : संध्या।

पहुँचे सब तैसिहि करि, जै जै किलकारी।
लोक अमर अनक-रवन, होत झनक भारी॥
लछ्छन श्री राम चरन, पंकज-रज लीन्हें।
चूमि बदन, आसिष रघुबीर अमित दीन्हें॥४७॥

सैन सकल पायन परि, चार्‌यो दिसि घेरे।
नायक दच्छिन समान, राम सबन हेरें॥
बानर पति निश्चर पति, चरननि सिर नाये।
बार बार करि प्रनाम, अस्तुति मुख गाये॥४८॥

दोहा

जहि विधि लक्ष्मन सौं कियो, मेघनाद रन भंग।
कहे बिभीषन प्रभुहि सो, सब समुझाइ प्रसंग॥४९॥

मेघनाद से बीर नहिं, गयो कठिन ते मार।
कुंभकर्न ते हैं कछ, लंका गढ़ कौं भार॥५०॥

करत कुतूहल कटक इत, दलि के दानव दाप।
बलकें बल गोपाल भखि, जिन बल राम प्रताप॥५१॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां मेघनाद-बध-वर्ननोनाम बयालिसोध्याय:॥४२॥

---

४७. अनक : बड़ी दुंदुभी। रवन : रव, आवाज।
४८. नायक दच्छिन : दक्षिण नायक।

कुंभकर्ण-बध

४३

रुचिरा छंद

उतै दसानन सुत सिर देखत, महा मोह में बूड़ि गयो।
करत विलाप प्रलाप अपारन, नहि सम्हार तन वितत भयो॥
हा हाकार सकल पुर लंका, अति संका घन सौं उनयो।
बरखै जल संताप भानु कुल, पुर सोक गढ़ घेरि लयो॥१॥

सवाई छंद

सिर धुनि धुनि रोवति मंदोदरि, कहति विषम बानी अकुलानी।
करि भुज बीस गरब कुल नासक, बोरि दई सिगरी रजधानी॥
अब काके बल करहु बलकना, बाद उठाइ, बात नहि मानी।
कहि 'माखन' श्री राम कृपा बिनु, को उबर्‌यौ पसुपति बरदानी॥२॥

सवैया

राम कृपा कल्पद्रुम कौ तजि, जंतु-फली-फल मूरख सेयौ।
पाइ कै राजसिरी रस स्वाद, सबै दिन बाद-बिषै बस खेयौ॥
क्यों अब होइ भलो मति की गति, छोड़ि धरा-मग जे भरिडेयौ।
माखन भाखै सबै नृप तो कहं, जात सिया-पति-सायक छेयौ॥३॥

पाठान्तर-३—बिषै बस : बिषै सब (१,२)

---

२. पसुपति : जीवों के मालिक शिव। बरदानी : शिव से वर प्राप्त रावण।
३. जंतुफली : गूलर। जे भरिडेयौ : जो भटकता फिरा। छेयौ : छेद्यौ, छेदा।

भुजंग प्रयात

रावन—

कहा नारि बौरी हिये हारि मानै।
मर्‍यौ सो मर्‍यौ, सोक कौ कौन ठानै॥
जिये कल्प केते, करैं राजधानी।
परैं अंतहूँ काल कै जाल रानी॥ ४॥

जुरैं जुद्ध के बीर सत्याहि हारे।
तिहूँ लोक निंदा, निरैं पाइ धारे॥
महाबीर गर्वी गहै पैंज को जो।
तजो नाहि छत्री, धरे धारना जो॥ ५॥

बने बीर है हौ, बली बंधु दोऊ।
जुरैं राम सौं, जाइ संग्राम सोऊ॥
यहै बोलि कै कुंभकर्नै जगायौ।
घनै साजु दै, लोग केते पठायौ॥ ६॥

सवैया

देखत सैल समान सदीह, पर्‍यौ परजंक निसंक सुरारी।
घोर घटा घरकै जिहि नासिक, स्वांस अघात तजै मुख भारी॥
पाइ पलोवति है दनुजी दस, हाथनि मुद्गल की पटतारी।
यों सुख सोवत कुम्भकरन्न, दियौ वर रीझि कमंडलधारी॥ ७॥

घनाक्षर

प्रतिहार—

जागिये दनुज राज, बोलैं महराज आज। गाढ़े कहूँ काज, हाँक दै दै दनु हारे हैं।
केतिकौ हलावें, गहि बाहहि डुलावैं। धने कान के समीप तौ बजावत नगारे हैं।
'माखन' कहत क्यों हूँ नींदहु न मोचत है। सोचि सोचि जातुधान किन्नर हँकारे हैं।
गंधरब ठाने गान, रंभा नृत्य के विधान। तान के झनक कुंभकरन निहारे हैं॥८॥

---

५. निरैं पाइ : नरक में पाँव।

७. मुद्गल : मुगदर। पटतारी : पिटारी। पाइ पलोवति : पैर मींज रही है। कमंडलधारी : ब्रह्मा।

८. हँकारे हैं : बुलवाया है।

दोहा

उठि बैठ्यो, अँठ्यो, तक्यो, जपा कुसुम सों नैन।
कारन कौन जगाइयो, कहि गरबीलो नैन ॥९॥

भुजंगप्रयात

प्रतिहार—

सुनो देव, बोले महीपाल पासं।
कहेंगे कछू आप ही, जौन भाषें॥
सुने बैन के मेघ माला हकार्‌यो।
कियो न्हाइ पूजा विधिर्ध्यान धार्‌यो ॥१०॥

तहाँ भष्छ को लष्छ जेते मगाये।
अजा - पुत्र भैंसा घने अँड़काये॥
किते ऊँट दे खच्चरें कौर कीन्हें।
घटा वारि धारा भरे स्वांस लीन्हें ॥११॥

लिये दिव्य वस्त्रादि सस्त्रादि नीके।
चलें आस ही पास भूपाल ही के॥
जहाँ संग मंदोदरी लंकनाथै।
तहाँ नाइयो कुंभकर्न सु माथे ॥१२॥

दोहा

नाइ माथ दनुनाथ कों, भामिहि कियो जुहार।
बैठ्यो सभा दबाइ कें, मानहुं विंध पहार ॥१३॥

राजावाच—

सुनो बंधु विग्रह भयो, भई सकल विपरीति।
नर बानर भल्लुक सबै, लये दनुज दल जीति ॥१४॥

---

९ जपा कुसुम : गुड़हल, देवी फूल।
१२. आस है : शीघ्र ही।
१३. विंध पहार : विन्ध्याचल :

सिया हरन दै सब कथा, जुद्ध विरुद्ध बनाइ।
कहे सहोदर सौं सबै, लंकेश्वर समुझाइ ॥१५॥

छप्पै

कुंभकर्न—

कुंभकरन कर जोरि, विनय सुनिये मम भ्राता।
राम मनुज जन जानि, जानि त्रिभुवन के त्राता॥
सनकादिक के वचन, चित्त में सुधि कछु कीजें।
अब कै इहै विचारि, टारि रघुबर कौं दीजें॥
—जो होनी हुती सु ह्वै गई, हमंहि दिव्य बरदान हर।
—मत-सार महै 'माखन' कहत, आपु राखु सब मंत्र पर ॥१६॥

दोहा

मिलिअै सीतंहि सौंपि कें, कपट निरंतर क्रुद्ध।
छल बल सौं फिरि सम्हरि कें, करिये जुद्ध विरुद्ध ॥१७॥

घर-भेद उन ही मिलो करें आन की आन।
गई सयानी बूड़ि जब, दये बिभीषन जान ॥१८॥

झूलना छंद

रावन—

सुनत करि कोप पन रोपि रावन कहै। मंद-मति मूढ़ धिक धिक सु तोही।
खाइ भरि पेट, परि सोइ जान्यौ सदा। देत अज्ञान यह, ज्ञान मोही॥
जुद्ध कौ नाऊँ सुनि त्रसित कायेर कंप्यो। मिलहि किन जाइ घननाद द्रोही।
बैर बल आपने, राम सौं हौं कियो। और सब बाट के ही बटोही ॥१९॥

---

१९. मिलहि किन जाइ : जहाँ मेघनाद गया है, वहीं स्वर्ग में जाकर तू भी उससे मिल।

सवैया

सेस धरे धरनी, विष संकर, सिंधु हिये बड़वानल धारे।
होइ भली न भली, तबहूं नहि पैंज तजैं पन के रखवारे॥
हेत सगारथ बैर मतौ, कहि 'माखन', ठानि बड़ेन सौं भारे।
और सबै बिनसैं तिहुं लोक, जियैं जस बोल के पालनहारे॥२०॥

दोहा

चलि चलि कायर समुख तें, रहे सोइ किन आइ।
कैं निजु जीव बचावने, गहै बिभीषन पांइ॥२१॥

सवैया

पुत्र समान, पितामह कों बर, कौन लह्यौ तिहुं लोकनि माँहीं।
पूरन तेज तपोबल को, जिन सों नर, देव, अदेव पराहीं॥
को समरत्थ जुरै इन सौं रन, मानत हारि बली सु सदाहीं।
जानत भूप भुजा बल को, बलवंत है कुंभकरन्न से नाहीं॥२२॥

कुंभकर्न वाच—

हों समुझाइ कह्यौ हित की, चित मैं तुम्हरी यह जो नहि आई।
जानत मो करतूति न आपु, विकारत हो अपनी अधिकाई॥
देव अदेव कहा बपुरा नर, कौन जुरै रन मोसहुं भाई।
मारि करों तिहुं लोक अलै, करी कुंभकरन्न विरंचि दुहाई॥२३॥

दोहा

लखें सबनि करतव्यता, गये बलकि सब मार।
नर बानर भल्लुक हमैं, विधना दियौ अहार॥२४॥

उड़ियाना

कुंभकरन, भीमबरन, भूपहि सिर नायौ।
क्रोध सहित, सस्त्र गहित, समर भूमि धायौ॥
सोहत घन, कज्जल तन, कज्जल गिरि कैसे।
दीरघ अति, अरुन नैन, जपा पुष्प जैसे॥२५॥

---

२०. हेत : हेतु। सगारथ : सगे सम्बन्धी। बिनसैं : नष्ट हुए।
२१. समुख : सन्मुख।
२२. पराहीं : भागते हैं।

बूझे रघुवर विलोकि, कौन असुर आव।
समन मनहुँ दमन हेत, दसन काढ़ि धावं॥
विनय किय विभीषन अति, तीखन तप मानो।
नाथ यहहि कुंभकरन, काल रूप जानो॥२६॥

संकत त्रैलोक इन्हैं, जेते बलधारी।
सुर-नर-दनु - भागि, पाइ निद्रा अधिकारी॥
जागे दिन दोइ, सोइ, सब्द एक माहीं।
संकट जब परत नीठि, भूप तब जगाहीं॥२७॥

छप्पै

करत घोर तपसा, विरचि, चाहत वर दीन्हें।
गुनि आगम पुरहूत, पितामह सों मति कीन्हें॥
जब प्रसन्न विधि होत, गिरा मुख नींद कहाई।
जागहु छठयें मास, येक दिन भोजन पाई॥
–वरदान दये यह हरषि जब, तिहि ते दनु सोवत सुरुख।
–कहि माखन ना तरु त्रिपुर महँ, कौन याहि जीतत पुरुष॥२८॥

दोहा

बल - पूरो, सूरो समर, नेक न मुरैं मदंध।
इहि मारे, भारे गरब, मन हारे दसकंध॥२९॥

घनाक्षर

देवन-अराती देखि, दूषन-निपाती कहैं। जूथ पति जेते, रीछ बानर महा बली।
देखौ यह आवत कलिंदविंध हूते दीह। दावें लेत देत सब रंग रन की थली॥
माखन सुकवि किलकारी बनचारी दे दें। रोकैं अब खर्वन अपंथ पंथ हूं गली।
गाज्यौकुंभकर्नचाहि,जोरघोरनादकरि। हाल्योनभमंडल,ससंकि मेदनी हली॥३०॥

---

२६. समन : यमराज।
२७. भागि : भाग्य।
२८. पुरहूत : इन्द्र। गिरा : सरस्वती, ब्रह्माणी। सुरुख : अनुकूल, प्रसन्न।
३०. दूषन-निपाती : राम। दीह : दीर्घ।

छप्पै

लियेउ वीर चहुँ ओर घेरि, दिसि बिदिसि अकासहँ।
जिमि उडगन चय चाहु, राहु-मंडल परगासहँ॥
सैल सिला थर वृच्छ, रिच्छ कपि कोटिन मारत।
सुप्रतीक तनु रेनु, पवन जनु उड़ि उड़ि डारत॥
—करि कोप बाहु विस्तार करि, पकरि पकरि सबहिन गिलत।
—निजु सदन जानि जनु विपिन-चर, सिखर कंदरहि कौं पिलत॥३१॥

दोहा

ऊंच ताल इकईस कौं, सात ताल विस्तार।
लीलत सैन समूह कौं, पूजत नहीं अहार॥३२॥

सवैया

सैन समूह महा कपि रीछन, लै कर सौं गहि देव अराती।
लीलत कोटिन कोटि निसंक, अघात न कैसे हुं है उतपाती॥
पाइ अचानक गंध सु मर्दन, मर्द्दन मारि कर्‌यौ निजु छाती।
श्रोण तुचा उबर्‌यौ नहि अस्ति, सुगंधि के लालच मीड़ि निपाती॥३३॥

झूलना छंद

नील नल जाम, सुग्रीव अंगद हनू। हनत बहु घाय, अति रोस दै कै।
भगत दिसि विदिसि लगि, तकत जिहि दिसि जिहैं। उड़तजिहि स्वांसते, त्रासलेकै।
धरत नहि धीर, कोइ वीर सन्मुख परै। भीर भहरात, थहरात भै कै।
सुकवि माखन भने हाँकि हंकार ही। बंधु दसकंध को, सौंह कै कै॥३४॥

---

३१. चय : समूह : परगासहँ : प्रकाशित होना। सुप्रतीक : ईशान कोण का दिग्गज, शिव। विपिनचर : बंदर। पिलत : प्रविष्ट होना।

३२. ताल : ताड़ का वृक्ष। इकईस : इक्कीस।

३३. अस्ति : अस्थि, हड्डी। मर्द्द न : वीर पुरुष। निपाति : नाश।

३४. बंधु दस कंध : कुंभकर्ण।

रुचिरा छंद

गहि गहि गिलत गिलत दनुज कपि रीछन, मनहुँ सैन पर काल पर्यौ।
कढ़ि कढ़ि भगहि श्रोन नासा मग, जनु नट कुण्डल खेल कर्यौ॥
पायो पकरि नृपति सुग्रीवहि, दाबि कुच्छ परतक्ष धर्यौ।
चल्यौ आसु लंकेसु पासु लैं, बंदिवान करि, कोप भर्यौ॥३५॥

छप्पै

लै सुग्रीवहि कुंभकर्न, गढ़ लंक सिधारो।
देखि थकित कपि रीछ सैन, भय तैं भहरायो॥
कूदि हनू करि रोस, पुष्टि इक लातहि मार्यौ।
गिर्यौ मुरछि दनुराज, नेक नहि देह सम्हार्यौ॥
= तब छूटि कीसपति दंतगहि, दनु नासा खंडन कियेउ।
= दोउ करनि पकरि दोउ श्रावन लै, प्रभु चरननि तर धरि दियेउ॥३६॥

नाराच

उठ्यौ सम्हारि कुंभकर्न रूप तैं बिरूप ह्वै॥
बिहीन श्रोन नासिका, गयो बिलोकि कर्ब ह्वै॥
भयो जु भीम आननौ, प्रवाह रक्त के गिरैं।
किधौं गिरीदरीन गैरि घोरि, नीर तैं झिरैं॥३७॥

भगे कपीस रिच्छ, गैल पाइ पुंज जो गिलै।
मनौं कुवेनि छिद्र, मीन कूदि कूदि कैं पिलै॥
भयौ सलज्ज दैत्य देखि, कोपि घोर कै गज्यौ।
प्रचारि राम सामुहैं, कदाहि बज्र सौं तज्यौ॥३८॥

---

३७. बिरूप : कुरूप। भीम : भयंकर। आननौ : मुख। गैरि : गैरिक, गेरु।
३८. कुवेनि : तुरत पकड़ी गई मछलियों के रखने की टोकरी, कुवेणी। गैल : रास्ता
गिलै : निगला।

घनाक्षर

भीदुर तें भीमगदा आवति बिलोकि राम। बान अध चंद्र छोड़ि बीच डारे खंडकै।
आतुर असुर दीह् अचल चलावत ह्वी। कढ़ियो नराज भुज-दंडहि बिहंडि कै।
बाम कर बिटप बिसाल लै कै धायो गाजि। भूरुह सौं भूतल खसाय सर छंडि कै।
छूटत छजत छिछ पंचहू पिकजमान। मानी नट इंद्रजाल ज्वाल खेलै मंडि कै।।३९।।

द्रुमिला

इक अंसिहि भूरि भयानक मूरलि, तापर ह्राल बिहाल भयौ।
भभकै बहु श्रोन समीप जितै कित, मानहु काल कला उनयौ।।
गिरि कंदर सौ मुख बाइ पिल्यौ, प्रभु ऊपर कोपनि अंग छयौ।
बरदान गुमान भर्‌यौ मन मैं, तिहि ते नहि पीछेहि पाँइ दयौ।।४०।।

भुजंगप्रयात

कट्यो कर्न नासा, कट्यो बाहु दोऊ।
तउ कोप को, नैंक लोप्यो न सोऊ।।
पिल्यो राम कैं सामुहे बीर आवै।
कपी रीछ सैना न काहू सकावै।।४१।।

कसे अत्र दंतावली दीह दानौं।
भयो मंद के बंधु ते भीम मानौं।।
हँसे हंस बंसी, चितै रोस ताकैं।
दनुर्दाप—हारी धनुर्वान जाकै।।४२।।

---

३९. भीदुर : वज्र। अचल : पर्वत। भूरुह : वृक्ष। नराज : नाराच, बाण। छिछ : रक्त की धारा।

४०. बाइ : फाड़कर।

४२. अत्र : अस्त्र। मंद : शनीचर। मंद के बंधु : शनि के भाई, यमराज। हंस : सूर्य : हंस बंसी : सूर्य बंसी। दनुर्दापहारी : दनुज के दाप को हरने वाला।

छप्पै

साधि बान अध चंद्र, जंघ खण्डन दोउ कीन्हे।
बालि ताल सम काटि करन कौतुक जनु लीन्हे॥
उच्चटत आवै लोथि, घने घघ्घन ते पूरन।
होत रगर लगि सैल सिला, तरवर बहु चूरन॥
= अभिलाष राम छवि निरखि दनु, करि अस्तुति अंतहकरन।
= लोकेस ईस बरदान हर, जयति पतित तारन तरन॥४३॥

सवैया

गंजन देव अदेवन कौं मद, खेल घने रन भूमि विहारे।
कालहु ते विकराल सरासन, ता महुं ब्रह्म नराचहि धारे॥
सैन समान सु वच्छहि में, कह माखन, कोप समेत प्रहारे।
नासन के विधि के वर को, करि कौतुक कुम्भ करन्नहि तारे॥४४॥

दोहा

जीव जोति तिहुं पुर भ्रम्यो, सक्यो न कहूं ठहराइ।
रह्यो लोक लंकेश के, राम चरन चित लाइ॥४५॥

जृम्भत कुंभकरन्न के, बरखे सुमन सुरेस।
बजे दुंदुभी सुरन के, गनि अपच्छ लंकेस॥४६॥

वृष पालक-इषु, इषु-असन, नसत निसाचर दाप।
अभय सदा गोपाल तिन, जिन बल रामप्रताप॥४७॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां कुंभकर्न बधनो नाम तियालिसोऽध्यायः॥४३॥

---

४३. लोथि : शव। बान अध चंद्र : अर्द्ध चंद्र बाण ऐसा बाण है जिसका आकार अर्द्ध चन्द्राकार होता है और गले में जाकर फँस जाता है।

४४. ब्रह्म नाराच : ब्रह्म बाण।

४६. गनि : समझकर।

४७. वृष पालक : धर्म के पालक। इषु : बाण। इषु : पाँच, पंच प्राण।

मकराच्छ-बध-रावण-मंत्र

४४

सवैया

जूझत बंधु सुन्यौ दसकंधर, अंध भयो, न कछू कहि आवै।
पाहन मूरति तें इक आधिक, नैननि नीर नदीनि बढ़ावै॥
हूलि परी गढ़ लंक चहूँ दिसि, काल के डाढ़ तें कौन बचावै।
रच्छस बंस अपक्ष भये सब, एकहि एक को खान सौ धावै॥ १॥

दोहा

अति अधीर सब लंक जन, व्याकुल विकल सरीर।
जानि परी अब सबन कौ, काल रूप रघुबीर॥ २॥

मंदोदरीवाच—

अपनें अपनें मगज में, मनुज जानि कै राम।
करि करि भूप खुसामदी, गए सबै जम धाम॥ ३॥

सवैया

जो दनु जूझि गए सिगरे, रन मंडप तो घननाद सौ मेरे।
हारिहु तें न घटी घट मानेहु, गर्व तें सबंस नासहि के रे॥
पूत सहोदर बीर मरे सब, होहिगे क्यों दल थंभन चेरे।
देखहु धौं नृप खोलि कै आँखिन, को अब पीठ सहायक तेरे॥ ४॥

---

१. पाहन मूरति : प्रस्तरीभूत। डाढ़ : चबाने के चौड़े दांत, चौभर।
३. मगज : मस्तिष्क।
४. जो : जितने। घटी : अभाव। थंभन : थाम्हने वाले।

झूलना छंद

कोपि, सुनि बैन मकराच्छ बोले तबै। नारि मति-मंद का मंत्र जानैं।
पालि कै पैज पन, पार पारै कोई। लेत सो पुरुष जग जस निदानैं॥
नास तिहुँ लोक मैं, होत सब सबनि के। त्रास अपहास कौं जे सकानैं।
ताहि संसार मै धन्य, माखन कहै। तजत नहि सत बर बाँधि बानैं॥ ५॥

आजु दल राम कौं, मारि संघारि सब। सहित सुग्रीव कौ, गर्ब गारौं।
बाँधि तुव देवरै, नैन नासा हरौं। पौन सुत अंगदौ, गहि पछारौं॥
बंदि धरि लच्छनै, देहुँ दनु राज कौं। पैज एतौ सबै, पार पारौं।
तौ जु खर नंद, करि सपत लोकेस कौ। मेटि लंकेस की सोच टारौं॥ ६॥

दोहा

माथ नाइ दनु नाथ कौ, यह कहि चल्यौ सु बीर।
कपि दल हल बल ह्वै गयो, देखि धरै को धीर॥ ७॥

घनाक्षर

भारे भारे सुभट किनारे लगे दौरि दौरि। देखि दीह दानौ कोई धीर न धरत हैं।
काल तें कराल मकराच्छ दोऊ लाल लाल। जाके चाहि चाल गिरि बिंध हूँ डरत हैं।
कज्जलतेकारौ, माथ मेरु हूँ ते भारौ। कहि माखन सम्हारौ, सौंह राम को करत हैं।
खर को किसोर, तके कोप करि जोई ओर। सोई ओर सैना अरराहट परत हैं॥८॥

छप्पै

कहत बिभीषन जोरि जुगल कर, रघुबर पासहि।
भगे सैन भहराइ सकल, लखिजे अति त्रासहि॥
खर-नंदन मकराच्छ, पाइ बिधि सो बरदानहि।
सस्त्र न भिदैं सरीर, अजर अमरहुँ सब जानहि॥
-तिहुँ लोक सोक संताप कर, प्रबल बलिष्टहि जानिये।
-रघुनाथ हाथ सारंग सर, रोस सहित संधानिये॥९॥

पाठान्तर-५—जग जस : जम जस (१,२)

---

५. मकराच्छ : खर का पुत्र और रावण का भतीजा।
६. सपत : शपथ। मकराच्छ : मछली सी आँखें।
८. गिरि बिंध : विंध्याचल पर्वत।

उड़ियाना

आवो दनु कोपि, पेलि, राम सैन माहीं।
देखि रीछ वानर, भयभीतनि महराहीं॥
गर्जो करि घोर नाद, आइ कछुक नेरो।
मानो घहरात मेघ, प्रलयकाल केरो॥१०॥

कोपि जामवंत हनू, अंगद ललकारे।
बृच्छ सैल लै सिलानि, रोस सहित मारे।
खैंचि खैंचि पूछ वीर, तीनौं फटकार्यो॥
जुद्ध करन कौ समर्थ, जात ना निहार्यो॥११॥

दै दै कपि रीछ कीक, भागे भय माने।
बिन्ध्याचल चाहि मनहुँ फेरुक फिकराने॥
देखि देखि हाल, लाल लच्छन धनु लीन्हें।
राम चरन बंदि वीर, आगम रन कीन्हें॥१२॥

रुचिरा छंद

कसि निषंग अक्षय कटि लच्छन, सगुन सरासन बान करे।
खैंचि खैंचि श्रवदिलवित श्रुति ते, छोड़त अति ही रोस भरे॥
जे बेधक बज्रहु ते तिक्षन, ते विधि के वर जानि डरे।
लगि लगि दनुज-अंग, बल भगन, एकहु नाहिन लोम झरे॥१३॥

छप्पै

देखि देखि अति कोप, धनुक लक्षन टंकोरहि।
दिव्य दिव्य सर खरनि, करज तन मैं झकझोरहि॥
गनत न मन कहुँ नैक, विकट चलि निकटहुँ आयौ।
रामानुज कँह पकरि, तुरत गहि कंध चढ़ायौ॥
—कपि रीछ निरखि बहु कूह करि, भुमटि झेलि सबहिन धर्यो।
—दनु झटकि पटकि फटकारि बहु, जात लिये मगजहि भर्यो॥१४॥

---

१२. चाहि देखकर। फेरुक : फेरु, गीदड़। फिकराने : गीदड़ का रोना।
१३. सगुण : गुण युक्त, प्रत्यंचा सहित। बर : बरदान।
१४. खरनि : प्रखर।

दोहा

कसि कसि मुष्टिक सीस मैं, हनत लखन इक मेल।
मनहु केस हर दनुज सिर, ठवि ठवि ठोकत तेल ॥१५॥

घनाक्षर

देखि देखि हाल, देव देवी करें हाइ हाइ। कौन बल पाइ यह संकट कों टारिये।
दीन्हे वरदान, चतुरानन अयान। जान अजर अमर, तासों क्यों न सब हारिये ॥
माखन कहत, सुनौ आरति-हरन नाथ। वार वार त्रिदस पुकार चित्त धारिये।
ऐहोरघुनायक,सम्हारिब्रह्म सायक लै। अैसो मति नष्ट दुष्ट दानव सँघारिये ॥१६॥

त्रिभंगी

जय त्रिभुवनकारी, संकटहारी, दनुज प्रहारी, रूप लये।
अव्यय अविनासी, जगत विलासी, सर्व निवासी गर्व हये ॥
वर ब्रह्म विधंसी, मनि रवि वंसी, नर अवनंसी खेल ठये।
सुनि के सुर बानी, सारंगपानी, सर गुन तानी, कोप भये ॥१७॥

करषा

कोपि खर वंस, निरवंस कैं करन कौं। राम कर करषि सारंग लीन्हें जबैं।
ब्रह्म वर ध्वंस नें, दिव्य ब्रह्मास्त्र गहि। हाँकि मकराक्ष उर माह मारे तबैं ॥
फूटि वज्रांग, कढ़ि तेज सर्वांगमय। झेलि वज्रीमनौ वज्र पर्वत हनें।
देव दुंदुभि बजें, हरषि सुरपति गजें। पुष्प बहुवृष्टिकरि,सुजसमाखनभनै॥१८॥

दोहा

जूझत ही मकराच्छ के, हूलि परी गढ़ लंक।
सुनत दसानन ह्वै गयो, मनहु दयावन रंक ॥१९॥

---

१५. इक मेल : बराबर।
१६. त्रिदस : देवता।
१७. गर्व हये : घमंड को तोड़ने वाले। अवनंसी : अविनासी। सारंगपानी : धनुर्धर
१८. ब्रह्मवर : ब्रह्मा का वरदान। वज्री : इन्द्र।
१९. दयावन : दया का पात्र।

सवैया

लागि रही चहुँ ओर टकाटक, एकन कै मुख एक निहारे।
छोड़त ऊरध स्वांस भरे, दनुजी दनु सर्वसनास विचारे॥
भार हुतौ जितनो गढ़ लंक, गए सब मारि बली बल भारे।
चेतत अंध गुर्जौ दसकंध न, जौं लौ न राम दसौ सिर मारे॥२०॥

चामर

हाइ हाइ ह्वै रह्यौ, समस्त लंक कोट मैं।
पौरि पौरि खोरि खोरि, जे जहाँ सु जोट मैं॥
काहु को कहूँ न नेंक, सुद्धि बुद्धि सूझई।
अंध मूक से सबै, सु कौन काहि बूझई॥२१॥

दोहा

जुरे आइ दनु बंस सब, छोटे बड़े समेत।
बहु सोकित बहु त्रसित उर, बहु तक चेत अचेत॥२२॥

छप्पै

मंत्रसाल लंकेस, सकल परिवार बुलाये।
छोटे बड़े समेत, आइ सबही सिर नाये॥
कहे सबनि सनमानि, लख न धीरज कदराई।
जे कछु कीन्हें कर्म, बात एक न बनि आई॥
—अब जाहि जितिक मति भाई, सो विचारि कारज करहु।
—यह राज धर्म गुनि हानि हठ, तिहि न भुलि एकहु गहहु॥२३॥

पाठान्तर-२३—लखन : लखत (१,२)

---

२०. टकाटक : टकटकी।
२१. जोट : जोड़। बूझई : पूछे।
२३. मंत्र साल : मंत्रशाला। लखन : देखने के लिए। कदराई। कायरता।

सवैया

महोदर—

अंजुलि जोरि कहैं सु महोदर, भूप सुनो मत है इक वैसो।
राम के पास बसीठ पराइ के, भेद अभेद निषेदहु तैसो॥
जूझि गये अब तौ सुत बंध, तजै सत साहस होइ अनैसो।
हारि न हिम्मति जीवत तैं नृप, कीजिअे सोइ परै जब जैसो॥२४॥

नारंतकोवाच—

सीस मैं घाइ बजै जब तैं नहि, तौ लगि लागत आँखि अँधेरौ।
हानि भये, सब बूझि परै, जब आइ अभागि करै घट घेरौ॥
गर्व गिराइ भलैं झकझोरत, राज औ रंक सबै परि हेरौ।
है समयो सब ऊपर तौ, कहि माखन, धीरज जौ कोई केरौ॥२५॥

छप्पै

मंदोदरी—

जब ते घेरे लंक राम, कपि रीच्छ सैन सजि।
तब ते मंत्र प्रयोग, जुद्ध बहु किये अमित गजि॥
पूर पर्यो नहि एक, सकल बल बीर सिराने।
जे कोइ दानव-वंस, काल तिनहुँ नियराने॥
=घर भेद बिभीषन कहि सबै, प्रलय काल कीन्हें महा।
=बलवान दनुज वर सुरन को, नर बानर करते कहा॥२६॥

घनाक्षर

तीनि लोक नाथ रघुनाथ कौं कहत वेद। अजहूं तौ भेद देखौ मन ही मैं बूझि कै।
दीन्हें सुर लोक सब इंद्र को अटल करि। बलि को पताल नर लोक नृप सूझि कै॥
भगति विरोधी तुम्हें जानि कै निकारि लंक। दीन्हें है बिभीषन कौरन मैं अरुझि कै।
तातें और ठौर नासम्हारिभूपसाहसकै। लीजैविस्नुवासराम हाथजूझिजूझिकै॥२७॥

---

२४. बसीठ : दूत।
२५. केरौ : की।
२६. सिराने : समाप्त हुए।

सवैया

जो मिलतें पहिलें सिय लैं, तब तौ सब बातनि होत हँसाई।
दूत के साथ मिलें बनतो, तब तौ कछु बात नहीं बनि पाई।।
जूझि गये परिवार सबै, जिनतें गढ़ लंक हुती गरुताई।
दूसरो कौन विचार सुनो अब, है निजु मारे मरेहि भलाई।।२८।।

रुचिरा छंद

जोग जज्ञ व्रत धर्म धरनि तें, हमरेहि मारे नास गए।
तिहि कारन बैकुंठनाथ गुनि, राम मनुज अवतार भए।
तजि तिन प्रेम, भक्ति मद-गर्वित, जो विरुद्ध करि पैज लिए।
सुर पुर मुक्ति, सु जस महिमंडल, है अब जुद्ध विरुद्ध ठए।।२९।।

गीतिका

रावन—

सुनि हँस्यौ रावन हरषि कै, कहि धन्य मति तुम्हरी अबै।
यह सुनत हम सौं हेत तें, अति आदि अंत कथा सबै।।
जिहि भांति राम चरित्र देख्यौ, कौन सौं मन की कहौं।
सब दुरित-भंजन, गर्व-गंजन, जानि चित नित ही रहौं।।३०।।

दोहा

सुनौ सबैचित दै अबै, कहत कथा सब आप।
जानत बनि गोपाल भनि, जिहि बिधि राम प्रताप।।३१।।

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां मकराच्छ-वध्र रावन-मंत्र वर्णनोनाम चवालिसोध्याय:।।४४।।

---

३०. दुरित : पाप।

रावण-मंत्र यज्ञ-भंग

४५

सवाई छंद

रावन—

एक द्योस सुख सेज महल मैं, सोवत सपन भयानक देख्यौ।
जो कछु भयो लखे हम आगेहि, चलि उदास अचिरज[1] अवरेख्यौ॥
पुरुष एक दधि दीप सुखोपति, इक सुंदरि तिन पास परेख्यौ।
कहन लग्यौ तिन सों कछु गर्वित, पल महँ गर्व भूलि सब लेख्यौ॥ १॥

मदन छंद

तिन स्वांस लेतहि जठर मैं, पल भयो विह्वल अंग।
लोक चौदह सकल रचना, रह्यो देखि प्रसंग॥
देव देवन सहित मानव, गहन गिरि गन सर्व।
सिंधु सातहुँ दीप सातहुँ,[2] सरित अवनि खर्व॥ २॥

कोटि कोटिन लंक मनिगन, लंकनाथ अपार।
पढ़त राम चरित्र सिगरे, करत जै जैकार॥
अवधि नगर विलास निरख्यो, कहत बनत न तौन।
सकल देव समाज मुनिगन, जोति जगमग भौन॥ ३॥

---

१. अचिरज : आश्चर्य।
२. सातहु दीप : सप्तदीप—पुराणानुसार पृथ्वी के सात बड़े और मुख्य विभाग—जम्बू, कुश, प्लक्ष, शाल्मलि, क्रौंच, शाक और पुष्कर द्वीप।

पारखत सब आसपासहि, मध्य सीता राम।
करत अस्तुति तहँ विभीषन, लहत सब मन काम॥
जौन प्रभु सब चरित देख्यौ, कह्यौ समयो पाइ।
द्रोह भावनि स्वास संगहि, पर्‌यौ लंकहि आइ॥ ४॥

दोहा

तब समुझ्यौ सब अपनपौ, जो कछु आप विचार।
तिहि समए दसरथ्थ-गृह, भए राम अवतार॥ ५॥

छप्पै

पूरब कथा अकथ्थ, कथत अब सुनौ न सोऊ।
तिहि तें दानव वंस, भये हम बंधव दोऊ॥
द्वारपाल जय विजय हुते, वैकुंठ धाम महँ।
रमा साथ श्री नाथ सदा, आनंद रमित जहँ॥
इक समय पाइ प्रभु के प्रबल, फरकि उठे भुज दंड जब।
उत्साह सहित कछु इक भयेउ, जुद्ध करन मन हरष तब॥ ६॥

उड़ियाना

देखि निकट द्वारपाल, दोऊ हम ठाढ़े।
प्रभु के मन जानि जुद्ध हेत चित्त बाढ़े॥
सानंद तिहि ओसर, सनकादिक मुनि आये।
श्रीहि सहित श्री पति तहँ, जबही हरषाये॥ ७॥

रोकि छड़ी आड़ी करि, जब हीं हम दीन्हें।
देखि विगत आदर, तब क्रोध रिषिय कीन्हे॥
रोके तुम द्वार हमहिं, लेहु श्राप सोऊ।
जाइ बरनि दानव अब, होहु बंधु दोऊ॥ ८॥

---

५. पारखत : पार्षद।
६. जय-विजय : विष्णु के पार्षद।

रुचिराछंद

मुनि के चरन गहे दोउ मुनि के, प्रभु हमसौं यह भूलि भयो।
लीन्हें सीख मानि सिर ऊपर, जो आयसु रिस मानि दयो॥
कीजै कृपा अनुग्रह सोई, जिहि तैं पावहि सुगति नयो।
दुर्मति जबै देह मै उपज्यौ, तब सब सुकृत नास गयो॥९॥

द्रुमिला

सुनि कै मुनि दीन, दया करिकै, हँसिकै हमहीं यह सीख दए।
लहिहौ गति सातयें जन्महि मैं, अति प्रेमहि सौं हरि भक्ति किए॥
नहि तौ करि जुद्ध विरुद्धहि मुक्ति, लहौ तिसरे अवतार लिए।
कहि माखन जानि अनुग्रह यौं, मन द्वै महँ भावै करौ, सु हिए॥१०॥

गीतिका

सुनि सीख धारि विचारि दोऊ, विनय कीन्हें प्रात ही।
यह सात जन्मनि भक्ति करतैं, कल्प कोटिन बीतहीं॥
तिहि हेत जुद्ध विरुद्ध करिकैं, वेगि मुक्तिहिं लीजिये।
फिरि विस्नु धामहि पारखत ह्वै, द्वारपालन कीजिये॥११॥

तब वंदि मुनि पद आइ पुहुमी, पुत्र कस्यप के भये।
हरिनकस्यप नाम अरु, हरिनाक्ष ह्वै अति बल भये॥
तब उग्र करि वर ब्रह्म लहि के, जीति त्रिभुवन हद करे।
भुज-दंड-बल सब जीति सुर नर, धर्म भूतल के हरे॥१२॥

झूलना छंद

पुन प्रहलाद, हरि नाम के लेत ही। देखि हम द्वेषतैं, दंड दीन्हें।
हेत तिहि खंभ ते, प्रगट नर सिंह वपु। फारि के उदर, उद्धार कीन्हें॥
जज्ञ बाराह, हरि रूप हरिनाच्छ हति। विस्व विस्वंभरा, पालि लीन्हें।
तीनहूँ लोक, जय जयति माखन कहैं। चरित प्रभु कौन सौं, जात चीन्हें॥१३॥

---

१२. हद : सीमा।
१३. विस्वम्भरा : विश्व का भरण-पोषण करनेवाली, पृथ्वी।

दोहा

बहुरि सुनौ अवतार यह, कछु क कहत परसंग।
करनहार श्री राम हैं, जुर्धाहि तें अघ भंग ॥१४॥

मदन छंद

ब्रह्म-पुत्र पुलस्ति कें, विसेश्रवा तप धीर।
भये तिनके तनय, रावन कुंभकरन सु वीर॥
बहुरि लंका राज हित, हरि पारखत गुनि नंद।
दिये जन्म विभीषनै, निजु भक्ति बस जगवंद ॥१५॥

तप उग्र तें मन काम भरि, वर दए श्रीत्रिपुरारि।
कुंभकर्ण अराधि ब्रह्महि, जीति सुर नर भारि॥
देव दानव सहित मानव, आपने बस कीन।
हारि तीनहुं लोक के, सब रहे ह्वै ह्वै दीन ॥१६॥

दोहा

जोग जज्ञ तप धर्म धन, दले सबन के गर्व।
करि जुग षोडस चौकरी, राज तेज बल सर्व ॥१७॥

सवैया

पूरन पाप भयो, पुहुमी दुख पाइ विरंचिहि जाइ पुकारी।
छीर समुद्रहिं तीर सबैं, सुर टेरि जगाइ तबैं दनु जारी॥
देव बड़े बलवान बली, जनमे कपि रीछन कै बनचारी।
'माखन' जानत हौं तिहि तें सिय राम रमापति श्री अवतारी ॥१८॥

दोहा

सीता मात समान गुनि, हर्‍यौ मुक्ति के हेत।
अधम उधारन राम हैं, अगतिन कौ गति देत ॥१९॥

---

१५. पुलस्ति : पुलस्त्य—एक ऋषि जिनकी गिनती सप्तर्षियों और प्रजापतियों में है। ये ब्रह्मा के मानस पुत्रों में से थे और विश्रवा के पिता तथा कुबेर और रावण और विभीषण के पितामह थे।
१७. चौकरी : चारों युगों का एक समूह एक चौकड़ी के बराबर होता है।

करषा

आइ सिव अचि कै, जज्ञ अब हौं करौं। दिव्य धनुबान रथ त्रान, पैहौं जवै।
सज्जि सब, पुत्र पौत्रादि गल गज्जि कै। मारि कपि, रिच्छ संघर करिहौं सबै॥
मंडि श्री राम सौं, जुद्ध मन काम भरि। ज्यौं सु त्रैलोक बल जानि परिहै अबै।
आजु जोरा जुर्‌यौ, राम रावन दुवौ। फेरि संसार मैं, समय पावैं कबै॥२०॥

रुचिरा छंद

सुनि मंदोदरि सहित महोदर, धन्य धन्य नृप कहन लगे।
को जाने अभिअन्तर की गति, जिंहि तैं हरि सौं रोस जगे॥
परम प्रीति सो भक्ति राम की, बर भाव नहिं हृदय पगे।
मुक्ति समीप हेत कहि माखन, धरनि एक तजि नहिन डगे॥२१॥

दोहा

रावनोवाच—

अब रिझाइ रन रंग करि, रामचरण सों प्रीति।
रहै ख्याति जुग जुगनि लौं, बैर प्रीति की रीति॥२२॥

पद्धटिका

सुनि रावन अति ही हरषायो।
इक मत सबनि बात मन भायो॥
करि अस्नान ध्यान हर पूजा।
तुम तौ देव न जान्यौ दूजा॥२३॥

यह कहि जज्ञ साजु सजवाये।
लै लै अनुचर सब पहुँचाये।
शिव स्थान देखि हरषाने।
विधिवत रीति सबै नृप ठाने॥२४॥

पूजा जाप विधान सु जोई।
कीन्हें भूपति सब विधि सोई॥
समाधान करि सत्र मत साधि।
जपि के मंत्र अगिन अराधि॥२५॥

---

२१. धरनि : धारणा, हठ।

बेदि दिव्य समित्र सब लै कै।
होमत भले साकला कै कै॥
होता आपु, आपु रखवारे।
धनु सर सस्त्र पास सब धारे॥२६॥

गीतिका

तब जोरि कर विनये विभीषन, सुनहु श्री रघुनाथ जू।
दसग्रीव जग्यहि करन गो, सब साजु लै निजु साथ जू॥
जब ते न होइ सु सिद्ध कारज, विघन तब ते कीजिए।
वह सिद्ध होत प्रसिद्ध है, हम हारि सरबस छीजिए॥२७॥

धनु बान रथ तुनीर तानहि, अगिन सौं पावहि जहीं।
रन रंग मैं अति प्रबल ह्वै है, मार ते मरि है नहीं॥
बलबीर बीर विचारि तिहि तैं, प्रबल सैन पठाइबैं।
मख-भंग करि, दरि दाप ताको, सकल काज न ठाइबैं॥२८॥

छप्पै

सुनतमान भगवान कहे, हनुमान अंगदहि।
लै सब सैन समूह, करहु मख भंग रोस गहि॥
दनु दल बल मद मरदि, लंक निरसंक विध्वंसहु।
करि करि बहु उतपात, जातुधानिनि सुख नंसहु॥
—सुनि सीख रीछ बानर प्रबल, गलगज्जित सब जूथ पति।
—भरि क्रुद्ध जुद्ध हित चलतही, भयेउ महा हाहूल अति॥२९॥

घनाक्षर

पावक जगाइ जग्य करत निसंक। बैठ्यो लंक नाथ हाथ बहु सस्त्रनि सम्हारि कै।
जपि जपि मंत्र दिव्य, होमत समिध सब। साकला सकल भाँति पाँति पाँतिधरिकै॥
माखन भनत, सोई समये प्रबल सैन। लीन्हें घेरि, दै दै किलकारी हूलकारिकै।
रिच्छलैलंगूरच्छकीस,दीरघसिलानिलैलै।रावनकोपावनसोंकीन्हेंमारिमारिकै॥३०॥

---

२८. ठाइबैं : सिद्ध कीजिए।
२९. नंसहु : नष्ट करो।

सवैया

कोपि तबै धनु सायक लै, दनुनायक बानर रीछ बिडार्यौ।
बेधत एकक बान सौं, बहुर्यौ कोइ नेक न देह सम्हार्यौ॥
को रन मंडहि रावन सौं, भट भीर सबै तजि धीरज हार्यौ।
होम करै निजु बाहु बली, कोइ जोम पुजाइ न तौ हलकार्यौ॥३१॥

कैयक जाइ परे जल सागर, कैयक पार सरोवर लागे।
कैयक जाइ दिसा विदिसान, परे भट संघट धीरज त्यागे।
कैयक भूलि भ्रमै नभ मंडल, सोच अखंडल कै उर जागे।
रावन के सर धावन लै, बलवीर अधीर जितै कित भागे॥३२॥

झूलना छंद

चाहि हनुमान, बलवान अंगद बली। कोपि नल नील, जमवंत धाए।
सोर चहुँ ओर सों, जोर करि करि घने। सैल पाषान तरु, करत घाए॥
बंक निरसंक, लंकाधिपति तुच्छ गनि। करहि मख काज, विधि करन भाए।
अष्ट दस बाहु सौं, बान संधान कै। व्योम भू लोक भरि, मारि छाए॥३३॥

पूरि रिस भूरि, सब दूरि ही तैं तकैं। पैठि निकट न सकैं, सुभट भारे।
आसुरी चरित, विस्तारि माया घनी। द्यौस रजनी न कहुँ तरनि तारे॥
बालि सुत, नील नल जाम रचि मंत्र तब। करहु उत्पात, इहि सदन सारे।
तियनि बिनु पत्ति, दनु पत्ति लखि धावतैं। कीजिए भंग मख, गर्व गारे॥३४॥

दोहा

यह सुनि कै कपि रीछ गन, सब धाए करि कूह।
जगे भगे उमगे रिसनि, गलगज्जित करि हूह॥३५॥

पाठांतर—३४-न कहुँ : कहू (१,२)

---

३१. दनु नायक : रावण।
३३. चाहि : देखकर।
३४. तियनि स्त्रियाँ। दनुपति : रावण।

त्रोटक

झपटे कपि रीछ बली बल में।
गढ़ लंकहि घेरि लिए पल में॥
चढ़ि कूद कंगूरनि में मटकें।
बहुरंगनि लागु करें नट कें॥३६॥

दनुजी कहुँ खोरिन माह कढ़ें।
तिन कंधनि पें कपि कूदि चढ़ें॥
गहि केस कहूँ झकझोरि चलें।
करि कोपनि भूषन अंग दलें॥३७॥

सब भाजन भौनन के फटकें।
ठहरात न विज्जुल से छटकें॥
घर हूं घर हूलि मची अति हीं।
तिय कंपि पुकारत हैं पति ही॥३८॥

दोहा

धाए दनु बहु कोप करि, धरि धरि धनुक रु बान।
पटके घने सरोस सों, गजि अंगद हनुमान॥३९॥

घनाक्षर

कूदि कूदि बैठे कपि कलस कंगूरनि पें। रंग रंग भौंहनि चलाइ मटकत हैं।
चाहि जातुधानिन की, रावन की रानिन की। खेंचि खेंचिचीरचहूँओरफटकतहैं॥
नांगी नांगी भागी फिरें, सकल सुहागी नारि। छूटे बार द्वारन किवार अटकत हैं।
माखनभनत जानि कंचन की बेलिन में। कलिका सरोज से उरोज झटकत हैं। ४०॥

दोहा

मर्कट निकट न टिकत कहुं, दनु हारे करि घात।
अंतहपुर नृप फैलि के, करत फिरत उतपात॥४१॥

---

३६. लागु : प्रतिद्वंद्विता।
३८. भाजन : बर्तन।

घनाक्षर

दाबि दाबि कुच्छन मैं रिच्छ कपि सुंदरिन। लै लै दसग्रीवहि दिखाइ कद्रावहीं।
छोड़ती चिकारन पुकारि दीन बार बार। रोइ रोइ हाइ हाइ सबद सुनावहीं॥
देखि दनुराइ चितताइ धायो लज्जित ह्वै। भाजि भाजि साज मख फटकिपरावहीं।
माखन कहत ऐसे फूलि अभिमान ज्ञान। भूलि सठ गर्वन तें सर्वस गवावहीं॥४२॥

चौबोला

रावन अति मन मान्यौ हारि।
देखि फजीहति सिगरी नारि॥
कहत भयो तब यह बिलखाइ।
दिये राम मोहि दुख बहुधाइ॥४३॥

ऐसी गति नहि जानी होइ।
कहाँ जियें जग मैं पति खोइ॥
अब हौं सोक दुहुनि कौं देहुं।
पल मै मारि कटक सब लेहुं॥४४॥

दोहा

करिकै मख विध्वंस सब, आये सिगरे सैन।
बंदि चरन प्रभु सों कहे, हरषे राजिव नैन॥४५॥

उत इक जच्छिन जच्छ तब, लिये बोलि कै भूप।
नर नारी तिहुं पुर जिते, धरे सबनि को रूप॥४६॥

चौबोला

राम स्वरूप गहाइ जच्छ कौं, सिय आगे हति आयो।
सिया सरूप जच्छिनी बधि कै, रामहि सीस चढ़ायो॥
देखि देखि चहुं ठौरनि दोऊ भरे सोक उर भारे।
करि करि विकल विलाप हारि हिय, धनु सर बलहि धिकारे॥४७॥

---

४२. कुच्छन : कुक्ष, काँख। कद्रावहि : घसीटते हैं।
४७. गहाइ : रूप बनाकर।

कहत विभीषन सुनहु नाथ यह, एक जच्छिनी नारी।
त्रिभुवन तिरून रूप की धरती, तिहिं हति गौ अविचारी॥
सुर नर दनुज सीय सौं कबहूं, करै कौन अविकारी।
जिन कोपानल ज्वाल जगत ही, तीन लोक खयकारी॥४८॥

दोहा

वह हू यहै प्रपंच है, तुम सरूप करि जच्छ।
आयो दुष्ट सँघारि कै, दुख दीबै परतच्छ॥४९॥

सुनि रघुबर धर धीर उर, कहें हनू सों बैन।
मिटत सोक नहिं दुहुन को, बिनु देखे निजु नैन॥५०॥

दोपकल छंद

सुनि गए हनू जहँ जगत मात।
लखि सोक न बिहवल विकल गात॥
रघुनाथ रूप तकि थकित स्वांस।
समुझावति त्रिजटी बैठि पास॥५१॥

तिहि समय हनू, पग बंदि जाइ।
कर जोरि विनय कीन्हे बनाइ॥
यह मातु न जानहु सत्य एक।
दनु दियो दुक्ख दुहुँदिसि अनेक॥५२॥

दोहा

आए हनु सिय बोधि कै, कहे खभरि प्रभु पास।
सुनि हरषे त्रिभुवन धनी, नर लीलानि विलास॥५३॥

त्रिभुवन संकट करत सब करत जहाँ जे जाप।
भक्तनि-हित गोपाल भनि, मंगल राम प्रताप॥५४॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायाँ रावन-मंत्र-जज्ञ-भंग वर्णनोनाम पैंतालिसोध्याय॥४५॥

रावण-सैन्य-संघार

४६

दोहा

हरख होत रघुबर कटक, बजे निसान सुरेस।
सुन कोपनि बल बलकि कै, सज्यो सैन लकेस ॥ १ ॥

छप्पै

उठि प्रातहि लंकेस, सकल अनुचर हंकार्यो।
करि अस्नान सु वेस, ध्यान हर हरषितधार्यो ॥
धूप दीप नैवेद सहित, कीन्हें सिव पूजा।
तुमहि छोड़ि देवाधिदेव, जान्यौ नहिं दूजा ॥
–अब जुरत जुद्ध रघुवीर सहँ, बल केवल गवरीस को।
–कहि माखन राखन पेज पन, आजु लाज दससीस को ॥२॥

दोहा

अर्चन बंदन करि तबै, बोलि सकल परिवार।
षटरस स्वाद अनेग विधि, कीन्हे नृप ज्यौंनार ॥ ३ ॥

छप्पै

बैठि सभा दनुराज, सकल दनु-बंस बुलाए।
छरीदार लघुदीह, पास लै लै पहुँचाए ॥
नाती पुत्र समेत, ज्ञाति गोती अनगोती।
कहे सबनि सनमानि, भूप जाती अरु होती ॥
–करि राम समर संग्राम सोइ, जिहि न सोचि जीवन मरन।
–गल गज्जि जुध्य हित सज्जहीं, होइ सुध्य अंतहकरन ॥४॥

---

१. कटक : सेना। सुरेस : इन्द्र।
२. गवरीस : शिव।

द्रुमिला

रावन—

अवलोकि भयानक जुद्ध, जोई वहु थोरहिं जीवन आस करै।
कहि माखन ताहि सिखापन है, तकि चेत चढ़ावन चित्त धरै॥
इहि मैं नहिं कादरता तिहिं को, अब ही मन मैं गुनि जे विचरै।
अब तो यह लंक निसंकहिं होत, सु जाइ विभीषन पाइ परै॥ ५॥

सोरठा

दानौ—

सुनि सुनि यह दनु बंस, हँसे कौक दै दै सबन।
रघुवर पूरन अंस, अगतिन कौ सुगती करत॥ ६॥

सवैया

जीवहिं जो जग मैं जुग कैयक, राज औ रंक समान करैंगो।
दानव मानव देव चराचर, काल के जाल निदान परैंगो॥
उत्पति अस्थिति नास सबै, कहि माखन सो कबहूँ न टरैंगो।
है अपहास औ कीरति तासु का, जो करनी जिहि भाँति करैंगो॥ ७॥

दोहा

सुनि सबके मुख के बचन, हरषे भूप अपार।
आयसु पाइ नगारची, दियो नगारा द्वार॥ ८॥

भुजंगप्रयात

सुने वीर नीसान के वीर गाजै।
लगे आपने आपने साज साजै॥
मच्यौ सोक लंका चहूं ओर भारो।
छरीदार टेरै, तयारी तयारी॥ ९॥

---

७. निदान : अंततः।
८. नगारची : नगाड़ा बजानेवाला।

कढ़े सस्त्रसालानि त सस्त्र भारे।
धनुर्बान तुन्नीर सन्नाह सारे॥
सजे सारथी रथ्थ रंगें अनंते।
खचे अस्व तामे बली बेगवंते॥१०॥

रथी वीर बांके चढ़े सस्त्र लै कै।
गजैं रोस मैं जुध्ध के जोम कै कै॥
लसैं भाँति केते धजा सोभ जाकैं।
हरें चंचलाई सबै चंचला कै॥११॥

सजे मत्त दंती घटानील कैसे।
कुहू रैनि मैं बिंध के बंधु जैसे॥
चकैं तेल तैं कुंभ सिंदूर पूरे।
उदे सूर सैलाग्र ज्यौं प्रात रूरे॥१२॥

कसे ता परें रंग-रंगें अमारी।
जिहैं चित्त दै बिस्वकर्मा सँवारी॥
चढ़े जोर जोधा घने जातुधानें।
कसे अंगत्रानें, बंधे वीर बानें॥१३॥

स्रग्धरा छंद

माते माते सुराते, दुरद मद श्रवैं, अग्रकोटीनदीनें।
भारे भारे भुजा के, अगनित जहाँ पैदलो सस्त्र लीनें॥
चोखे चोखे तुरंगें, दनुज गन चढ़े अर्व खर्वादि जेते।
गाजें कोटानिकोटें, रथन पर रथी सारथी सथ्थ जेते॥१४॥

---

१०. सन्नाह : कवच।

१२. रूरे : सुन्दर।

१३. ता परें : उसके ऊपर। अंगत्रानें : कवच।

१४. कोटानिकोटें : करोड़ों करोड़ों।

छप्पै

प्रबल सैन चतुरंग, जंग रन कौं गलगज्जिय।
अगनित वीर निसान, सकल बज्जन तहँ बज्जिय॥
उमड़ि सूर सावंत, सज्जि सन्नध्ध सर्व हुव।
मंत्री मित्र पउन्न पुत्र, दासादि दास सुव॥
=संका न एक लंकाधिपति, पिक्खि सबनि हृषित भएउ।
=भनि माखन लच्छन सारथिहिं, रथ सज्जन सासन दएउ॥१५॥

भूलना छंद

दिव्य मनि जटित, दस चक्र रथ सज्जियउ। खंभ गज दंत नग, जरित राजे।
वेगि बलवंत, रवि रथ्थ सम बीस हय। हींस जिन सुनत दिगपाल लाजे॥
मनहुँ तें तेज, नहिं पवन सरभरि करें। सस्त्र संभारित बहु साज साजे।
देखि लंकाधिपति, छोड़ि संका सबै। कोपि बंका महावीर गाजे॥१६॥

जोति जगमगित मनि, मुकुट मंडित सिरनि। अंग आभूषनै, विविधि छाजें।
पहिरि सन्नाह, निर्वेध दनु नाह तन। समर उत्साह तकि चित्त ताजें॥
बीस भुज दंड, कोदंड सर चंड गहि। चमर छत्रादि नृप, साज भ्राजें।
वंदि हर चरन, रथ चढ़त माखन कहैं, घोर घन दुंदुभी, दीह बाजें॥१७॥

छप्पै

चलत सैन असरार, भार कलमलिय सेस फन।
अचला अचल चलत, दिगन मयमंत त्रसित मन॥
नर पुर सुर पुर भज्जि, तज्जि चित धिज्ज सुरप्पति।
हल्लकंपित दस दिसहु, जानि लंकेस प्रबल अति॥
=उच्छलित समुद जल जंतु जल, हरषवंत लखि रुद्रगन।
=जुरि जुरि जमाति जुग्गिनि नचहिं, गुनि आगम आभूत रन॥१८॥

---

१६ हींस : घोड़े का हिनहिनाना। सरभरि : बराबरी।
१७. निर्वेध : जिसे वेधा न जा सके। ताजें : ताजा, सद्यः।
१८. असरार : इसरार (अ० श०) हठपूर्वक। अचला : पृथ्वी। अचल : पर्वत। मयमंत : मतवाला हाथी। धिज्ज : धैर्य। जुग्गनि : योगिनी। आगम : भविष्य।

सवाई छंद

सिध पौरि ह्वै कढ़त प्रबल दल, बलि-भुज धुज पर बैठि कररि करि।
सन्मुख पवन पूति गंधन लै, बहुत तेज रज परत नैन भरि॥
चढ़ि मंदिर गउ रंभत ही तब नभ तें बूंद परत श्रोनित झरि।
पतत लूक अवलोकि सबनि गुनि, छन इक भूपति रहेउ तहाँ अरि॥१९॥

गौरि गणेस सकल करि पूजा, हर हर जपत ध्यान उर धरि धरि।
तुम प्रभु सकल बिघन भय नासन, मंगलकरन कौन सिव समसरि॥
तिहुँ पुर जीति प्रतापहि हारे, राख्यो सबनि मगज मद दरि दरि।
कहि माखन नर रीछ कपिन सौं, करत जुद्ध मति डारहु परिहरि॥२०॥

सोरठा

करि वंदन दनु राज, कर जोरे अस्तुति कियो।
अब सब सिव की लाज, यह कहि सैन चलाइयो॥२१॥

छप्पै

हर हर हर रटि सुभट, सारथी रथ्थन हाँकें।
दये मुहारे पील, मत्त मातंगन बाँकें॥
पैदल प्रबल प्रचंड, चहूँ ओरन सौं झपटें।
चढ़ि चढ़ि तरल तुरंग, दनुजगन गज्जित दपटें॥
=बज्जत निसान अगनंत जहँ, समर भूमि सब जुट्टियउ।
=कहि माखन लाखन कोटिकन, बान वज्र सम छुट्टियउ॥२२॥

सवैया

श्री रघुवीर विलोकि तबैं, चतुरंग चमू रन खेत खरे हैं।
पाइ निदेस कपीस विभीषन, बोलि कै जूथपती सिगरे हैं॥
जौन जहाँ बलवान बली, गुनि साज ससन समान करे हैं।
सासन पावत कूदि चहूँ दिसि, सैल सिला तरु कोपि धरे हैं॥२३॥

---

१९. बलिभुज : कौआ। कररि : काँव काँव। पूति : दुर्गन्ध। पतत लूक : उल्कापात।
२०. समसरि : सदृश, समान। परिहरि : परित्याग।
२२. मुहारे : दरवाजे पर।

घनाक्षर

कूदि कूदि भारी हलकारी किलकारी करैं। जेते बनचारी हैं कुदैया डार डार के।
भल्लुक भयंकर की भीरनि तें भूमि भरी। नगनदरी जे फिरैया हार हार के ॥
माखन बखानैं वीर बानै के लंगूरन कौं। पूरि पूरि रोस रद रोरैं बार बार के।
राम के दुहाई दै दै, करत उठाई कपि। हाँकि हाँकि सबद उचारैं मार मार के ॥२४॥

सुंदर जटानि माथे मुकुट विराजमान। पानि धनु बान सोहैं सोभा निधि नीर हैं।
अच्छय निषंग कटि, जंग को उमंग मन। काछे वीर काँछ आछे खैंचि तरु चीर हैं ॥
जग्य उपवीत जोति, उर मैं अधिक होति। माखन भनत चौहूँ कोति कपि भीर हैं।
अमर निहारें, भूमि समर विहार हेत। ठाढ़े रोस बाढ़े, ऐसे दोऊ रघुवीर हैं॥२५॥

झूलना छंद

देखि अमरेस, लंकेस रथ पर चढ़े। राम पुहमी खरे पगन नागे।
बोलि तब सारथी, दिव्य रथ साजि कें। कवच लैं दिव्य पहुँचाइ आगे ॥
सुनत मनि जटित साजि स्यंदनैं मातली। बंधु उच्चैंश्रवा खचित जामैं।
त्राण आभेद, तुनीर अच्छय लिये। ल्याइ पहुँचाइयो तुरत रामैं ॥२६॥

निरखि रघुनाथ, तिहि गाथ बूझन लगे। कौन हम पास यह, सजि पठायो।
परसि पद-पद्म, कर जोरि मातलि कहै। शक्र प्रभु सीख लहि, हौं जु ल्यायो ॥
बैठि अब रथ्थ पर, हथ्थ सारंग लै। सथ्थ दनुराज के, जुद्ध कीजै।
खंडि दनु बंस, जस मंडि माखन कहै। तीनहूँ लोक प्रतिपालि लीजै ॥२७॥

सोरठा

सुनि बूझे भगवान, तब सुग्रीव विभीषनैं।
कहो सु भेद प्रमान, जिहि विधि जैसी चाहिये ॥२८॥

---

२४. बनचारी : बंदर। हार हार : मैदान। रोरैं : शोर। हाँकि हाँकि : ललकारकर।
२५. निधि नीर : समुद्र। तरु चीर : वल्कल बसन।
२६. पगन नागे : नंगे पाँव। उच्चैंश्रवा : इन्द्र का घोड़ा। खचित : खींचना।
त्राण : कवच।
२७. शक्र : इन्द्र।

विभीषन उवाच—

करि विवेक सुर राज, प्रीति सहित रथ सज्जि करि।
पहुँचाये प्रभु काज, कसि सनाह स्यंदन चढ़हु ॥२९॥

छप्पै

कसि सनाह श्री नाह, रथ्थ उपर छवि छज्जिय।
बैठि हनू ध्वज अग्र, उग्र रोसनि गल गज्जिय॥
सकल सेन सिर नाइ, हाँक दै दै हलकारत।
मार मार चहुँ ओर, दावि सब्दन उच्चारत॥
—तरु सैल सिला धर पाथरनि, प्रबल कोपि करि करि गहत।
—दनु दिष्ष कटक पल मध्य जनु, प्रलय काल करिवे चहत ॥३०॥

किरीट छंद

श्री रघुवीर बिलोकि रथ्थ पर, उप्पर कोपि भयो दसकंधर।
कोटिन कोटि करैं मन अस्तुति, अंजुलि जोरि सबैं अभिअंतर॥
हौं अंग अंग भर्यो अपराध, निवारन एक तुम्हें करुनाकर।
पातक है त्रिन सैल समान, सु आप के चाप को पावक सो सर ॥३१॥

मालवती छंद

हौं जिहि हेत सिया हरि आन्यौ, यो समयो अब पहुँच्यो आई।
जानत देव भेव सनकादिक, करि सरोस मैं धर्यो छपाई॥
कहि माखन जग ख्यात चलन कौं, कीन्हों जुद्ध विरुद्ध बनाई।
धरि धरि भुव अवतार जुगनि जुग, अधम अधारन श्री रघुराई ॥३२॥

सोरठा

अंतरजामी राम, अभिअंतर जानत सबै।
करि करि कोटि प्रनाम, उठे हाँकि हलकारि रन ॥३३॥

---

२९. सनाह : कवच।
३१. अभिअंतर : हृदय में। त्रिन : तिनका।

दुर्मिला

मद मत्त मतंग मुख-प्पर दै, रन सैन पिले दनु ठट्टन के।
सर छुट्टत फुट्टत सैल सिला तरु, टुट्टत गर्व सुभट्टन के॥
समरथ्थ समथ्थन जुद्ध जुरे, कपि रीछ करें गति नट्टन के।
इक इक्क झपटि लपट्टत हैं, कहि माखन दाबि दपट्टन के॥३४॥

घनाक्षर

देखि देखि दानव दबात कपि रीछन के। एक एक ओरन उठेई हलकारि हैं।
गजि के महोदर सहोदर त्यों मालिवंत। धूमकेत माली औ सुमाली रोस धारि हैं॥
अंतक समान बीर नारंतक धूम अच्छ। रच्छस अपार सुक सारन सम्हारि हैं।
साजि साधि बातन दसानन कौ आनन के। रथ्थन चलाइ चोटकरतप्रचारिहैं॥३५॥

चंद्रलीला

उठे रीछ कारे, भरे रोस भारे, घटा ज्यौं डरारे, चहूँ ओर घेरें।
पिले पेंज धारे, निहारे दतारे, चढ़े कुंभ फारे, पछारे घनेरे॥
तजे जे चिकारे, तहाँ ते बिदारे, कहूँ ना उबारे, अपारे दरारे।
भगे जे अगारे, बली सो पुकारे, घने पील मारे, मरे सेन केरे॥३६॥

सवैया

चित्रित चंदन बंदन तें, उदयाचल सें गजराज दतारे।
रीछ बड़े नख तिच्छन तें, चढ़ि कंधनि कूदि कें कुंभनि फारे॥
माखन यौं बरनें तिनतें, बिथुरें मुकता जितहीं कित न्यारे।
मानहु राहु चपेटत चंदहि, भूमि गिरे भहराइ के तारे॥३७॥

दोपकल छंद

तब देखि दनुज रिच्छन प्रचंड।
सब मारि करे गज खंड खंड॥
उमड़े अपार रथ रथिय पेलि।
पैदल समूह कर सस्त्र झेलि॥३८॥

---

३४. ठट्टन : समूह। नट्टन : नट।
३५. अंतक : यमराज। नारंतक : नारांतक।
३६. चिकारे। चिक्कार।

झुमड़े सुरारि रन करत धाइ।
पटकें जु रथ्थ मल्लुक भँवाइ॥
हय सारथि संजुत रथिय चूरं।
मुख कूक देहि, जनु बजत तूर॥३९॥
करि कोप उठिय तहँ मालिवंत।
कसि बिसिष बान मार्‍यौ अनंत॥
सब रीछ सैन डार्‍यौ बिदारि।
भहराइ भगे रन कीक पारि॥४०॥
हलकारि उठे तब जामवंत।
रन घोर जोर माच्यौ तुरंत॥
सर सैल गदा दनु हनत भोरि।
गहि रीछनाथ रथ पटकि तोरि॥४१॥
लखि भागि चल्यौ रन मालिवंत।
करि कोप वीर पकर्‍यौ तुरंत॥
तहँ भयो दुहुनि को माल जुध्ध।
इक इक्क पटक्कहि उमड़ि क्रुध्ध॥४२॥
चढ़ि जाम दनुज पर महि पछारि।
नख बज्जन डारे उदर फारि॥
कर खैंचि अंत फटके दिगंत।
रन गजत राम रटि जामवंत॥४३॥

भुजंगप्रयात

बली बानराली उठे कीक दै दै।
कहैं दैत बानावली रोस कै कै॥
भयो जुद्ध भारी भिरैं भाँति केते।
करैं धाइ केते अनेकैं समेते॥४४॥

---

३९. तूर : तूर्य।
४२. मालजुध्ध : मल्ल युद्ध।
४४. बानावली : बाणों की अवली।

तबै कोपि माली सुमाली उठाए।
तुरं तेज के रथ्थ सोहे बँसाए॥
गदा बान बीसं हन्यो राम जू कों।
कृपा कै कृपा नाथ तोरे दुहू कों॥४५॥
हने बान ब्रह्मास्त्र के प्रान त्यागे।
दनू देखि ताकों करे सोक लागे॥
तहाँ हाँकि कै वीर धूम्राक्ष आयो।
गदा बान तें लच्छने कौ चलायो॥४६॥
हने बान सौमित्र के, सो गिर्यौ है।
बड़े रोस सौं धूमकेतो फिर्यो है॥
रमानाथ कौं बान मार्यौ पचीसो।
तिहैं भूमि कै मुंड धरे कपीसो॥४७॥
नखैं बज्र सो अंग अंगैं बिदारे।
कहूं रुंड मुंडै तुचा खैंचि डारे॥
भगे देखि दानव, घने सोर पारें।
कपी रिच्छ जै राम रामै पुकारें॥४८॥

घनाक्षर

मारे दनु बृदनि निहारि कै महोदर यों। तेज के तुरंग पेलि, स्यंदन बँसायो है।
चोखे-चोखे बानन सौं बेधि रिच्छ बानरन। हाँकिहाँकिवीरमारिसैनविचलायोहै॥
कूदि कै सरोसनि सौं अंगद उठाइ रथ। पटकि धरा मै, फेंकि दिगनि चलायो है।
दानव उछलि घाल्यौ, गुरजभवाँइ करि। लागत भुजाकेंबलि-नंदनतमायो है॥४९॥

नाराच

सम्हारि अंग कोपि कै, महोदरै गहे तहीं।
जुर्यौ प्रचंड बाहु-दंड, मंडि दैत रोसहीं॥
गिरें कहूं अचेत ह्वै, सचेत ह्वै घुमावहीं।
प्रचारि मुष्टिकानि झेलि, भूमि कै भुमावहीं॥५०॥

---

४५. तुरं : तुरंग।
४९. गुरज : गदा। तमायो : क्रोध में आना।
५१. श्रीहि कंत : श्रीराम।

पछारि बालि-नंद ताहि कूदि बैठि ऊपरै।
बिदारि पेट फारि कै करेज डारि भूपरै।।
मरोरि मुंड रुंड तें चलाइयौ दिगंत कौं।
सँघारि दैत्य कोटि, सीस नाइ श्रीहि केत कौं ।।५१।।

दोहा

जूझत सैन समूह के, कहि रावन अनखाइ।
मरे दीन ह्वै ह्वै सबै, गाल बजाइ बजाइ ।।५२।।

अब हौं ठानत जुध्ध हौं, रामहि सो रन मंडि।
सुर नर बानर रीछ कौं, डारौं त्रिभुवन खंडि ।।५३।।

तिनकौं त्रास न त्रिपुर मैं, जिन उर रघुबर जाप।
जन हित नित गोपाल भनि, मंगल राम-प्रताप ।।५४।।

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल
विरचितायां रावन - सैन – संघार – वर्णनोनाम
छ्यालिसोध्याय: ।।४६।।

रावण-बध

४७

दोहा

कहि नारंतक रावने, सुभट सैन नहिं एक।
लरिअँ भूप बिचारि कै, करिकैं आप बिवेक॥ १॥

मालिनी

लखहु सकल सैना, बीर एकौ न बाँचे।
लगत न दल भारी, जंग के रंग राँचे॥
प्रबल कपिन रिच्छैं, तिच्छ को धाइ मेलै।
बिनु सुरपति बैरी, आजु को भार झेलै॥ २॥

त्रिभंगी छंद

सुनि के दनु नायक, धरि धनु सायक, निजु मन भायक, गज्जि उठ्यौ।
भट कौन बिचारे, जिहि कपि मारे, कहत धिकारे, रोस रुठ्यौ॥
अब हौं रन मंडौ, सुर नर खंडौं, इक्क न छंडौं, बीर बली।
भनि माखन जान्यौं, काहु न मान्यौ, भुज बल ठान्यौ, रंग थली॥ ३॥

यह कहि रन मंडन, भुजन प्रचंडन, गहि कोदंडन रथ हाँके।
बहु बज्जन बज्जे, दनु दल गज्जे, जिय भय तज्जे, दुहुँघा के॥
करि कोपनि रिच्छन, कपि दल तिच्छन, बाननि तिच्छन, गहिमारे।
चहुँ ओर सुभट्टन, रन संघट्टन, दुव दल पट्ठन, ललकारे॥ ४॥

---

२. बाँचे : बचे। सुरपति बैरी : मेघनाद।
३. भट : वीर। धिकारे : धिक्कार।
४. पट्ठन : पट्ठा, योधा।

दोहा

प्रबल सेन दुँहु दल बली, उठे कोप करि जोर।
लच्छन लखि लंकेस को, कीन्हें धनु टंकोर ॥५॥

उड़ियाना

साधि साधि बान दसक, लच्छन तब मारे।
रावन हँसि बोल्यो, कर एऊ धनु धारे ॥
रोम न तन एक झरत, करत रोस भूले।
जोधा कहवावन को, मन ही मन फूले ॥ ६ ॥

द्रुमिला

देवोवाच—

सुनि लच्छन, बुद्धि बिचच्छन हो, बहु रच्छस नासन बान धरो।
यह तो तुम सों न मरे कबहूं, मति नाहक कोपनि पेंज करो ॥
कहि माखन श्री रघुनायक जू, धनु-सायक साधि सरोस भरो।
वर ईस को आजु बिधसित के, भुज बीसहि को दस सीस हरो ॥७॥

बसंततिलका छंद

मंडे उमंडि रन भल्लुक रैनचारी।
धाए गरज्जि कपि सैल सिला प्रचारी ॥
कीन्हें अमार सर वृष्टि मुरारि सूरे।
झूमे झपट्टि दुंहुघा बल रोस पूरे ॥ ८ ॥

सवाई छंद

घिरि घिरि मकट, दानव दुघंट, लपटि लपटि, इक इक्क पछारें।
तकि बल अंतक, उठि नारंतक, रच्छि पेलि बहु अत्र प्रहारें॥
दस दस दानव, हति बलवानन, भनि माखन रन में ललकारें।
भरि भरि कोपन, कपि दल लोपन, सस्त्र अनेगन पटतारें ॥ ९ ॥

---

८. रैनचारी : राक्षस।

सोरठा

कूदि तबै हनुमंत, नारंतक अंतक - सदन।
पठए पेलि तुरत, करि चूरन स्यंदन तुरंग ॥१०॥

सुक सारन हलकारि, खेल एक खेले इनहि।
मारे तिनहि पछारि, उदर फारि कै नील नल ॥११॥

बचे न एको बीर, सेनापति कोइ सैन में।
लखि रावन रनधीर, उठ्यौ कोपि सर बृष्टि करि ॥१२॥

गीतिका

सुर लोक भूतल सुतल अवितल, सोर तीनहुँ पुर भयो।
धरि रूप नाना भाँति दुरि दुरि, देखि वे सब ही लयो॥
कहि सेस देव गनेस संकत, और किहि माखन भने।
श्री राम रावन की लराई, कौन सों बरनत बने॥१३॥

त्रिभंगी छंद

लखि श्री रघुनंदन, किय पग बंदन, चाल्यौ स्यंदन, रोस भर्‌यौ।
करि दुष्ट अरष्टन, सर आवृष्टन, जल ज्यों वृष्टन, जलद धर्‌यौ॥
कपि भल्लुक भीरन, ह्वै ह्वै तीरन, हति बीरन, निर्वीर कर्‌यौ।
विस्तरि दनु छदन, अमित प्रवंचन, रन दसकंधर, आइ अर्‌यौ॥१४॥

छप्पै

घेरि दसहुँ दिसि उमड़ि घुमड़ि, घनघोरनि गर्जंत।
छटकि छटा छिति छपति, बात आघातनि तर्जंत॥
नचत भूत बेताल, पूरि धूरति नभ वर्षंत।
कहकहाति जोगिनि जमाति, भैरवगन हर्षंत॥
—उत्पात प्रबल आवर्तमय, कहुँ निसीथ उद्दित तरनि।
—विस्तर समुद्र रन रुद्र रचि, इमि चरित्र माखन बरनि॥१५॥

---

१०. अंतक सदन : यमपुरी।

सवैया

वाहु अठारह सों सब सैन, अठारह पद्मनि मारि बिहारे।
द्वै भुज राघव लच्छन ऊपर, तिच्छन तिच्छन बान प्रहारे॥
बानर रीच्छ भगे जितही कित, देखि भयानक, कौन निहारे।
माखन यो वरनै रन रावन, खेत खरोई खर्यौ ललकारे॥१६॥

घनाक्षर

मार, मार, मार, दस सीस ललकारि करि। बार बार सबद उचारै हलकारि कै।
जेई वाहु-दंड बल दंडि तिहुं लोकन के। राखे बंदिखाने दीन जीवन बिचारि कै॥
तासों नर बानर ए भल्लुक भभरि भिरैं। भागैं भहराइ नैक कोपत निहारि कै।
माखन बखाने है, प्रताप चंद्रसेखर को। लोक लोक सोकदैहै,डारिहौंउजारिकै॥१७॥

सवैया

जूथपती कपि रिच्छ जिते, तिन पंचक पंचक बान प्रहार्यौ।
एकक बान दियो प्रति बानर, चारि बिभीषन को पटतार्यौ॥
बान छ सात हन्यो हनुमंतहि, बीसक बान अनंतहि मार्यौ।
रामहु कों सत बान चलाइ, सबै दल यों हहलाइ कै डार्यौ॥१८॥

झूलना छंद

कोपि सारंगधर, धारि सारंगकर, काटि दनु बान, दस बान मारे।
बेधि हय सारथी, रथ्थ सत खंड करि, खंढि धनु गुनन, संन्नाह फारे॥
कूदि लंकेस, चढ़ि बेस स्यंदन तहीं, सूर सर सेल, इक मेलि डारे।
सस्त्र सब खंडि, रन मंडि माखन कहै, जगत रघुबीर भरि, रोस भारे॥१९॥

पाठान्तर—१९-सब दंडि : सब खंडि (१, २)

---

१६. खरोई खरो : खड़े-खड़े।
१७. चंद्रसेखर : शिव।
१९. सारंगधर : राम।

छप्पै

भरि भरि रोस अपार, राम रावन जुट्टेव।
छुटत चहूं दिसि बान, बान बाननि लगि टुट्टेव॥
मार मार उच्चार, इक्क कहि इक्क दपट्टत।
झेलि झेलि सर सेल, पेलि रथ रथ्थ झपट्टत॥
—मंडत प्रचंड रन मंडलहुँ, भनि माखन भुज दंड बल।
—छंडहि गरब्ब गब्बिय निरखि, हलकंपित तिहुँ लोक थल॥२०॥

सोरठा

तानि धनुक रघुवीर, आनि सिजनी श्रवण भरि।
छोड़ि कुलिस सम तीर, करत चोट सर लच्छ जनु॥२१॥

द्रुमिला

तब बाम कहे कर दच्छिन सों, सुनि रे नहि कायेर तोहि डरों।
बहु खानन दानन कों पहिलें, अब भागत क्यों, रन हों न टरों॥
सुनि रे सठ बाम गोपाल कहें, नहि जानत तू हीं कहां धौ करों।
यह बूझत ही प्रभु कान लगें, दस सीस को कौन सो सीस हरों॥२२॥

संजुता छंद

तब चलत बान बिसार हैं।
रन करत रंग बिहार हैं॥
सर छुट्टि रघुवर हथ्थ के।
उड़ि मुकुट गौ दसमथ्थ के॥२३॥

दस दिग्गजै पहिराइयौ।
दस सीस वलि बनि आइयौ॥
सर आइ पैठि निषंग मैं।
तब चेत भौ दनु अंग मैं॥२४॥

---

२०. जुट्टेव : जुट गए।
२१. सिजनी : प्रत्यंचा।

उठि फेरि बीर सम्हारि कै।
सिर भूषनें सब धारि कै॥
पद रोपि कोपि अपार है।
बहु करत बान प्रहार है॥२५॥

झूलना छंद

करत बहु जुद्ध, तिर सुद्ध रावन तबै। क्रुद्ध रघुबीर करि बान छंडे।
वज्र के घात, आघात सरसात तैं। मारि दस सीस के सीस खंडे॥
फटकि दस दसनि, बलि देत दिग देवतन। आइ तुनीर ही, सर समायो।
होत आनंद तिहुं लोक, मालन भन। धन्य श्री राम जस, सबनि गायो॥२६॥

सवैया

गाजि उठ्यो दनुराज तबै, दस सीस निकासि महा बल बाढ़्यौ।
देखि हने रघुनायक सायक, खंडत हीं पुनि रोसनि डाढ़्यौ॥
माथ करे उहि भाँतिन के, उड़िजात सिलीमुख लागत गाढ़्यौ।
सोचत हैं रघुबीर तबै, घर तैं सिर फेरि जबै दस काढ़्यौ॥२७॥

द्रुमिला

निसि बासर जुध्ध जुर्‌यो इहि भाँति, न टारे टरें, नहि मारे मरें।
जबही जब सीस हने दइतारि, तबै तब और तें और करें॥
दसहूं दिसि तें, सर मारि अपारन, लाखन कोटिन रूप धरें।
जित हीं जित राम बिलोकत है, तितहीं तित रावन दृष्टि परें॥२८॥

घनाक्षर

कबहूं कराल काल-दंड लै उठत हाथ। कबहूं अलात घात देत अति त्रासनें।
कबहूं अपारन सरूप मार मार करै। कबहूं ह्वै अंतक कर्‌योई चहै नासनें॥
कबहूं पिसाच भुत भैरव लै धावै साथ। कबहूं हलावै माथ बैठे मारि आसनें।
देखि देखि रावन कौ चरित भयावन यौं। डारि दीन्हें राम सर भूतल सरासनें॥२९॥

---

२६. फटकि : फेंकते हैं।
२७. सिलीमुख : बाण। डाढ़्यौ : दग्ध हो गए।
२८. दइतारि : दैत्यारि।
२९. अलात : आलात।

चौपैया

सुनिये रघुनंदन, दनुज निकंदन, इहि उर तकि कै सर मारौ।
रस अमृत कुंडली, नाभी मंडली, रहत सदा, तिहि महि जारौ॥
तब यह मति अंधन, तजि सब छंदन, फिरि दसकंध न रन जागै।
प्रभु यह मत साचौ, धनु गुन खाँचौ, ब्रह्म नराचौ, जब लागै॥३०॥

दोहा

श्री राम—

सीता याकें उर बसै, सीता मो उर बास।
मो उर मैं तिहुं लोक है, क्यों दनु होइ बिनास॥३१॥

बिभीषन—

नाभि अनल सर लगत ही, अमृत अंस जरि जाइ।
तब भूलै सिय हृदय तें, हनौ बान अतुराइ॥३२॥

सोरठा

श्री राम—

कहौ बिभीषन हेत, जिहि तें सिर काटत असुर।
मरत न होत अचेत, क्यों न हारि इहि भजहि सब॥३३॥

छप्पै

बिभीषन—

करि प्रसन्न त्रिपुरारि, त्रिपुर जीतन बर माँग्यौ।
नर बानर गनि तुच्छ, रिच्छ चित चेत न जाग्यौ॥
समै एक सिव सों, जु मान गुरु गही भवानी।
सिर पर धरि कैलास, नचत रावन-अभिमानी॥
—तजि मान, लगी हर लपटि तन, हरषि कहै बर माँगि अब।
—कहि माखन जो मन कामना, परिपूरन करि देहुं सब॥३४॥

---

३०. ब्रह्म नराचै : ब्रह्मबाण।

३४. त्रिपुर : तीनों लोक। मान गुरु : पत्नी अपने पति को किसी दूसरे के साथ रमण करते समय पकड़ ले उस समय गुरुमान होता है। जब पार्वती जी ने गुरु किया था, तब रावण कैलाश पर्वत सर पर लेकर नाचने लगा, तब पार्वती स्वयं अपना मान भंग किया।

दोहा

तब माँग्यो कर जोरि कै, जुध्ध हेत मन गोइ।
बसै सुधा मम नाभि नित, जासे मृत्यु न होइ ॥३५॥

वरंअस्तु सिव कहि दये, तातें काढ़त माथ।
मारि हृदय ब्रह्मास्त्र मैं, पावन करिए नाथ ॥३६॥

कर कठोर कोदंड धरि, राम करत रन क्रुध्ध।
सोचत संकनि असुर सुर, कठिन भयानक जुध्ध ॥३७॥

घनाक्षर

राघव करत सर लाघव गोपाल भनि। गनि न परत सुर नर मुनि हद हैं।
दानव कितेक दल प्रबल धुरंधर से। धुकत धराधर सं धरनि दुरद हैं॥
कह कह कालिका हँसति रन भूमि लखि। भरि न सकत हर मुंडन बरद हैं।
मेदनि हलक, रचि मेदनी रकत मद। हलकनि उछलि चलत नदी नद हैं ॥३८॥

छप्पै

उठेउ हाँकि दनुपत्ति, सस्त्र चहुं दिसि ते छंडत।
लेहु लेहु धर धरहु, मार मारहु मुख मंडत॥
करि करि बानन वृष्टि, मारि प्रभु को दल झंपिय।
हनि हनि तरल तुरंग, लगत सर, मातलि कंपिय॥
=घन घुमड़ि दसहुं दिसि घुम्मरत, घेरि दनुज माया प्रबल।
=भनि माखन सुर नर लोक भरि, गर्जत रन-रावन सकल ॥३९॥

---

३५. गोइ : छिपाकर।
३६. काढ़त : निकालता है।
३८. धुकत : झुक आते हैं। दुरद : हाथी। बरद : बैल। मेदनि : मज्जा।
हलक : लहरें। मेदनी : पृथ्वी।
३९. झंपिय : ढंकलिया। तरल : चंचल। मातलि : इंद्र का सारथी।

घनाक्षर

जब रघुनायक, धरत धनु सायक। दनुज दल घायकन घायल करत हैं।
हर वर विरद गरद मद रद करि। सद मद समरहिं मरद लरत हैं॥
कटि कटि फटि फटि, झपटि झपटि कहुँ। गजगन कुंभनि तें श्रोनित झरत हैं।
भनत गोपाल लाल भू लसत। जनु लाल लाल मालन के लाल बिथरत हैं॥४०॥

सोरठा

अति कोपनि रघुनंद, दनु दल छंदन दलन किय।
करन सुरन निरदंद, लर सर मारे नाभि तकि॥४१॥

करखा

लगत सर नाभि कैं, वितत रावन भयो। छूटि गौ ध्यान उर सीय धारन धर्‌यो।
वेधि ब्रह्मास्त्र, कढ़ि पार हृदयस्थली। धुकिक धर धरनि, धरमान धरनी पर्‌यो॥
राम कौं बान, सोपान चढ़ि जान सुर। प्रान पायान सुर-लोक तब ही कर्‌यो।
देवपुर दुंदुभी, दीह बज्जन लगे। भनत माखन, महा मोद सबही भर्‌यो॥४२॥

विमल ध्वनि छंद

थर थर थहरत लंकपति, चढ़त राम दल सज्जि।
कहि माखन चहुँ ओर सौं, उग्गककपि बल गज्जि॥
उग्गककपि बल गज्जिज्जित कित, कुघ्घध्घरि उर, सुघ्घच्चित करि।
दिघ्घरुघण वण, अघ्घघ्घररर, थघ्घथकित, सु घोरघ्धुनि भरि॥
दिग्गग्गणण सु थघ्घथरूपक, लज्जज्जिय जकि जंगज्जुत डर।
महद्दनुज, बितत्तज्जहँतहँ, सब्बबलनतजि, थघ्थघ्थर थर थर थरहरत॥४३॥

दल बल खल भल लंक सुनि, राम चंद्र समरथ्थ।
कवि माखन तुनीर कटि, सुघ्घघ्घरि धनु हथ्थ॥
सु ध्धध्धरि धनु हथ्थज्जुग दसरथ्थत्तनु रन रंग्गति हित।
रिच्छगणण, समग्गध्घण रव, अघ्घव्वसमासि, जुघ्घजुरिति चित॥
सब्बब्बल, भुज दंडद्दससिर, सद्दनु सजि, जंगाजुत बल।
अग्गग्गज गण, दिघ्घस्सदमद, बव्वव्वजत, सुभट्टद्दलबल दलभल खलभल॥४४॥

---

४०. घायकन : घात करने वाले। रद : रद्द। सद मद : ताजे।
४२. धरनि धरमान : पहाड़ के समान। पायान : प्रयाण।

भुजबल रघुवर धनुक धरि, लखि रावण दस मथ्थ।
कवि माखन समरथ्थ अति, जुथ्थज्जुरित अकथ्थ॥
जुथ्थज्जुरित, अकथ्थथ्थल, रण रग्गग्गजत, कदंब्बज्जित कित।
मद्दद्दलित, मदंध्धध्धुकि वर, मथ्थग्गिरत, कबंध्धध्धुकरित॥
खग्गगहि कर, विज्जुजुत जनु, रथ्थथ्थरहि, विरथ्थथ्थल थल।
मद्दनु दलि, लुथ्थछिछतिपटि, सब्बब्बल, रघुवंससभ्भुजबलभुजबलरघुवर॥४५॥

धनुधर वर रघुवंस मनि, करि दनु दल दहपट्ट।
कवि माखन रन रंग मचि, सब्बब्बितरि सुभट्ट॥
सब्बवितरि, सुभट्टगणण, सुफफ्फरकत, मथ्थथ्थर धुकि।
सद्दस सिर, दिग्गाद्द्स दिय, अग्गग्गिरिय वितत्ततन भुकि॥
अम्भम्भरि सुख, सब्बब्बिबुध, अधिज्जत लजि कहि, सज्जज्जयकर।
बंब्बबजत, प्रमोद्दध्धरि उर, उब्बबि विहसित, हथ्थध्धनु धर धनुधरवर॥४६॥

दोहा

जय जय जय सुर पत्ति किय, कवि माखन किय कित्ति।
रामचंद्र रघुवंस मणि, सब्बब्बल बल जित्ति॥४७॥

छप्पय

जित्ति समर, छिति कित्ति उदित, सुर पत्ति अभय किय।
मद्द मरदि, करि रद्द दनुज, पर हद्द सकल लिय॥
सज्ज सयन, जय बज्ज बजत, छवि छज्ज छजत मय।
सथ्थ मुदित, समरथ्थ विदित, दसरथ्थ सुवन जय॥
=जगमगित सुजस माखन सुकवि, कौन अँड़ करि छप्पियउ।
=राजाधिराज रघुकुल कलस लंक विभीषन थप्पियउ॥४८॥

---

४५. कदंब : बादल। मद्दालित : मददलित। कबंध : रुंड। खग्गगहि : तलवार पकड़ कर।

४६. सद्दस : सद्यः दस सिर। अम्भभरि सुख : सुख से भर कर।

४८. कित्ति : कीर्ति।

सवैया

जूमात रावण, लोक सबै सुख सातनि सातउ सिंधु बढ़यो है।
आनंद इंद्र के अंग अमात न, चारिहुँ बेद बिरंचि पढ़्यो है॥
फूलन के बरषै बरषा सुर, संतन के चित चाव चढ़यो है।
माखन प्रेमनि सौं भरि कै, सब ही जय राम श्री राम रढ़यो है॥४९॥

लच्छन तिच्छन बान चलाइ, विना दनु बंस के भूतल कीने।
जे सरनागत आइ भजे, कहि माखन ताहि दया उर भीने॥
राजु करै किहि संग विभीषन, जो हम लंक रजायस दीने।
गावत राम के नाम जिते, तितने भरि देत उबारि के लीने॥५०॥

दोहा

दानव कुल विध्वंस करि, हरि त्रिभुवन के ताप।
भक्तन हित गोपाल भनि, जय जय राम प्रताप।५१॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल
विरचितायां रावण-बध्य-वर्णनोनाम सैंतालिसोध्याय: ॥४७॥

---

४९. लच्छन : लाखों। रजायस : आज्ञा।

सीता-सपत श्रीराम-मिलन

४८

घनाक्षर

ठाढ़े रघुवीर रथ्थ ऊपर विराजमान। लोचन विसाल लाल रोस अति ही भरे।
साथे धनुबान कर, अच्छय निषंग कटि। कोपित समर, आगे लच्छन तहाँ खरे॥
घरकें अपार घने घायन तें बेसम्हार। दानों असरार लोथ लोथनि तें है परे।
धरनी के सर्व रजनीचर सहित गर्व। ऐसे अर्व खर्व राम सोधि सोधि संघरे॥१॥

सवैया

पूरि रही बसुधा रन श्रोनित, तुंग तरंग तरंगनि गाजें।
भूलि गई किलकारनि कालिय, खप्पर डारि के जोगिनि भाजें॥
केतिक मासु भखें मसुहारिनि, गौ अवसान मसान के लाजें।
यों रघुवीर के युद्ध विलोकत, देव दरीनि में दुंदुभि बाजें॥ २॥

घनाक्षर

आये चतुरानन षडानन गजानन दै। पंचानन धाए सहसानन वहै घरी।
जेते सुर वृंद, मुनि वृंद, रिषि राज वृंद; जाने रघुनंदन जू सोक सब ही हरी॥
नाना अभिलाषन तें माखन गुनानुवाद। गावत सुजस प्रेम मात न हिये भरी।
लीन्हें मनि थाल कर, बाती घनसार सजि। आरती उतारत पुरंदर पुरंदरी।.३॥

---

१. घरकें : गले की घर्राहट।

२. तरंगिनी : नदी। गौ : गया, होश हवास गायब हो गया।

३. चतुरानन : चार मुखवाले ब्रह्मा। षडानन : कार्तिकेय, जिनके छः मुख हैं। पंचानन : शिव जी जिनके पांच मुख माने जाते हैं। सहसानन : शेषनाग। घनसार : कपूर।

दोहा

लीन्हें दसरथ राज कों, सकल सु देव समाज।
सवा हाथ छिति पर खरे, गावत गुन रघुराज ॥ ४ ॥

घनाक्षर

मुनि मख पालक, उसालक जनक साल। आलक गुमान प्रस्वराम रन धीर के।
बालि बल गंजन, कवध गति अंजन है। गीध मन रंजन, हरैया भव भीर के ॥
श्रुति के सहायक, सुरेस सुख दायक। धरैया धनु सायक हरैया पर पीर के।
जाने नव खंड, करे सीस-दस खंड खंड। अैसे बलवंड भुज दंड रघुवीर के ॥ ५ ॥

छप्पै

जय जय जय श्री राम, ब्रह्म पूरन अवतारी।
आदि पुरुष अव्यय अनंत, अद्भुत वपु धारी ॥
अगम अगोचर अलख, वेद जिन भेद न भासे।
जुग जुग गहि अवतार, भार भूतल के नासे ॥
—दनु दाप पाप जब जब बढ़त, घटत पुन्य संकट परत।
—तब तबहि रूप छल बल प्रबल, धरि त्रिलोक सोकहि हरत ॥ ६ ॥

वसंततिलक छंद

शक्रोदय: सुरगणार्ति विषाद हर्ता।
पौलस्त्य-वंश दनु-वृंद विध्वंस कर्ता ॥
कोदंड चंड सर मंडित पद्मपाणिम्।
सीतापते रघुपते जय रावणारिम् ॥ ७ ॥

अज्जाण बाहु बल मर्दन भूमि भारं।
भक्तार्त भीत हर कृत्य दशावतारं ॥
मत्स्यादि कूर्मधृत कोल नृसिंह मूर्ति।
सीतापते रघुपते जय रावणारिम् ॥ ८ ॥

---

५. मुनि मख पालक : विश्वामित्र जी के यज्ञ की रक्षा करनेवाले। उसालक : उन्मूलन कर्ता। अंजन : आग।

७. शक्रोदय: : शक्र का उदय करने वाले।

८. कृत्य : करने वाले। धृत : धारण करनेवाले।

छप्पै

श्रुति उच्चारन मीन, सृष्टि लिय पृष्टि सु कच्छप।
दसन अग्र वाराह, भूमि गहि हति हरिनच्छप॥
दनु मर्द्दन नर सिंघ, भक्त वत्सल भय भंजन।
बलि छलंत वामन, विसाल पद त्रिभुवन रंजन॥
=भुजदंड सहस्रनि खंडि रन, छत्रि दलन भृगु वंश वर।
=जय हंस-वंस अवतार मनि, दानव वंस विघंस कर॥ ९॥

दोहा

सुनि अस्तुति सब सुरन के, रथ ते उतरे राम।
बंधु कंध पर कर दिये, पीछे हनुमत नाम॥१०॥

भुजंग प्रयात

जितै बानराली मरे रीछ सूरे।
महा जुद्ध में जूझियो क्रुद्ध पूरे॥
तबै सोम को सासनै, राम दीन्हैं।
सबै ऊपरै सो सुधा-वृष्टि कीन्हैं॥११॥

उठे जागि अष्टादसौ पद्म सैना।
हरे कष्ट आलोकि राजीवनैना॥
जियो एक तौ मर्द्दनो गंध नाहीं।
जिहैं कुंभकर्नो मल्यौ अंग माहीं॥१२॥

सबै सैन रिच्छादि दै बानराली।
कहैं राम श्री राम जै जैतपाली॥
दुवौ भूप दोऊ दिसा हर्ष बाढ़े।
नलौ नील स्यौं बालि को नंद ठाढ़े॥१३॥

---

११. सोम : चन्द्रमा। सासनै : आज्ञा।
१२. आलोकि : अवलोकि। मल्यो : रगड़ना।
१३. जै : विजय। जैतपाली : विजय प्राप्त करनेवाले।

सजे देव जच्छादि गंधर्व गावैं।
घने किन्नरं साधि बाज बजावैं॥
मची हूलि आनंद त्रैलोक भारी।
हरे सर्व संकष्ट सारंगधारी॥१४॥

गीतिका

यह सुनि तब गढ़ लंक मैं, सब राघव संघरें।
रन खेत मैं दनु बृंद सिगरे, रावनादि कहे परें॥
करि कोप तब मंदोदरी कहि, हमहु अब पिय संग मरें।
जिन साथ भोग बिलास करि, वैधव्य दिन अब क्यों भरें॥१५॥

सब संग सौति समूह अगनित, जातुधानिन रिस ढढ़ी।
सजि बाल वृद्धा तरुनि बिधवा, हाथ मुद्गर लै कढ़ी॥
रन भूमि भूरि भयावनी भरि, रकत मेदनि मेदिनी।
गज बाजि दनु गन लोथि लेखत, होंहि को ‘ब निबेदिनी॥१६॥

दनुराज बिनु दससीस, भूतल परे लखि मंदोदरी।
सिर छुटे केसन कूटि छतिया, कहत बिधना का करी॥
मनि जटित जिन परजंक पौढ़त, तन सुगंधनि सों घने।
तिन आजु परम अनाथ सौं, महि परे श्रोनित सों सने॥१७॥

भ्रुव-भंग जिन सुर असुर जोवत, जोरि कर सिर धारते।
तिन स्वान जंबुक काग, खालहि खैंचि जित कित डारते॥
धनि धन्य बीर त्रिलोक गंजन, छोड़ि सिव, राम न भजे।
नहि तजे पैंज प्रवान गहि, पन पालि, मकु प्रानहि तजे॥१८॥

दोहा

जितने रघुवर पानि तें, तजे प्रान लगि बान।
मेटि कलंकिनि कोटि जन, लहे दिव्य बरदान॥१९॥

---

१६. मुद्गर : गदा। मेदनि : मज्जा। मेदिनी : पृथ्वी। लेखत : देखते हुए।
१७. पौढ़त : सोते थे।

पद्धटिका

यह कहि तब मंदोदरि रानी।
चली संग लै जातु सु धानी॥
श्री रघुबर सनमुख चलि आई।
देव रिच्छ कपि किहु न डराई॥२०॥

बोलति जुद्ध राम अब कीजै।
कोपनि पानि सरासन लीजै॥
जैसे रन दसकंध प्रहारे।
दानव दल बल सबै सँघारे॥२१॥

तैसे सब रावन की प्यारी।
उद्धारहु अब सारंगधारी॥
सुनि रघुबीर जाम हनुमानै।
पठए बचन कहै परवानै॥२२॥

तुम मंदोदरि परम सयानी।
आगम मंत्र भेद सब जानी॥
सीताराम बिछोह कराये।
सो फल रावन सब भरि पाये॥२३॥

अब गढ़ लंक राज द्रिढ़ कीजै।
सासन सीरप बिभीषन लीजै॥
सिंधु पार मिलियो तजि संका।
तुम समेत सम्पति सब लंका॥२४॥

हरषित राम तबहि सब दीन्हें।
महाराज मुख आपहि कीन्हें॥
तुम मंदोदरि सदा कुमारी।
कन्या पंच बीच अवतारी॥२५॥

जब तें राम नाम मुख आज।
तब तें राज विभीषन राजै॥
तातें आशु गमन गढ़ कीजै।
राम–चरन–रज माथे लीजै॥२६॥

दोहा

सुनि हरषित मंदोदरी, गई संग सब लेई।
बंदि चरन श्री राम को, पंच प्रदिच्छिन देइ॥२७॥

दीपकल

तब कहे राम करुना निधान।
अब करहु विभीषन सब विधान॥
कुल कर्म कृत्य विधि, करहु जाइ।
तन सुद्ध ह्वै जु, आवहु बनाइ॥२८॥
सुनि गए विभीषन नाइ माथ।
जहँ परे खेत रन लंक नाथ॥
सब साजि साज, दिय बंधु दाह।
मुनि सुमिरि देत, बहु दाह धाह॥२९॥
करि कृत्य सकल विधिवत विचारि।
भए सुद्ध सकल दनु सहित नारि॥
तब आइ रामपद परसि सीस।
लखि हरष भरे त्रयलोक ईस॥३०॥
बहु बोलि बेगि सब राज साज।
दिय राजतिलक रघुवंश साज॥
भुव राम नाम जब लगि प्रमान।
नृप लंक विभीषन तलगि जान॥३१॥

---

२७. पंच प्रदिच्छिन : पाँचबार प्रदक्षिणा करके।
२९. धाह : रोना।
३१. तलगि : तब तक।

मदन छंद

कहैं तब हनुमान सौं, रघुनाथ आनंद कंद।
मारि शत्रु संघारि सैना, किये सब निरदंद॥
जाइ जानकि पास, आपु कहौ सु जय की गाथ।
आनिये अब बोलि सीतहि, आनिये एक साथ॥३२॥

हरषि तब हनुमंत, आतुर गए सिय के पास।
बंदि चरन सरोज, बोले बोलि हृदय हुलास॥
मात सुनि उतपात सिगरौ, गयो मिटि भयभीत।
लंक नाथ विधंस तें, भयो राम को जय जीत॥३३॥

दिये आयसु आप कौं, सब चलौ प्रभु के पास।
सुनत बैन सुधाहि सौं, सुख कोटि चंद्र प्रकास॥
धन्य सुत सुभ बैन बोले, धन्य तुम्हरी सक्ति।
कुसल भूतल सदा निर्भय, करहु रघुवर भक्ति॥३४॥

सोरठा

उठी हरषि सिय मात, परी चरन त्रिजटी तबहि।
तिहि सेवन सुचिगात, समुझि पुन्य वरदान दिय॥३५॥

त्रोटक

सीता—

सुनि हे त्रिजटी प्रगटी हित को।
कहि तो सम बोधहि को चित को॥
बहुभाँतिन तें समुझावत ती।
रघुनाथ कथा नित गावत ती॥३६॥

---

३५. त्रिजटी : विभीषण की बहन जो अशोक वाटिका में जानकी के पास रहा करती थी।

३६. ती : थी।

तब हौं दुख दुस्तर सिंधु तरी।
सुभ बैन सुनी सुख चोस घरी॥
तिहि तें तोहि देत हौं पुन्य बरें।
नर नारि जे कातिक, माघ करें॥३७॥

बइसाख रु प्रातहि न्हाइ भले।
उपवासहि मास अहार फले॥
परिवा डुबकी कृत जौन लही।
वह सो फल तो कह होहि सही॥३८॥

दोहा

यह सुनि त्रिजटी चरन परि, करि अस्तुति कर जोरि।
धन्य सत्य सीता सती, त्रिदस बंदि दिय छोरि॥३९॥

द्रुमिला

हनुमान सुधारत गैल चलें, सिय पीछेंहि सत्य सुभायन सों।
डग देत सरीर कँपै अति छीन, पिअें मिलिबें बल चायन सों॥
कहि माखन श्री पद-मंजुल-कंज, धरें मग मंद प्रभायन सों।
भरि नैननि नीरनि वृष्टि लगी, दग दृष्टि लगी प्रभु पायन सों॥४०॥

दोहा

भीर ठिली कपि रीछ की, निरखन को सियमात।
जिन हित सब सुख कों तजे, भयो सकल कुसलात॥४१॥

मालवती छंद

टारत भीर बिभीषन जित कित, लिए छरी चहुं ओरनि धाइ।
झुमटे परत कहा कपि भल्लुक, जानत कछु यह पेखन आइ॥
सुनि रघुबीर कहे लंकेसहि, कछु न कहो इन सों दनुराइ।
देखन देहु सियें सबही कों, जिन हित पौरुष किये बनाइ॥४२॥

---

३७. तरी : पार उतरी। बइसाख : वैशाख मास। परिवा : प्रतिपदा।
३९. त्रिदस : देवता।
४०. चायन : चाव।
४२. पेखन : तमाशा।

दीपकल छंद

सुनि दिये विभीषन छरिय डारि।
लिय सीख तुरत सब सीस धारि।।
लखि सीस चरन रज माथ लीन।
परि पांइ प्रदक्षिन पंच कीन।।४३।।
चित सोचि जानकी दिय निदेस।
परिवार सहित सुनि कौनपेस।।
सब चंद्र वली तुम होहु जाइ।
रघुनाथ भक्ति कीजे बनाइ।।४४।।

दोहा

लिये सीस पर मानि कं, सिया सीख लंकेस।
राम समीपहि जानकी, पहुंची सुमुरि दिनेस।।४५।।

भुजंगप्रयात

जबै मात सीता पिजै पास आई।
पदैं पद्म को पानि जैसे लगाई।।
तबै राम बोले सुनो सीय बानी।
तुम्हे रावना लै गयो सर्व जानी।।४६।।
छुवो पॉइ ताते न नातं लगावो।
जहाँ चित्त भावें, तहाँ ही सिधावो।।
जुरे जुद्ध, तो आपने कर्म कीजे।
तिहूँ लोक निंदा कुल आप लीजे।।४७।।
सु तौ रोष तैं बैर नीके सु लीन्हें।
दसौ शीश को बंस निर्वंस कीन्हें।।
अबै आपनो कै तुम्हें त्याग कीजें।
रहो पास क्यों लोग के हास लीजें।।४८।।

पाठान्तर— ४७-कामं काजें : सर्म साजें (१, २)

---

४४. कौनपेस : कौणपेस, राक्षसों का राजा।

४७. नातें : रिश्ता, सम्बन्ध।

सुनी बैन सीता, रही हाथ जोर।
कछू जोइ बोल्यो न, वानो मरोरें।
चुवे नैन ते नीर आलोल धारें।
कँपै अंग बाढ्यो महासोच भारें॥४९॥

कही नीठि के बैन स्वामी सुनीजे।
हिये बूझि कै दोष तें, रोष कीजे॥
रहो मो हिये नाथ आपै सदा ही।
सदा सर्वगामी कहूँ भिन्न नाहीं॥५०॥

जिते जोनि त्रैलोक में जीवधारी।
सबै मोंह तो आपु हो गम्यकारी॥
सदा सर्व सर्वज्ञ सर्वापहारी।
चतुर्विस रूपी धरा धर्मधारी॥५१॥

गुनै दोष निर्दोष जेते बखानो।
सदा सर्व अभ्यान्तरें आपु जानो॥
जु पै लोक निदाहि कौ त्रास कीजै।
अबै एक मो सौ सु तौ सौंह लीजै॥५२॥

सवैया

सौंह के नाउँ सुनें सब सैन, सबै प्रभु सौं बिनती बनि कीन्हें।
या पर और कहा कहनें, मत होत हैं सुध्ध तौ पावक लीन्हें।
जे निकलंक कलंक समेत, सु पावक के मुख आत हैं चीन्हें।
सत्य असत्य की रीति यहै, सुनि राम तबै कपि सासन दीन्हें॥५३॥

पाठान्तर—५३-तौ पावक : तपावस (१, २)

---

४९. आलोल : चंचल।

५१. चतुर्विस रूपी : चौबीस अवतार—मत्स्य, कच्छप, बाराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि, ब्रह्मा, नारायण, नरनारायण, कपिल, दत्तात्रेय, यज्ञ, ऋषभ, पृथु, धन्वन्तरि, मोहिनी, बलराम, वेदव्यास, हंस, हयग्रीव।

दोहा

नृप सुग्रीव विभीषनं, कहँ राम समुझाइ।
पावक प्रबल विचारि सिय लेहु सौंह सब जाइ ॥५४॥

त्रोटक

सुनि रीछ कपीन सौं भूप कहे।
अब आनहु दारु अपारन हे॥
बहु काठन जोरि चिता रचिअें।
अति पावक ज्वाल तहाँ सचिअें ॥५५॥

सुनि कै कपि रीछनु धाइ परे।
पल माहु चिता रचि दीहु करे॥
चहुँ ओरनि आगि प्रचारि दये।
अति ज्वाल करालनि धुंध रये ॥५६॥

सिय न्हाइ तबै, जल सिन्धु लई।
जुरि अंजुलि द्वै सब सौं विनई॥
ससि सूर समीर कृसानु जलै।
नभ भूमि दिसा विदिसाहि भलै ॥५७॥

निकलंक कलंक की सीख तिहूँ।
मन कर्म न वाचिक द्वै अजहूँ॥
रघुनाथ बिना चित औरहि लै।
वरि पावक मैं तन खेह मिलै ॥५८॥

कहि स्वेत तही पहिरी पट है।
रसना रघुवीर लगी रट है॥
चलि ज्वाल कराल मै पैठि गई।
लपटैं झपटैं विकरालमई ॥५९॥

पाठान्तर—५८-वरि : परि (१, २)

---

५५. दारु : लकड़ी। संचियें : संचित कीजिए, रखिये।
५८. खेह : मिट्टी, राख।

करि आसन मध्य हुतासन के।
बनि बैठि हुलास प्रकासन के॥
पवमान प्रचंड झकोरन तें।
प्रजले अति ही चहुँ ओरन तें॥६०॥

सवैया

देखत देव अदेव सबै, कहि भाखन सत्य सती सम को है।
ज्वाल कराल उठें लपटें, झपटें नभ मंडल तें अवरोहैं॥
जोति सवस्त्र समेत बढ़ी, सिय मध्य हुतासन आसन जोहैं।
प्रात समै उदयाचल मैं, रवि अंक मनौ रविनंदिनि सोहैं॥६१॥

दोहा

जोति बढ़ी सिय सहस गुन, पावक मैं तन मेलि।
मानहु लीन्हें डारि कै, जंबूनद की बेलि॥६२॥

झूलना छंद

सकल बरि दारु, निधूँम अंगार ह्वै। त्रिपुर जन जननि पर, दृष्टि लागी।
रटत रघुबीर, बिच दहन आसन किये। मनहु तप तपत पंचाग्नि त्यागी॥
बसन तन स्वच्छ, लच्छांस परतच्छ जिहिं। जोति जगमगित अंग अंग जागी।
देव गन वदत जय जयति सीता सती। नित्य जिन सत्य, रामानुरागी॥६३॥

दोहा

जाई जनक विदेह की, रवि कुल बधू प्रमान।
क्यौंन लगै इन अंग मैं, पावक मलय समान॥६४॥

---

६१. अवरोहैं : ऊपर चढ़ रही हैं।
६२. जंबूनद : सोना।
६३. जननि : जानकी। पंचाग्नि : एक प्रकार का तप जिसमें तप करने वाला अग्नि जलाकर (सूर्य को पाँचवीं अग्नि मान कर) दिन भर धूप में बैठा रहता है। अन्वाहार्य्य, पवन, गार्हपत्य, आहवनीय और अवसथ्य। लच्छांस : लाखवाँ हिस्सा।
६४. मलय : सफेद चंदन।

सुमंदर छंद

लछन—

जोति धरी सिय अनल बीच, जब मृगया राम गये।
ताहि लेन हित कारन रघुवर, छल करि सौंह ठये ॥६५॥

निसिपालिका

विनय सुग्रीव किय, मात अब आइअँ।
परन रघुवीर कौ, परसि मन भाइअँ॥
तिनहि निकलंक तुम खेल को जानहीं।
सकल नर लोक कीरति उनमानहीं ॥६६॥

सुनत सिय अनल तें निकसि, ढाढ़ी भई।
मनहुँ तिहुँ लोक की जोति, मूरति नई॥
परसि प्रभु-पद्म-पद, जुगल कर जोरि कै।
कहत रघुवीर प्रिय बैन, चित चोरि कै ॥६७॥

नितहि धनि धन्य, तुम सत्य व्रत धारिनी।
तुमहि मम प्रान, बिबि बंस उध्धारिनी॥
सकल गुन सर्वथा, तुमहि बनि जानिये।
कछुक यह रीति, संसार की मानिये ॥६८॥

दोहा

देखि देखि तिहुं लोक जन, जय जय करत उचार।
अवगति गति सिय राम की, कहि जो जानन-हार ॥६९॥

सवैया

जानत सेस सुरेसन संकर, वेद विरंचिहु भेद न पाए।
पूरन सक्ति संपूरन ब्रह्म, अनादि अगोचर 'माखन' गाए॥
थापत धर्म, धराजन पालत घालत पातक पुंज सदा ए।
जानकि जानकिनाथ की गाथ, यहै जुगही जुगही चलि आए ॥७०॥

मदन छंद

देखि देव समाज मैं, दसरथ्थ नृपहि सकाम।
जोरि अंजुलि राम लक्ष्मन, किये पितुहि प्रनाम॥
कहत भूपति धन्य, रवि कुल किये पावन आप।
मेटि संकट तिहूं पुर के, दले दानव दाप॥७१॥

सहे कष्ट अनेग, चौदह वर्ष तैं बनवास।
वधू बंधु समेत कीजे, जाइ अवधि विलास॥
वर्ष एक सहस्र आयु बच्यो, कियो नव भोग।
तुमहि बिछुरत प्रान त्यागे, महा व्याकुल सोग॥७२॥

दोष एक न गनहु मम कौं, सकल केकइ कर्म।
धन्य बंस सदा शिरोमणि, पालि साधन धर्म॥
आयु वर्ष सहस्र मम को, लीजिए अब आपु।
अवधि अब चलि राज कीजे, मेटि सब को तापु॥७३॥

सोरठा

राम—

धन्य केकई मात, जिन हठि हम बनवास दिय।
दनु कुल करन निपात, सुर नर संकट हरन हित॥७४॥

सवैया

राम कहे, सुर राज, सबै सुर संग लिये नृप लोक सिधारौ।
संकट कोटिन कोटि कट्यौ, अब ह्वै निरभै निजु लोक बिहारौ॥
पूरन पुन्य प्रकास भयौ, कहि माखन, एक न त्रास बिचारौ।
हौं जुगही जुग लै अवतार, हरौं लघ दीरघ सोच तिहारौ॥७५॥

पाठान्तर—७३-सम : मम (१, २)

७२. सोग : शोक।

दोहा

सकल सुरन जुत बंदि पद, करि अस्तुति सुरराज।
गए लोक निज नृपहिं लै, करि परिपूरन काज ॥७६॥

आप आपनें लोक सब, करत हिये सुर जाप।
त्रिभुवन जन गोपाल कहि, जै जै राम प्रताप ॥७७॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चड़ामनि गोपाल विरचितायां सीता-सपत श्री राम-मिलनों नाम अड़तालिसोध्याय: ॥४८॥

राम-अयोध्या-आगमन

४९

झूलना छंद

जोरि लंकेस कर, कहत श्री राम सौं। नाथ चलि लंक गढ़ नजरि कीजै।
बस्तु तिहुँ लोक की, आनि रावन सच्यो। जौन मन भावई, तौन लीजै॥
साज अगनित सबै, रीछ कपिराज दै। जाहि मन काम जोई ताहि दीजै।
जानकी नाथ की, अमृतमय दृष्टि तैं। वृद्धि नव निद्धि नहि नैंक छीजै॥१॥

सवैया

श्रीराम—

लोक दये ध्रुव कौं अति अस्थिर, दै सुर लोक पुरंदर भावै।
दै बलिराज पताल को राज सु भूपन कौ भुव लोक सुहावै॥
है अलका अलकेस सदा, अब तौ गढ़ लंक तुम्हैं अधिकावै।
जा कहं कौन दये कहि माखन, सो फिरि कै मम काम न आवै॥२॥

चाहत हैं इक पुष्पक जानहि, और न कामहु की रजधानी।
है कपि रीछपती सिगरौ दल, दीजित जा कहं जो मनमानी॥
जे मम हेत करे पुरुषारथ, दानव बंस निपातन जानी।
जोंहिगे आपने आपने ठौरनि, लै जय जीति की लंक निसानी॥३॥

चौबोला

हरषि विभीषन लै सगरौ दल, सकल साजु मंगवाये॥
लीन्हें मन मानिक कपि रीछन, जाहि जौन मन भाये॥
येक न छुये कछू कर अंगद, और सबै पहिराये।
भरि आनन्द मगन सब जय जय, राम प्रतापहि गाये॥४॥

---

१. नजरि कीजै : देखिये। सच्यौ : संचित किया।
२. अस्थिर : स्थिर, अटल।
३. जानहि : यान, रथ।

छप्पै

पुष्पक दिव्य मँगाइ, राम रवि वंदन कीन्हें।
चढ़ि सिय लच्छन सहित, बोलि सेना सब लीन्हें।।
लंकेश्वर कपिराज, पद्‌म अष्टादस दल बल।
सब भार भरिय त्रैकोन भरि. चलत अवध त्रिभुवन धनिय।
बज्जत निसान, सुर गन करहि पुष्प वृष्टि, माखन भनिय।।५।।

गीतिका

चढ़ि दिव्य पुष्प विमान रघुवर, सकल सैन्य समाज सों।
चलि गगन मारग हरित उत्तर, पवन के समता जसों।।
लखि सिंधु बंधन सिया बिलखित, दुखित पितु मो हित भये।
मन जानि राम कृपाल तबहीं हरषि हिय करुनामये।।६।।

धनु कोर जोजन चारि तें, सब सिला बंध बहाइ कें।
दधि नाभि परसे सीय संजुत, रामनाथहि आइकें।।
कर जोरि पूजा वंदना करि, लखे पंपा—सर तहीं।
सिय हरन पर्नकुटीर देखत, उमगि दृग जल जलज हीं।।७।।

रिषि अत्रि आदि अगस्ति वंदन करत मुनि, जे जे धुनी।
प्रभु परसि सुभ गोदावरी लखि, राम गिरि सिध्ध रु मुनी।।
तब आइ मेकल नाँघियौ. प्रभु न्हाइ मेकल—नंदिनी।
लखि चित्रकूट पयस्वनी तट, जानकी जग वंदिनी।।८।।

पुनि उतरि जमुना पार, आश्रम देखियौ भरद्वाज के।
तहँ दान अगनित दिये विप्रन, साजि बहु विधि साजि कें।।
पुनि आइ पुन्य प्रयाग पावन, प्रभु त्रिवेनी न्हाइ कें।
हनुमान कौ तहँ दिये सासन, कहौ भरतहि जाइ कें।।९।।

---

६. जसों : जैसी। हरित : दिशा। सिन्धु बंदन : सेतु बाँध।

७. रामनाथहि : रामेश्वर में।

८. अत्रि : अनेक वेद मंत्रों के द्रष्टा ब्रह्मा के मानस पुत्र और एक प्रजापति।
मेकल नंदिनी : नर्मदा नदी।

कुसलात बात जनाइ, लखिअं प्रीति अंतर की सबै।
सुनि नाइ सीस समीर-नंदन, अवधि पहुँचे है तबै॥
रघुनाथ आये, खभरि सब सों कहत, अति आनन्द सनें।
हिय हूलि माचिय प्रेम की, यह सुनत जन माखन भनें॥१०॥

सवैया

हूलि मची सुनि आवन राघव, धामनि-धाम सबै वितताए।
जे जिहि भांति जहाँहि हुतें, सुनतं तिहि भाँति तहां तिन धाए॥
भीर ठिली कहि माखन, कैसेहुं जात गलीन मै गैल न पाए।
मातन भ्रातन को डग ही डग, होत सहस्रनि कोस रसा ए॥११॥

सवाई छंद

जग मग जुगल पाँवरी सिर पर बिथुरित पीढि सिरोरुह जावत।
कृत तनु चलत, हलत दोउ बाहन, सोक सिंधु जनु खेइ नकावत॥
धकधकात स्वासन उर भरि भरि, कहि माखन रघुवर गुन गावत।
नगन पगन सब मात भ्रात जुत, पुर जन सहित भरथ इमि आवत॥१२॥

द्रुमिला

रन रंग सुरारि विमर्द्दन हे, बर मर्दि कपर्दि धनुर्धर हे।
सत जज्ञ सुरच्छ अपच्छ के पच्छ धराधर धर्म धुरंदर हे॥
रवि बंस बिसाल विभूषन हे, जय राघव राम रमा बर हे।
कहि माखन गावत भर्थ यहै, अपराध अगाध छमा कर हे॥१३॥

अवलोकि भरथ्थहि दूरिहि तें, प्रभु नैननि नीरद से उनये।
उतरे अवलंबित जानहि तें, सिय बंधु समेतहि सोक मये॥
धरकें छतियां फरकें भुज लोल, भरे गह कंठन बोलत ये।
कहि माखन बंधु बिछोह मिलापहि, श्री रघुवीर अधीर भये॥१४॥

---

११. रसा : पृथ्वी।
१२. सिरोरुह : केश। जावत : यावत, सब। नकावत : लांघना।

सवाई छंद

निरखत भरत भ्रात जुत रामहि, अति आतुर चरनन लिपटाये।
प्रभु उर लाई, मिलत दृढ़ गहि गहि विकलित हृदय रंक निधि पाये॥
बहत प्रवाह पीठि दुहुं अंसुवनि, कहि माखन नहिं रुकत रुकाये।
मलि मलि मनहुं वियोग हियनि तें, नैननि मग तब देत बहाये॥१५॥

भुज भुज, कंठ कंठ, उर उर लगि, रहिगे ग्रीव कंध पर दै दै।
लघु सोदर चरननि लपटावैं, पुर जन तकत विलापनि कै कै॥
लपटि पीठी तिहुं मातनि, विगलित झरत नीर दृग बूंदनि सैं सैं।
कहि माखन रघुनाथहिं गहि गहि, भरि भरि हियनि उपसासन लै लै॥१६॥

द्रुमिला

थिरकैं हुं ननिन त असुवान, लगी झरि मानहुं सावन की।
मिलि मातन भ्रातन कंठ तटी लगि, छोड़ि न जात मिलावन की॥
जिनके मनसा अभिलाष जितो, तिहिं भाँति तिहैं प्रभु पावन की।
सब की उर-सोग-वियोग हरी सु, घरी रघुवीर के आवन की॥१७॥

त्रोटक

पहिले प्रभु केकइ पाँइ पर।
मुख चूमि लई उर लाइ गरें॥
निजु मात पदैं पुनि वंदन कें।
उर दुःसह दुख्ख निकंदन कें॥१८॥

फिरि मातु सुमित्रहि के चरनैं।
परसे सब सोकहि के हरनैं॥
पद लच्छन भयहि के परसें।
उर लाइ, दृगें घन से बरसें॥१९॥

मिलि सत्रुहनैं अति ही हित सौं।
जिमि रंक को चित्त लगे वित सौं॥
परसे पद लच्छन मातन के।
मिलि सोक दले सब गातन के॥२०॥

मुख चूमति देति असीस तिहूं।
झरि नैननि नीर रुके न कहूं॥
पद बंदत जानकी सासुनि की।
अवली बिथके नहिं आंसुनि की॥२१॥

उर लाइ तिहूं गहि गाढ़ी रही।
जनु श्री पदवी हिअ तातिं लही॥
सिय के पद वंदन भर्थ करें।
लघुसोदर संजुत अश्रु भरें॥२२॥

गह पूरित आसिष कोटि दई।
हिय सीय घनी अनुकंपमई॥
इहि भाँति सबै पुर के जन सों।
कहि माखन राम मिले मन सों॥२३॥

दोहा

लघु जन पद बंदन करें, गुर जन आसिष देत।
रघुवर सब पर एक सम, निरखत कृपा समेत॥२४॥

कपि पति, दनु पति, रीछ पति, अंगदादि हनुमान।
जथा जोग्य सब सबन को, मिलए कृपानिधान॥२५॥

जोजन नंदीग्राम ते, मिले भरथ जहँ जाइ।
बूझि क्षेम कुसलात सब, चले अवधि रघुराई॥२६॥

छप्पै

सकल सैन, पुरजन समस्त, पुष्पक चढ़ि रघुवर।
छिनमह पहुँचे आइ, भरथ आश्रम करुनाकर॥
कहे निरखि धनि भ्रात, कठिन तप मम हित कीन्हे।
अभिअंतर अति प्रीति, हरषि प्रभु आसिष दीन्हे॥

---

२१. झरि : झड़ी।
२२. ताति : जल्दी।
२३. अनुकंपमई : दयामयी। गह : गहगह, प्रफुल्लित।

=चलि लखिय अवधि प्रासाद तब, बहु मलीन पुर बगर सब।
=नर नारि हृदय वै-संधि हुव, सुख प्रवेस, दुख नास जब ॥२७॥

घनाक्षर

बाजें जय जीति के नगारे भौन भौंननि तें। जौन जिहिभाँतितिहिभाँतितौनधाए हैं।
साजि साजि आरती जरित मनि थालन में। कंचन कलस प्रति दीपक सुहाए हैं॥
गावती नगर नारि, मंगल गहनि भरि। मोती मनि लाजन सौं फूल भरि लाए हैं।
माखन भनत, राम जी रन उधार किये। देखि लोग प्रान के पदारथ से पाए हैं॥२८॥

सवैया

कानन औधिपुरी नर नारि, महीरुह बल्लि लता कुम्हिलाये।
केलि कुतूहल फूल फलद्दल हास विलास रसं बिरसाये॥
मंगल कोकिल ही हुलस्यौ न तहीं, भनि माखन औन फिराये।
फूलि फले नव पल्लव मोदनि, राम जबै रितुराज से आये॥२९॥

गाजि उठे गजसारनि ते गज, घोरन तौ घोरसारहीं सें।
चारन मागध बंदिजने, बिरदावत कोटिन आनंद जी सें॥
विप्रनि वेद रिचा उचरें पढ़ि, माखन मंगल मंत्र असीसें।
रावर राम प्रवेस समै, सुर लोक की गैल लगी अवनी सें॥३०॥

राम सिया निजु मंदिर कौं, मिलि मातन भ्रातन स्यौं, पगु धारें।
पावड़े द्वार परे जरवाफन, बंदनवार बंधे चहुँ पारें॥
कंचन झारिन माखन लै, परिचारक लोगन पाँइ पखारें।
देव-वधू मिलि राज-बधूनि सौं, आरति कोटिन आइ उतारें॥३१॥

दोहा

तन मन धन सब विधि सबै, करे निछावरि आइ।
मनि मानिक दधि अच्छतनि, टीकहिं हिय हरषाइ॥३२॥

---

२७. बगर : घर। वै-संधि : वय: सन्धि।
२८. गहनि : प्रसन्नता। लाजन : लावा।
२९. महीरुह : पेड़। औन : घर। मोदनि : प्रसन्नता, सुगंध।
३०. गजसारनि : गजशाला। जी से : चित्त लगा कर। रावर : अंतहपुर।

सवैया

बूझति मात कथा बन की, जिहि भाँति भई जब तें पगु धारें।
जे दुख सुल्ख रु जुद्ध विरुद्धहिं, सो क्रम तें रघुवीर उचारें॥
लोग भये अनरज्ज सबै, सुनि हे कितने करुना अविकारें।
गावत कीरति गाथ रहे, घनि काननि जाइ दसानन मारें॥३३॥

माता उवाच—

धन्य धरा रवि वंस सिरोमनि, जे हित तें पितु सासन पाले।
छोड़ि के राजसिरी सुख संपति, बंधु प्रिया जुत कानन चाले॥
कष्ट अनेग सहे कहि माखन, जे सब संकट मारि उसाले।
दानव बंस बिघसन कै, तिहुं लोकन के दुख दीरघ घाले॥३४॥

दोहा

नासन कौ दनु बंस गुनि, मात दई बनवास।
मोमन सुरगन सुख गने, लोगन मन उपहास॥३५॥

सवैया

क्यों जुरतौ कपि सैन अपारन, जौ न सुग्रीव सहायक होतौ।
तौ लखतैं किमि औधपुरी, करतौ न हनू पुरुषारथ जेतौ॥
अंगद जाम करैं सब काम, बड़े सब एक तें एक हैं सो तौ।
जौ मिलतौ न विभीषन मोहि, सु तौ दसकंध कौ नासक को तौ॥३६॥

दोहा

सब विधि सब के गुननि कौं, विवरि रहे भगवान।
संकट विकट विनासनें, मो मन हैं हनुमान॥३७॥

रुचिरा छंद

भरत—

सुनि सुनि भरत हृदय बहु हुलसित, करि अस्तुति अनुराग भरे।
धनि धनि जन्म सुफल सब ही के, प्रभु हित करनी जौन करे॥
एक न भए काम के कछु हम, सोक सिंधु में बूड़ि मरे।
धनि सौमित्र मित्र-कुल-मंडन, सुनासीर के सोच हरे॥३८॥

३८- सुनासीर : इंद्र।

दोहा

करता हरता आपु सब, सुर नर असुर समेत।
तिनते तिहुंपुर को बड़ो, जाहि बड़ाई देत ॥३९॥

सब पर समरथ सब दिना, सब पर सदा दयाल।
दनु मद मर्दनि जुगनि जुग, करत पुन्य प्रतिपाल ॥४०॥

सुनि सुनि अस्तुति भरत की, कहे सुरनि सिरमौर।
तुम से भाई भावते, भये न ह्वै हैं और ॥४१॥

छप्पै

इहि अंतर रघुनाथ, सरस भोजन बनवाए।
षटरस रसनि समेत, सकल सैननि अघवाए॥
बहु पट भूषन साजु, सबन दीन्हे मनभाई।
रही न कछु अभिलाष, प्रीति पूरन रघुराई॥
– सनमानि मान जुत पान दै, सबन विदा के करत हो।
– नहि चलत चित्त किहुं सदन को, कमल चरन के परत हो ॥४२॥

मदन छंद

अंगद—

जोरि अंजुलि कहत अंगद, सुनौ प्रभु यह रीति।
धर्म सेवक को यहै, कछु कहै सेवा जीति॥
होइ आयसु जाहि को, मम करै पूरन टेक।
आजु राज समाज मैं, बल बीर धीर अनेक ॥४३॥

हते विनु-अपराध बालिहि, सौंपि तब मोहि दीन।
रह्यो पीछे सबन के मैं, कहा सेवा कीन॥
आपु त्रिभुवन-नाथ हो, प्रभु सुनौ इक मन सुध्व।
देहु पितु कै बैर मो कहँ, ठानि कै अब जुध्व ॥४४॥

दोहा

मरें भोग सुर पुर करौं, जिये तिलोदक देहु।
यह पुरवहु मन काम मम, और न प्रभु कछु लेहु ॥४५॥

सोरठा

श्री राम—

धनि अंगद मति धीरपन, पालक पुरुषारथी।
देन कहूं रघुवीर, बैर कृस्न अवतार में ॥४६॥

कुंभक छंद

सुनि अंगद सुख पाए।
प्रभु कमल चरन सिर नाए॥
करि अस्तुति भाँति अपारो।
प्रभु मोहि न ढिग ते टारो॥४७॥

तजि राम चरन की सेवा।
मन जानत और न देवा।
रघुवीर महा हित माने।
धनि अंगद वीर सयाने॥४८॥

बहु बोधि बिदा तब कीन्हें।
सुग्रीवहि सासन दीन्हे॥
नल नील बली जमवंते।
सब जूथपती बलवंते॥४९॥

नृप लंकपती हितकारी।
दिय सासन अवधि बिहारी॥
सब जाहु आपने ठौरें।
कछु आनहु जीव न औरें॥५०॥

मम प्रानहु तें तुम प्यारे।
हम मानत नेक न न्यारे॥
बहु बोधि सबै चित चीन्हें।
करि प्रीति बिदा करि दीन्हें॥५१॥

दोहा

चलें सबै मन मलिन ह्वै, राम चरन सिर नाइ।
फिरि फिरि चितवत उलटि कै, मति कहुं लेहु बुलाइ ॥५२॥

सुग्रीव अंगद नील नल, जाम विभीषन भूप।
आवत जात सदा रहैं, निरखत राम सरूप ॥५३॥

हनूमान दृढ़ ह्वै रहैं, चरन कवल को दास।
तिहिं तें राखे पास प्रभु, अनत न आसा वास ॥५४॥

सकल सैन कपि रीछगन, गए ठौर सब आप।
जै जै जै गोपाल भनि, सुमिरत राम प्रताप ॥५५॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां श्री राम-अजोध्या-समागमनोनाम उनचासमोध्याय: ॥४९॥

५२. मति : शायद।

राम-राज्याभिषेक

५०

दोहा

बैठे पुरजन सहित हैं, मात भ्रात जुत राम।
मुनि नारद आवत निरखि, कीन्हें सबन प्रनाम ॥१॥
तिहि औसर आए हरषि, सकल ब्रह्म रिषि बृन्द।
कर अच्छत फल फूल लै, मिलन हेत रघुनंद ॥२॥

सवैया

श्री गुरु कौसिक इष्ट वसिष्ट अगस्ति पुलस्ति सुमंत सुहाये।
कस्यप व्यास परासर गौतम, अंगिरा अत्रि सु वालिमक भाये॥
मारकंडे भृगु स्यौं भरद्वाज रु, अस्तिक गालव धौम्य सुहाये।
श्री रघुनंदन के मिलबै, कहि माखन और घने रिषि आये॥३॥

घनाक्षर

दौरि रघुवीर चार्‌यौ बंदत गुरु के पद। लीन्हें उर लाइ, दै दै आसिष अपार हैं
जोरि कर रिषिन कौं करत प्रणाम राम। भेंटे भुज भरि भरि पूर सुख सार हैं॥
बूझि कुसलात बात आँनद ऊमगि गात। कीन्हें पढ़ि वेद मंत्र कीरति उचार हैं।
पुन्य को अकास, महा पातक समूह नास। दीनन के पालन कौं राम अवतार हैं॥४॥

दोहा

रिषिय उवाच—

जोग जज्ञ व्रत दान तप, सत्य सौच आचार।
थापे दनु संघारि तब, धन्य राम अवतार॥५॥

---

५. थापे : स्थापित किया।

सवैया

देव अदेव नृदेव सबै, जग थावर जंगम जंतु जहाँ तें।
नाक रसातल भूतल विस्तर, जे रचिकै रचनाहि महा तें।।
आपने रंग विहारन कौं, उतपत्ति कै अस्थित नास तहाँ तें।
हे करता हरता सिय राम, कहे इन अद्भुत रीति कहाँ तें।।६।।

सवाई छंद

गुरु बसिष्ठ करि अस्तुति अगनित, भाँति भाँति सब साज् मँगाये।।
तापस बेस उतारि सबनि के चारिहु, चारु केस बनवाये।।
सकल सुगंध अरगजा लेपन, करि मंजन भूषन पहिराये।
मानहुँ जोति प्रताप त्रिपुर के, कोटि कोटि मनसिज छवि छाये।।७।।

उबटन मातु सिया की करिकै, सरस सुगंधनि केस सँवारी।
करि मंजन भूषन मनि मोतिन पहिराई सारी जरतारी।।
जगमगि जोति रही तिहुँ पुर की, निरखि निरखि सोभा सब वारी।
कहि माखन जनु छीर सिंधु तें, कोटि कला कमला पगु धारी।।८।।

दोहा

गो पट भूषन कनक मनि, गज तुरंग बहु ग्राम।
दीनन कौं, दुज गनन कौं, दीन्हें अगनित राम।।९।।

छप्पै

षट रस व्यंजन सहित, सरस ज्यौंनार सुहाये।
रघुवर मातन सहित, भ्रात पुर जनन बुलाये।।
मन वांछित रुचि जोन, सकल संतुष्टि कीन्हें।
दै दै पाल प्रसून, विविधि पट भूषन दीन्हें।।
=श्री राम सखनि अनुजनि सहित, बैठे आइ सभा तबहिं।
=मुनि वृंद वेद उच्चारि करि, गावत जस माखन सबहि।।१०।।

दोहा

देव ब्रह्म रिषि राज मिलि, कहत बसिष्ठ सनेहु।
आजु राज श्री राम कौं, राज तिलक किन देहु।।११।।

घनाक्षर

वसिष्ठ—

वेद विधि गावैं, तीनौं लोक की रजाई जाकी। तासौं एक ग्रामकोकावचनसुहाइअै।
रीति नर लोक अवतार कौं विचार यह। तातैं आजु राघव सौं विनय लगाइअै॥
कीजै राजतिलक ढराइ सीस चामर कौं। माखन कहत आत्र पत्रहि गहाइअै।
बैठि के सिंघासन चलाइ भूमिसासन कौ। अवधपुरी कौं महाराजा जू कहाइअौ॥१२॥

सवैया

श्री राम—

है यह राजसिरी सुख संपति, ए कहितौ प्रभुता कमला की।
ताहि नहीं थिरता तनिको, सिगरी गति चंचलता चपला की॥
को न करैं तिहि पाइ गुमान, न जानि परैं जिहि रीति छला की।
आवत जात न बार लगै, कहि माखन ज्यौं तरु छांह कला की॥१३॥

काम बढ़ाइ, बढ़ावत क्रोधहि, लोभ महा मद मोह भरी है।
दानव मानव देवन दै, कहि माखन, सो बस आप करी है॥
एकन कौं ललकावति सेर कौं, एक भरे पर और भरी है।
कौनहु की न भई कबहूँ, यह लच्छि की रीति प्रतच्छ खरी है॥१४॥

वसिष्ठोवाच—

है धन तैं जग-धर्म सबै, परिपूरन होत मनोरथ जातैं।
स्वारथ पुन्य महा परमारथ, जे करनी बरनी सुख सातैं॥
दान दया करि माखन ते नर, पावत है जस भूतल या तैं।
संपति की प्रभुताई चहूँ जुग, सज्जन संग्रहि राखत तातैं॥१५॥

पाठान्तर—१५–सुख मातैं : सुख सातैं (१, २)

---

१२. चामर : चवँर। आतपत्र : छत्र।
१३. तनको : थोड़ा। छला : छलना।
१४. ललकावती : ललचाना। सेर : बाट, चार पाव।
१५. सुख सातैं : सातों सुख।

घनाक्षर

संपति तें दंपति विलास कौं प्रकास होत। संपति तें भारी सनमान उर पावहीं।
संपति तें दान पुन्य प्रीति परमारथ हैं। संपति तें स्वारथ सुजन मन भावहीं॥
माखन कहत गरुताई सब संपति तें। संपति तें सब मन काम जस गावहीं॥
संपतिबिहीनदीनजानिकौनआदरतें। या ही तें जहाँन सबसंपतिको धावहीं॥१६॥

सवैया

श्रीराम—

जे भुव-मंडल मैं भुवपाल, भए इहि के हित के अभिमानी।
जीति लए वसुधा धन जे, सब एक ते एक भए व्रत दानी॥
लच्छि वहे परतच्छ विजच्छनि, छोड़ि न काहू के संग सिधानी।
याहि के हाथ बिकाइ गए सब, याहि न काहू के हाथ बिकानी॥१७॥

घनाक्षर

ममता की रानी, अभिमानि की ठकुरानी। मुनि दुख दानी, मनमानी बिचरति हैं।
काम की सहेली, मन कामना की बेली। दीन जननि दुहेली, दीह आपद हरति हैं॥
स्वारथ की रथ, परमारथ की पूरी पथ। कुपथ लगावै भेरि, सुपथै हरति हैं।
काहू के अमावस समान पूनौ द्वैज तीज। भाईकेसेभेपदेखोभगनी करति हैं॥१८॥

द्रुमिला

करि संग्रह कर्म अकर्मन के, कहुँ धर्म अधर्म न नेक जकै।
कहि माखन ज्यौं उपजै धन है, तिहि भाँति तहाँ उपराजि तकै॥
जग ऊपर पाइ बनी प्रभुता, मन लोभ महा मद मोह छकै।
कर झारि चलै जम लोक जबै, नहि खाइ सकै, न खवाइ सकै॥१९॥

दोहा

आवति लच्छि अनेग मग, जात तीनही राह।
स्वारथ, परमारथ विषै और अकारथ दाह॥२०॥

---

१८. दुहेली : दुख देनेवाली। आपद : आपद।
१९. जकै : चकित होना। उपराजि : उपार्जित करके।

सवैया

पाइ कैं राजसिरी छिति मैं, कहि माखन एक न न्याइ बिचारै।
दीनन ऊपर जोर जनाइ, लहै अपवादि, अनीति के मारै।।
लोभ के छोभ तें खोइ सु कीरति, होत फजीहति लोक मझारै।
रंचक पूरब पुन्य तें भोगहि भोग, निदान निरै पगु धारै।।२१।।

गीतिका

बसिष्ट—

यह सुनहु निर्गुन सगुन द्वै बिधि, लोक रीति विचार है।
तिहि ग्रहै जोगी, जगत भोगी, सुखद निजु निजु सार है।।
तप साधि जोग समाधि साधन, जोति रूपहि ध्यावहीं।
गनि सत्य ब्रह्म, असत्य माया, रस न सगुन भावहीं।।२२।।

हित मित्र पुत्र पउत्र संपति, सुंदरी सुख स्वाद है।
जग जदपि निदत त्यागि ममता, काम क्रोध विषाद है।।
तजि लोभ मोह प्रमाद तन धन, जानि सकल विकार है।
निजु ज्ञान पद निर्बान गहि, सिख देत सब संसार है।।२३।।

सुनि तदपि भोगी भोग भामिनि, स्वाद सुख कैसे तजै।
करि बिबिधि उद्दिम सचित संपति, सगुन श्रीपति कौ भजै।।
सब स्वारथं परमारथं हित, वित्त संग्रह कौं करै।
जिन हृदय करुना-सिंधु पूरन, धर्म धारन कौं धरै।।२४।।

नर लोक भोग विलास कौं करि, दान पुन्य सतो गुनी।
धनि धन्य दोऊ लोक, तिनकौं कहत सब सिध्ध रु मुनी।।
सत कर्म धर्म बिचार जिनके, ज्ञान आतम जुक्त है।
तिन कौ न भय तिहुं लोक मैं कहु, सदा जीवन मुक्त है।।२५।।

पाठान्तर—२४-भोग भामिनी : भोग कामिनी (१, २)

२१. अपवादि : कलंक। मझारै : मध्य। निरै : निरय, नरक।
२२. सार : तत्त्व।
२३. ममता : ममत्व।
२५. लोक : लोग।

अविवेक कर्म अकर्म करि, जिन द्रव्य संग्रह जानहीं।
निजु काम के, पर काम के नहि, व्यर्थ पचि श्रम ठानहीं॥
बस वासनानि, दुरास के बस, भ्रमत जोनि अपार हैं।
दुहु लोक धर्म विहीन ते, सठ करत निरय विहार हैं॥२६॥

गहि लोभ पातक मूल को, परि मोह माया जाल मैं।
तजि लाज धन करि, मानि निर्दहि, परत जब जिय काल मैं॥
जम दूत दंड प्रचंड दै दै, जाचना बहुधा करैं।
तेइ कर्म हीन, अकर्म तैं, जुग जुगनि दुर्गति ही परैं॥२७॥

दोहा

आपु सदा सर्वज्ञ प्रभु, सकल धर्म प्रतिपाल।
तुम श्रीपति त्रैलोक पति, तुमहि कौन भय जाल॥२८॥

देव, देव रिषि, ब्रह्म रिषि, सकल राज रिषि बृंद।
कर जोरे विनये सबैं, सुनि हरषे रघुनंद॥२९॥

गीतिका

तब कहें इष्ट वसिष्ट भरतहि, सकल साजु सजाइये।
सुभ बजहि बाजन गह गहे सब, राज श्री विधि भाइये॥
यह सुनत सबहीं उमंगि आनंद, लगें सब ही काम कौ।
धनि आजु बासर, देत रिषि हैं राजतिलकहि राम कौ॥३०॥

हनुमान धाए लेन तुरतहि, सकल तीरथ नीर हैं।
सब धातु मृतिका फूल फल दल, औषधी कीप भीर हैं॥
अरु समिध सकल सुगंध परिमल, साकलादिक लै घनें।
मनि विविध मुक्ता माल विद्रुम, बसन भूषन अनगनें॥३१॥

---

२६. पचि : हठपूर्वक। दुरास : बुरी अभिलाषाएँ।
२७. जाचना : यातना।

गज बाजि रथ सब वस्त्र संयुत, चँवर छत्र विसाल हैं।
बहु कलस मनिमय, जोति दीपक, सहित पत्र रसाल हैं॥
मनि जटित दिव्य सिंघासने पर, बिछी गादी तास की।
गरदा सु केसरि सौं भरे, भरि गिलिम कुसुम सुवास की ॥३२॥

दधि दूध अक्षत सहित रोचन रतन थालन में धरे।
घनसार गो घृत आरती सजि, साज विधि विधि के करे॥
मृग भेद मलयजु कंकुमादि, भरे कचोरनि कनक के।
तहँ हेम कुपिन अन्तर बहु विधि, धरे बनकनि बनक के ॥३३॥

रचि हरित मंडप, कनक वेदी, विस्वकर्मा निर्मये।
चहुं ओर तोरन सुमन संजुत, दल रसालन के नये॥
बहु भाँति राज समाज अगनित, कौन कीमति जो गनैं॥
तिहुं लोक की जिन संपदा, तिहि कितिक कवि माखन भनैं ॥३४॥

द्रुमिला

बहु बाजत नौमति नाद चहूँ दिसि, मंजन राघव के करतैं।
मुनि वृंदनि बेद रिचा उचरैं, धनु पूरि रही सुर तैं नरतैं॥
तन मर्दन जच्छ सु कर्दम सौं करि, वारि सुगंधित के ढरतैं।
कहि माखन मंगल गावत कामिनि, कोकिल कंठनि के भरतैं ॥३५॥

सोरठा

करि मंजन रघुवीर, चौकी रतन जराय पर।
सरस अँगोछनि नीर, स्यामल अंग अँगोछि करि ॥३६॥

---

३२. पत्र-रसाल : आम का पत्ता। तास की : तासबादला। गरदा : गद्दा। गिलिम : गलीचा, कालीन।

३३. रोचन : हल्दी। मृग भेद : कस्तूरी। कुंकुमादि : रोली। कचोरनि : कटोरी। कूपिनि : शीशी। बनकनि बनक के : रंग रंग के, भाँति भाँति के।

३४. तोरन : फाटक।

३५. नौमति : नौबत, बधाई के बाजे। जच्छ सु कर्दम : यक्ष कर्दम, यक्षों द्वारा प्रयुक्त सुगंधित अंग लेप, उबटन।

देत अर्घ सुभ भान, पीतांबर धोती पहिरि।
नित्य नेम धरि ध्यान, करत अंग भूषन सरस ॥३७॥

केसरि तिलक प्रतीक, राजत भाल विसाल पर।
मनहु कनक की लीक, मरकत मनि पर सोभिजत ॥३८॥

घनाक्षर

मनिमय मुकुट विराजैं सेत चीरा पर। कुंडल श्रवन लोल जटित जराइसौं।
मोतिन के माल मनि माल ग्रीव फूल माल। कंकन विसाल कर कलित सुभाइसौं॥
लसत सवागे जरकस के सरस अंग। कोटिक अनंग छवि छपत प्रभाइ सौं।
माखन सुरेसन के नर दै नरेशन के। सब ही के नैन मन लाग्यो रघुराइ सौं॥३९॥

सवैया

भूषन भूषित कै उत तें, तरुनी सब सीतहि लै तहँ आई।
चौक रची गज मोतिन की, दुहुँ जोर कै गाँठि सु मंगल गाई॥
देव रिषी नर ब्रह्म रिषीन की, वेदन की धुनि मंडप छाई।
माखन यों सुख की सुषमा, कहिवे कह कंठ गिराहु लजाई॥४०॥

छप्पै

गौरि गणेश वसिष्ट कलस, पढ़ि मंत्र पुजाए।
सिंघासन बैठाइ, चतुरमुख वेदनि गाए॥
सकल ब्रह्म मुनि सहित, ब्रह्म हरषित मन कीन्हें।
रोचन अच्छत सुभग तिलक, रघुवर सिर दीन्हें॥
=सुभ राज राज, नृप राज पर, नाग राज दै त्रिपुर गनि।
=कहि माखन चौदह भुवन भरि, रामचंद्र राजाधिमनि॥४१॥

---

३७. अर्घ : जल। भान : सूर्य।
३८. लीक : लकीर, पंक्ति।
३९. चीरा : पगड़ी। वागे : परिधान।
४०. गिरा : सरस्वती।
४१. चतुर मुख : ब्रह्मा। राज राज : कुबेर। नाग राज : श्रेष्ठ हाथी।

तोमर

सजि आरती तिहुँ मात।
हिय हुलसि प्रेमनि गात॥
विधि सों उतारी आइ।
मुख चूमि लेहिं बलाइ॥४२॥

सिर भरथ लीन्हें छत्र।
सुग्रीव बहु विधि अत्र॥
तहँ करहिं लच्छन चौर।
सत्रुघ्न दरपन जोर॥४३॥

नल नील आनँद दून।
लिय डबा पान प्रसून॥
परिगही कर जमवंत।
लिय बिजनु अंगद संत॥४४॥

हनुमान कर पगत्रान।
सब पारखत इहि मान॥
कर छरिय लिय लंकेस।
लखि करत सबनि सुदेस॥४५॥

परिचारकादिक लोग।
सब लगे टहल प्रयोग॥
बहु बजत द्वार निसान।
सब करत मंगल गान॥४६॥

दोहा

गुर जन, सुर जन बृंद बहु, पुर जन की अति भीर।
निरखत सब अभिलाष भरि, राजतिलक रघुबीर॥४७॥

---

४२. तिहुँ : तीनों। गात : शरीर।
४३. अत्र : अस्त्र। दरपन : शीशा।
४४. परिगही : तेल रखने की नलकी।
४५. पगत्रान : जूता। लंकेस : विभीषण।

सवाई छंद

परिपूरन अभिषेक होत ही, सुर नर लोक बजे बहु बाजे ।
सब जन सर्बस करत निछावरि, टीकट नव निधि सब मन लाजे ।।
जाचक सकल निहाल होत ही, दारिद दूरि दिगंतनि भाजे ।
कहि माखन श्रीरामराज लखि, आनंद आनंद सों गलगाजे ।।४८।।

घनाक्षर

बैठे बृषभासन समेत हंस आसन स्यौं । राजे पाक सासन समाज देवतान की ।
देव रिषि, ब्रह्म रिषि, राज रिषि आदि सब। करत उचारचार्‌योवेदकेविधानकी।।
लीन्हें गजगाह चौंर लक्षन सहोदर स्यौं। भरत छबीलो छत्र जोति कोटि भान की ।
महाराजारामचंद्रराजत सिंघासन मैं। महरानी वाम अंग सोहैं संग जानकी ।।४९।।

सोहत जराय मनि जटित सिंघासन मैं। भूषन जराय तन जोति अधिकानी है।
लीलक ललित तास लसत सवांगे अंग। सारी जरतारी सोभ जात ना बखानी हैं।।
तीन लोक मैं न कहूँ सुषमा समान आन। माखन बरनि कहा कहैं वाक बानी हैं।
देव नर देवन के राजामहाराजाराम। कोटिकामवामरूपसीतामहारानीहैं।।५०।।

सवैया

मातन भ्रातन आदि पुरज्जन, जो जिहि के मनसा तिहि दीन्हें ।
देवन दै, नर देवन दै, रिषि राजन दै, मन वांछित लीन्हें ।।
दानव तैं, सनमानन तें, कवि कोविद माखन येक से चीन्हें ।
श्री रघुवीर नरेस सदा, सब के अभिलाष संपूरन कीन्हें ।।५१।।

दोहा

तिहुंपुर उर सुख सिंधु भरि, सब को मिट्यो प्रलाप ।
सुर नर मुनि गोपाल भनि, बरनत राम प्रताप ।। ५२ ।।

इति श्रीराम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां श्रीराम—राज्याभिषेक वर्णनोनाम पंचासोध्याय: ।।५०।।

४९- बृषभासन : शंकर जी । स्यौं : सहित । गज गाह : हाथी का कूत ।
५०- लीलक : नीले रंग का ।

राम-कीर्ति-प्रताप

५१

छप्पै

सकल देव, रिषि राज, ब्रह्म रिषि, अस्तुति कीन्हे।
रामचंद्र त्रैलोकनाथ, तब राजहि लीन्हें॥
संपूरन अभिषेक होत, जय बाजन बाजे।
पुष्प-वृष्टि करि इंद्र अमित मंगल सुर साजे॥
-गोपाल सु कवि जय उच्चरित, महिमंडल आनंद गति।
-बहु विधि विलास पुर अवधि नित, बरनि न जाइ विचित्र अति ॥१॥

दोहा

परिपूरन सुख मेदिनी, कीट पतंग निसंक।
राज राज गोपाल भनि, सुर पति से जहँ रंक ॥२॥

घनाक्षर

बाजत अवध पुर बाजन विविध विधि। गाजत गजन पुंज भोर निसि भर की।
भीरनि पवरि धचमचत दुजन दिन। उचरत वेद यह पहर पहर की॥
घंटन के घोरन सौं, तालन के जोरन सौं। गावत गोपाल जन गुन रघुवर की।
धावत दसहूँ दिसि दाहन दुवन हिय। दुंदुभी धुकार किधौं धुनि जलधर की ॥३॥

दोहा

सकल कला सर्वग्यता, धरनी धर्म समाज।
राम सभा सोभित महा, देव ब्रह्म रिषि राज ॥४॥

पाठान्तर—३-पहर पहर की : पह के पहर को (१, २)

---

३. भीरनि : भीड़। पँवरि : पौरि, द्वार।

घनाक्षर

पंडित सकल गुन मंडित, गोपाल भनि। गनि न परत, अगनित छिति पति हैं।
अवनि उजागर, दयानि हूँ के सागर। समर भट आगर, सुनागर सुमति हैं।।
मनिन सिंघासन, लसत राम आसन। हँसत मृदु हासन, सबन हित अति हैं।
भानु कुल भान के समान के प्रभान तकि। प्रफुलित सुर अरविंदन के गति है।।५।।

दोहा

दंड अनुग्रह वृद्धि बहु, धर्म नीति दिन दान।
राम सभा गोपाल भनि, सोभित सकल विधान।।६।।

दीप दीप दिग दिगनि के, सुर नर देव समाज।
बरनत सभा प्रताप जस, रामचंद्र सिर ताज।।७।।

घनाक्षर

दिन दिन बढ़त पढ़त सुर जुग जुग। जय जय जित कित विविधि बिहार है।
ईसन के ईस न लहत बगसीसन। ते निपट कपीसन के पूरित पगार है।।
भनत गोपाल दसकंध्र के सबंधु हित। हति दनु, दिय सु अभय सुख सार है।
रघुवर विरद अपार अद्भुत जस। पारावार पार के न पारावार पार है।।८।।

दोहा

पढ़त देव गन मिलि सबै, सभा सु राम प्रताप।
गंजन सकल गुमान के, दनु दल भंजन दाप।।९।।

घनाक्षर

मंडन सकल सुख, खंडन खलक दुख। दंडन अदंडन प्रचंड भुज-दंड है।
अति बल सबल, निबल बल, बहु बल। जय बल जन मन अमित उमंड है।।
अरि सुर पट्टन, करत दहपट्टन। उरनि दनु ठट्टन, करत नव खंड है।
तमकि तमकि तम हरन गोपाल भनि। रघुवर कीरति प्रताप मारतंड है।।१०।।

पाठान्तर—१०-नव : बन (१, २)

---

५. छिति पति : राजा।
८. पूरित पगार है : घर में भरे हुए हैं। जस पारावार : राम के यश रूपी समुद्र की बराबरी समुद्र नहीं कर सकता। पारावार : समुद्र।
१०. खलक : संसार। दहपट्टन : पराजित करना।

दोहा

करत इंद्र अस्तुति तबै, करे सुफल सब काम।
संघारे सुर-सत्रु कौं, चिंतामनि श्री राम ॥११॥

घनाक्षर

दसरथ नंदन, सकल जग बंदन। हरत दुख दंदन, अनंदन करत हैं।
दनु दल बलन, अमित दल मलन। अदब दब खलनहि कलन परत हैं॥
बन गिरि झारन, तरुन सुकुमारन। सम्हार लटवारन, सुकंदर धरत हैं।
भटकत, डाँगन, दिगंबर से आँगन। यों निडर तिहारे डर डाहन मरत हैं॥१२॥

दोहा

सुफल भये दृग-सहस हैं, देखत ही अभिषेक।
बरनें कौन प्रताप जस, त्रिभुवन कौ पति एक॥१३॥

घनाक्षर

महाराज रामचंद्र चंद्रिका को चंद्र चूड़। पीवत चकोर-दृग विविधि विलास हैं।
कुमुद बिरंची देव आनंद निसाचर हैं। करत विहार महा परम हुलास हैं॥
अमिय मयूख परिपूरन गोपाल भनि। बिसद प्रताप पुंज जन के निवास हैं।
भूतल रसातल लौं, मंडलें अखंडल लौं। मारतंड मंडल लौं मंडि के प्रकास हैं॥१४॥

दोहा

पूरन ब्रह्म प्रकास लखि, ब्रह्मा करें विचार।
संकट काटन हार श्री, रामचंद्र अवतार॥१५॥

घनाक्षर

पूरन प्रकास तेज-पुंज हू ते तेज-पुंज। जोति हू ते जोतिवंत आनंद भरतु हैं।
काहू को न कामना, कलेस राख्यौ ठानि रोस। ठानी ठकुराई एक एँड़हि अरतु हैं॥
लोभ मोह कोह दंभ, गरिमा को गारि गारि। दावादार दारिद के पेंड़ ही परतु हैं।
राजा राम, रावरो प्रताप कौ प्रताप देखौ। मारतंड-मंडल कौ मंडन करतु हैं॥१६॥

---

१२. अदब दब : जो न दबनेवाले हैं उनको भी दबाने वाले। कल : आराम। झारन : झाड़ी। डाहन : ईर्ष्या।

१३. दृग सहस : इन्द्र।

१६. पेंड़ : रास्ता।

दोहा

पहे भरोसे देत वर, हरषि कहे हर आप।
जुग जुग हरि अवतार लै, दलिहैं दानव दाप ॥१७॥

घनाक्षर

महाराजा रामचंद्र कीरति-कलप-तरु। फूले फूले मोतिन सों ऊरव अपार हैं।
भरि भरि गोद देव सुन्दरी बिवाननि मैं। भाँति भाँति भूपन कौ करती बिचार हैं॥
रावरे गुनानुवाद गुन कौ न पावें छोर। मुकता अवेहु गुहि जात न सुढार हैं।
रूसि रूसि केतन सौं कहती गोपाल भनि। कौन भेव हियनि विहारैं असीहारहैं॥१८॥

दोहा

बचन वृहस्पति हँसि कहे, देवन के मुख चाहि।
रामचंद्र अवतार मनि, कीरति अद्भुत आहि ॥१९॥

घनाक्षर

राजा राम रावरे सु कीरति-कलानिधि कौं। सेवत कलानिधि कलंक ही के डर हैं।
एकहि बरन भुव-मंडल अखंडल कौं। मंडित बिसद सातौं सिंधु एक सर हैं॥
ढूँढे हरि सेस सेज, ऐरापति देवराज। ढूँढे विधि वाहन, कुमार सो चमर हैं।
एते मान अद्भुत कहत गोपाल देखौ। उमा ढूँढे हर, कयलास ढूँढे हर हैं॥२०॥

दोहा

कीरति चंद्र प्रताप ते, सेत सेत छवि देत।
कच काजर शृंगार रस, असित कहौं कहि हेत ॥२१॥

सवैया

श्री रघुबीर तिहारियै कीरति, एक सरूप रचे सब साँचे।
कुंजर काग भुजंगम भौंर, सु कोकिल सेत कुतूहल माचे॥
और गोपाल कहा बरनै छवि, आनन्द नाच सबै मिलि नाचे।
काम सिगार सु काँच निहार, सु कामिनि कुंतल काजर बाँचे ॥२२॥

---

१८. अवेहु : अभेद, बिना छेद का। भेव : भेद।
२०. बरन : रंग। एक सर : एक समान।

राम भुजा-बल दंड की डिंडिम, कीरति पारद सोधि धरे है।
पावक पुंज प्रताप तपं, उड़ि व्योम रसातल फलि परे है॥
सागर सेष, भये कहुं संख, सुधा कहुं सीपज सोभ खरे है।
इंदु कहूं बिस, कंद रु कुंत, तुपार कहूं, घनसार भरे है॥२३॥

दोहा

सुनि सुनि अस्तुति सुरन के, विदा करें श्री राम।
कवि पंडित दिग विगनि के, पावत अमित इनाम॥२४॥

चारन मागध बंदिजन, बिरदावत दरबार।
पावत कोटिन कोटि के, कीरति करत अपार॥२५॥

घनाक्षर

मारि डारे लोभ कौं, उजारि डारे मोह देस। जारि डारे डर कौं, बिडारे दंदवाद है।
फारि डारे फरही फराक दे फजीहति कौं। गारि डारे गरब विषादी के विषाद है॥
झारि डारे झगरे अनीत कौ अदब करि। बाँधि डारे कामना के मेड़ मरजाद है।
भनत गोपाल राजा राम की रजाई देखि। देखि देखि देवन के बाढ़े अहलादहैं॥२६॥

दोहा

रोग वियोग न सोग कहुं, भोग बिलास अपार।
राम राज राजत महा, घर घर मंगलचार॥२७॥

घनाक्षर

अंड़े बंड़े पंड़े द्रुम डार के तरंगिनी है। सुगति विहीन, एक कुगति अकाजु है।
बाढ़त घटत निसि बासर समैं न सम। असम कठोर। नास होत तिथि ताजु है॥
भनत गोपाल कवि कामना अमित छवि। तेज को अनल रवि, होरिअंन लाजु है।
बाजत निसान, अरि ऊपर चलत बान। राजत विधान राजा रामजू के राजुहैं॥२८॥

---

२६. फराक : फराख (फा० रा०) बान,मै लम्बा चौड़ा। इस छंद में परिसंख्या अलंकार है।

२८. अंड़े बंड़े : उलटा सीधा, अंडबंड।
असम : अस्म, पत्थर। होरिअं : होली में।

दोहा

रामचंद्र राजधिमनि, दिनमनि कें कुल वीर।
दुवन तिहारे द्रोह तें, भटकत निपट अधीर ॥२९॥

घनाक्षर

तजि महि-मंडल अखंडल से दनुगन। दिगन-दिगन वे नगन भटकत हैं।
वहु वहु सुन्दरी गहन-विनु गहननि। निरखि निकट मरकट मरकत हैं॥
सुनि दल दुंदुभी धुकार रघुनंदन के। सटपटि दानव सिरनि पटकत हैं।
जित कित उरझि अलक वन सघननि। दामिनी सी कामिनी लतानि लटकत हैं॥३०॥

दोहा

राम तिहारे नाम ते, विमुख रहत जे भूप।
रोग वियोगनि सोग तें, मलिन रहत कुस रूप ॥३१॥

घनाक्षर

कंदर बसत, वन-कंदन अहार करि। सुंदर सरीरनि पहिरि तरु चीर हैं।
रतन मुकुट मनि, जटनि जटित सिर। सुभट निकट मरकटनि की भीर हैं॥
कोमल चरन किसलहुँ ते ललित अति। चढ़त पहारन बिललि बिनु नीर हैं।
भनत गोपाल राम दुंदुभी धुकार सुनि। धुकि अरि परत धरन नहि धीर हैं॥३२॥

दोहा

दिन काटत बनचरन में, विमुख तिहारे राम।
कंदर बसि कंदन भखैं, परम सुंदरी बाम ॥३३॥

घनाक्षर

रघुवर रावरे अरिन की घरनि। वन वीथिनि थकित, साथ हेरतीं, अकेलियाँ।
जगमग जगमग भूषन लसत बहु। नगन नगन पग, नगन पहेलियाँ॥
लपटि लपटि तरु हाटक लतानि सम। श्री फल भरम कपि उरज गहेलियाँ।
भनत गोपाल लखि हँसत पुरदर हैं। लीन्हें कपि कंदर यों बंदर सहेलियाँ॥३४॥

---

२९. दिन मनि : सूर्य। दुवन : दुश्मन, शत्रु।

३०. मरकट : बंदर। मटकत : अंगों का इस प्रकार संचालन जिसमें कुछ लचक या नखरा जान पड़े, नाचना।

३३. कंदर : गुफा। कंदन : कन्द।

३४. नगन पहेलियाँ : पहेली नहीं बुझाती, आनंद-कीड़ा नहीं करतीं।

दोहा

सुनि सुनि अस्तुति सबन के, राम जगत के ईस।
गुनी निगुंनी आदि दे, सबनि दिये बगसीस ॥३५॥

देस देस दिग दिगन के, कबिन महा हरषाइ।
हय गय रथ पट भूषन बिदा करे पहिराइ ॥३६॥

घनाक्षर

लाल लाल माल मनि सेत पीत नीलकनि। ललित गोपाल कवि-कंठनि लसत हैं।
जगर मगर जरबाफन फबत अति। जोतिन जगत, तम कोटिन नसत हैं॥
बहु बहु रंगन तुरंगन चलत चढ़ि। पढ़ि-पढ़ि कीरति उमंगनि हँसत हैं।
दलि मलि दारिद दरद दिन कोबिदन। बरन बरन रघुवर बगसत हैं॥३७॥

दोहा

अति आनंद उमेद सों, चलैं सकल थल आप।
जय जय जय गोपाल कबि, गावत राम प्रताप ॥३८॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां श्री राम-कीर्ति-प्रताप-वर्णनोनाम एक पंचासोध्याय: ॥५१॥

३५. बगसीस: बख्शीश (फा० श०) दान, इनाम, उपहार।

श्री राम-मृगया-गमन-अंतहपुर प्रवेस

५२

दोहा

सेत पीत लोहित अटा, अगर मगर चहुं ओर।
जिनके मनिन मयूख कौं, रबिकर बदत अकोर ॥ १ ॥

घनाक्षर

अवधि नगर छवि कहत गोपाल कवि। रवि हू की किरनि तनक तिन लग हैं।
हाटक जरित बहु रतन भरितमय। कलस लसत अति अद्भुत नग हैं॥
झकमक मानिक झरोखनि उझकि तिय। मुसकनि दसन की दामिन सुभग हैं।
बहु बहु रंगन के उठत तरंग तहं। जहँ जहँ मनिन महल जगमग हैं॥ २॥

दोहा

घर घर नगर विलास बहु, बहु बहु नागर लोग।
नृत्य गीत संगति कहुं, कहुं मख मंत्र प्रयोग ॥३॥

घनाक्षर

थल थल कथिक कथत सत पथ मत। जत कत मख सतमख थर थर हैं।
परम धरम कुल करम रमित नर। अमित अमित सुख घर घर घर हैं॥
नगर नगर नग जगर मगर मनि। बरन बरन रघुबर बर बर बर हैं।
धरि धरि सुरनि करत जय धुनि सुर। कहुं हरि हरि, कहुं हर हर हर हैं ॥४॥

---

१. रबिकर : सूर्य की किरणें। अकोर : घूस।
२. तनक : जरा सी। हाटक : सोना।
३. नागर लोग : नगर में रहने वाले।
४. कथिक : कत्थक। जत कत : यत्र तत्र। सतमख : इन्द्र। कुल करम : कुल का कर्म। सुरनि : सुन्दर स्वर। सुर : देवता।

दोहा

प्रति दिन निकसत भोर हीं रावर तें रघुनाथ।
चँवर करत लक्षन तहाँ, भरत सत्रुघन साथ ।। ५ ।।

घनाक्षर

झलकत कुंडल कपोल झक झकमक। उझकत रवि जनु छबिहिं मुकुर हैं।
सुंदर बदन अरविंद मकरंदमय। मंद मंद हँसनि सु मधुर अधर हैं।।
ललित ललित माल मंजुल तुलसि जाल। हुलसि गोपाल मनि मोतिन के लर हैं।
राजत रंगीली पाग, लागे हैं भरथ लाल। लक्षन सु चौंर, सिध पौरि रघुवर हैं ।।६।।

दोहा

बिबिध सुगंध सुवास जल, मंजन करत हुलास।
विप्र वेद धुनि मिलि करें, उपजत अमित बिलास ।।७।।

घनाक्षर

अरुन उदय उठि मंजन करत राम। हुलसत लोचन गोपाल कवि जन की।
बिथुरित अलक बदन कोक नद पर। लसत मनहु बहु जूह अलिगन की ।।
सलिल सुगंधन सु अंगन छलकि छवि। कहुँ कहुँ उपजत उकति सुमन की।
स्यामल सुभग तन जल के लसत कन। जनु नव घननि झलक नखतन की ।।८।।

दोहा

मंजन करि रघुनाथ जू, बिवरत कोमल केस।
रतन सिंघासन पर लसें, मूरति मधुर सु बेस ।।९।।

घनाक्षर

बिवरत कोमल सिरोरुहु करनि कर। जनु नख नखत जमुना खेलें जल कें।
सींचि सींचि सकल सुगंधन सिंगार बेलि। मनहुँ मनोज अलि कुंज पुंज बलकें।।
किधौं विधु मंडल कों उमड़त तम दल। डरनि थकित रवि कुंडल के झलकें।
ललकत लोचन गोपाल के निरखि नव। घन तें सघन रघुवर जू की अलकें ।।१०।।

---

५. रावर : अन्तःपुर।

६. उझकत : उचकना, देखने के लिए ऊपर उठना।

७. कोकनद : कमल।

९. बिवरत : ब्यौर रहे हैं, एक-एक लट अलग कर रहे हैं।

१०. बलकें : बलबलाना, उत्तेजित होना। ललकत : ललचना। सिरोरुहु : बाल, केश।

दोहा

मुकुर बिलोकत राम जू, कुंतल कुंडल गंड।
मनहुं अरुन अहि कमल पर, पसरी किरनि प्रचंड ॥११॥

घनाक्षर

निरखत मुकुर बदन अरविंद राम। उपमान सकल मदन धरि दपटैं।
जनु बिबि रबि बिन बिकच जलज तकि। कुंतल कुटिल चंचरीक सम झपटैं॥
मुसकनि मंद मकरंदनि गोपाल भनि। चितवत चित के चरन जात रपटैं।
उरझि उरझि रहे कुंडल अलक मिलि। मानो मारतंड कौं उमड़िअहिलपटैं॥१२॥

दोहा

भूषन करत सुबेस बहु, बरनि न सकत गोपाल।
सुंदर स्यामल उर किधौं, उडगन गजु मनि माल ॥१३॥

घनाक्षर

भनत गोपाल कवि भूषन करत राम। बरनत देव कामदेव मति भरमैं।
कमल बदन तट कुंडल लसत जनु। परसत रवि चढ़ि चपल मकर मैं॥
केसरि मलय उर ऊपर बिलास माल। लाल मनि नील मनि गज मनि लर मैं।
अतसि कुसुम तनु अति अद्भुत जनु। सुरपति धनु कस घर जलधर मैं॥१४॥

दोहा

अर्चन बंदन साधि विधि, दै अर्घादिक मान।
बरन बरन सुबरन मिलै, राम करत गोदान ॥१५॥

---

११. गंड : गंडस्थल, कपोल। अहि : साँप। पसरी : फैली।

१२. बिबि : दो। बिकच : विकसित। जलज : कमल। चंचरीक : भौंरा। रपटैं : फिसलना।

१४. भरमैं : भ्रम में पड़ना। मकर : मकराकृत कुंडल। लर : लड़ी। अतसि : अलसी, तीसी। कस : कसना।

घनाक्षर

बनक बनक बहु दोहन कनक करि। मंडित मनिन धेनु पंडितन देत हैं।
कपिल बरन गाइ पूजित करन पाँइ। कोटिन मंगाइ द्विज, संकलप लेत हैं॥
भनत गोपाल देव-नंदिनी डरति दिन। दसरथ-नंदन यों दाननि सहेत हैं।
जित कित मेदनि उमड़ि नदि नद भरि। हलकति दूधनि तरंग सेत सेत हैं॥१६॥

दोहा

दान मान दे द्विजन कौं, विदा करें रघुनाथ।
भोजन कौं भीतर चले, अनुज लखन लै साथ॥१७॥

घनाक्षर

बिबिधि रतन मनि थालन गोपाल भनि। भरि भरि षटरस व्यंजन धरत हैं।
मह मह महकि रहत महलनि मह। अमित मिठाइन सों भाजन भरत हैं॥
रुचि रुचि हरषि हरषि मुख परखत। निरखत मातन के मनहि हरत हैं।
नित नित नवल सनेहनि सबनि मिलि। भरत सहित राम भोजन करत हैं॥१८॥

दोहा

बलकत राम प्रताप तें, सेनापति चतुरंग।
हय गय पयदल प्रबल हैं, जिन जीते रन जंग॥१९॥

घनाक्षर

दल बल सकल प्रबल दल बलकत। छिति वर छोपिन छबिन छलकत हैं।
सद मद मदन मदन मद हद पर। सदन सदन सुख-सर हलकत हैं॥
हल चल जलद अनिल चल दल दल। हलबल जयहि अमर ललकत हैं।
रघुबर कीरति प्रताप की झलक परि। जित कित झहल झहल झलकत हैं॥२०॥

दोहा

जब कब सहज सिकार ही, चलत राम दल-संग।
बरन बरन गज बाजि बनि, बाढ़त रथिन उमंग॥२१॥

---

१६. दोहनी : जिस बर्तन में दूध दुहा जाता है वह पात्र। कपिल : सफेद।
नंदिनी : नंदिनी गाय।

२०. वर छोनिप : बड़े-बड़े राजा। सुख सर : सुख के सरोवर। चलदल : पीपल का पत्ता। अमर : देवता। हलबल : जल्दबाजी में। झहल झहल : झल-झल।

घनाक्षर

जब कब सहज सिकारहिं चलत राम। धाम-धाम धकधक अमर नगर है।
गज-अरि-उरग उरग अरि-पति। भय भहरत जित कित हहरत हर है॥
चढ़ि चढ़ि तरल तुरंगन सुभटगन। गहत कुरंगन, चकित बनचर है।
बेधत मकर सर, कच्छप छपत तर। उछलत जलहिं सफर फर फर है॥२२॥

दोहा

सहज सैल तें गैल के, सैल होत चकचूर।
हलकंपित दनु थरहरे, धूरनि पूरित सूर॥२३॥

घनाक्षर

चलत सहज दल, मलत असम गिरि। गज बर गंडनि भँवर भननन है।
घन तें सघन घन सुंडनि गहत गति। घंटनि सुघट रव घननननन है॥
धावत धरनि धँसि, दिग्गज धकनि खसि। भटकत भूपति भयनि बननन है।
रघुबर बारन भिरत बन बारन सों। बलन सहित फिरें गननननन है॥२४॥

दोहा

गाजत चलत गयंद गन, भाजत केहरि हेरि।
कंपत कदली पत्र से, गिरि गन पुंजनि बेरि॥२५॥

---

२२. गजपति : ऐरावत के स्वामी इन्द्र। गज अरि पति : सिंह के पति देवी दुर्गा। उरग पति : शेष नाग। उरग-अरि-पति : सर्पों के शत्रु गरुड़ के स्वामी, विष्णु।

२३. सैल : सैर। गैल : रास्ता। सैल : पर्वत। सूर : सूर्य।

२४. भँवर : भौंरे। भननन : भनभना रहे हैं। घन : लोहा। सघन : ठोस। घन : घंटा, घड़ियाल। खसि : खिसक कर। धकनि : धक्के से। बारन : हाथी। बन बारन : जंगली हाथी। बलन : समूह के सहित।

२५. गयंद : गजेन्द्र, बड़ा हाथी। बेरि : बैर का पेड़।

घनाक्षर

धावत मदंध मद सिंदुर धरनि बहु। बहत उमड़ि नदि नद, मद भरि हैं।
हठि हठि झुंडन, गगन गंग सुंडन। पियत जल तुंडन, नलिन बुंड धरि हैं॥
अमित अनंदन, चरत बन नंदन। सु इभ रघुनंदन के, दुरदनि दरिहैं।
भनत गोपाल लाल, लीलन लसत। गज-पुंजनि गजत, हहलत हद गिरि हैं॥२६॥

दोहा

बहु बहु रंग तुरंग गन, चलत सु बहु बहु रंग।
बहु बहु रथनि विचित्र अति, जीतें बहु बहु जंग ॥२७॥

घनाक्षर

छाजत छबीले छिति ऊपर छकनि छकि। छहलत चलत सु मंत्रनि रहत हैं।
पवन कवन सम, खंजन मृग न छम। उछलत बारिधि नवेदन महत हैं॥
झल झल मनिन, झकत सब झकमक। हय रघुबर के गोपाल यों कहत हैं।
पावन के धावन तें धरनिहि धरकत। बावन के पावन तें नभन चहत हैं ॥२८॥

दोहा

अति सुंदर, अति चपल हय, अति बल विक्रम तौन।
जिनकी चंचलता निरखि, भूलि जात गति पौन ॥२९॥

घनाक्षर

रंग रंग रंगन के तरल तुरंग बहु। सुंदर सबल अति बल बलकत हैं।
धावत धरनि धकधकत धवल गिरि। धंसि मति जाहि थल थल थलकत हैं॥
भनत गोपाल राम रथ के समथ हय। रतन मनिन झल झल झलकत हैं।
हींसत ही दिग्गज दिगनि दबि दबि जात। छहलतछबिलखि रबि ललकत हैं॥३०॥

पाठान्तर—२६-इमि : (इभ) (१, २)

२६. सिंदुर : सिंधुर, हाथी। गगन गंग : आकाश गंगा। बुंड : कली, बोंडी। सुंड : सूँड़। तुंड : हाथी का मुँह। बन नंदन : नंदन बन। इभ : हाथी। गजत : गर्जना करने पर।

२८. कवन : कौन। छम : समर्थ। पावन : पैर। बावन : बावनावतार विष्णु भगवान।

३०. तरल : चंचल। समथ : समर्थ। हींसत : घोड़ों की हिनहिनाहट। छहलत : दलकती है।

दोहा

चलत सैन चतुरंग जब, दिग दिग माचत सोर।
सुमुखन कौं सुख होत हैं, बिमुखन कौं दुख जोर ॥३१।

घनाक्षर

जब कब चमू चतुरंगन चहल होत। हहलत दनुज, मनुज दल बल का।
डग मग डरनि डगत गिरि गन सब। उमड़ि चलत हय हाथिनि के हलका॥
रथिनि के रथनि रगर रथ बिथकत। पंकनि पटत जलजलनिधि जल का।
भनत गोपाल रघुनंदनि प्रबल बल। हलबल मचत कुबेरहु की अलका ॥३२॥

दोहा

धरकत धरनि अकास डर, अरि भूतल अवसान।
पानि कमल गोपाल भनि, राम धरत धनु बान ॥३३॥

करि मृगया रघुनाथ जू, आवत अवधि हुलास।
निरखत हरखत देव सब, बरषत सुमन सुबास ॥३४॥

घनाक्षर

आवत अवधि मग अनुज सहित राम। पढ़त गोपाल कवि कीरति के करखा।
सुरन की सुंदरी पुरंदरी पुरंदर वे। पूरन प्रताप तेज पुंज धाम परखा॥
आनंद मगन मन, उमगि उमगि तन। तरल नयन तरुनिन हिय हरखा।
फूलनि सहित रस मूलनि सौं फूलि फूलि। हरषत फूलनि के बरषत बरखा ॥३५॥

दोहा

मह मह महक सुगंध तें, भंवत चहूँ दिसि भौंर।
भनि गोपाल रघुनाथ कौं, ढारत चहुं दिसि चौंर ॥३६॥

---

३२. चमू : सेना। का : क्या। हलका : झुंड। रथिनि : रथ पर सवार लोग। बिथक : रुक जाना। अलका : अलकापुरी।

३३. अवसान : होश। पानि : हाथ।

३५. करखा : करषा छंद। परखा : परख लिया।

घनाक्षर

जगमग विविधि रतन मनि गज मनि। दिग-मनि किरनि न करत जबर हैं।
जित कित छितपति छत्रनि करत छांह। छबि न छजत अति कुंवर अबर हैं॥
मोदनि दिगंतनि विनोदनि सुगंध हित। भननन भौरनि मैं भंवत भंवर हैं।
भनत गोपाल, अति आनंद अवधिपुर। चहुं दिसि राम जू कौ ढरत चंवर हैं॥३७॥

दोहा

चढ़ी अटा अवलोक ही, रूप घटा सी वाम।
करि मृगया संध्या समै, पुर आवत श्री राम॥३८॥

घनाक्षर

घर घर आरतीहि आरती पुकारतिहि। रतन जरित मनि थालनि लसत हैं।
चहल पहल सब महल महल महं। महंकत अंगनि उमगनि रसति हैं॥
हुलसि हुलसि मृदु हंसनि दसनि दुति। दमकति, दामिनी की दीपति नसति हैं।
आनंद के कंद रघुनंदन गोपाल भनि। नंदिनी जनक अति पति-मति-गति हैं।
हुलसि हुलसि मृदु हंसनि दसनि दुति, दमकति, दामिनी की दीपति नसति हैं॥३९॥

दोहा

सिंह पौरि के पलक रमि, बहुराये भट भीर।
अनुजनि जुत भीतर चले हरषित श्री रघुवीर॥४०॥

चलें भरथ दोउ बधु जुत, महल आपने आप।
पद-बंदन गोपाल करि, सुमिरत राम प्रताप॥४१॥

इति श्री रामप्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां
श्री राम मृगयागम अंतहपुर प्रवेसनोनाम द्विपंचासोध्याय:॥५२॥

---

३८. दिग-पति : सूर्य। जबर : जोर जबरदस्ती। गजमनि : गजमुक्ता। दिगमनि : सूर्य। छित पति : राजा। अबर : कमजोर। भंवत : घूम रहे हैं। भंवर : भौंरा, भ्रमर।

४०. पलक : एक पल। बहुराए : लौटा दिया।

श्रीराम-राज्य-विलास

५३

दोहा

रंग महल गोपाल भनि, बिलसत आनंद कंद।
सीता-नैन चकोर हैं, रामचंद्र मुख चंद्र ॥ १ ॥

घनाक्षर

कोमल कमल-पानि, पान के बिरीनि करि। असन करत मुख-छबि-समकत हैं।
अरुन अधर बीच वदन बिभूषि। किधौं उभकत दामिनि दसन दमकत हैं ॥
निरखत हरषि रसिक रघुवर सिय। बरनत उकति गोपाल छमकत हैं।
सुंदर सुरग नख लसत अँगुरि। जनु चंपक कलिन मनिकन चमकत हैं ॥२॥

दोहा

सेज सुभग रचि रचि धनी, सुमन मनोहर बाम।
चली आपने धाम सब, पौढ़त हो सिय राम ॥३॥
पलका रतन जराय कैं, कलिका मलिका कुंद।
नित मंजुल मकरंद तें, कहा सुधा रस बुंद ॥ ४ ॥

घनाक्षर

फूलन के लसत बितान यौं गोपाल भनि। भरि भरि नखत उछलि छबि छलिका।
फूलन के आसन सुबासन वसन बिच। फूलि फूलि रहि नव कुंदन की कलिका ॥
फूलन के मोदन विनोदन लरत अति। जित कित मलय सुगंध माल मलिका।
फूलन के सुंदर महल मह मह होत। फूलन फबत सिय राम जू के पलिका ॥५॥

---

२. पान के बीरीनि : पान का बीड़ा। असन : खाना। वंदन : रोली। छमकत है : प्रसन्नता से नाचते हैं।

४ कलिका : कली, बिना खिला हुआ फूल। मलिका : मल्लिका, चमेली।

५. बितान : चंदोआ। नखत : नक्षत्र। छबि छलिका : छबि छलकी पड़ रही है। आसन : बिछौना। बसन : वस्त्र। मोदन : सुगंध। अलि : भौंरा।

दोहा

बाजत बाजन भोर ही, गह गह गहब निसान।
सिंह पौरि रघुनाथ की, बोलत विरद विधान ॥६॥

घनाक्षर

भोरहि निरखि मुख भनत गोपाल कवि। छवि न परत कहि छकित मदन हैं।
लोयन असित सित लसित अरुन रुचि। मनहुँ त्रिगुन सुचि सुख के सदन हैं॥
अमिय सजल बिच बदन बिरंचि पचि। बोये हैं करक बीज किधौं सु रदन हैं।
सरद के सरस विकच अरविंद सम। सुंदर परम रघुनंदन बदन हैं ॥७॥

दोहा

ठाढ़े होतहि भोर ही, आंगन मैं सिय राम।
आप आपनी टहल कौं, महलनि निकसीं बाम ॥८॥

सवैया

भोर बड़े मनि आँगन में, रघुवीर विराजत रूप खरे हैं।
कुंडल लोल कपोलनि ऊपर, फैलि रहें अलकें सुथरे हैं॥
आनन चंद चकोर गोपाल, विलोकत आनंद भूरि भरे हैं।
मानो कुहू निसि अंत निसाकर, द्वै रवि बीच प्रकाश करे हैं ॥९॥

दोहा

मंद हसनि मुख माधुरी, राम रूप अभिराम।
सलज नैन मुख जलज सिय, अरुन अधर रस धाम ॥१०॥

सवैया

अरुनोदय राम सिया मुख हेरि, हँसे मृदु हास सुधा बरसैं।
बहु रूप अनूपम प्रेम पगे, उमगे सुख-बारिधि कौं परसैं॥
अति आनंद मोद गोपाल विलोकत, आनन मैं रद यौं दरसैं।
सु तौ मानो अनार के बीज भरे, रस सारस-कोसहि मै सरसैं ॥११॥

---

७. करक-बीज : बिजली का बीज। बदन : मुख।

९. कुहू निसि अंत : अमवस्या की रात के अंत में।

११. आनन : मुख। रद : दाँत। सारस : कमल। कोसहि : कमल कोश।

दोहा

मंजन करि सिय राम जु, करे दान बहु भेव।
जिन पूजत सब देवगन, ते पूजत पुर देव ॥१२॥

सवैया

मंजन कै सिय प्रात समै, प्रति अंगनि रूप महा हुलसी हैं।
देखि छकैं छवि राघव जू, जिन नैननि पूरन नेह बसी हैं॥
स्यामल केस सुबेस गोपाल, सु पीठि के ऊपर सोभ रसी हैं।
मानहुँ ऊरध तें अधकों, सिगरी जमुना जलधार बँसी हैं॥१३॥

दोहा

राम सिया शृंगार सजि, रंग महल विहसंत।
घेरी घनी सहेलियाँ, निरखत छवि हरषंत॥१४॥

कवित्त

जनु घन दामिनी सरूपनि सिंगार करि। उतरि अमित छवि छिति पर छाजहीं।
बहु बहु भूषन विभूषित बसन तन। सुमन सुगंधन अलिमगन गाजहीं॥
रतन सिंघासन के आसन लसत अति। भनत गोपाल मति रति पति लाजहीं।
सुंदबदन मकरंद अरविंद हास। नंदिनी जनक रघुनंदन बिराजहीं॥१५॥

दोहा

रंग महल श्री राम जू, बिलसत नव नव रंग।
बनक बनक बहु सुंदरी, जनक कुंवरि के संग॥१६॥

जथा

रंग रंग महल, झरोखा रंग रंगन के। रंग रंग मनिन-मयूख सोभ सार हैं।
रंग रंग बैठक, बितान रंग रंगन के। रंग रंग राग के तरंग से अपार हैं॥
रंग रंग रूप नारि, रंग रंग रूप झारि। रंग रंग हास रंग रंग के सिंगार हैं।
रंग रंग सीय राम, रंग रंग प्रेम धाम। रंग रंग राजहीं बसंत के विहार हैं॥१७॥

---

१२. मंजन : मज्जन, स्नान। भेव : भेद।
१५. मति-रति-पति : काम देव की बुद्धि।

दोहा

रंग महल ऊपर चढ़े, राम सीय हरषंत।
ललित लता लहलहित बन, निरखत सोभ बसंत॥१८॥

जथा

नव दल ललित कलित किसलय तरु। जनु फहरत रन-धुज बलवंत के।
गहन गहन कलरव सु विहंग बहु। बोलत बिरद किधौं चारन दिगंत के।
कुंज कुंज कुंजर से गुंजत अभुत अलि। केतकी करह के रदन मयमंत के।
गंजन विरह गढ़, दारन दुसह दिसि। धावत सुभट कि सुगंध ये बसंत के॥१९॥

दोहा

एक समय सिय राम जू, लिये सहेलिन संग।
महल सरोदक सुंदरी, बिहरें बारि तरंग॥२०॥

जथा

बिहरत महल सरोदिक सरोज बन। कहि न परत अलिगन के भनक की।
बूड़त हरषि जल उछलि छपत कहुं। सफर सुगति बहु बनक बनक की।
उरझत हारन सौं बार न सम्हार तन। सुंदर सहेली जनु बेली हैं कनक की।
भनत गोपाल हंसि रीझनि करति झरि। दसरथ कुंवर औ कुंवरि जनक की॥२१॥

दोहा

रंग महल के चौक में, अति विचित्र चंडोल।
झूलत सिय रघुनाथ हैं, झलकत कुंडल लोल॥२२॥

---

१९. रनधुज : रणध्वज। चारन : चारण। कुंजर : हाथी : गहन गहन। घने वन। अभुत : अद्भुत। केतकी करह : केतकी की कली। मयमंत : मतवाला हाथी। कि : अथवा।

२१. अलिगन : भौंरा, सहेलियाँ। झरि : झड़ी।

२२. चंडोल : हिंडोला

जथा

झूलती सहेली चंवडोलनि महल चौक। निरखि निरखि सिय राम हरपत हैं।
गावती मधुर सुर उमगि सरूप बढ़ि। जनु चढ़ि कोकिला कनक दरखत हैं॥
जित कित टूटि टूटि भूषन खसत भूमि। भनत गोपाल अति छबि परखत है।
मनहु पुरंदर पुरदरी बिहँसि मन। घन मनि मोतिन घुमड़ि बरषत हैं॥२३॥

दोहा

भोजन करि बहु भाँति रुचि, राम जगत के ईस।
भरथ सहित सोभित सभा, सुर नर देव कपीस॥२४॥

जथा

रग मग रंग जनि, केसरि सरस कनि। सरस सबागे तन, मुख के सरस की।
लिलक ललित तास, लसत सवागन की। बगसत भाइन नृपन हिय धसकी॥
कटि पटुकन की चटक नित चटकत। लटकत लटकनि मनिन हुलस की।
बरन बरन रघुबीरन गोपाल भनि। जगर मगर सिर पाग जरकस की॥२५॥

दोहा

चिंतामनि तिहुं लोक के, करत सदासिव जाप।
राम चंद्र के चरन हैं, हरन सकल संताप॥२६॥

जथा

पद-नख-जलहि जलज-सुत हित नित। भनत गोपाल मन हर के हरन हैं।
नारद सनक सुक सारद बिरद बर। पति सुर पति मति सुरन सरन हैं॥
रतन जरित मनि टोडर लसत नग। जगमग जोतिन तें अमित चरन हैं।
सुंदर सरस अरबिंदन तें मंजुल हैं। ललित ललित रघुबर के चरन हैं॥२७॥

---

२३. चवँडोलनि : चौडोला। घन : बादल।

२५. रग मग : रँग मगे, रंगीन। बागे : परिधान। लिलक : नीला। तास : तास बादला। पटुकन : कमर बंद, दुपट्टा।

२६. सदा सिव : शिव।

२७. जलज-सुत : ब्रह्मा। मन हर के हरन हैं : शिव के मन को हरनेवाला। सारद : सरस्वती। टोडर : एक आभूषण का नाम।

दोहा

प्रति दिन करत बिहार प्रभु, षट रितु बारह मास।
सुर पुर, नर पुर, नाग पुर, घर घर हास विलास ॥२८॥

थापि धर्म निर्भय किये, दले पाप के दाप।
परिपूरन गोपाल भनि, त्रिभुवन राम प्रताप ॥२९॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां श्री राम राज्य विलास वर्ननोनाम त्रिपंचासोध्याय: ॥५३॥

श्रीराम-प्रेम-स्तुति

५४

गीतिका

इक समय इष्ट वसिष्ठ कौसिक, भृगु सु सत्यवती-सुतं।
मुनि नारदादिक मंडली मधि, राम श्री सुषमा-जुतं।।
मिलि करत अस्तुति स्वस्ति पढ़ि पढ़ि, प्रेम बढ़ि बढ़ि कौतुकं।
जिहि मर्जाहि संभु स्वयंभु, परमानन्द पूरन अद्भुतं।।१।।

जय जयति श्रीजग जनकजा, जय राम देव दिवाकरं।
सुभ राज उत्तर कोसला, रघुराज मुकुट मनोहरं।।
भुव तिलक तिन अज के, सुंदसरथ नंद त्रिभुवन सुंदरं।
तिन चरन रज ब्रह्मादि वंदत, प्रनित नित्य पुरंदरं।।२।।

जय जोति जगमग त्रिजग चिन्मय, भासते सचराचरं।
नर लोक नर अवतार मनि, नव नील मेघ कलेवरं।।
धनु बान पानि विचित्र भूषण, कोटि आतम भू बरं।
जिन नाम इंद्र फनिंद्र गावत, चंद्र चंद्रसुसेखरं।।३।।

---

१. सत्यवती : सत्यवती नामक धीवर कन्या जिसके गर्भ से कृष्ण द्वैपायन या व्यास की उत्पत्ति हुई थी। मधि : मध्य।

२. उत्तर कोसल : अवध। दक्षिन कोसल : महा कोशल या छत्तीसगढ़। प्रनति : प्रणति, प्रणाम।

३. आतम भू : स्वयं भू। फनिंद्र : शेष नाग।

अति रूप सील सुभाय राघव, भक्ति अनुज हृदिस्थितं।
निज पुलकि तन भ्रू भंग सेवत, सुखद कंज पदामृतं॥
तिन विपुल करुणाकर सुधावर, प्रेम सिंधु सुधामृतं।
नित नौमितं चरनारविंद, सु सकल पुन्य पुराकृतं॥४॥
हनुमंत अंगद जाम सन्मुख, सेवितं हृदि तद्गतं।
कपि राज सुग्रिव दनुज पति, बहु प्रनित भक्ति सुधारतं॥
हति प्रबल दनु लंकाधिपति, सीतापते सीताजुतं।
जय अवधि मंगल सकल पूरन, प्रनित रामकृपा जुतं॥५॥
जन अवधि जलधि विनोद मोदनि, तरल तुंग तरंगितं।
जय रामचंद्र मयूष करुना, बढ़िय प्रेम उमंगितं॥
जिहि रूप लोचन जिहि बसे, तिहि रूप लोचन संजुतं।
मृदु हास मंजु विलास भृकुटी, कुटिल सुषमा अद्भुतं॥६॥
जय बासुदेव अनंत अव्यय, सर्व भूत प्रकाशितं।
जय सर्वमय सर्वादि सर्वग, सर्व ब्रह्म विलासितं।
जय सर्व पूरन सर्वदा, सर्वस्य सर्व निवासिने।
जय सर्व मंगल सर्वदा, श्री राम संकट नासिने॥७॥
जय सर्व बल्लभ, सर्व दुर्ल्लभ, सर्व सुल्लभ कामि हे।
जय भक्तवत्सल, भक्त महिमा, भक्त जन विश्रामि हे॥
जय भक्ति जोगहि भक्ति जोगी, भक्त अंतरजामि हे।
जय भक्ति परमानंद श्री भगवंत राम नमामि हे॥८॥
जय नित्य पुरुष निरंजनं, निर्लेप पर निष्कामि हे।
जय सगुन निर्गुन त्रिगुन आतम, त्रिदस त्रास विनासि हे॥
जय कर्म कारन कृत्य कल्विष, विषय दंद छमामि हे।
जय पार ब्रह्म अपार महिमा, रामचंद्र भजामि हे॥९॥

---

४. धृतं : धारण करते हैं। पुन्य पुराकृतं : पुराने समय में जो पुण्य प्राप्त किये हैं उसके फल स्वरूप।

५. हृदि तद्गतं : अपने हृदय में ले जाकर। सन्मुख : सुन्दर मुख। दनुजपति : विभीषण। कृपा जुतं : कृपा से युक्त। अवधि : सीमा।

६. मयूष : किरण।

७. भूत : प्राणी। सर्वग : सब में गमन करने वाले।

जय पंच तत्व प्रपंच विस्तरि, विश्वभूत सृजामि हे।
जय निगम आगम सार मथि, निजु भक्ति भक्त सकामि हे॥
बहु द्रोह भंजन भ्रम विभंजन, भक्ति करुना कामिहे।
जय जयति जानकि राम, जन गोपाल नित्य भजामि हे॥१०॥

कोइ भर्थ से न समर्थ भक्तहिं, सक्ति उर धरि सेवितं।
जन मारुतं अद्वैत महिमा, शत्रु मर्दन नेमितं॥
जिन विपुल करुना हृदय लोचन, प्रेम भाव सप्रेमितं।
जय राम चंद्र प्रकास महिमा, त्रिदसं त्रिभुवन नेमितं॥११॥

चिर चन्द्रसेखर विधि विभाकर, सक्र मारुत नंदनं।
तित सनक सारद निगम नारद, इंदिरा हृद चंदनं॥
हित भरत लक्षन बलि विभीषण, संवरि दंद-निकंदनं।
जिन निमिष नहि विश्लेष, हित श्री रामपद रज वंदनं॥१२॥

नित राम नाम रसामृतं, रसना रसे तेइ पंडितं।
निजु हृदय राम स्वरूप रसि, रुचि रूप लोचन मंडितं॥
इक राम बिनु सब दंभ जप तप, भक्ति हीन वितंडितं।
जय राम जन गोपाल गावत, सर्व भव भय खंडितं॥१३॥

नित राम मंत्र अहो निसा, हृदि राम रूप सकामितं।
हित राम तप जप नियम संयम, सर्व धर्म समाहितं॥
जय राम कल्प लता सु कोटिक, काम धेनु सुधा नितं।
श्री राम जन गोपाल निर्भय, राम पद प्रनमामितं॥१४॥

इति वदत हर सुर श्रुति विरंची, सार नाम सुधाकरं।
त्रयलोक पावन चंद्रिका जस, विसद दिव्य मनोहरं॥
जग धन्य ते मतिवंत संत, सु वेद पारग कोविदं।
नित राम मनि गन कंठ भूषन, विषद उर सुषमा इदं॥१५॥

---

११. नेमितं : नियमित रूप से।

१२. चन्द्रसेखर : शिव। विधि : ब्रह्मा। विभाकर : सूर्य। सक्र : इन्द्र।
इंदिरा : लक्ष्मी। विश्लेष : बिलगाव।

कलि कठिन काल कराल व्याल, जु विषम तासु बिषानलं।
हरि नाम गद रस अमिय महिमा, हरन विषम महा बलं॥
जिन प्रेम भाव न भक्ति महिमा, तिनहिं नहिं रघुबर बलं।
नित भ्रमत जोनि अनेग भ्रमतें, पावतें सुफलाफलं॥१६॥

इति मुनि स्तुति—

तहँ एक बासर सभा रघुबर, सहित मुनि गुरु सौं लसैं।
त्रय अनुज जुत, अरु अंजनी सुत, सकल सोभहिं सौं रसैं॥
तिहिं समय भरथ बिनोद सौं, कर जोरि जुगल बिनें करें।
प्रभु राम दीन दयाल त्रिभुवन, सोक संकट कौं हरें॥१७॥

प्रभु परम करुना धाम धन, निजु पिसुन मो मति जानिये।
तिहिं लैंन कोन समर्थ त्रिभुवन, आपनौ करि मानिये॥
मम नैन लोभी रूप के, अरविंद मुख मकरंद को।
श्रुति बधिर और न गाथ भावै, राम रस बिनु छंद को॥१८॥

निजु सीस पावन ह्वै रह्यौ जब, चरन-स्यंदन ले धर्‌यौ।
नित भाल पद्म-पराग भूरित, घ्रान बपु नासा भर्‌यौ॥
बिबि सुखद पद पय मुख असोचिक, नाम रस रसना रसे।
नित गान गुन निजु कुंड भूषन, कंध धनु धर बर बसे॥१९॥

भुज दंड बल परचंड भुज बल, सकल मंगल दाय हैं।
सुभ पानि चरन सरोज बंदत, अभय किय रघुराय हैं॥
निज हृदय प्रान समाधि साधन, ज्ञान तत्व अभेद हैं।
करि नाम सर संग्राम जित, खल दंद दारुन छेद हैं॥२०॥

प्रभु हौं न जान्यौ विषय अैसौ, स्वाद लंपट भूरियो।
करि प्रान परम प्रसाद मादक, मत्त अनुरत पूरियो॥
नित प्याइ नाम सुधा महा रस, प्रेम गद मादक हर्‌यो।
तिहि समित होतहिं निगम आगम, सुभि अवगति गति पर्‌यो॥२१॥

---

१८. पिसुन : दुष्ट। छंद : कपट।
१९. पय : चरणोदक। असोचिक : सोचरहित करनेवाला। चरन-स्यंदन : खड़ाऊं।
२१. लंपट : बिषयी, व्यभिचारी।

प्रभु ज्ञान दीपक देत ही, अज्ञान तिमिर बिनासियो।
निजु प्रेम अंजन तम विभंजन, कोटि भानु प्रकासियो॥
सुनि अमृत बेद पुरान बहुमत, मंत्र राधन ना कियो।
तजि और सब भ्रम दंद, श्री रघुनंद-नाम-सुधा पियो॥२२॥

प्रभु कोटि भनु समान महिमा, जोतिरिंगन हौं गनौं।
मन प्रात अंतर जाल मैं, त्रिसरेन कीरति क्यों भनौं॥
एक राम अंतहकरन सब के, कहत बेद पुरान है।
इहि मै जु अंतर जानिये, हनुमंत संत समान है॥२३॥

यह सुनत सकल सभा प्रसंसित, भरत सम कोइ नाहिनें।
हरि-भक्ति जोग समाधि पूरन, नियम सोहत जाहिनें॥
प्रभु प्रेम सिंधु अगाध महिमा, मंद मुख मुसक्याइ हैं।
जिमि रंक निधि सम अंक लाये, हरषि श्री रघुराइ हैं॥२४॥

इति नाम प्रताप जिन, तिन सुजस त्रिभुवन गावहीं।
तिनके न सम तिहुं लोक, जिन कैवल्य कलपहि पावहीं॥
यह जानि जन गोपाल गावत, बिरद कीरति लाजहीं।
प्रभु चरन असरन सरन भव भय, तरन नाम जहाज हीं॥२५॥

श्री राम चरन प्रनाम कै मन काम तें हनुमान है।
चित संकि प्रभु सौं बिनय बरनत, थकं बेद पुरान हैं॥
अति हौं जु लघु त्रिसरेनु तें तिहि मेरु तें गरुवे करे।
वह कृपा कौन न हौं लखौं जिहि कृपा करि उर मो धरे॥२६॥

जिहि ठौर काल कराल दुर्घट, सुघट सब रचना रचे।
सब सोधि त्रिभुवन राम द्रोही, बधत एकहु ना बचे॥
प्रभु नाम सुमिरत जे जहाँ, तहं श्रवन दै सुनिबो करें।
कोइ करत बंदन ताहि बंदत, संत संकट को हरें॥२७॥

---

२२. मंत्र राधन : मंत्र आराधना।
२३. जोतिरिंगन : जुगनू। त्रिसरेन : धूलि का अत्यंत सूक्ष्म कण।
२५. कैवल्य : मुक्ति।

कहुँ संत कौ जु असंत त्रासत, ताहि मर्दन मान कौं।
कहुँ राम जन कौ भय न व्यापत, सुन्यौ बेद पुरान कौं॥
बहु दद बात प्रमाद पीड़ा, डाकिनी छल छंद तें।
सब पाप ग्रह सग्राम सन्मुख, दुसह दारुन दद तें॥२८॥

श्री राम-भक्ति जिते जहाँ, तहँ कौन हूँ भय नाहिनें।
लिय तबहि त बह नेमु, जब तें भये रघुबर दाहिन॥
दनु-बंस कीट समान मीड़े, लंक रावन दाप कौं।
कछु बरनि जात न मोहि महिमा, राम नाम प्रताप कौं॥२९॥

प्रभु हौं न त्रिभुवन भ्रमि थक्यौ, नहि लख्यौ भरथ समान हैं।
जब लै सजीवन अवध पहुँच्यौ, तज्यौ सबहि गुमान हैं॥
नित परम पावन सत्कथा, उर धन्य जो कथिबो करें।
कलिकाल निर्भय भय न कहुँ, भव दुसह दुस्तर तें तरें॥३०॥

जिमि आपु कानन तप तपें, तिहि तपहुँ ते इन तप तपें।
चित धारि बिधि चरनारबिंदहि राममंत्रहि हृदि जपें॥
अरु काय मन वच कर्म लच्छन, लच्छ विधि सेवा करें।
जिन जीति इंद्रिन कौं अहो निसि, इंद्रजीतहि संघरे॥३१॥

प्रभु कल्प द्रुम कारुन्य मूरति, भक्त जन मन कामि हे।
अब कौन अंतर राखि भाषौं, आपु अंतरजामि हे॥
अपराध-सिंधु अगाध कौं, निज सर्व गर्व छमामि हे।
इत्यादि पर कहने कहा, गोपाल राम भजामि हे॥३२॥

भुव लोक धरि जिमि नर कलेवर, कर्म किल्विष सग्रहे।
जग पाइ बहु प्रभुतानि तें, नहि करे इक श्रुति के कहे॥
इहि हेत जोनि असेष भ्रमतें, निरय दुर्गति पावहीं।
यह संक संत समाज निरभें, राम गुन गुनि गावहीं॥३३॥

---

२८. डाकिनी : भूतिनी। बात : बतास।
२९. मीड़ि : मीज दिया।

सुनि भरथ हनु हित प्रीति परमानंद, आनंद को लहे।
वहु हृदय परम दयाल ह्वै, मुख सुधा-रस बच रुचि कहे॥
अब सुनहु लक्षन वक्ष इनके, नेह पार न बार है।
गहि एक आतम पांच बपु, सम हरन भूतल भार है॥३४॥

मम एक दुख तें सहस दुख इन, सहस दुख दुख हौं लहौं।
इनहि सुख तें हौं सुखी, अति का सु इन महिमा कहौं॥
हित चारि विधि जन मोहि धावत, चारि चारिहुं देत हैं।
जिज्ञासु आरत अर्थ अर्थी, ज्ञान पूरन हेत हैं॥३५॥

इंद्रादि सुर रुद्रादि जोगी, श्रुति विरंचि विचारहीं।
सोइ संत भक्तहि सुलभ दुलभ, भक्ति जोग सुधारहीं॥
इन सर्व धर्म समपि के, मोहि कर्म कारन अनुसरे।
अद्वैत भाव भजे सदा, इहि भाव ते सब के परे॥३६॥

नहि आदि अंत अनंत के गति, प्रकृति मो माया महा।
यह काहि भ्रम न विभूति, दुस्तर दुसह गति बरनौ कहा॥
इहि तें जु भक्ति विरक्ति जुक्तिहि, भाव भय भजिवे करौ।
मम भक्त वत्सल विरद जन, गोपाल पूरन प्रन धरौ॥३७॥

श्री रामचंद्र प्रसंसतं, सब सभा किय हनु वंदनं।
निजु परमदास विचारि, सुमिरत हृदय श्री रघुनंदनं॥
तिन रूप बरन अपार बल, बपु बरन तें सब संकितं।
अति हरन संकट रटत हरि हरि, चरन त्रिभुवन नौमितं॥३८॥

जिन जलधि गोपद मान कीन्हे, मसग दनु लंकाधिपं।
सिय राम अवधि विहाय पूरन, सेवित अवनी नृपं॥
जिम बात केलि विनोद मोदनि, उदित तरनिहि ग्रासितं।
ब्रह्मादि सुर रुद्रादि दे, सब लोक सुर प्रकासितं॥३९॥

---

३४. एक आतम : एक शरीर।
३५. चारि : धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष।
३६. इन : लक्ष्मण के अर्थ में। जोग : योग साधना।
३९. गोपद मान : गोष्पद, गौ के खुर के समान। मसग : मसक।

हनुमान हरन असेष संकट, निपट खल दल खंडनं ॥
बहु विकट दुर्घट सुघट सबही, निकट जय जग मंडनं ॥
निजु समर सिध्धि प्रसिध्धि महिमा, वृध्धि तन मन कामिहं ।
अति दुरित भंजन सुत प्रभंजन, राम दूत नमामिहं ॥४०॥

जग प्रबल मानी मान मर्दन, निबल बहु बलदायकं ।
बहु दंदवाद प्रमाद मर्दन, मर्दितं दनु-नायकं ॥
जग काल व्याल कराल मर्दन, भूत ग्रह भ्रम भ्रामितं ।
अति अभय नाम प्रताप महिमा, सर्वदाहि भजामितं ॥४१॥

भय अनल अनिल अटव्यचारी, और बारि निसाचरं ।
नृप राज दंड प्रचंड खंडन, पाप ग्रह पीड़ा हरं ॥
हाल हनु तिहुं लोक व्यापत, दंदवाद निकंदनं ।
जन लच्छ जोजन तें जु सुमिरत, निकट मारुतनंदनं ॥४२॥

जिन नाम जपत निसीथ हित चित, एक भक्ति अराधितं ।
बहु धूप दीपक फूल फल दल, सिद्धिमंत्रहि साधितं ॥
अति सत्य सौच विचार निर्मल, विषय इंद्रिय निग्रहं ।
धरि ध्यान नित चरनारविंदहि, सर्व त्यक्त परिग्रहं ॥४३॥

सब सिध्धि फल मन कामना बल, वृद्धि आयु विवर्द्धनं ।
तिन परम भक्ति प्रसन्न, परमानंद अंजनि नंदनं ॥
मति मंद ते नहि ध्यावहीं, गुन गावहीं न नराधमं ।
जिन कृपा किंचित होत ही, निर्वान पद निगमागमं ॥४४॥

श्री रामचंद्र प्रताप धनु, हनुमान बान महा बलं ।
छल छंद छेदन लच्छन, व्योम भूमि रसातलं ॥
इमि नौमितं गोपाल जन, हरि नाम पठत महा फलं ।
बहु सर्वदा जय सिद्धि सर्वहि, सर्व त्रिभुवन मंगलं ॥४५॥

---

४२. भय : हुए । अटव्यचारी : अटवी में रहने वाले । बारि : जला दिया । नृपराज : रावण ।

इमि बदत रघुबर भक्ति गुन गनि, आस करि जिन पद भजे।
करि सर्वभाव समर्पि सर्वस, सर्वदा भय भ्रम तजे॥
जिन सैल कंचन गने किंचित, ते अकिंचन चित हरौ।
अरि इंद्र से जिन रंक जाने, संक तिन डारिबौ करौ॥४६॥

इहि भाँति हरिजन हरिहि ध्यावत, विमल अस्तुति गाइकं।
प्रभु भक्त वत्सल पनहि पालत, हृदय अति हरषाइकं॥
सब परसपर गुन वेद गावत, प्रेम पूरन जाप कौ।
हित प्रीति कवि गोपाल बरने, प्रगट राम प्रताप कौ॥४७॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां श्री राम प्रेम स्तुति वर्ननोनाम चतुर्पंचासमोध्यायः॥५४॥

४६. सैल कंचन : सुमेरु पर्वत। पनहि : प्रण।

सीता-वन, कुस लव-जन्म

५५

छप्पै

चारिहु वर्णा बिचारि रहत, निजु आपु धर्मरत।
सत्य सौच आचार चलत नित, जानि वेद मत॥
दान दया सनमान ज्ञान गुन, न्याइ नीतिमय।
एक-तरुनि व्रत पुरुष, तरुनि पति-व्रत अति निर्भय॥
—कहि माखन रघुवर राज इमि, पढ़त मोद प्रति प्रति भवन।
—कहुँ रोग न सोग वियोग जहँ, रहित सर्व आवागवन॥१॥

सवैया

थावर जंगम जंतु जहाँ लगि, हैं सब ही निहकाम सदा हीं।
आठहु सिद्धि सदा नव निध्धि, रही रमि कैं घर ही घर माहीं॥
फूलि फलैं तरु सोभ सुगंध, छहूँ रितु एक बराबर जाहीं।
माखन श्री रघुबीर के राज, विराजत पूरन पुन्य प्रभा हीं॥२॥

सवाई

इहि विधि वर्ष सहस दस बीतत, धर्म-राज विधि लोक सुहाये।
दंड पास आगे सब धरिकैं, करत विनय अति वितत महाये॥
जीवन-मरन-रहित सब जीवन, सासन त्रास न जात चलाये।
अविचल राज राम के तिहुंपुर, आवागवननि गैल मिटाये॥३॥

दोहा

आप अवध पगु धारियैं, दीजै सोइ उपदेस।
जिहि तैं अब बैकुंठ कौं, रघुवर करे प्रवेस॥४॥

---

३. धर्मराज : यमराज। वितत : विस्तृत।

चौबोला

सुनि विधि धर्मराज की बात।
आये अवधि हिये हरषात॥
मिले सभा महं रामहि जाइ।
सबन प्रनाम किये हरषाइ॥५॥

करि आदर बैठाये राम।
पावन किये आइ निजु धाम॥
धनि बासर दरसन दिय आपु।
हम तो करत सदा तुम जापु॥६॥

सुनि विधि अस्तुति किये अपार।
धनि धनि रामचंद्र अवतार॥
अभय किये प्रभु तीनहुं लोक।
काटे बंदि सबन के सोक॥७॥

थापें तिहुं पुर पुन्य प्रकासि।
मेटि दुरित-दुख दनु-गन नासि॥
वर्ष सहस दनु कीन्हें भोग।
सहस एक नृप आइ संजोग॥८॥

सो अब भोगहु जानि विचार।
जो कछु लोक रीति व्यवहार॥
प्रभु अविनासी गुन सर्वज्ञ।
हम समुझावहि का मति अज्ञ॥९॥

दोहा

तिहुं पुर को कारज भयो, आवागमन सु राह।
ज्यों उपराजे आपु सब, त्यों करिये निरबाह॥१०॥

---

८. आइ : आयु। नृप : महाराज दशरथ।

तोमर

सुनि राम विधि—मुख बैन।
सब समुझि कारन ऐन॥
हँसि विदा कीन्ह बिरंचि।
विधि चले करन प्रपंचि॥११॥

दिय सियहिं आसिष जाइ।
सिय जोरि कर परि पाँइ॥
दे तुरत आसन धारि।
अति विनय करि बैठारि॥१२॥

विधि कहैं तब समुझाइ।
सब वेद भेद बनाइ॥
सुनि पुत्रिका एक बात।
अब भयो नात कुनात॥१३॥

पितु आयु भोगत राम।
सिख देत तिहि हित काम॥
तुम चलहु अब सो चालि।
सुख राज श्रीहिं उसालि॥१४॥

जिमि चलहिं प्रभु निजु धाम।
सो करहु पूरन काम॥
समुझाइ विधि सब बात।
निजु लोक को भयो जात॥१५॥

---

११. ऐन : ठीक।
१४. उसालि : छोड़कर।

छप्पै

इहि अंतर रघुवीर, दूत द्वै पास बुलाये।
लेहु सहर मैं सोधि, घरन घर कहि समुझाये।।
को अस्तुति जन करत, करत को निंद हमारी।
कहो सत्य सब आइ, सकल तन त्रास बिसारी।।
=सुनि गये खभरि सब लेनपुर, सुनत भेद सब धाम कौं।
=माखन विनोद सदननि सदन, गावत जस श्री राम कौं।।१६।।

दोहा

रजक एक निजु रजकनी, मार्‌यो कलह बढ़ाइ।
वह रिसाइ निसि परि रही, सिव मंदिर में जाइ।।१७।।

मंडल छंद

भोरहिं जानि लोग तिहिं ल्याये, सो नहिं राखत ताहि।
कहति राति यह रही कहाँ धौं, मैं नहिं राखौं याहि।।
बड़े घरन मैं सबै समावैं, लघु जातिन मैं नाहि।
ज्यौं रघुनाथ सिया रस विलसत, कहि यह भावै काहि।।१८।।
सुनि यह दूत राम सों कहतैं, रहे राम पछताइ।
भीतर गए चित्त चिंता बस, सोचत पौढ़े जाइ।।
सिय बीजनु करि चरन पलोवति, अति ही प्रेम बढ़ाइ।
कहि रघुवर, सिय माँगहु जो कछु, सो हम देहि मँगाइ।।१९।।
सुनि कर जोरि जानकी बिनई, यहै रीझि प्रभु पाऊँ।
तपसी दुखित बसन बिनु बन मैं, तिनहिं बसन पहिराऊँ।।
दीन दसा लखि दया होत जिय, तातें विनय जनाऊँ।
प्रभु प्रताप यह पुन्य पाइ के, संध्या तें फिरि आऊँ।।२०।।

सवैया

राम कहैं पट प्रातहि लै, बन मैं तपसीन सदा पहिरावो।
जौ करुना उपजी तुम कौ, वहु भोजन साजि बनाइ खवावो।।
आगेहि हौ मन की जु कही, करि सौंह वृथा अवचित भ्रमावो।
पूरन पुन्य करौ सिय जाइ कै, काज कहा इत जौ फिरि आवो।।२१।।

---

१७. रजक : धोबी।

छप्पै

प्रात समै उठि आइ, भ्रात तीनों सिर नाये।
देखि मलिन मन भर्थ, अर्थ बूझत बिततायै।।
चित चिंता प्रभु आजु, कछु चित हमहि जनाई।
किहि कारन यह सोच, जाहि तिहुं पुर ठकुराई।।
—कोइ दीन मलीन न राज तुम, तुमहिं कौन चिंता परिय।
—कहिअे जु कृपा करि हेत सोइ, जिहि तें उर चिंता धरिय।।२२।।

सवैया

श्री राम—

भर्थ सुनो यह अर्थ सबै, तुम हौ जु समर्थ सदा सब माहीं।
है उपजी इक कारन आइ, भली न भली कछु बूझत नाहीं।।
जे तपसी बन मैं तप साधत, पुन्य तिन्हैं करिवे चित चाहीं।
देखि दिगंबर की करुना, पहिरावन अंबर जानकि जाहीं।।२३।।

सोरठा

तिहि बन लै सिय आप, रथ चढाइ पहुंचाइअे।
या मैं तुमहि न पाप, करहु बेगि कारज यहै।।२४।।

दीपकल छंद

भरथ—

सुनि रहे भरथ मन सोचि बैन।
दोउ उमगि उठे जल जलज-नेन।।
यह बात कही प्रभु कौन हेत।
अपराध बिना अपराध लेत।।२५।।

सिय त्याग करत, किहि दोष लागि।
यह कौन आइ उपजी अभागि।।
परिहरत दोष दस पुरुष नारि।
सिय मै न येक कहुं कज निहारि।।२६।।

---

२२. बिततए : बिकल होकर। ठकुराई : राज्य।
२६. कज : कमी।

तिहि ऊपर गर्भवतीहि जानि।
यह पाप लेहि को सीस आनि॥
जब चहत होन जिहि नास काल।
विपरीति बुद्धि तिहि होत हाल॥२७॥

बहु द्योस किये सुख राज भोग।
यह भार उतारन को प्रयोग॥
अब चहत उडासन अवधि राज।
तिहि हेतहि आगम करत काज॥२८॥

दोहा

पातक सासन भंग को, सो सिर पर मकु लेहिं।
यह हम सौं नहि होहि जो, सीता को बन देहिं॥२९॥

श्री राम—

सत्रुघ्न तुम जाहु लै, सीता तपसी पास।
पट पहिरावहिं पुन्य को, पूजं मन की आस॥३०॥

द्रुमिला

सत्रुघ्न—

प्रभु आप सदा सर्वज्ञ सिरोमनि, मो यह भेद न जानि परै।
किहि हेत पठावत हौ बन सीतहि, पातक दोष बिना को करै॥
न तजै कोइ गर्भवती अपराधिन, जानि कहा तुम टेक धरै।
घर मैं न तुम्है करुना उपजै, जग के दुख यौं किहि भाँति हरै॥३१॥

दोहा

जेतक आज्ञा भंग को, पातक सो सिर लेहिं।
घर की लक्ष्मी दोष बिनु, क्यों निकारि बन देहिं॥३२॥

---

२८. उडासन : समाप्त करना।

लक्ष्मीधर छंद

श्री राम—

बोलि कै लक्ष्मणै राम जू यों कहें।
पालि मो सासनैं सर्बदा जो लहें॥
सीय को काननैं छोड़ि कै आवहू।
नित्य मो चित्त मैं सर्बथा भावहू॥३३॥

सवैया

लक्ष्मन—

मात पिता गुरु राज के सासन, नास कै पापन चित्तधरों मैं।
लोगन कं अपहास के त्रासन, प्रान विनासन हू न डरों मैं॥
केवल श्री रघुनाथ की भक्ति हिये, भव पार परौं न परो मैं।
धर्म घटै मकु कर्म घटै, नहि राम के अज्ञहि भंग करौं मैं॥३४॥

मदन छंद

लै चले बन बोलि सीतहि, तुरत रथ्थ चढ़ाइ।
महा दीन तपीन कों, पट आइअ पहिराइ॥
सघन कानन निपट निर्जन, अपथ लीन्हें जात।
देखि जानकि मनहिं सोचति, त्रसित कंपित गात॥३५॥

कौन कुमति अभागि लागी, छोड़ि अवधि विलास।
देहि देवर कहां मो कहं, जाइ कै वनवास॥
राम-चरन-बिछोह तें, बिक प्रान है किहि ठौर।
गर्भ को कहं आस है, बिनु प्रान पति नहि और॥३६॥

वर्ष अब दस सहस मैं, यह संचर्‌यौ को जीव।
जाहि तें मम संग छूट्‌यो, राम अैसे पीव॥
एक पल विश्लेष रघुवर, प्रान तू अकुलाइ।
जाहि देवर छोड़ि अब हीं, निकस के किन जाइ॥३७॥

---

३४. अपहास : उपहास।

छप्पै

निरखि गंग तट निकट, सघन तरु छाँह सुहावन।
रथ तें सियहिं उतारि, चले जिमि परम दयावन॥
ऊरध स्वांस अपार तजत, कंपत तन थर थर।
धकधकात उर लखन, झरत नैननि जल झर झर॥
=तिन चलत जानकी विकल वपु, परी जु पुहुमि अचेत अति।
=सुधि बुधि न नेंक हिलत न डुलत, थकित अंग निर्जीव गति॥३८॥

सवैया

लच्छन सीय सदा अवलोकत, त्यागन प्रान तबैं तहँ लागे।
मेरेहिं देखत मात मरी, कढ़ु रे तन तें जड़ जीव अभागे॥
काहि देखावहुँ लै मुख मैं, अपराध अगाध अंगैं अंग दागे।
पीछे चलें अपहास करैं, जग ताते चलैं किन जानकि आगे॥३९॥

दोहा

तजत प्रान लक्षन लगे, सीतहिं देखि अचेत।
देवन कहें पुकार तब, सुनौ लाल यह हेत॥४०॥

जाहु आपु तजि सोक अब, सीता मरिहैं नाहिं।
ह्वैं हैं सफल सु पुत्र द्वै, यहई कानन माहिं॥४१॥

गीतिका

यह सुनत देवन के सु बानी, सत्य लक्ष्मन जानि कै।
तब चले सीतहिं छोड़ि तरु तर, सोक पूरण ठानि कै॥
पुर अवधि पैठे, मुख दुराये, गहन गहि अपने गए।
दृग लगी नीर प्रवाह पूरन, लेत स्वासनि दुख मए॥४२॥

तजि राज श्री, हम आजु आए, लगी पुर अभागि हैं।
नहिं मेट सासन सकें प्रभु के, एक पन मन लागि हैं॥
अब रची धौं विधि कहा रचना, जानि नैंक न सो परैं।
सब करन कारन राम हैं, मन भावई सोई करैं॥४३॥

दोहा

घर घर सोचत सहर सुनि, सीता कौ बनवास।
हानि परी सब कौं हिये, बिनस्यौ अवधि बिलास ॥४४॥

रुचिरा छंद

उत बन खंड तरुहि तर सीता, परी अचेत न चेत कहूँ।
निर्जन जीव जंतु पसु पच्छिन, महा अपथ पथ कानन हूँ॥
तिहि थल कंद मूल हित फिरतें, बालमीक मुनि आइ भये।
परी तरुनि, तन-गरुव, चेत बिनु, देखि महा मन सोचत ये ॥४५॥

करि विचार विस्मय अति जिय मैं, को यह किहि हित इतहि परी।
याहि जगाइ भेद सब बूझहि, श्राप दोष कौं त्याग करी॥
मंत्र सजीवन मंत्र गंग जल, सींचत मुख मुरछानि जगी।
कंपत विकल देह बैदेही, झरि नीरनि अखियानि लगी ॥४६॥

बूझत मुनि, तुम कहौ कौन कुल, को इहि कानन छोड़ि गयो।
किहि कारन बन तजिय गुर्बिनी, किहि के उर करुना न भयो॥
सुनि सुनि मुनि-मुख-वचन जानकी, ह्वै सचेत उर धीर गही।
निरखि पुनीत सतोगुन सर्वंग, सकुचि तदपि मृदु बैन कही ॥४७॥

द्रुमिला

सीता—

मिथिलाधिप भूप विदेह सुता, मम जानकि नाम कहै सुनिये जू।
अवधेस नरेस के नंदन चारि मे, जेठे के पानि गही मुनि ये जू॥
तपसी पट देन तजे बन देवर, जीव गये हौं जगी पुनि ये जू।
रघुनाथ बिना हौं अनाथ परी, जु दसा यह जानिय मो मुनि ये जू ॥४८॥

---

४५. तरुनि गरुव : गर्भवती।
४७. गुर्बिनी : गर्भिणी।
४८. पानि गही : पाणिग्रहण।

छप्पै

वालमीक रिषि राज सुनत, अति ही पछितानें।
तुम पौत्री मो आहु, जनक-गुरु मोहि सब जानें॥
मम आश्रम चलि सीय, संक सोकहि विसरावहु।
सुफल पुत्र द्वै होंहि, सोच एक न मन लावहु॥
–बहु बोधि तबहि मुनि जानकी, लै आये तप पुन्य थल।
–अति प्रीति सहित भोजन दिये, कंद मूल फल सहित जल॥४९॥

सोरठा

वालमीक रिषि राज, दिन दिन आदर प्रीति करि।
पालत हित सिय काज, पुत्रिहि ते पौत्री हरषि॥५०॥

सवैया

मासक द्वै बितये इहि भाँतिनि, आइ सिया तन पीर जनाई।
वासर लग्न महूरति दिव्य, भये सुत दोइ घरी सुभ दाई॥
सोचि विचारि नाम धरे मुनि, हैं कुस औ लव ये दोउ भाई।
सूरति नीरद नील कलेवर, मूरति ज्यौं लखिर्ये रघुराई॥५१॥

दोहा

विधि विधान सब विधि करें, ज्यौं ज्यौं दिन के होत।
प्रति पालत अति प्रीति ते, देखत जोति उदोत॥५२॥

चौपैया

नैननि सुख होई, लखि सुत दोई, मुनि मन हरष बढ़ावैं।
किलकत इक दैयाँ, करत बकैयाँ, छतियाँ सों लपटावैं॥
पढ़ि पढ़ि सुभ मंत्रनि, सोधि सु तंत्रनि, दे आसिष मुखभाषैं।
ह्वैं हैं जग निर्जित, अति बल संजित, कहि माखन अभिलाषैं॥५३॥

दोहा

चूड़ा कर्म विधान करि, कर्न-बेध कुल रीति।
वर्ष पंच मैं दुहनि कौं, दिये जज्ञ उपवीति॥५४॥

नाराच

अनेग सस्त्र सास्त्र वेद, भेद कौ पढ़ावहीं।
अथाप थाप जंत तंत्र, मंत्र दै बढ़ावहीं॥
अदेव देव राज छंद, भाँति भाँति भाइयो।
समस्त वालमीक जू, कुमार द्वै सिखाइयो॥५५॥

दोहा

रवि बंसी रघुनाथ-सुत, सीता तनय प्रभाइ।
तापर किय सर्बज्ञ हैं, बालमीक मुनि राइ॥५६॥

तिहूं पुर किहि पट तर करें, समता कोई नाहि।
उनसे उन ही कौं कहो, और न मनहि समाहि॥५७॥

सवैया

नीरद नील कलेवर सुंदर, नैन बिसाल बिलोकत मोहैं।
पानि लिये धनु ही लघु ही लघु, वान निषंग लघू लघु द्वै हैं॥
खेलत हैं मृगया बन मैं, जिन रोपनि तोपि सकै कहि को हैं।
भूरित केस, सुबेस महा, रघुनंदन के दोउ नंदन सोहैं॥५८॥

घनाक्षर

छोटी छोटी धनुही लै दे दे डग तानत हैं। छोटे छोटे बान होत येक ते अपार हैं।
छूटत अरर मचै, लोक लोक नायक हूं। पारावार पारवार परत पुकार हैं॥
केहरि कुरंग कोल कुंजर करेजे वेधि। सावज समूह श्रोन बहत पनार हैं।
माखन कहत कोटि मारतैं अपार दोक। राम के कुमार जब करत सिकार हैं॥५९॥

दोहा

कुंवर रूप गोपाल भनि, हरखत मुनि लखि आप।
धरि धरि जानकि ध्यान उर, सुमिरत राम प्रताप॥६०॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां
सीता-वन, कुस लव जन्म बर्ननोनाम पंच पंचासोध्यायः॥५५॥

५९, मार : कामदेव।

कुश लव-युद्ध शत्रुघन-विमोहन

५६

छप्पै

इतहि अवधि पुर सकल भाँति, राजत रजधानी।
राज लोग नित नीति प्रीति पर, गुन पहिचानी॥
लोक लोक सुख सवन, चित्त चितानि रहित सब।
रावर जनम न मलिन, मात उर होत सोच अब॥
=इक समय सभा रघुनाथ जू, मंत्र वसिष्टहि सौं लये।
=सिय त्याग दोष विध्वंस हित, अश्वमेध करने भये॥१॥

दोहा

विश्वामित्र वसिष्ट अरु, व्यास देव भरद्वाज।
अश्वमेध दिन निर्मये, उदक लये रघुराज॥२॥

तोमर

सजि साज जज्ञ अपार।
दुज करहि वेद उचार॥
तब कहे भरथहि राम।
करनै जु तुम मख-काम॥३॥

---

१. अश्वमेध : अश्वमेध-यह यज्ञ जिसमें राजा द्वारा मस्तक पर जय पत्र बाँध कर छोड़ा हुआ एक घोड़ा मार्गावरोध करनेवालों को जीतते हुए दुनिया भर में घुमाया जाता है। घोड़े के सुरक्षित लौट आने पर उसका स्वामी अपने को सम्राट घोषित कर उस घोड़े की चर्बी से यज्ञ करता है।

२. उदक लए : संकल्प वाला जल।

अरु सुनहु लक्षन लाल।
सुधि करहु सब छितिपाल॥
ढिग शत्रुहा लिय बोलि।
अब ल्याइये हय खोलि॥४॥

त्रिभंगी

सुनि सुनि सु भवानी, सब सुख मानी, मंगल ठानी हरष भरे।
सुग्रीव सुहाये, अंगद आये, हनू सुनाये, मोद करे॥
बाजन पुर बाजैं, सोभ बिराजैं, साजन साजैं, अमित नये।
सोहैं रघुनंदन, जग जन वंदन, कलुष निकंदन चन्दन ये॥५॥

दोहा

सकल ब्रह्म रिषि, देव रिषि, मिले राम रिषि आइ।
रचत वेद सब विधि सबै, मखसाला रघुराइ॥६॥

त्रोटक

मनि मंडप सुन्दर सोभ लसैं।
बहुरंग पटोरन सों सरसैं॥
फल फूल सुगंध समस्त सचे।
चहुँ ओरन तोरन भाँति रचे॥
सुचि ह्वै रघुनंदन नेमु लये।
मुनि वृंदन आनंद देखि भये॥७॥

घनाक्षर

बैठे मखशाला मंजु मेखला विराजमान। देखि मुरझाती रूपराज सुकुमारिका।
पंकज मलीन, राग रंग हू की छबि छीन। जोति मनि हीन, डोलैं मौन सुक सारिका॥
मन ही हरष मुनि, सुनिबे कौ वेद धुनि। मोरि मोरि जाती मुख रिषिनकी नारिका।
भनत गोपाल रघुनाथ जू के साथ आजु। सोहती कनक हूँ की जनककुमारिका॥८॥

---

४. सुधि : समाचार। सत्रुहा : शत्रुघ्न।
७. पटोरन : रेशमी वस्त्र। सचे : एकत्रित हुए। नेमु : नियम।
८. नारिका : नारी।

चौबोला

भरथ अस्वसाला में जाइ।
सुन्दर सावकर्नं ठहराइ॥
ल्याये रामचंद्र के पास।
देखत सब ही भये हुलास॥९॥

सिंधु आदि सब तीरथ नीर।
हय नहवाये कपिला छीर॥
चंदन अगर सुगंध सुवेस।
मुनि मुक्ताहल पोहे केस॥१०॥

भूषन सकल विभूषित अंग।
पूजा करे अस्व बहु रंग॥
अच्छत रोचन दूब समेत।
वेद विधान करें बहु हेत॥११॥

करें होम दुज कलस विधान।
दीन्हें विप्रन अगनित दान॥
कनक पट्ट बांधे लिखि भाल।
रामचंद्र गुनि गुनि गोपाल॥१२॥

दोहा

करि पूजा हय राज कौ, दल साजे चतुरंग।
महारथी सब साजि कैं, चले सत्रुघन संग॥१३॥

रामचंद्र संकल्प कहि, हय छोड़े जिहिवार।
रघुबंसिन कौ दल चल्यौ, बाजन बजे अपार॥१४॥

---

९. सावंकर्न : सफेद घोड़ा जिसका कान काला हो।
१०. कपिला : सफेद गाय। पोहे : गूंथ दिया।

करषा

बंदि पद राम के, काम को बीर सजि। चलत हय राज के, राज राजा चले।
रथ्थ बहु रंग, मनि जोति जगमगित सब। मनहुँ रवि चंद गन, गहन तरु तरु फले।
गजन के भ्रुंड, भक रुंड बंदन घने। सुंड चंडन किधौं गौरि गिरि ससिकले।
भनत गोपाल रघुनाथ दल प्रबल तें। पगन सौं मगन के जात भूधर दले ॥१५॥

गजत गजराज के, खेल सुरराज के। बंब के बजत ब्रह्मंड हल हल हलें।
हांक के परत, हलकंप पुर पट्टननि। दुवन पुर पट्टननि मारि दल मल दलें॥
रथन औ रथिन के सोभ कहि जात नहि। मनिन की जोति चहुँ कीति भलभलमलें।
भनत गोपाल, रघुनाथ दल भार तें। सेस फन सहस बल, व्यालपुर खलभलें ॥१६॥

दोहा

सेनापति रघुनाथ के, बली सत्रुहन धीर।
जहाँ जहाँ हय जातु है, तहाँ तहाँ भटभीर ॥१७॥

छप्पै

जहाँ जहाँ हय जात, तहाँ तहँ जात प्रबल दल।
पव्वय होत गरद्द, धूरि पूरित रवि–मंडल॥
होत नदी-नदनिजल मसकि धरनी जल फुट्टहिं।
को रोकन समरथ्थ, बान किहिं ऊपर छुट्टहिं॥
–गोपाल भनत, अद्भुत चरित रामचंद्र जगती-पती।
–तिन अस्व वालमिक थल गए, जहाँ महा सीता सती ॥१८॥

मालिनी

मुनि थल सुभ सीता, राम गीता विचारें।
कुस लव सुत दोऊ, प्रेम मोदें दुलारें॥
सुनि सुनि मृदु बानी, रूप रंग अघावें।
छिन छिन लखि भूखें, कंद मूलें खवावें ॥१९॥

---

१५. मगन : रास्ते। बंदन : रोली। गौरि गिरि : कैलाश पर्वत, ससिकले : शशिकला।
१६. गजत : गर्जन करने से। व्यालपुर : नागलोक, पाताल।
१८. पव्वय : पर्वत। गरद्द : गर्दा।

सोरठा

बालमीक रिषि राइ, कंद मूल गए लेन कौं।
सीता हिय हरषाइ, कुस लव दोउ खेलन चले ॥२०॥

मुनि पढ़ये श्रुति गाथ, निपुन धनुक बिधानि वनि।
लघु लघु धनुर्हीं हाथ, कुस लव दोउ रघुनाथ के ॥२१॥

दुमिला

घन सुंदर स्यामल अंग गोपाल, बिलोकत ही मन लेत हरैं।
अति भूरित केस सु बेस लसैं, मुनि बेस तऊ धनुबान धरैं ॥
सिय के हिय नैननि के प्रतिमा, प्रतिबासर खेलत धूरि भरैं।
जब ही कब कानन मैं जिति हो कित, राजकुमार सिकार करैं ॥२२॥

सोरठा

लव देखे हय-राज, अति सुंदर सोभित महा।
औचक पकरे बाजि, बाँधे तरु सों आनि कै ॥२३॥

मोदक छंद

खोजत राघव के दल घोरहि।
सोध न पावत हैं चहुँ ओरहि ॥
आवत आवत पाइ गये तहँ।
बालक बाजि बिराजत हैं जहँ ॥२४॥

देखि कहैं भट राघव भाइहि।
बालक रूप कह्यौ नहि जाइहि ॥
यौं सुनि बात कहे रघुनंदन।
ल्यावहु बाजि करौ कछु दंदन ॥२५॥

---

२१. गाथ : गाथा, यश प्रशंसा।
२३. बाजि : घोड़ा। औचक : अचानक।
२४. सोध : खोज।

दोधक छंद

एकहि कहत बीर दस धाए।
सो लव के ढिग आतुर आए॥

हे मुनि बालक, बाजिहि दीजै।
बेगि चलौ, कुछ दानहि लीजै॥

ना तरु खोलि, अबै हम लैहैं।
मारि कहाँ तुम को जस पैहैं॥२६॥

संखधारी छंद

सुने बात नोखे।
हने बान चोखे॥
रथी मारि डारे।
भने सोर पारे॥२७॥

सुने सत्रुहा ये।
रथी सो पठाये॥
भये जाइ ठाढ़े।
भरे कोप गाढ़े॥२८॥

तुम्हैं बाजि बाँधे।
तिन्हें बान साधे॥
हिये रोस मंडे।
सबै मारि खंडे॥२९॥

दोहा

पठये रथी सहस्र कै, कहे सबनि मुसकाइ।
मुनि बालक मति मारियो, गहि ल्यावहु तुम जाइ॥३०॥

---

२७. नोखे : अनोखे।

मोटन छंद

धाये जु रथी रथि साजि भलैं।
आये जु लखैं रन खेत दलैं॥
पाये जु बड़े जस, देहु हये।
नाये जु गरैं उपवीत नये॥ ३१॥

सवैया

यों सुनि बात, गोपाल कहैं लव, है यह बाजिहि कौन लेवैया।
व्योम रसाल भूतल भूप, गनैं तिनुकै, सब देव देवया॥
जौ लगि पानि सरासन तन, सु तो लगि हौं सब ठौर सेवैया।
श्रोन समुद्र महा रन रुद्र मैं, है वह लाज जहाज खेवैया॥ ३२॥

दोहा

सुनि के लव की बात कौं, सब ही भये जरद्।
गये जु होत बरद् हैं, रहे जु होत गरद्॥३३॥

त्रोटक

कहि बालक बानहि को झपटे।
सर एकहि में रथ झुंड कटे॥
सुनि के रघुबंसिन रोस बढ़े।
अरिहा सु कहे, रथ जाइ चढ़े॥३४॥

गज-झुंड अपार अगार दये।
जनु पावस मेघ-घटा उनये॥
झिरिना गिरि मद् कपोल झरें।
बग पंतिन दंतनि सोभ भरें॥३५॥

---

३१. हयं : घोड़ा। नाये : डाले हुए। उपवीत : जनेऊ।
३२. तनुकं : तिनका। सेवैया : छोड़ कर न जाने वाले। तूण : तूणीर। रुद्र : रौद्र।
३३. जरद् : जर्द, पीला, भयभीत। बरद् : बैल, मूर्ख। गरद् : गर्द, धूल।

इहि भाँति सबै रन पाइ लखैं।
लव बानन के बरषा बरखैं।।
भहराइ सबै दल रोस भरे।
मुनि के अरिहा अति कोप करे।।३६।।

हम अंग गलीन के छैल लये।
तिन सौं कबहूँ करतूति भये।
दिन गाल बजाइ कै खाइ रहे।।
मुनि बालक हूँ नहि जात गहे।।३७।।

दोहा

भग्गुल—

बालक बालक कहत हौ, हम सौं मूँछ मरोरि।
मुख देखे सुख पाइ हौ, मारे लाख करोरि।।३८।।

चौबोला

चले सत्रुघन साजे फौज।
बड़े करे मुनि बालक मौज।।
देखे समर-भूमि भभकंत।
ढाहे गज रथ तुरय अनंत।।३९।।

चकृत वचन कहे रघुवीर।
है भविष्य कछु जानहु धीर।।
इक बालक पुनि मुनि के बेस।
कठिन कर्म यह कियो प्रवेस।।४०।।

रामचंद्र जगतीपति राज।
को समर्थ जो बाँध्यो बाजि।।
यह कहि आगे देखे जाइ।
लव सरूप जैसे रघुराइ।।४१।।

---

३७. करतूति : करनी।
३९. तुरय : तुरंग।
४०. रघुवीर : शत्रुघ्न।

वसंततिलका छंद

सत्रुघ्न—

राजीव-मंजु-दल-लोचन चारु सोहैं।
सोभाभिराम लखि देव अदेव मोहैं॥
बूझै, कहौ जु तुम बालक कौन के हौ।
किवा स्तुतेय मुनि-पुत्र कि राज देहौ॥४२॥

लवोवाच—

नाहं द्विजेरा न च छत्रिय बैस्य सूद्रः।
ब्रह्मास्मि विष्णु सुर जिस्नु सुरेन्द्र रुद्रः॥
किं वादव्यर्थ, कथि किम्न करोतु जुध्वं।
सस्त्राग्नि दग्ध भटकांचण सर्व सुध्वं॥४३॥

दोधक छंद

बालक बपु अति, बातनि जोगी।
हैं रघुवर से, अमित बियोगी॥
घालहु सायक प्रथमहिं मोहै।
राघव के हय राखन कोहैं॥४४॥

यों सुनतैं सर एक प्रहारे।
सारथि बस्वन को फरपारे॥
कोप भरे अरिहा सर छंडे।
आवत ते अघवीचहिं खंडे॥४५॥

---

४२. राजीव : कमल। स्तुतेय मुनि पुत्र : स्तुति करने योग्य मुनि के पुत्र। राजदेहौ : राजा की देह से उत्पन्न राजकुमार।
४३. जिस्नु : सूर्य। सस्त्राग्नि : शस्त्र की अग्नि में। भट : वीर। कांचण : सोना।
४४. हय राखन : घोड़े की रखवाली।
४५. फल : बाण का फल।

विचित्रपद

सर लाघव राघव जोर करैं, नहिं खेत टरैं।
खसि भूमि पर्‌यौ, बहुर्‌यौ उठि, बाननि चोट करैं॥
सब सैन गए कटि देखि, हिये बहु संक धरैं।
अब हैं सु अचंभित बात कछू, नहि जानि परैं॥४६॥

छप्पै

तबहि कोपि सत्रुघ्न, नाग-सायक धनु साधे।
लागत ही उर गिरे, उरग रजु सौं लव बाँधे॥
डारि रथहि पर तिनहि, खोलि हय, लै जु सिधाये।
कहे बालकन कुसहि, सुनत अति कोपित धाये॥
– बरषे जु बान बारिद सरिस, रोकिय तब रथ आइ कैं।
– रघुनाथ-अनुज फर पारि कै, भ्रातहि लये छोड़ाइ कै॥४७॥

दोहा

मिले जु कुस लव कुसल सौं, हते सत्रुघन खेत।
बाँधे हय धल आनि कै, कहें सिया सौं हेत॥४८॥

भागे भग्गुल अवधि पुर, कीन्हें सभा प्रलाप।
सरनागत गोपाल भनि, रच्छहु राम प्रताप॥४९॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां कुसलव जुध्य सत्रुघन विमोहनोनाम षट पंचासोध्याय: ॥५६॥

---

४६. खेत : क्षेत्र।
४७. फर पारिके : युद्धभूमि में धराशायी करके।

कुश लव - युद्ध लक्ष्मण-संमोहन

५७

चौबोला

मखसाला बैठे रघुराइ।
पूरन ब्रह्म देव रिषि आइ॥
तौ लगि हलबल माच्यो द्वार।
भागे लोगन करें पुकार॥
यह सुनि तिनहिं बुलाये पास।
बूझत भरथ कहौ तजि त्रास॥१॥

दोहा

भग्गुल —

कहें कहा कहि जात नहिं, कौतुक कथा अनेक।
सकल सेन संघार किय, मुनि के बालक एक॥२॥

मोदक छंद

बाजिहिं फेरि सबै गहि मंडल।
जाइ भये विधि जोग वहै थल॥
बालक एक तहाँ मुनि सुन्दर।
होहिंगे काम न रूप पुरंदर॥३॥

---

१. काम : कामदेव।

मदन छंद

बाँधि के उन बाजि-राजहि, साधियो धनु बान।
देन लागे दान उनको, करे रन घमसान ॥
सैन दल चतुरंग रंगहि, जंग अरिहा जीति।
ले चले रथ डारि कै, सुनो और सुत की रीति ॥
मारियो उन अनुज राघव, फेरि गाजत लेत।
कहे हम दल और ल्यावहु नाक चूनो देत ॥४॥

दोहा

लक्ष्मण—

सुने कहत, कै तुम लखे, लक्षन कहो विचारि।
कौन रूप, केतिक बड़ो, कहो कौन उनहारि ॥५॥

सवैया

भग्गुल—

सुंदर स्याम मनोहर मूरति, देखत के दिन ही अति छोटे।
धूरि भरे तन, भूरि लटूरिनि, हाथ धरे धनु सायक खोटे ॥
नैन बिसाल गोपाल कहैं, छवि नैकहि कोप सबै फर लोटे।
है उनहारि सु राघव के, पुनि आदि न जानत कौन के ढोटे ॥६॥

सोरठा

श्रीराम—

रामचंद्र सिरताज, लक्ष्मण सौं तब यह कहे।
करो जाइ मख काज, होहु सहायक सत्रुहा ॥७॥

---

४. सुत : बालक। नाक चूनो देत : नाको दम कर दिया।
५. उनहारि : सदृश।
६. लटूरिनि : लटें। खोटे : छोटे। फर : युद्ध। ढोटे : पुत्र।

मोदन छंद

सासन राम दए सुनि तच्छन।
साजि चले तबही दल लच्छन॥
है सु अवध्य कहे हम रेखन।
ल्यावहु गे मुनि–बालक देखन॥
यों जु कहे चलते रघुनंदन।
बीर करे तबही पग–बंदन॥८॥

छप्पै

रामचंद्र चरनारबिंद, बंदन करि लच्छन।
चले साजि चतुरंग सैन, रथ रथी ततच्छन॥
बाजत दीह निसान, अमित गाजत गयंद गन।
उड़त धूरि नभ पूरि दिसा, भंचक रवि बाहन॥
–हलकंप दीप दीपनि परत, थरहरंत दिग पत्ति डर।
–गोपाल प्रबल दल चलत ही, हहरि इंद्र हरषंत हर॥९॥

उड़ियाना

लच्छन दल साजि तुरत देखे रन खेतैं।
पैरत स्रोनित नदी हु, हाँक देत प्रेतैं॥
ढाहे गिरिगन समान, कुंजर मद माते।
जित कित बन गहन भूमि, देखि परत राते॥
हय गय रथ खंड खंड, बान धनुक टूटे।
निरखि समर सूरन के, जात गरब टूटे॥१०॥

दोहा

पर्‌यो महा रन देखि कैं, लच्छन कहे बिचारि।
मुनि बालक, करतार कैं, सब दल लीन्हें मारि॥११॥

---

८. रेखन : रेखा खींच कर, विचार करके।
९. भंचक : भौंचक्का।
१०. पैरत : तैरना। राते : लाल।

सवैया

जानि गोपाल परी तबही, जब राघव रावरे तें सिय काढ़ी।
दंड दये अति दोष विना, भुज-दंडन के बल आधिक बाढ़े॥
सो अपराध अगाध टरे कित, जात हैं पातक-पावक डाढ़े।
यों कहतें तिन दीठि परे, धनु बान धरे मुनि बालक ठाढ़े॥१२॥

मदन छंद

देखि सैन समूह को, कुस कहे लव सों गाथ।
जीतिये संग्राम क्यों, धनुबान नाहिन हाथ॥
कहे लव तुम जाहु मुनि पें, सुनत पहुंचे जाइ।
तिनहिं रिषि रवि-मंत्र सिखये, तुरत पहुँचे जाइ॥१३॥

दोधक

सूरज मंत्र जबै जप कीन्हे।
अक्षय तून सरासन दीन्हे॥
बान अभेद लहे सुख बाढ़े।
हेरत मारग, बीर न ठाढ़े॥१४॥

छप्पै

अक्षय तून, अभेद त्रान, बहु बान वज्र बर।
अति अकट्ट कोदंड, डारि दीन्हें सु दिवाकर॥
विहँसि बीर गुन सज्जि, किय्येउ टंकोर रोस करि।
अररररर ब्रह्मंड रहेउ, नव खंड सद्द भरि॥
=गोपाल सकल दल बल तबहि, हलबल मचत अचेत तन।
=दिसि विदिसि विसत व्याकुल विदित, भज्जहिं भहरि गयंद गन॥१५॥

दोहा

कोलाहल टंकोर को, सुनि लच्छन रन धीर।
ये कोउ अद्भुत पुरुष हैं, रघुवीरहुं तें बीर॥१६॥

---

१५. त्रान : कवच। नव खंड : पृथ्वी के नव खंड—भरत, किंपुरुष, भद्र, हरि, हिरण्य, केतुमाल, इलावृत्त, कुश और रम्य। सद्द : शब्द, ध्वनि।

लच्छन प्रत्युत्तर—

टेरि लक्ष्मन बूझियो, तुम कौन हो बल वीर।
चारि में तुम कौन हो, वपु धरे बालक धीर॥
प्रथम के हम चरन वंदत, दूसरे के बाप।
दुहूनि के पुनि करत संग्रह, भेव कहिये आप॥
वंस सूरज, पिता दसरथ, भ्रात श्री रघुनाथ।
नाम लक्ष्मन हमहि भाषत, आपु कहिये गाथ॥१७॥

दोहा

कुस—

बंस वीर-संग्राम है, मातु पिता धनु बान।
भ्रात भुजा बल आपने, हतत अरिन के प्रान॥१८॥
गंगोदक, मुनि अनल नृप, गनिका, कनक, सुगंध।
जाति गोत तिनके कहा, जिनके उठत कबंध॥१९॥

दोधक छंद

ज्ञान कहा रन में कथि कीजै।
आइ अबै किन बाजिहि लीजै॥
हो जिनके पठये तुम आये।
आजु करौं तिनके मन भाये॥२०॥

लच्छन उवाच—

राम सबै जगती-पति जानो।
पास चलौ, न कछू हठ ठानो॥
वैसइ बाजि हजारन देहैं।
मारि कहा तुम कौ जु चलैहैं॥
है निहचै यह जानहु भाई।
भूलि न आप करौ लरिकाई॥२१॥

---

१७. चारि : ब्रह्मा, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र इन चारों में से तुम कौन हो? हम प्रथम (ब्रह्मा) का चरण पूजते हैं, दूसरे (क्षत्रिय) के पिता हैं और शेष दो (वैश्य और शूद्र) का हम संग्रह करते हैं।
१९. गंगोदक : गंगाजल। गनिका : गणिका। कबंध : मुंड।

सवैया

कुस—

बाजि यहै जु हजारन को, हम बाजि हजारन बाजहिं आये।
बाहन केवल बाजि गहे, तुम का भय-बाजन लाख बजाये॥
लेत न बाजिहिं आपने खोलि, गोपाल सु यों कहि चाप चढ़ाये।
बाज के चारहिं बाज चरैं, कहुँ बाज के चार बटेरन खाये॥२२॥

दोधक छंद

लच्छन—

बालक देखि दया जिय कीजे।
हाथ कहा तुम सों धनु लीजै॥
लेत हौं बाजि सम्हारहु बारे।
है अब कौन सहाय तिहारे॥२३॥

दोहा

यों सुनि के कुस कोपि के, कीन्हें बान प्रहार।
मानहुं पावस के घटा, बरषत गिरि जल धार॥२४॥

पद्धटिका

लखन धनुक कोपि कर धारे।
विषम विषम बहु बान प्रहारे॥
महा युद्ध कीन्हें यह साटे।
कुस लव बान बीच सब काटे॥
निःफल सस्त्र भये सब लेखे।
कहे लखन यह बात अलेखे॥२५॥

---

२३. बाजि : घोड़ा। बाज हजारन बाजहिं आये : हजारों घोड़ों से बाज आए अर्थात् मुझे यही घोड़ा चाहिये। बाज : बाज़, एक पक्षी। चारहि : पक्षियों का चारा। बटेरन : तीतर के समान एक छोटा पक्षी। बारे : बच्चे।

२५. साटे : विनिमय, बदला। अलेखे : जिसका कोई हिसाब नहीं।

मालिनी

लक्ष्मण—

तजि वन हम सीता, राम आज्ञाहि आये।
तिहि फल बल-हीनें, बान मिथ्या चलाये॥
जिहि सर धनु लंका, अंक इंद्रारि जीते।
तिहि अब सिसु-क्रीड़ा तुच्छ तुनीर रीते॥२६॥

सवैया

कुस—

सीतहि सौंपि गए वन राम, तहाँ तुम स्वामित काम सुधारे।
बानर रीछ बटोरि गोपाल, सु नीठि कै रावन रंकहि मारे॥
का पुनि इंद्र, कहा तिनकौं रिपु, जीति तिहूँ जगती जस भारे।
छोड़ि गए घर ते पुनि कानन, कान सुने करतूति तिहारे॥२७॥

यौं सुनि लाज बढ़े उर लक्षन, साँच कहे मुनि-बालक खोटे।
कौन करे पुरुषारथ है हम, जीति लये जहँ हैं सिसु छोटे॥
डारि दये धनु बान धरा पर, सिष न जात हैं बातनि पोटे।
लागत सायक नेक हिये, रघुनायक बंधु रथ-प्पर लोटे॥२८॥

दोहा

मोहित लक्षन देखि कै, दल बल दलै अपार।
जे उबरे ते राम सौं, कीन्हें जाइ पुकार॥२९॥
मुनि बालक गोपाल भनि, दले सैन सब आप।
प्रबल कोप तें चहत हैं, लोपन राम प्रताप॥३०॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां कुस लव जुद्ध लक्ष्मण संमोहनो नाम सप्तपंचासोध्याय:॥५७॥

---

२८. पोटे : फुसलाना, हथियाना।

श्री राम-राज्य वर्णन

५८

दोहा

सुनि सुनि अगुल वचन कौ, भरथ हिये अनखाइ।
समय पाइ श्री राम सौं, कहन लगे अकुलाइ ॥१॥

दीपकल छंद

भरथ—

तब कहे भरथ राजीवनैन।
हम कहें कहा, तुमसौं जु अैन ॥
जब तें जु आपु सिय दीन्ह त्यागि।
तब तें जु तुमहि लागी अभागि ॥२॥
जब होत नराधिप मंत्रहीन।
तिनके सु विनास विरंचि कीन ॥
करि बानर रीछन कौ जु संग।
बहु भाँति भए तुम मंत्र-भंग ॥
जिन आपु राज लिय भ्रात मारि।
तिन करे आपु मंत्री विचारि ॥३॥

सवैया

राज कहा जब जोग लियौ दृढ़, हिम्मति कायर संगनि छूटी।
ज्ञान कहा जु गँवारन संगति, उद्दिम का जब पूँजिय टूटी ॥
प्रीति कहा जु कठोर हिये, सठ के समझावन को मति खूटी।
चातुर लोगन के चतुराइन, चारिहु आँखि विवेक की फूटी ॥४॥

---

२. अैन : ठीक
४. उद्दिम : व्यवसाय। पूँजिय : पूँजी। सठ : मूर्ख।

दोहा

श्री राम—

मात पिता भाई सखा, सगा सहोदर होइ।
भले भले ते सब भले, आदि न बूझे कोइ॥५॥

दीपकल छंद

तब कहैं राम, सुनि भरथ आइ।
हम जनम दुखी, जानहु बनाइ॥
अब जाइ लखन-सुधि लेहु क्यों न।
कहिये जु आजु कहि जाइ जौन॥
सुनि भरथ राम कीन्हें प्रनाम।
सुग्रीव हनू नल नील जाम॥६॥

दोहा

अंगद सों प्रभु यों कहे, करहु जाइ तुम जुद्ध।
लेहु आपने बैर सब, नहि पीछे पुनि क्रुद्ध॥७॥

छप्पै

बंदि राम पद भरथ चले, संग्राम सैन सजि।
सुग्रीव अंगद हनू, नील नल जामवंत गजि॥
महारथी बलवंत, देखि रन-भूमि थकित अति।
परत न पाइ अगार, खेत नाचत प्रेत गति॥
=अवलोकि धंसायेउ भरथ रथ, जहँ लखन रथ रन रहे।
=दोउ कुंवर देखि करुना भयेउ, धनुक बान जात न गहे॥८॥

दोहा

भरथ कहे बालक सुनौ, कहो मात पितु नाम।
कहे कोपि कुस, गोत कुल, कहा बली संग्राम॥९॥

सवैया

सोचि गोपाल भरथ्थ कहें, सिय के सुत छोड़िये और न कोई।
हैं उनहारि सु लोचन आनन, मानहुं मूरति राघव सोई॥
बीर बड़े, अति बैसनि कोमल, कौन सौं या पुरुषारथ होई।
ब्राह्मण जानि के छोडत हौं, अब बान चलावहु बालक दोई॥१०॥
सायक पांच हने हनुमानहिं, चारि ते अंगद खेत खसाए।
सुग्रिव तीस, रु बीस विभीषन, जामहि एक मैं मारि भुमाए॥
नील कहा नल सील सुसील रु, सैन रथी गज बाजि गिराए।
भर्थ करे असमर्थ तबै, लव बानानि के बरषा बरषाए॥११॥

नटगति छंद

हय पयदल गय-दल दलि डारे।
जय जय जय सुर सबद उचारे॥
रकतहिं सलिल सफर भट फरकैं।
चहुं दिसि कल्हरत, घायल घरकैं॥१२॥

दोहा

गिरे बीर संग्राम सब, हनू आदि भट भीर।
अंगद बल बिहबल परे, भरथ रहे धरि धीर॥१३॥
अरर पर्यौ तब अवधिपुर, सुनै सैन संघार।
राम उठे तब कोपि कै, चढ़ि धाये तिहिं बार॥१४॥

छप्पै

देखि राम संग्राम खेत, दोउ बालक ठाढ़े।
अति कोमल सुकुमार चाहि, करुना रस बाढ़े॥
कहे, कहो हो बाल, मात पितु कहाँ तिहारे।
मात बालमिक थली, पिता हम कहाँ निहारे॥
—सुनि व्याकुल राघव हृदय गुनि, कहि न जात कछु बात रुख।
—उमहे जु नैन बारिद महा, देखत ही अरविंद-मुख॥१५॥

---

१२. घरकैं : गले से घरघराहट की कराह भरी आवाज कर रहे हैं।
१४. अरर : भीड़।

मालिनी

श्री राम—

कितिक दिनन के हौ, कौन विद्या प्रवीने।
अरु तुम उपवीतें, कंध कौने सु दीने॥
अरु पुनि निजु नामै, आपनो वेगि भाषो।
सकल जग तिहारो, कोप जी मैं न राखो॥१६॥

कुस वाच—

निपुन धनुक विद्या बालमीकैं पढ़ाये।
दिनन हम न जानैं, कंद मूलें बढ़ाये॥
कुस लव हम नामै, वंस गोतैं न जानें।
पितु अरु निजु माता, जुद्ध मे चाप बानें॥१७॥

सवैया

श्री राम—

दासरथी हम राम कहावत, हैं अज राज महीप के नाती।
सूरज बंस बिसाल गोपाल, कहैं रघुबंस में छत्रिय जाती॥
बालक हो हमरे निजु जानहु, बात कहो न कछू कहुं ताती।
कै निजु मातु दिखावहु आनि कै, बातनि वेधहु वज्र-सी छाती॥१८॥

लव वाच—

बोलहु बात सम्हारि अबै तुम, चाल चले सब पापिहि के जू।
देखिबे साध अबै जिय, तो अब देखहु सायक चापहि के जू॥
केवल मात पिता परताप, दले सब दाप प्रतापहि के जू।
औरन के हम बाप कहावत, पुत्त हमें निजु बापहि के जू॥१९॥

दीपकल छन्द

सुनि हँसे राम करुनानिधान।
तुम कहे बात सब ही प्रमान॥
अब चलहु भौन सब छांड़ि रोस।
सब छमहु आजु निजु परिय धोष॥२०॥

---

१८. ताती : व्यंग्य वचन।
२०. धोष : धोखा।

दोहा

नात गोत कुल धर्म गुन, सील विवेक विचार।
सर्व बराबर युद्ध में, कठिन क्रोध को भार ॥२१॥

सवैया

श्री राम—

राम कहै कुस सों तब कोपि कै, बाप न जानत, बात कहा तौ।
जानि तुम्हें परतौ अबलौं, छपते न कहूं, हलते नभ सातौ॥
बानिन बेधि रसातल भूतल, क्यों दुरते डर बाम्हन नातौ।
बाँचत हौ मुनि-बालक ओटन, तौ अब लौं हय लै घर जातौ ॥२२॥

छप्पै

रामचन्द्र इत कोपि, उतै लव कुस सर छंडै।
मंडि धरनि आकास, सैनि सब मारि विहंडै॥
डगमगियो डर इन्द्र, डाड़ कोलहु के करके।
उठत हूलि नव खंड, बान छूटत रघुबर के॥
गोपाल भनत रवि कुल कलस, इक्क सरिस सर छंडियउ।
रघुनाथ साथ इमि कुंवर दोउ, रन मंडल बनि मंडियउ ॥२३॥

गीतिका

इमि मंडियो रन रंग राघव, कुंवर केहरि मान है।
अति चलत चमकत रतनि फोकनि, चंद्र रवि से बान हैं॥
जब राम कौ सर लगत लव को, मनहु चंपक फूल है।
तब लागि गौ सर एक कुस कौ, भये प्रभु को सूल है॥
तहँ रहे रथ पर मोहि राघव, सीय के धरि ध्यान हैं।
अवलोकि हरखे कुंवर दोऊ, जीति रन घमसान हैं ॥२४॥

---

२१. नात : सम्बन्ध, संबंधी।
२३. कोल : वाराह। डाड़ : दांत।
२४. फोकनि : तीर के पीछे की नोक जिसकी पास पर लगायें जाते हैं। केहरि : सिंह।

दोहा

चले समर अवगाहि कै, देखे अंगद नील।
लिये कढ़ोरत पूछ गहि, ज्यों सावज लै भील॥२५॥
परे जानकी चरन तर, कुस लव जोरे हाथ।
यहै अस्व के कारने, रन जीते रघुनाथ॥२६॥

दोधक

सीता—

हा सुत बात कहा तुम भाखे।
कांच रु कंकन हाथ न राखे॥
बापहि क्योंन देखावहु मो कों।
और कहा मुख भाषहु तोकों॥२७॥

बसंत तिलक छन्द

मो सों कहियो जु कब मात श्री राम तातं।
चांडाल कांडधिक कार्मुक क्रोध गातं॥
बोधे तिहूंनि मुनि बालिमक धर्म गीता।
देखें तबै जु रत राम विदेह सीता॥२८॥

गीतिका

तब कहै सीतहि बालमीक, जु अमृत दृष्टि निहारिये।
तुम आदि शक्ति महा सती, यह कितिक बात विचारिये॥
यह कहत मुनि के सुनि सु महिमा, नैन झरि अमृत लगे।
लखि मनहुं सोवत महा विह्वल, समर सैन सबै जगे॥२९॥

---

२५. कढ़ोरत : घसीटते हुए।
२७. कांच रु कंगन : चूड़ी और कंगन।
२८. तातं : पिता। कार्मुक : धनुष। बोधे तिहूंनि : कुश लव और सीता तीनों को समझाया।

द्रुमिला

अवलोकत ही करुना रस मैं, लखि श्री रघुनंदन जू हरषैं।
मुनि ले सुत पायन पारत ही, भरि अंकनिसंक सुखै परखैं।।
जय बाजनि बाजि उठे जित हीं कित, देव गोपाल पहुँ करषैं।
सिय नैन सुधा रस रूप, किधौं गिरि स्यामल ऊपर ह्वै बरषैं।।३०।।

चौबोला

हनुमान सुग्रीव विभीषन, अगद लखि मुसक्याने।
गये रोम तन भूमि कठोरत, जात नीठि पहिचाने।।
निरखत सिया चरन तर लोट, सलजि लाज के मोरे।
महा महा बलवीर राम के, कुस लव सौं रन हारे।।३१।।

मुख चूमि सिया पति पुत्रन के, अति प्रीति निरंतर प्रेम भये।
भरि अंक भरथ्थ लिये, उर लक्षन, आसिष दै अरिहा हितये।।
दोउ भूपति पायन के रज लै, सिर नाइ सबै दलपत्ति नये।
कुस औ लव की भव-भूषण जानि, सबै मिलि मंगल कोटि ठये।।३२।।

दीपकल छन्द

तब निरखि जानकी कहत राम।
अब चलहु भवन किन प्रिय सु बाम।।
विधि लिखा भाल नहि मेटि जाइ।
विश्लेष भयेउ, दिन दोष पाइ।।३३।।

सुनि सिया विनय किय जोरि हाथ।
अब तो न मिलै तन प्रान नाथ।।
अब लेहु आप कृष्णावतार।
तब मिलहु चरन तर सीस भार।।३४।।

---

३०. करषै : करषा छंद।
३२. दोऊ भूपति : विभीषण और सुग्रीव।
३३. विश्लेष : वियोग।

यह सुनत राम तन रोस धारि।
उठि गहन लगे सिय भुज पसारि॥
लखि कही सिया फटि धरनि माइ।
मैं जाउं तुरा तुव उर समाइ॥३५॥

सुनि फटी धरनि लं अति अनूप।
मनि जटित सिंघासन जातरूप॥
तिहि बैठि सिया अध किय प्रवेस।
रघुबीर झपटि सिर गहेउ केस॥३६॥

छिति सिमिटि बरोबरि भइय जानि।
लट दोइ रहे रघुनाथ पानि॥
प्रभु लये तबहि धनु बान कोपि।
महि करहुं भस्म सब विश्व लोपि॥३७॥

सोरठा

क्रोध सहित धनु बान, खैंचे गुन रघुबीर जब।
बालमीक मुनि जान, विनय किये तिहि समय तकि॥३८॥

रामायन निर्दोष, इतने भरि हौं बरनियो।
छमा करौ प्रभु रोष, जो मम रसना पालिजे॥३९॥

सिंघिका छंद

सुनि राम करुना सिंधु, तब मन रहे कोप निवारि।
जन प्रनतपाल कृपाल बाचा, उलँघियो न बिचारि॥
दुहुँ भए सिय लट उरग, अरु कुस देवलहु को बास।
तब राम सैन समूह सुत लै, चले अवध विलास॥४०॥

---

३६. जातरूप : सोना। अध : नीचे।
३८. समय तकि : अवसर देखकर।
३९. रसना : वाणी।
४०. उलँघियो : उल्लंघन।

बहु बजत बाजन सहित मुनि गन, जज्ञ थल में जाइ।
सब लगे रचना रचत मख की, वेद विधि समुझाइ ॥
करि बरन रित्वज विप्र श्रुति मत, द्वारपाल समेत।
हय-राज अर्चन किये विधि मत, पुन्य पूरन हेत ॥४१॥

दोहा

गाँठि जोरि रघुवीर तब, कनक जनकजा संग।
मख-मंडल में करत सब, विधि-मत जज्ञ प्रसंग ॥४२॥

करखा

देव रिषि ब्रह्म रिषि, राज रिषि विप्र बहु, वेद उच्चार करि, अस्व[1] अर्चन कर।
मंत्र कुल पुज्य पढ़ि, अग्नि प्रज्वलित किय, समिध्य सब साकला भाँति भाँतिन धरें।
हनत हय राज कें, अंग घनसार ह्वै, होम करते त्रिपुर, इष्टगंधनि भरे।
कहत गोपाल, श्री राम जज्ञाधिपति, सकल संतुष्ट करि, पाप दापहि दरे ॥४३॥

छप्पै

परिपूरन करि जज्ञ, राम-श्री जज्ञ पुरुष तब।
त्रिपुर जीव जावंत, अभय करि हरे सोक सब ॥
दीन दरिद्रन, दुष्ट नष्ट, कष्टी नहि कोई।
कलही कूर कुरूप कुटिल, कुमत्ती कुल खोई ॥
=गोपाल पालि तिहुं लोक सम, धर्म, दया गुन नीति जय।
=आनन्द प्रीतिमय प्रेममय, सत्य सर्व अपवर्ग मय ॥४४॥

दोहा

सब विधि सब संतुष्ट करि, विदा करे श्री राम।
सुर नर पुर जन जाचकन, सब पूरे मन काम ॥४५॥
कहि गोपाल कृपाल ह्वै हरे सबन के ताप।
पूरि रह्यौ तिहुं लोक भरि, पूरन राम प्रताप ॥४६॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां श्री राम जग्य वर्ननोनाम अष्टपंचासोध्याय: ॥५८॥

---

४१. रित्वज : ऋत्वज, यज्ञ कराने वाला।

लवणासुर वध

५९

छप्पै

प्रात समै रघुनाथ, सभा अनुजन जुत सोहैं।
सुर नर सकल समाज, राजकाजी जन जोहैं॥
तिहि समये द्विज दोइ, वितत मथुरा ते आये।
लगे फिरावन द्वार, सुनत प्रभु पास बुलाये॥
=तिन कहत सकल पादारघी, बसत जाइ गाँवन जर्वाहि।
=उतपात करत दुख देत अति, लवनासुर दानव तर्वाहि॥१॥

दोहा

लै त्रिशूल बरदानि सिव, लवनासुर अधिकारि।
विप्र मारि संघारि कै, गाँवन देत उजारि॥२॥

तारन छंद

सुनि सासन राम दये अरिहा को।
तुम जाइ सँघार करो अब ताको॥
दनु बंस सबै निरबंसहि कीजै।
कुल विप्रन के सब को सुख दीजै॥३॥

करि निर्भय गाँव सबै सु बसायौ।
सनमानि सबै द्विज के मन भायौ।
मन जानि प्रजानि की पीर मिटैए।
करि के जु सुखी, फिरि के घर ऐए॥४॥

---

१. फिरावन : फरियाद। पादारघी : तपस्वी, वह जल जो पैर धोने के लिए दिया जाता है। लवनासुर : मधु नामक असुर का पुत्र जिसे शत्रुघ्न ने मारा।

झूलना छंद

पाइ श्री राम कै, सासनै सत्रुघन। साजि संमूह दल, तुरत धाए।
सुभट संघट्ट, दल-पत्ति रथ-पत्ति बहु। बजत रन बीर नीसान भाए॥
हयन खुर धार तें, छार पाहार ह्वै। धरनि आकास लगि धूरि छाए।
करत पायान, निसि ह्वौस संग्राम कौ। सैन असरार मथुराहि आए॥५॥

उड़ियाना

देखत दल प्रबल साजि लवनासुर धायो।
दानव दल जोरि, सैन साजि तुरत आयो॥
घेरे दनु गन अपार, दै दै किलकारी।
मारत बहु बान वृक्ष सूल सैल भारी॥६॥

सैन सकल विकल होत, बंसी-रवि धाये।
पेलि प्रबल रथ्थ वीर बाननि झरि लाये॥
लछन लछन सु बंधु, दानव दल मारे।
जुद्ध करत क्रुद्ध सहित, कौन टरत टारे॥७॥

मार मार मार शब्द, होत दुहूँनि ओरें।
छूटत सर कोटिन, जनु भादव जल भोरें॥
धायो कर लै त्रिसूल, लवनासुर भारी।
जैहौ अब भाजि कहाँ, देखौं धनुधारी॥८॥

सुनतहि सौमित्र, बान पाँच विषम मारे।
फूटि हृदय, टूटि सीस, कूटि दनुज डारे॥
दानव दल हाँकि रथिन, घेरा करि लीन्हें।
राम सुमिरि जन गोपाल, जै जै धुनि कीन्हें॥९॥

दोहा

मारे दनु दल घेरि सब, एक न उबरे कोइ।
सोधि सोधि सुत दानवो, दनु कुल डारे धोइ॥१०॥

---

५. धार : आघात। सूल : त्रिसूल। सैल : बरछा।
८. पेलि : घुसाकर।

सवैया

विप्र सबै सनमान सतुर्घन, दान दे, पान द, मान दए हैं।
जाइ बसौ अपने अपने थल, राखहु एकन मास हिये हैं॥
होंहि सुखी सब राम प्रताप तें यों सुनि प्रेम-पियूष पिये हैं।
पाइ गोपाल महा सुख कौं दुज पुंजनि आसिष कोटि दिये हैं।।११॥

दोहा

सत्रुघ्न लवनाहि हित दुज गन सुबस बसाइ।
सकल सैन बल बल सहित, गहे राम के पाँइ।।१२॥

[स्वान फरियाद]

कंद छंद

जहाँ जीति ही के बज बीर नीसान।
सुखस्थान-वासी सबै एक ही मान॥
तहाँ स्वान एकै पुकारे दुखी भीति।
महाराज कैसी इहाँ नीति की रीति॥१३॥

बिना दोष मोहे प्रहार्‌यौ वृथा विप्र।
सुन्यौ न्याइ जो कीजिऐ बूझि कै छिप्र॥
कहे बूझि सौमित्र श्री राम सों जाइ।
फिरा दै दुखी द्वार मैं स्वान है आइ॥१४॥

तिन्है राम जू बोलि लीन्हें सभा पास।
कहे स्वान जो दुःख को छोड़ि कै त्रास॥
लग्यौ सो कहे भूमि सो नाइ कै माथ।
सुनौ दुःख मेरो अनाथानि के नाथ॥१५॥

---

११. सतुर्घन : शत्रुघ्न।
१४. छिप्र : जल्दी। फिरादै : फरियाद।

दोहा

मैं सुख सों सोवत हुतो, लख्यो न चूक्यो ओहि।
बिना दोष दुख एक प्रभु, लाठी मार्यो मोहि॥१६॥

तोमर

सुनि राम दीन दयाल।
कहि दूत सों तिहि काल॥
वह बोलि द्विज लै आन।
मैं करौ निति प्रमान॥१७॥

सुनि गयो ढूंढन दूत।
द्विज नगर शोधि अकूत॥
द्विज भेंटियो करि सोध।
तिहि ल्याइयो करि बोध॥१८॥

प्रभु पास द्विज को ल्याइ।
द्विज दियो आसिष जाइ॥
तिहि देखि कै रघुवीर।
कहि अर्थ सो मति धीर॥१९॥

गुन दोष बूझहु एहु।
तिहि भाँति दंडहु देहु॥
द्विज बोलि कै तब अर्थं।
सब लगे बूझन अर्थ॥२०॥

दोहा

कहे अरथ सुनि विप्र हो, कहो जु सत्य प्रमान।
किहि कारन बिनु दोष कै, तू मार्यो यह स्वान॥२१॥

---

१८. अकूत : जिसका मूल्यांकन न हो सके।

मदन

दुज—

दुज कहत सुनिये लाल, मैं घर जात भोजन हेत।
गैल में यह स्वान सोवत, त्रस्यो मनहि अचेत ॥
मारियो डर खाइ उर मैं, याहि नाहिन दोष।
भावई सो दण्ड दीजै, छमा कै करि रोष ॥२२॥

रुचिरा

सुनि रघुवीर बूभियो सब सौं, देव ब्रह्म रिषी राज जिते।
चारिहु वेद निवेदवान सब, धर्म सास्त्र गुन न्याइ तिते ॥
दुज दोषी, निर्दोष स्वान यह, कौन दंड सु विचार करैं।
कहिअ पंच विवेक जानि कै, जो कछु नीति प्रमान धरैं ॥२३॥

दोहा

पंच—

कहत दंड बनत न कछू, यह दुजादि, वह स्वान।
वाही सौं कहवाइके, सोई करौ निदान ॥२४॥

दीपकल छन्द

तब कहे राम, सुनि स्वान एहि।
तू कहै, दुजहि सो दंड देहि ॥
सुनि कह्यो, स्वान मन सोचि चाहि।
प्रभु करौ संभु - मठ - पतिय याहि ॥२५॥

यह सुनत दिये बहु साजि साज।
पट भूषन कंचन दुरद बाजि ॥
सिव मन्दिर पूजा सौंप दीन्ह।
दुज तुरत रंक तैं राव किन्ह ॥२६॥

---

२६. दुरद : हाथी। राव : राजा।

सवैया

जात चल्यो गज राज चढ़े, बहु भूषन अंगनि भूषि लियो है।
पाहु सिवालय वृत्ति तबै, द्विज दीनहियों प्रभु ताहि दियो है॥
बूझन भर्थ लगे तब स्वानहि, कौन विचार विचारि हियो है।
रंक ते राव भयो पल मैं, यह दंड कियो कि अदंड कियो है ॥२७॥

गीतिका

स्वान–

यह सुनौ लाल भरथ्थ, इक मैं कथा पूरब की कहौं।
सुभ पुरीकांची सोमदत्त, द्विजेस सुत बालक रह्यौं॥
मठपति सिव को विप्र इक, तहँ पाइ पूजा घर भरें।
निरमाल्यही बहु भाँति सौं, परिवार सब पालन करें ॥२८॥

इक द्यौस न्योतैं जाइ कुटमनि, पितहि मो परसन कह्यौ।
नहि जानियो तिहि नखन भीतर, कछुक घृत जमि कै रह्यो॥
गृह आइ कै मोहि दियो भोजन, तपत भातहि सानि कै।
तिहि दोष तें यह जनम भो, पुर अवधि हौं रह्यो आनि कै ॥२९॥

दोहा

आदि अंत परजंत तें, यह निर्माल्यहि खाहि।
को जानें परिवार सौं, ह्वै हैं कौन दसाहि ॥३०॥

स्वान कथा कहतें यहै, आयो दिव्य विमान।
सो चढ़ि सुर लोकहि गयो, दीन्हे गति भगवान ॥३१॥

---

२८. पुरीकांची : कांचीपुरी–हिन्दुओं की सात पुरियों में से एक पुरी। निरमाल्य : शिवजी का चढ़ाया हुआ प्रसाद।

२९. कुटमनि : जाति कुटुम्ब। जमि : जमना।

[श्वेत भूप उद्धार]

छप्पै

इक वासर श्री राम, यहै मन मांहि विचारे।
मंहि मंडल फिरि लखहि, जीव किहि दुख सुख आरे॥
चाढ़ि रथ पवन समान, निरखि प्रति जन मन भाये।
चतुर दिसा अवलोकि, दुखी कोइ नजरि न आये॥
= प्रभु भ्रमत सकल भुव लोक तब, रिषि अगस्ति आश्रम गए।
= तिन देखि अर्घ पादादि दें, करि अस्तुति आनन्द भए॥३२॥

दोहा

धन्य कहे रिषी आप कों, परिपूरन मन काम।
धनि यह आश्रम, चरन दिय, अतिहि कृपा करि राम॥३३॥

तोमर

सुनि, राम राजिवनेन।
मुनि सों कहे तव बेन॥
मैं लयो जग अवतार।
सब हरन भूतल भार॥३४॥

तुम दियो सब मिलि राज।
तिहि पर्यो मो कहँ लाज॥
जग जीव दुख किहि होंहि।
कोई कहै भल नहि मोहि॥३५॥

तिहि हेत भ्रमि भुव लोक।
अवलोकियो मुनि ओक॥
तब कहे मुनि सुख पाइ।
बहु भाँति अस्तुति गाइ॥३६॥

---

३६. ओक : घर।

सुर नाग नर मुनि पालि।
दनु बंस डारे घालि॥
दलि दाप पाप समाज।
इहि भाँति के तुम राज॥३७॥

दोहा

जोरि जुगल कर राम सौं, अति अस्तुति मुनि भाष।
बहु अमोल मनि जटित इक, कंकन आगे राखि॥३८॥

संजुता छन्द

अवलोकि कंकन राम है।
मुनि, यो न मेरे काम है॥
दुज द्रव्य काम न आवई।
यह धर्म बेदनि गावई॥३९॥
मुनि कहे तब बिरदंत सो।
सब कथा श्री भगवंत सो॥
इक नाम भूपति स्वेत है।
सुनिये जु तिनके हेत है॥४०॥
दिवि लोक ते नित आवई।
चढ़ि के विवान सुभावई॥
सिर मुकुट भूषन अंग हैं॥
तट आवई नित गंग है॥४१॥
तहँ मृतक भच्छन को करें।
प्रति द्यौस कर्म यहै धरें॥
उठि प्रात गंगहि हौं गयो।
सुभ न्हाइ के हित कै नयो॥४२॥
तिहि खात मृतकहि देखियो।
सब भेद बूझि बिसेषियो॥
सो कह्यो अपने हेत हैं।
नृप मृतक भोगी स्वेत है॥४३॥

४०. बिरदंत : वृतांत।

गुनि सुनो यह चित लाई कै।
मैं रही मृतकहि खाइ कै॥
बहु भाँति भाँति विधान है।
मैं दियो अगनित दान है॥४४॥
गोदान अन्न न हौं कियो।
करि प्रीति विप्रन ना दियो॥
सुरलोकगामी जब भयो।
बहु साज पायो अति नयो॥४५॥
जो दियो दान सु पाइयो।
गुन लच्छ सो अधिकाइयो॥
बिनु अन्न के हम दुखित हैं।
तिहि हेत अति ही भुखित हैं॥४६॥
यह देह अपनो खात है।
सुर लोक आवत जात है॥
तिहि हेत मो यह हाल है।
मुनि सुनो आप दयाल है॥४७॥
यह आपु कंकन लीजिये।
गो अन्न विप्रन दीजिये॥
अति पुन्य है उपकार को।
तप वृद्धि मो उध्धार को॥४८॥

दोहा

मुनि—
यह कंकन वह भूप को, आपु राम अब लेहु।
तिहि उद्धारन हेत करि, अन्न दान सब देहु॥४९॥
राम अमित गोदान जुग दिये अन्न तिहि हेत।
स्वेत नृपहि उध्धारि कै, आये अवधि निकेत॥५०॥
सब के संकट काटि के, हरे सबन के ताप।
सुख दायक गोपाल भनि, त्रिभुवन राम प्रताप॥५१॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां लवनासुर वध्य, स्वान, स्वेत भूप उध्धारनोनाम उनसठमोध्याय:॥५९॥

लक्ष्मण-परलोकगमन

६०

चामर छंद

एक द्योस राम जू, विचार एक ह्वै ठए।
सौंपि द्वार लक्षनै, सु आपु भीतरै गए॥
भाँति भाँति कै यहै, सबै कहै बुझाइ कै।
आवनै न देहु काहु, मो विना जनाइ कै॥१॥

ता दिनाहि तें सदाहि द्वार रच्छनै करैं।
आपनो बिरान तो, समान एक ही धरैं॥
आवहीं जु द्वार कोइ, जाइ सो जनावहीं।
जौन होइ सासनै, सु ताहि सो सुनावहीं॥२॥

एक द्योस धर्म आपु, दिव्य देह धारि कै।
राम दर्सनै सु हेत, आइयो विचारि कै॥
रोकियो अनंत ताहि, पुन्य प्रीति कै भये।
चित्त मै विचारि कै सु जान भीतरै दये॥३॥

दोहा

और होइ तब रोकियो, धर्म रोकि नहिं जाइ।
मन विचारि लक्षन तबै, दिये जान हित पाइ॥४॥

कंद छंद

गए भीतरे धर्म, श्री राम कै पास।
करे देखि कै, आगतै स्वागतै तास॥
कहें राम जू, पाँइ धरि किते आप॥
कहौ सो कछू, और जो चित्त के ताप॥५॥

पाठान्तर-२—द्वार रच्छनै : लच्छनै (१,२)
३. अनन्त : लक्ष्मण।

कहैं धर्म श्री राम सों, जोरि कै हाथ ।।
तुम्हैं तो सदा पालि आए हमैं नाथ ।
जबैं ही जबैं पाप तें, होत है नास ।।
तबैं ही तबैं आपु पाले, पुरै आस ।।६।।

हमैं रक्षने हेत, धारौ नरै देह ।
सदा पालि आए, कृपा कै बड़े नेह ।।
परब्रह्म श्री सृष्टिकर्त्ता, सदा देव ।
विधिवृंद इन्द्रादि, जानै नहीं भेव ।।७।।

दोहा

करि संबोध सुधर्म को, कहैं हरषि श्री राम ।
अब विस्तरि तिहुं लोक मैं, करिये पूरन काम ।।८।।

धर्म पठै अस्थान निजु, बाहिर आए राम ।
माथ नवाये लोग सब, भ्रातन किये प्रनाम ।।९।।

त्रोटक

लखि लक्षन को दृग रोस भरे ।
इन तो हम सासन, भंग करे ।।
उन आवत क्यों हम सों न कहे ।
अपने मन की सब बात गहे ।।१०।।

अनखौंहि दृगै तकि लक्षन हैं ।
चित की हित जानि ततक्षन हैं ।।
सिर नाइ तहीं उठि जात भये ।
सरजू जल मैं करि मज्जन ये ।।११।।

---

८. विस्तरि : फैलकर ।

सब देखत नैन निमेषहिं मैं।
निजु जोति गयो मिलि सेषहि मैं॥
रघुबीर हिये सुनि सोचि सबै।
सुत आठहुं बोलि लए सु तबै॥१२॥

[अष्ट पुत्रों में भू विभाजन]

दोहा

चार्‌यो भ्रातन के भए, द्वै द्वै सुत सुखदाइ।
महि मंडल सब एक सम, दिये बाँटि रघुराइ॥१३॥

पद्धटिका

श्री रघुबर के नंदन दोई।
कुस लव बंधु समान न कोई॥
भरथ केर द्वै पुत्र बिराजे।
पुष्कर तक्षक अति छवि छाजे॥१४॥

पुत्र दोई लक्षन के सोहैं।
चित्रकेतु अरु अंगद मोहैं॥
दोई पुत्र सत्रुघ्घन ही के।
चंद्र बरमं पुनि भरत सु नीके॥१५॥

चारिहुं दिसि सुत आठहुं दीन्हें।
इक इक दिसि द्वं द्वै नृप कीन्हें॥
पुरी कुसावति पश्चिम जानौ।
कुस कौ राज दिये सुभ थानौ॥१६॥

पुरी अवंती अतिहि सुहाई।
दिये तबहि प्रभु लवहि रजाई।
उत्तर दिसि पुर पुष्कर भाये।
करे पुष्करं भूप महाए॥१७॥

---

१७. रजाई : आज्ञा।

अति उत्तम तक्षक पुर जाने।
तक्षक भूप तहाँ उनमाने॥
दक्षिन चित्रक नगरी छाजे।
चित्रकेतु तहँ किय नृपराजे॥१८॥

अंग बंग अंगद कहू दीन्हें।
सब तेलंग देस नृप कीन्हें॥
पूरब कहि चन्द्रावलि नगरी।
चंद्रवर्म कहू दीन्हें सगरी॥१९॥

मत्स देस अति दिव्य निवासी।
मत्सहि दिये महा सुखरासी॥
हय गय रथ पट भूषन जेते।
इक सम सबन बाँटि दिय तेते॥२०॥

दोहा

इहि विधि आठो सुतन को दिये बाँटि दिसि चारि।
श्री रघुनायक सबन को, एकहि भाँति विचारि॥२१॥

सवैया

ब्याह रचे सुत आठहु के, सुभ द्वारन बाजत बाजन नीके।
नारद आदि पढ़ें मुनि वेद, उमेद बढ़ें सबहीं जन ही के॥
चारि बधूनि की सोभहि को, करि के सु निछावरि सबंस टीके।
मातन के उर आनंद-हीन, बिना सिय लक्षन लागत फीके॥२२॥

सोरठा

श्री रघुबर हरषाइ, मुकुट छत्र निज सीस को।
कुसहि दये सुख पाइ, भूपति करि भुव लोक भरि॥२३॥

---

२०. मत्स देस : जयपुर।
२२. उमेद : आशा।

दोहा

छत्र मुकुट कुस कौं अधिक, अरु जे अगनित साज।
दिये राम सब सुतन कौं, एक बराबर ताज ॥२४॥

करि प्रबोध सब सुतन कौं, देत सीख श्री राम।
सुनौ पुत्र हित तें अबै, यह सिक्षा मन काम ॥२५॥

छप्पै

श्री राम–

अपने मैं न विरुद्ध, क्रुद्ध नहिं करहु दीन पर।
तजि मंत्री मति हीन, मित्र मति करहु मूढ़ नर ॥
करि न दंड बिनु दोष, दोष लघु दीह दंड तजि।
जाचक विमुख न करहु, पीठ अरि कौं न देहु भजि ॥
– मति तोरि आस विस्वास करि, धरि पन पेज न छंडियै।
= सरनागत राखि अपक्ष कौ, कहि माखन जस मंडियै ॥२६॥

उत्तरहीन बसीठ, कृपन कायर सेनापति।
प्रोहित कामी कुटिल, जूपकारिनि की संगति।
लोभी दानाध्यक्ष, विप्र वृषली पति पूजन।
वृद्ध गऊ संकल्प, बोधि मिथ्याहि हितू जन ॥
– अविवेकमान अभिमान जुत, दुर्जहि देई फिरि लीजिये।
= कहि माखन भूल्हि कर्म यह, जानि बूझि नहिं कीजिये ॥२७॥

जद्यपि मंत्र बस सर्प, सत्रु जद्यपि आधीनहुँ।
दुरद मत्त, हय अपत, सिंह जद्यपि बल-हीनहुँ ॥
चोर चबाई भृत्य, चपल तिय, मद्यप अंगी।
तरुन निरक्षर वेद, प्रचय बिनु पंथिक संगी ॥
= जन निकट परोसी समर बिनु, आप कारजी जे नरहु।
= कहि माखन ए सब चित्त गुनि, भूल्हिं परतीति न करहु ॥२८॥

---

२७. बसीठ : दूत। जूपकारी : जुआ करने वाले। वृषली : शूद्रा।
२८. भृत्य : नौकर। आप कारजी : अपना मतलब देखने वाले।

सवैया

पालहु देस सिपाह प्रजा जन, दंड प्रमानहिं को भरि लीजै।
बूझि सबै गुनवंतन को गुन, जो जहिं भाँति सु रीझहिं दीजै॥
दान दया परमारथ हेत, जुरे रन मैं रज सत्त न छीजै॥
राजस नीति सौं प्रीति सदा, कहि माखन यौं सुभ राजहिं कीजै॥२९॥

त्रोटक

बहु भाँतिन तें प्रभु सीख दये।
मुख चूमि सबै उर लाइ लये॥
दिय आठहु को सु विदा करिकै।
सब संग बधू सुषमा भरि कै॥३०॥

चलि आपने आपने राज गए।
भरि जंबुव दीप विनोद भए॥
सब ही पुर के जन मोद भरें।
रघुवंसिय धर्म सुराज करें॥३१॥

दोहा

बहु भाँतिन रघुकुल कलस, करत राज सुभ आप।
धर्म नीति गोपाल भनि, केवल राम प्रताप॥३२॥

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां अष्टौ पुत्र राज प्रदाननोनाम साठिमोध्यायः॥६०॥

श्रीराम वैकुंठ गमन

६१

छप्पै

इहि औसर ब्रह्मादि देव, इन्द्रादिक आए।
नारदादि सनकादि, देव-रिषि सहित महाए॥
विस्तर दिव्य विवान, महल ऊपर अविलंवित।
राम सवन सनमान, प्रणति जुत कीन्हें अति हित॥
= कर जोरि विनय किय धर्म तव, विधि सुर पति हित कारिये।
= प्रभु आजु अवधि पूरन भएउ, अब निजु लोक सुधारिये॥१॥

दोहा

धर्म उवाच—

दस सहस्र दस सै वरष, करि परिपूरन राज।
अब चलिअे वैकुंठ कौ, लै पुर सकल समाज॥२॥

त्रोटक

सुनि राम महा मन मोद भरे।
सब संग समाज निदेस करे॥
अब जाहु विभीषन लंकहि कौ।
चिरु राज करौ तजि संकहि कौ॥३॥

जब लौं मम नाम रहे धरनी।
तब लौं निरभै तुम राज बनौ॥
सुनि के जु विभीषन पाइ परे।
रज तैं प्रभु भूवर मोहि करे॥४॥

---

१. प्रणति : झुक कर प्रणाम करना।

सरनागत पंकज—पायन को।
हित भक्ति कथा है रमायन को॥
परदक्षिन दै पद रेनु लयो।
सिर नाइ कै लंकहि जात भयो॥५॥

फिरि सासन दै कपि राजहि कों।
तुम हू लिय जाहु समाजहि को॥
विनये कर जोरि कपीस तबै।
प्रभु मैं नहि चाहत राज अबै॥६॥

किय राज समाज प्रतापहि तैं।
सुर-भोग भयो बल आपहि तैं॥
प्रभु साथ चलौ परिवार लिये।
मति मोहि तजी लखि भार हिये॥७॥

सुनि कै रघुनाथ हुलास भये।
तब सासन अंगद कौं सु दये॥
कपि लै तुम राज करौ बनि हैं।
मम भक्तिहि अंगद तू धरि है॥८॥

भरि अंगद नैननि नीर लए।
पद बंदि किकिंधहि जात भए॥
संग सुग्रिव के बहु भीर रहे।
कपि रीछ कछू तिन माथ गहे॥९॥

प्रभु सासन दै हनुमानहि कौं।
दिसि दक्षिन राखि सु थानहि कौं॥
गढ़ लंकहि रक्षन को करिहौ।
चिरु ह्वै मम-भक्ति हिये धरि हौ॥१०॥

पाठान्तर-१०—चिरु : रुचि (१,२)

बिनये हनुमान बिनोद भयो।
प्रभु हौं पद - पंकज - दास भयो॥
उर तें सिय राम नतो टरि हौं॥
यह धारन केवल हौं धरिहौं॥११॥

तुम जाम पतालहि जाहु अबै।
सुमिरो मम नाम कथाहि सबै॥
जब कृस्न कलेवर हौं धरिहौं।
मन कामहि पूर सबै करिहौं॥१२॥

सुनि जाम गए मन मोद भये।
पद - बंदन कै अब्र लोक गये॥
नल नील हुलास न चित्त धरी।
तुम हू बन जाइ बिहार करौ॥१३॥

दोहा

सुनि कै तब नल नील कहि, हमहि कहूँ नहि काम।
हम रज पद-अरबिंद के, मति भारहु श्री राम॥१४॥

कनक जनक जासौं कहे, हरषित राम उदार।
ब्रज बिहार तुम सों करौं, गहि सु कृस्न अवतार॥१५॥

छप्पै

सुनि सुनि पुर जन सकल, हृदय आनंदित भरि भरि।
संपति दिवेउ लुटाइ, दिगनि के जाचक बरि बरि॥
करि सरजू अस्नान, दान सर्बस सब कीन्हेउ।
तजि चित माया मोह, सु पद निर्बाहन लीन्हेउ॥
= सब चढ़त जान परिवार-जुत, रघुबर सासन पाइ कै।
= पसु सूकर कूकर आदि दै, सकल जंतु हरषाइ कै॥१६॥

---

१६. बरि बरि : बरण करके।

नाराच छंद

सबै सदेह सौं चढ़े, बिवान देवराज के।
कपी कपीस भल्लुकादि, सासनै सु पाइ कै॥
जयै जयेति सब्द, भूमि अंतरिख हू रह्यो।
इतौ न जोग धारनानि, मुक्ति जुक्ति कौ लह्यौ॥१७॥

समेति मात तीनि हूँ, बधू सु तीनि हूँ तबै।
भरथ्थ सत्रुहादि कौ, चढ़ाइ पुष्प कै सबै॥
समाज देव लै चढे, सु आप राम हर्षहीं।
बिलोकि देव नागरी, असेष पुष्प वर्षहीं॥१८॥

अकास लोक लोक की, बिलोकती सु नागरी।
जहां तहांहि आरती, उतारती उजागरी॥
बिवान दिव्य मैं सबै, पुरी समेत राजहीं।
मृदंग ताल दुंदुभी, सु ठौर ठौर बाजहीं॥१९॥

घनाक्षर

बाजत नगारे देव लोकन में ठौर ठौर। देव सिर मौर आये देवन उछाहनै।
गावैं गुनी गंधरब किन्नर नवीन। सुर सातौ नाचैं उरबसी कैंधौ परगाहनै॥
माखन सुकवि, पारिजातक सुमन झरि। लावैं सुर सुंदरीन नैन सुख चाहनै।
साजिकैबरातमानौमातनसमेतभ्रात। इंदिरा-रमन जात इंदिरा बिवाहनै॥२०॥

सवैया

आनंद हूलि मची बिबुधालय, लै रघुबीर पुरी पगु धारे।
आरति ठौरनि ठौर करें, सुर-नारिन कै सु कुतूहल भारे॥
फूलन के बरषै बरखा, मनि मानिक अर्चनि खर्बनिवारे॥
देखत तुंग तरंग तहीं, दिवि-गंग के कूल बिमान उतारे॥२१॥

पाठान्तर-१७—सदेह : सँदेह (१,३)

२१. बिबुधालय : देवताओं का घर। वारे : निछावर किया। दिवि गंगा : आकाश गंगा। बिरदावैं : बिरदावली, प्रशस्ति।

छप्पै

करत विमल अस्नान, पाइ आसन पुर वासी।
कपि कपीसगन रीछ स्वान, सूकर सुखरासी॥
धरि धरि दिव्य सरीर, जोति जगमग दरसावैं।
धनि धनि राम प्रताप, सकल जय जय विरदावैं॥
=जप जोग जज्ञ व्रत दान तप, इनहु तें न जिहि गति भयेउ।
=कहि माखन पद निर्वान सोइ, राम सबन सहजहिं दयेउ॥२२॥

सवाई छंद

तिहि समये दसरथ नृप राजहि, सुर गन राम पास लै आए।
मिले अंक भरि निरखि लाल कौं, मात भ्रात सब ही न मिलाए॥
बूझे भूप लखन कहि कित है, तब रघुवर अहि लोक बताए॥
प्रगट सेष अवतार धरनि धर, सेष वेष निजु सेष समाए॥२३॥

मालती

कहे नृपहि अस्नान करन कौ, सुनि सुरसरि विनई कर जोरि।
प्रभु यह ब्रह्म वध्य कौ पातक, मैं न सम्हारि सकौं कछु थोरि॥
अति अमोघ नहिं मिटत मिटाये, जदपि गरब डारे तुम तोरि।
कारन करन आपु सरबस हौ, बरबस तें कछु चलत न मोरि॥२४॥

दोहा

श्रीराम—

हे गंगे, पितु बध करे, श्रवन जंतु बदि जानि।
गो द्विज पालनहार नित, रवि बंसी पहिचानि॥२५॥

---

२३. अहिलोक : पाताल लोक।
२४. नृपहि : राजा दशरथ।
२५. श्रवन : श्रवण कुमार।

रुचिरा छंद

गंगा—

प्रभु सर्वज्ञ, धर्म सब जानत, त्रिविधि ताप मत वेद कहे।
लघु मध्यम अरु दीह दोष जिमि, ते तितने भरि दंड सहे॥
यह अमोघ अति दीन विप्र बध, किहि विधि कासों जात कहे।
सकल दुखद पौलस्त बंश हति, अस्वमेध करि आपु दहे॥२६॥

सुनि रघुवीर प्रमान मानि कै कपि उच्चारन हेत हिये।
मेटन ब्रह्म बध्ध को पातक, अस्वमेघ फल अर्ध दये॥
दिवि गंगा अन्हवाइ दोष दलि, दिव्य देह तप भूप किये।
अचरज कौन तात तारन को, जे पसु पच्छिन तारि लिये॥२७॥

चामर छंद

न्हाइ न्हाइ दिव्य देह, दिव्य लोक मैं छजे।
देव कै समान सर्व, जीव जंतु ते गजे॥
बोलि कै पितामहै, सु राम दै सिखापनै।
मात तात भ्रात लै 'ब', जाहु लोक आपने॥२८॥

राम सासनै सुने, विरंचि हर्ष ह्वै भये।
भर्थ्य सत्रुहादि दै, सु ब्रह्म लोक लै गये॥
देखि लोक की प्रभाहि, ब्रह्म ब्रह्म सो मिलै।
जोति जोति रूप को, सु ध्यान धारनाहि लै॥२९॥

नाराच छंद

कहै तबै सुरेस सौं, कपीस लै सिधाइयो।
पुरी समेत कै सबै, रु रिच्छकादि भाइयो॥
समस्त जीव जंतु दै, सलोक वास दीजियो।
प्रमान देवता सबै समान, आपु कीजियो॥३०॥

---

३०. सुरेस : इन्द्र। सलोक : सालोक्य, मोक्ष।

तबै सबै सुरेश लै गये, पुरी समेत सों।
कपी कपीस रिच्छकादि, जीव जंतु हेत सों।।
सलोकपाल देवतानि, आसु ही मिलाइ कै।
महा विनोद सों भरे, प्रताप राम गाइ कै।।३१।।

छप्पै

किितिक छाँह मंदार, पारिजातक तर कितने।
किितिक रमित संतान, कल्प तरु तर हैं तितने।।
हरि चंदन तर कितिक, विमलि सुर पुरहिं विहारैं।
जं जं राम प्रताप सकल, जित कितहि उचारैं।।
=मिलि देव देव-नारीनि सबै, नर नारी आनंद भरैं।
=कपि इन्द्र इन्द्र के लोक मैं, सकल इन्द्र भोगहि करैं।।३२।।

सकल लोक पर त्रिविध सुन्य, बैकुण्ठ धाम तहं।
जग मग जोति अपार, पार पावै न तृदस जहं।।
हरषि पारषत सकल, आइ आगे ह्वै लीन्हेउ।
जबहि राम निजु धाम पाइ, सुभ आगम कीन्हेउ।।
=पर ब्रह्म जोति केवल जगत, निराकार निर्लेपमय।
=मिलि गयेउ जोति महं जोति जब, एक जोति जागत जय।।३३।।

घनाक्षर

निराकार निर्गुण विराज परब्रह्म आदि। वेद विधि ईस जाके पावत न पार है।
रचना अनंत रचि, धारत, अनंत रूप। सुख दुख भोगनि मैं करत विहार है।।
जुग जुग माह धर्म नास होत जब जब। तब तब भक्त हेत लेत अवतार है।
माखन कहत पुन्य पालि कै कलुष घालि। जनपनपालि,हरैंभूतल केभारहैं।।३४।।

---

३२. मंदार : मदार। तर : नीचे। हरि चंदन : एक वृक्ष।

छप्पै

इहि विधि कवि गोपाल, ग्रन्थ आरंभन कीन्हें।
तिन सुत माखन नाम, तिनहि पुनि सासन दीन्हें॥
अर्थंक बरनें आपु, अर्थं कहि तुमहि बनावहु।
जिहि विधि कथा रसाल, बरनि सज्जन मन भावहु॥
=सुनि चरन बंदि वर्णन कियेउ, जितिक बुद्धि मम उदय हिय।
=जिहि तिहि प्रकार श्री राम जस संपूरण सुभमस्तु किय॥३५॥

द्रुमिला

जिनकी महिमा नहि जानि सकं श्रुति, सेस महेस घनी रति कौं।
तिनको गुन वर्णन लायक को, गुनवत मनुष्य कहा मति कौं॥
उमगे जिहि भक्ति तरंग हिये, रहि जाइ कहूँ बिनु ना मति कौ।
कहि माखन पारँ परं तबहीं, सु कृपा जब होइ सियापति कौ॥३६॥

मदन छंद

भयो राम प्रताप पूरन, जेन तेन प्रकार।
उक्ति जुक्ति न अधिक भाष्यौ, न हिन बुद्धि उदार॥
कहत छंद प्रबंध, उपमा-हीन जो कहुँ होइ।
लेत सोधि बिचारि बुधजन, देत दोष न कोइ॥३७॥

दुष्ट के मन दुष्टता तकि, देहि दूषन मूढ़।
भक्ति भावहि को कछू, नहि भेद जानहि गूढ़॥
करत आधिक सोच कछु कछु, है न बर्नन सक्ति।
दुविदग्धक ज्ञान तें, कह जानहीं हरि भक्ति॥३८॥

सुनत सज्जन हृदय हर्षंत, करत विमल प्रसंस।
प्रम पूरन उर प्रफुल्लित, कमल उर अवतंस॥
सुनत राम प्रताप इक चित, होइ जिहि आनंद।
सकल संकट नास तिनके, करत श्री रघुनंद॥३९॥

---

३६. घनी रति : कामदेव।
३७. उदार : सुन्दर।

कोटि दसरथ-राज कौ फल, पढ़त राम प्रताप।
सुनत सीखत लिखत ग्रन्थहि, नसत तीनहु ताप।
भक्त जन को भक्ति पूरन, कवि न काव्य प्रभेद।
सूर वीरन वीर रस सुनि, बढ़त अंग उमेद।।४०।।

सदा राम प्रताप दायक, सुमतिवंत विचारि।
अर्थ धर्महि काम मोक्षहि, देत दसकंधारि।।
बरनि कवि गोपाल ग्रंथहि, दिये सुतहि निदेस।
बंदि चरन सरोज माखन, मन हित सीतेस।।४१।।

दोहा

सदा करन कल्यान कौ, कहि गोपाल सु आप।
संपूरन सुभमस्तु जग, उदित राम प्रताप।।४२।।

इति श्री राम प्रताप प्रकास भास्कर चूड़ामनि गोपाल विरचितायां श्री राम वैकुण्ठ समागमनोनाम एक सठिमोध्याय: ।।६१।।

सम्पूर्ण सुभमस्तु समाप्त

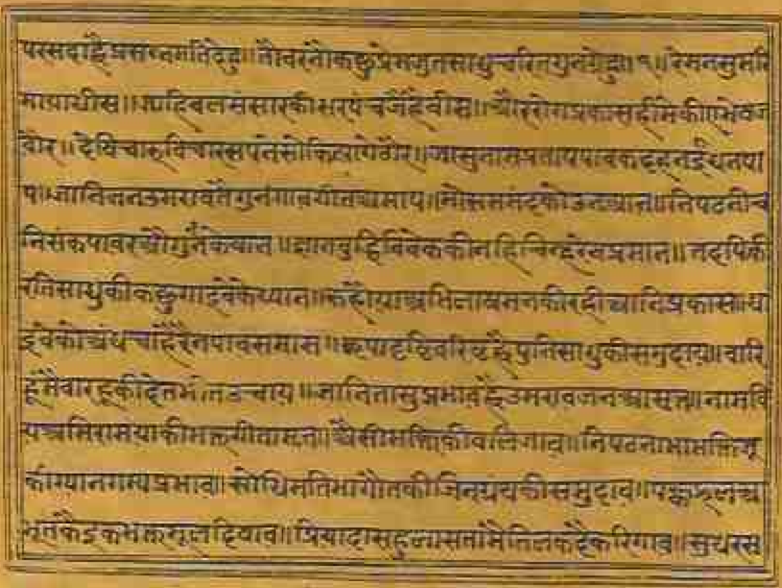

'राम प्रताप' की हस्तलिखित पांडुलिपि
के एक पृष्ठ की अनुकृति